G20
वसुधैव कुटुम्बकम्
ONE EARTH • ONE FAMILY • ONE FUTURE

75
आज़ादी का
अमृत महोत्सव

संचार माध्यम

भारतीय जन संचार संस्थान की अर्द्धवार्षिक यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका

खंड–35, अंक–2 आईएसएसएन : 2321–2608 जुलाई-दिसंबर 2023

भारतीय जन संचार संस्थान
नई दिल्ली

संचार माध्यम

भारतीय जन संचार संस्थान की अर्द्धवार्षिक यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका

खंड-35, अंक-2 जुलाई-दिसंबर 2023 आईएसएसएन: 2321-2608

संचार माध्यम के बारे में:

'संचार माध्यम' (ISSN : 2321-2608) भारतीय जन संचार संस्थान (नई दिल्ली) की संचार, मीडिया, पत्रकारिता और उससे संबंधित मुद्दों पर केंद्रित हिंदी में प्रकाशित सामग्री चयन में उच्च मानदंडों का पालन करने वाली अग्रणी और यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका है। इसका प्रकाशन 1980 में आरंभ हुआ और आज यह हिंदी भाषा में संचार, मीडिया और पत्रकारिता से संबंधित विषयों पर विभिन्न प्रकार के विचारों, टिप्पणियों, पुस्तक समीक्षा और मौलिक शोध-पत्रों के प्रकाशन का प्रतिष्ठित मंच है। इसमें मीडिया से संबंधित सभी प्रकार के विषयों पर मौलिक अकादमिक शोध और विश्लेषण प्रकाशित किए जाते हैं। अकादमिक शोध के उच्चतर मूल्यों का पालन करते हुए 'संचार माध्यम' में प्रकाशन से पूर्व सभी शोध पत्रों/आलेखों के लिए निष्पक्ष समीक्षा की एक कठोर प्रक्रिया का पालन किया जाता है। भारतीय जन संचार संस्थान के प्रकाशन विभाग द्वारा इसका प्रकाशन किया जाता है।

प्रधान संपादक

डॉ. अनुपमा भटनागर
महानिदेशक,
भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

संपादक

प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार
प्रोफेसर, अँग्रेजी पत्रकारिता
भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

संपादक मंडल

श्री अच्युतानंद मिश्र
वरिष्ठ पत्रकार एवं पूर्व कुलपति, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय

डॉ. सच्चिदानंद जोशी
पूर्व कुलपति, कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जन संचार विश्वविद्यालय, रायपुर एवं सदस्य सचिव, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, नई दिल्ली

प्रो. ओम प्रकाश सिंह
पूर्व प्रोफेसर एवं निदेशक, महामना मदनमोहन मालवीय हिंदी पत्रकारिता संस्थान, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

प्रो. पवित्र श्रीवास्तव
विभागाध्यक्ष, विज्ञापन एवं जनसंपर्क विभाग, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल

प्रो. गोविंद सिंह
डीन अकादमिक और पाठ्यक्रम निदेशक, रेडियो एवं टीवी पत्रकारिता, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

प्रो. आनंद प्रधान
प्रोफेसर, भारतीय भाषा विभाग, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

प्रो. अनिल कुमार सौमित्र
प्रोफेसर एवं क्षेत्रीय निदेशक, भारतीय जन संचार संस्थान, जम्मू परिसर

प्रो. प्रमोद कुमार
प्रोफेसर, अँग्रेजी पत्रकारिता एवं संपादक, 'संचार माध्यम', भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

डॉ. शुचि यादव
सह-आचार्य, मीडिया अध्ययन केंद्र, सामाजिक विज्ञान स्कूल, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

डॉ. राजेश कुशवाहा
सह आचार्य, भारतीय जन संचार संस्थान, अमरावती परिसर

डॉ. राकेश उपाध्याय
सह आचार्य एवं पाठ्यक्रम निदेशक, हिंदी पत्रकारिता विभाग, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

डॉ. विनीत उत्पल
सहायक आचार्य, भारतीय जन संचार संस्थान, जम्मू परिसर

श्री संत समीर
एसोसिएट प्रकाशन, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

भारतीय जन संचार संस्थान की ओर से वीरेंद्र कुमार भारती द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

*सभी तरह के संपादकीय पत्राचार और लेख भेजने के लिए **संपादक, संचार माध्यम,** भारतीय जन संचार संस्थान, जेएनयू न्यू कैंपस, अरुणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली-110 067 (भारत) को संबोधित किया जाना चाहिए (दूरभाष : 91-11-26742920, 26741357)*

ईमेल : *sancharmadhyamiimc@gmail.com, drpk.iimc@gmail.com*

जर्नल का वेब लिंक : *http://iimc.gov.in/content/426_1_AboutTheJournal.aspx*

वेबसाईट : *www.iimc.gov.in*

'संचार माध्यम' में प्रकाशित विचार लेखकों की अपनी अभिव्यक्ति हैं। भारतीय जन संचार संस्थान का उनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

महानिदेशक की कलम से

डॉ. अनुपमा भटनागर
महानिदेशक
भारतीय जन संचार संस्थान

भाषा मनुष्य की श्रेष्ठतम संपदा है। सभी मानवीय सभ्यताएँ भाषा के माध्यम से ही विकसित हुई हैं। भाषा का संबंध इतिहास, संस्कृति और परंपराओं से है। भारतीय भाषाओं में अंतर-संवाद की परंपरा बहुत पुरानी है और ऐसा सैकड़ों वर्षों से होता आ रहा है। पहले अंतर-संवाद की भाषा संस्कृत थी, तो अब यह जिम्मेदारी हिंदी की है। आज उत्तर भारत में हिंदी 100 से अधिक अन्य भाषाओं के लिए एक संपर्क भाषा का काम करती है। लेकिन हिंदी के प्रचलित शब्दों का आम बोलचाल से गायब हो जाना हम सभी के लिए चिंता का विषय है। प्रश्न है कि 'हिंदी' के शब्द आखिर लुप्तप्राय क्यों हो रहे हैं। जब हमारे पास एक भाषा होती है, तब हमें अंदाजा नहीं होता कि उसकी ताकत क्या होती है। लेकिन जब भाषा लुप्त हो जाती है और सदियों के बाद उससे संबंधित सामग्री किसी के हाथ लगती है तो सबकी चिंता होती है कि आखिर इसमें है क्या। यह लिपि कौन-सी है, भाषा कौन-सी है, सामग्री क्या है, विषय क्या है। आज कहीं पत्थरों पर कुछ लिखा हुआ मिलता है, तो सालों तक पुरातत्त्व विभाग उस खोज में लगा रहता है कि लिखा क्या गया है।

मेरा मानना है कि समृद्ध भाषाएँ और उनके शब्द कभी नहीं मरते। भाषा की अनुकूलनशीलता इसे जीवित रखने में मदद करती है। लेकिन कैसे? भाषाओं को शब्दकोशों और पुस्तकालयों में संरक्षित या जीवित नहीं रखा जा सकता है। शब्द जीवित रहते हैं, यदि लोग अपनी मातृभाषा में बात करना जारी रखते हैं। हमें खुद से पूछने की जरूरत है कि हम अपनी भाषा को कैसे संरक्षित कर सकते हैं; हम इसे विलुप्त होने से कैसे बचा सकते हैं। मेरा मानना है कि अगली पीढ़ी के समझदार बच्चों के लिए, जो डिजिटल दुनिया से प्रभावित हैं, 'डिजिटल' ही समाधान है। यह एक ज्ञात तथ्य है कि बच्चे जो पढ़ते हैं, उसके सापेक्ष जो देखते हैं और सुनते हैं उससे बहुत कुछ सीखते हैं।

पिछले दिनों एक 7 साल की छोटी बच्ची ने एक कार्यक्रम में मुझसे पूछा कि यह 'अस्तित्व' क्या होता है। मेरे लिए चौंकने का कारण यह भारी भरकम शब्द तो था ही, उससे ज्यादा मैं इस बात से चौंक गई कि अँग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाली उस बच्ची ने मुझसे एक हिंदी शब्द का अर्थ पूछा था। मैंने उसी आश्चर्य में भरकर उससे उस शब्द का स्रोत पूछा। उसने बताया कि उसके पसंदीदा यूट्यूबरों में से एक ने इस शब्द के बारे में बताया है। मैंने उसे शब्द का अर्थ बताया और उस वीडियो को गौर से देखा। उसके बाद उस बच्ची ने अपने बाकी पसंदीदा भारतीय यूट्यूबरों के बारे में बताया। इससे मेरी उत्सुकता जगी कि वे लोग किस तरह की भाषा का उपयोग कर रहे हैं। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि ये ज्यादातर यूट्यूबर ऐसी हिंदी बोल रहे हैं, जिसका उपयोग हम आम बोलचाल में करते हैं। बीच-बीच में वे चरित्र, अस्तित्व, सम्मान जैसे हिंदी शब्दों का भी उपयोग करते हैं। यह मेरी तरह के हिंदीभाषी व्यक्ति के लिए एक खुश कर देने वाला लम्हा था, क्योंकि यूट्यूब और सोशल मीडिया पर इस तरह भी हिंदी का प्रचार हो रहा है और बड़ी बात यह कि ये सभी यूट्यूबर आम युवा हैं। इनकी हिंदी इसलिए भी बच्चों और युवाओं के बीच जगह बना रही है, क्योंकि इनकी हिंदी कोई एक भाषा नहीं है, बल्कि कई सारी भारतीय भाषाओं और बोलियों का मिश्रण है। यह वास्तव में बच्चों को अपनी भाषा में अच्छा दिखाने और सुनाने का समय है। उनके अंदर ज्ञान और खुशी के बीज बोएँ, वे एक मजबूत नींव के साथ पेड़ बन जाएँगे।

हिंदी, भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम होने के साथ-साथ भारत की भावात्मक एकता को मजबूत करने का सशक्त जरिया है। अपनी उदारता, व्यापकता एवं ग्रहणशीलता के कारण ही हिंदी भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था की पूरक है। आइए, हम सब मिलकर हिंदी में संवाद करें और अपनी भाषा और अपने शब्दों को लुप्त होने से बचाएँ। वर्तमान में माननीय प्रधानमंत्री जी के नेतृत्व में भारत आत्मनिर्भर बन रहा है। आत्मनिर्भरता के लिए आवश्यक है कि समस्त कार्य अपनी भाषा में किए जाएँ। यह तभी संभव है जब हम सभी स्वेच्छा से अपनी मातृभाषा में कार्य करने के लिए कृत संकल्पित हों।

संपादकीय

शब्दों के साथ विलुप्त होती हमारी समृद्ध विरासत

भाषा मात्र अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं है, बल्कि जिस अंचल में, जिस समूह द्वारा वह प्रयोग में लाई जाती है वह उसके विकास क्रम और इतिहास की साक्षी भी होती है। वह व्यक्ति एवं समाज की पहचान का एक महत्त्वपूर्ण घटक तथा उसकी संस्कृति की सजीव संवाहिका भी होती है। साथ ही अतीत के अनेक उतार-चढ़ावों और अनगिनत रहस्यों को वह अपने आँचल में समाए रहती है। इसलिए हमारी सभी भाषाएँ एवं बोलियाँ हमारी संस्कृति, उदात्त परंपराओं, उत्कृष्ट ज्ञान एवं विपुल साहित्य को अक्षुण्ण बनाए रखने के साथ ही वैचारिक नवसृजन हेतु परम आवश्यक हैं। सभी भाषाओं में उपलब्ध लिखित साहित्य की अपेक्षा कई गुना अधिक ज्ञान गीतों, लोकोक्तियों तथा लोक कथाओं की मौखिक परंपरा में मौजूद है। यह विरासत एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक भाषा-बोली के माध्यम से ही हस्तांतरित होती है। इस यात्रा में अलग-अलग प्रसंग पर अलग-अलग भावों को अभिव्यक्त करने के लिए अनेक नए शब्दों का सृजन होता रहता है। किसी पड़ाव पर किसी भी भाषा का यदि एक भी शब्द प्रचलन से बाहर होता है तो उससे जुड़ी संस्कृति, इतिहास, समय के साथ अर्जित परंपरागत ज्ञान, परंपराएँ, विरासत, जीवन मूल्य, तकनीक, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, लोकगीत, लोककथाएँ, नायक आदि सभी कहीं-न-कहीं इतिहास के पन्नों में दफन होने शुरू हो जाते हैं। अपनी भाषा के शब्दों की इस विलुप्ति को यदि संबंधित समाज लंबे समय तक नजरंदाज करता है तो अपने इतिहास, संस्कृति और जीवन मूल्यों को वह हमेशा के लिए खो बैठता है। कई बार यह क्षति अपूरणीय होती है। विदेशी भाषा एवं संस्कृति के प्रभाव में हम भारत के लोग आजकल ऐसी ही गंभीर अपूरणीय क्षति की ओर बढ़ रहे हैं। अपनी भाषाओं और बोलियों के संरक्षण हेतु यदि हमने अविलंब ठोस कदम नहीं उठाए तो आने वाले एक दशक में ही हम अपनी भाषाओं के एक बहुत बड़े शब्द भंडार से हाथ धो बैठेंगे। भाषा और शब्द संरक्षण का यह कार्य सरकार के भरोसे नहीं, बल्कि समाज के स्तर पर करने की आवश्यकता है। आखिर अपनी मातृभाषा के शब्दों को प्रचलन में बनाए रखने और उसी समृद्धि के साथ उन्हें अपनी अगली पीढ़ियों को सौंपने का दायित्व तो समाज का ही है। सरकार सिर्फ कानून बना सकती है, उस कानून का पालन तो समाज को ही करना है।

सामूहिक स्मृति को जीवित रखने का माध्यम भाषा

भाषा ही वह माध्यम है जिससे लोग अपनी सामूहिक स्मृति और ज्ञान को जीवित रखते हैं। हर भाषा में जीवन शैली, रहन-सहन, पर्यावरण, खानपान आदि का अपना ज्ञान भंडार होता है। अपनी भाषा, बोली और अपने शब्दों का उपयोग न करने या प्रचलन में न रखने पर वे मृत हो जाते हैं। इसके साथ अपनी संस्कृति भी मृत हो जाती है। आजकल बहुत से घरों में नई पीढ़ी के सामने यदि आप यह कहें कि भोजन बहुत 'स्वादिष्ट' है तो उन्हें इसका मतलब समझ में नहीं आता। आप भोजन 'टेस्टी' कहें तो एकदम समझ में आता है। इसी प्रकार किसी बालिका के गालों पर जो सुंदर गड्ढे पड़ते हैं उन्हें अँग्रेजी में 'डिंपल' कहते हैं, पर इसे हिंदी में क्या कहते हैं? आप किसी को भी पूछें तो वह कहेगा कि इसे हिंदी में भी 'डिंपल' ही कहते हैं, जबकि इसके लिए हिंदी शब्द है 'हिलकोरे'। यह शब्द आज अनेक विद्वानों को भी नहीं पता। उनसे पूछेंगे तो वे भी कहेंगे कि हिंदी में भी 'डिंपल' ही होता है। मोबाइल या इंटरनेट जैसे शब्द आधुनिक हैं, इन्हें इसी रूप में प्रयोग करने पर किसी को आपत्ति नहीं हो सकती, पर 'हिलकोरे' तो अँग्रेजों के भारत में आने के पहले से पड़ते थे। भोजन तो पहले से ही स्वादिष्ट होता था। वह 'टेस्टी' क्यों हो रहा है? 'डिंपल' कब से पड़ने लगे? इस पर विचार करना चाहिए।

ऐसे और भी शब्द हैं, जो प्रचलन से बाहर होने की प्रक्रिया में हैं। जैसे, नमस्कार के लिए 'हैलो', बधाई के लिए 'कांग्रेट्स', सुप्रभात की जगह 'गुड मोर्निंग', जन्मदिवस की शुभकामनाओं के लिए 'हैप्पी बर्थडे', किसी के दिवंगत होने पर 'ओम शांति' की जगह 'आरआईपी', मित्र की जगह 'फ्रेंड', प्रेमी की जगह 'बॉयफ्रेंड' जैसे शब्दों का प्रयोग शहरी क्षेत्रों में बहुत तेजी से बढ़ रहा है। शहरों के लिए अब खटिया, मचिया, गोनरी, ओखली, भेली, भदेली, तसला जैसे शब्द अनजान बनते जा रहे हैं। 'माई' कहने में अब के बच्चे शर्म महसूस करते हैं। कह नहीं सकते कि 'माताजी', 'पिताजी' भी कब तक बचेंगे, क्योंकि गाँवों तक में 'मम्मी', 'पापा' पाँव पसार चुके हैं। पालतू बनते ही कुत्ता गाँव, शहर हर जगह 'डॉगी' बन गया है। हमारे नौनिहाल अब गाय को 'काऊ' और बिल्ली को 'कैट' के रूप में याद कर रहे हैं। धीरे-धीरे बच्चे की नाक भी अब की माँओं को 'नोजी' लगने लगी है। बुखार 'फीवर' में ऐसे बदल रहा है कि नई पीढ़ी को अब 'ज्वर' कम ही समझ में आता है। रक्तचाप से ज्यादा 'बीपी' समझ में आता है। तमाम लोगों को 'आधुनिक' से ज्यादा 'माडर्न' युग समझ में आता है। मोटे अनाज को आज के लोग 'मिलेट्स' के रूप में ज्यादा आसानी से पहचान रहे हैं। मड़ुआ 'फिंगर मिलेट',

सावाँ 'बर्नयार्ड मिलेट', कंगनी 'फॉक्सटेल मिलेट', कुटकी 'लिटिल मिलेट' के रूप में लोगों की जुबान पर तेजी से चढ़ रहे हैं। 'घीक्वार' के बजाय 'एलोवेरा' को लोग आसानी से समझते हैं। रसोई के नए रूप ने 'अदहन' की जरूरत खत्म कर दी है। 'मकुनी' का स्वाद भी नई पीढ़ी को नहीं मालूम। 'ठोंकवा' कम घरों में बनता है। रोटी बेलने की कला जैसे-जैसे मशीनी हो रही है, वैसे-वैसे 'परथन', 'परोथन' या 'पलेथन' भी जबान से दूर हो रहे हैं।

गनीमत है कि विकल्प के अभाव में बाटी बची हुई है, पर इसकी संगिनी 'भउरी' जाने कब से लापता-सी है। मक्के का फूटा 'जोन्हरी' अब 'पॉपकार्न' हो गया है। आधुनिक खानपान ने 'लपसी' का स्वाद बिगाड़ दिया है। मकान बनाने के नए तरीके आ गए हैं तो 'मुंडेर', 'थूनी', 'बड़ेर', 'नरिया', 'खपड़ा' जैसे नाम भी समाप्तप्राय ही हैं और 'ताखा' बनाने की परंपरा भी भला क्यों रहेंगी। पक्के मकान इस क़दर बन रहे हैं कि 'छान' कम ही छाई जाती है। 'कथरी' पर अब कोई नहीं सोता। 'मियाना', 'कहार' गए जमाने की बातें हैं। इस जमाने के नवजात अपनी आँखें अस्पताल में खोलते हैं तो आज की माँएँ भी 'सउरी' में नहीं रहतीं। अब के घरों में 'सिकहर' नहीं होता। 'डेहरी' में अनाज भी कोई कहाँ रखता है? गेहूँ पीसने के लिए 'जाँता' अब बस खयालों की बात है। कुछ वर्षों पहले हर घर आग को 'बोरसी' में जिलाए रखने की जरूरत महसूस करता था, पर अब इस पर माचिस की तीली और लाइटर ने कब्जा जमा लिया है। बैलों की जोड़ी गायब हुई तो 'जुआठा' भी अप्रासंगिक होने लगा।

किसी के 'विरोध' में बोलने के बजाय अब लोग किसी के 'अगेंस्ट' में बोलते हैं। 'आपात्काल' समझना मुश्किल होता जा रहा है और 'इमरजेंसी' आसान। 'नियुक्ति' के बजाय नई पीढ़ी को अब 'अपाइंटमेंट' ज्यादा रास आता है। 'प्रेम संबंध' के बजाय 'अफेयर' भी अब आसान है। इस दौर में 'कार्यालय' से ज्यादा 'ऑफिस' अच्छा लग रहा है। 'विपक्ष' 'अपोजीशन' में बदल रहा है तो 'आदर्श' 'आइडियल' में। पढ़ाई के नए ढंग में 'तख्ती' पर लिखाई नहीं होती तो खड़िया मिट्टी को 'दुद्धी' बोलने वाले बच्चे भी अब नहीं दिखाई देते। आज की पीढ़ी 'विद्यालय' में 'प्रवेश' के बजाय 'स्कूल-कॉलेज' में 'एडमिशन' लेने और 'परीक्षा' के बजाय 'एग्जाम' देने जाती है। 'टिप्पणी' 'कमेंट' में बदल गई है और धीरे-धीरे लोग 'आत्मविश्वास' से ज्यादा 'कॉनफिडेंट' रहने लगे हैं। अब खरीदार 'भुगतान' के बजाय 'पेमेंट' करता है। जो कुछ 'विशिष्ट' था, वह सब 'स्पेशल' में बदल गया है। कोई भरोसा नहीं कि कुछ समय बाद हमारी अर्थव्यवस्था का बचा-खुचा 'आयात' पूरी तरह 'इंपोर्ट' में बदल जाए। ऐसे शब्दों की सूची बनाने बैठें तो वह हजारों में हो सकती है।

वर्ष 1961 की जनगणना के अनुसार वर्तमान भारत में 1652 से भी अधिक मातृभाषाएँ हैं, जो मूलरूप से पाँच विभिन्न भाषाई परिवारों से संबंध रखती हैं। 1991 की जनगणना में 10,400 मातृभाषाओं के अपरिष्कृत आँकड़े सामने आए, उन्हें 1576 मातृभाषाओं में समायोजित किया गया। उन्हें उससे आगे 216 मातृभाषाओं में तार्किक आधार पर उचित ठहराया गया और उन्हें 114 भाषाओं के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया। वह वर्गीकरण इस प्रकार हैं—अस्ट्रो-एशियाटिक (1.13% की कुल जनसंख्या वाली 14 भाषाएँ), द्राविड़यन (22.53% की कुल जनसंख्या वाली 17 भाषाएँ), इंडो-यूरोपियन (75.28% की कुल जनसंख्या के साथ 19 इंडो-आर्यन भाषाएँ) और जर्मनिक, 0.02% की कुल जनसंख्या वाली एक भाषा) सेमितो-हार्मिटिक (0.01% जनसंख्या वाली एक भाषा) और तिब्बतो-बर्मन (0.97% की कुल जनसंख्या वाली 62 भाषाएँ)।

इन भाषाओं को है अधिक खतरा

वर्ष 2021 में प्रस्तावित जनगणना कोविड महामारी की वजह से नहीं हो पाई, इसलिए अभी हमारे पास आधिकारिक आँकड़ा 2011 की जनगणना का ही है। उसके अनुसार भारत में सर्वाधिक लोग यानी 41.03 प्रतिशत हिंदीभाषी हैं। राजस्थानी भाषी तो 1.78 प्रतिशत ही हैं। राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र में भील रहते हैं, पर उनकी भीली बोलने वाले 0.93 प्रतिशत ही हैं। संथाली बोलने वाले तो मात्र 0.63 हैं। भारत में करीब 550 जनजातियों की अपनी-अपनी बोलियाँ हैं, परंतु इनमें से कई बोलियों को बोलने वालों की संख्या घटकर सिर्फ हजारों में बची है। वर्ष 1971 में केवल 108 भाषाओं की सूची सामने आई, क्योंकि सरकारी नीतियों के हिसाब से किसी भाषा को सूची में शामिल करने के लिए उसे बोलने वालों की संख्या कम-से-कम 10,000 होनी चाहिए। भाषा विशेषज्ञों का कहना है कि भारत की 250 से अधिक भाषाएँ विलुप्त हो गई हैं। वर्ष 2010 में आई यूनेस्को की 'इंटरेक्टिव एटलस' रिपोर्ट भी बताती है कि सर्वाधिक भाषाएँ भारत में विलुप्त हुई हैं। दूसरे नंबर पर अमेरिका (192 भाषाएँ) और तीसरे नंबर पर इंडोनेशिया (147 भाषाएँ) का नाम आता है। रिपोर्ट के अनुसार दुनिया की कुल 6000 भाषाओं में से 2500 पर आज विलुप्त होने का खतरा है। कुल 199 भाषा या बोलियाँ तो ऐसी हैं, जिन्हें अब महज 10-10 और 178 को 10 से 50 लोग ही बोलते समझते हैं। उत्तराखंड की गढ़वाली, कुमाऊँनी और रोंगपो सहित दस बोलियाँ खतरे में हैं। पिथौरागढ़ की दो बोलियाँ तोल्चा व रंग्कस विलुप्त हो

चुकी हैं। उत्तरकाशी के बंगाण क्षेत्र की बंगाणी बोली को अब मात्र 12 हजार लोग ही बोलते हैं। पिथौरागढ़ की दारमा और ब्याँसी, उत्तरकाशी की जाड और देहरादून की जौनसारी बोलियाँ खत्म होने के कगार पर हैं। दारमा को 1761, ब्याँसी को 1734, जाड को 2000 और जौनसारी को 1,14,733 लोग ही बोलते-समझते हैं। पिथौरागढ़ और चंपावत जिलों में रहने वाली राजी जनजाति की बोली भी विलुप्ति के कगार पर है, क्योंकि अब राजी जनजाति के 200 से भी कम लोग बचे हैं।

राजस्थान में करीब आठ बोलियाँ यूनेस्को की लुप्तप्राय बोलियों की सूची में शामिल हैं। वहाँ मारवाड़ी के साथ मेवाड़ी, बांगडी, ढारकी, बीकानेरी, शेखावटी, खेराड़ी, मोहवाडी और देवडावाटी, अहीरवाटी, मेवाती, ढूँढाड़ी और उसकी उपबोलियाँ जैसे कि तोरावटी, जैपुरी, काटेड़ा, राजावाटी, अजमेरी, किसनगढ़ी, नागर चौल और हाडौती, राँगडी, सौंधवाड़ी, निमाड़ी आदि बोलियाँ बोली जाती हैं। घुमंतू जनजातियों की भी अपनी बोलियाँ हैं। जैसे गरोडिया लुहारों की बोली 'गाडी' हैं। इनमें से ज्यादातर देवनागरी लिपि में ही लिखी जाती हैं। छत्तीसगढ़ में छत्तीसगढ़ी को 28 नवंबर, 2007 को प्रदेश की राजभाषा का दर्जा मिला, फिर भी छत्तीसगढ़ के लोग इसके भविष्य को लेकर चिंतित हैं। मध्यप्रदेश में भी करीब एक दर्जन बोलियाँ विलुप्ति के कगार पर हैं। जनजातीय बोलियों पर बड़ा संकट है। भीली, भिलाली, बारेली, पटेलिया, कोरकू, मवासी निहाली, बैगानी, भटियारी, सहरिया, कोलिहारी, गौंडी और ओझियानी जैसी बोलियों पर संकट है। मध्यप्रदेश के 8.58 प्रतिशत लोगों की मातृभाषा मालवी भी कमजोर पड़ रही है। जनजातीय बोलियों को लिपिबद्ध किए जाने की अब तक कहीं कोई गंभीर कोशिश नहीं हुई है। इन बोलियों ने अपने वाचिक स्वरूप में ही हजारों सालों की यात्रा तय की है। जो भाषाएँ विलुप्ति के कगार पर हैं, उनमें और भी नाम शामिल किए जा सकते हैं। इनमें 11 भाषाएँ अंडमान और निकोबार द्वीप समूह की हैं—ग्रेट अंडमानीज, जरावा, लामोंगजी, लुरो, मियोत, ओंगे, पु, सनेन्यो, सेंतिलीज, शोंपेन और तकाहनयिलांग। साथ ही मणिपुर की भी सात भाषाओं और बोलियों को संकटग्रस्त घोषित किया गया है। ये हैं—एमोल, अक्का, कोइरेन, लामगैंग, लैंगरोंग, पुरुम और तराओ। हिमाचल प्रदेश की बघाती, हंदुरी, पंगवाली और सिरमौदी के अलावा ओडिशा की मंडा, परजी और पेंगो भी इस सूची में शामिल हैं। कर्नाटक की कोरागा और कुरुबा तथा आंध्र प्रदेश की गडाबा और नैकी के अलावा तमिलनाडु की कोटा और टोडा व असम की तेई नोरा और तेई रोंग पर भी खतरा है। अरुणाचल प्रदेश की मरा और ना, झारखंड की बिरहोर, महाराष्ट्र की निहाली, मेघालय की रुगा और पश्चिम बंगाल की टोटो भी इस सूची में शामिल हैं।

क्या है समाधान?

भाषाविदों का मानना है कि जब तक इन बोलियों या भाषाओं को छात्रों के पाठ्यक्रम से नहीं जोड़ा जाता, तब तक इन्हें आगे बढ़ाने की बात बेमानी साबित होगी। खासतौर पर प्राथमिक शिक्षा में यह बहुत जरूरी है। यदि समय रहते इन बोलियों के संरक्षण के लिए ठोस कदम नहीं उठाए जाते तो जल्द ही ये पूरी तरह विलुप्त हो जाएँगी। यह सिर्फ एक बोली या भाषा की नहीं, बल्कि मानव समाज की कई अमूल्य विरासतों की भी विलुप्ति होगी। भारत की बात करें तो यहाँ दो तरह से भाषाएँ हुई लुप्त हैं। एक, सभी क्षेत्रों से लोग शहरों की तरफ गए हैं। इससे उनकी भाषाएँ अधिक विलुप्त हुई हैं। दो, घुमंतू एवं विमुक्त जनजातियाँ बड़ी संख्या में अब शहरों में जा रही हैं, जिस कारण वे अपनी पहचान और संस्कृति को भूल रहे हैं। गाँव के जो लोग शहरों में आकर शहरी वातावरण में रच-बस गए हैं, वे अपनी भाषा और बोलियों को नष्ट करने की ओर अधिक तेजी से बढ़ रहे हैं। इन लोगों के साथ मुख्य समस्या यह रहती है कि वे शहरी वातावरण में अपनी भाषा-बोली को लेकर हीनभावना पाल बैठते हैं। कई बार यह हीनभावना इतनी अधिक हावी हो जाती है कि वे अपने घर पर भी अपने बच्चों को उस भाषा-बोली में बात नहीं करने देते। यदि नई पीढ़ी अपनी स्थानीय बोलियों के शब्दों से इसी गति से कटती रही और उनके मन में अपनी बोलियों को लेकर हीनभावना बढ़ती रही तो बहुत जल्दी हमारी भाषाएँ और बोलियाँ पूरी तरह विलुप्त हो जाएँगी। हम अभी भारतीय भाषाओं के विलुप्त होते शब्द भंडार की चर्चा कर रहे हैं, लेकिन हकीकत यह है कि अभी हमारे पास भाषाओं के संबंध में नवीन आँकड़ा ही उपलब्ध नहीं है। इसलिए जितनी जल्दी हो सके जनगणना के माध्यम से नया आँकड़ा हमारे सामने आए और उसी के अनुसार भाषा संरक्षण के प्रयास हों।

सभी भारतीय भाषाएँ एक-दूसरे की पूरक हैं। इसलिए बात सिर्फ किसी एक भाषा अथवा बोली के संरक्षण की नहीं है, सभी भाषाओं के संरक्षण की है। इस कार्य में सिर्फ भाषाविदों की ही नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका है। अकादमिक संस्थानों में कम से विभिन्न भारतीय भाषाओं और बोलियों के विलुप्त हो रहे शब्दों पर व्यापक स्तर पर शोध कार्य होना चाहिए। भाषा संरक्षण की दिशा में सबसे अहम कदम है कि प्रत्येक बच्चे को उसकी अपनी मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा दी जाए। भारत सरकार ने नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करके अपना काम कर दिया है। अब बारी समाज की है। इसलिए समाज के स्तर पर भाषा और बोली संरक्षण के प्रयास सब स्थानों पर होने चाहिए। चूँकि भाषाओं के

अधिकतर शब्दों को खतरा तीव्र गति से बढ़ते शहरीकरण से है और शहरीकरण को रोक पाना अभी किसी के बूते की बात दिखाई नहीं देती, इसलिए शहरों में रहने वाले लोग तत्काल यह सुनिश्चित करें कि कम-से-कम घर में परिवार के साथ अपनी मातृभाषा में ही बात करें। इसके अलावा अपनी-अपनी भाषाओं को बोलने वाले लोगों के समूह बनाकर अपनी भाषाओं की समृद्धि हेतु काम करें। भाषा संरक्षण में सबसे आवश्यक कार्य है अपनी भाषाओं के शब्द भंडार को उसी समृद्धि के साथ अगली पीढ़ी को सौंपना। यह कार्य समाज को ही करना होगा। क्या हम हर घर, हर परिवार में ऐसा एक प्रयोग कर सकते हैं कि सप्ताह में कम-से-कम एक दिन सभी लोग आपस में आधा घंटा अँग्रेजी के एक भी शब्द का प्रयोग किए बिना केवल अपनी मातृभाषा में बात करें? यदि मातृभाषा का शब्द याद नहीं है तो किसी अन्य भारतीय भाषा का समानार्थी शब्द प्रयोग करें, परंतु अँग्रेजी का नहीं। क्या यह संभव है, इस पर विचार करें।

सरकार और समाज का सामूहिक दायित्व

इसके अलावा कुछ और भी कदम उठाए जा सकते हैं। नीति-निर्धारण की दृष्टि से बात करें तो तकनीकी और आयुर्विज्ञान सहित उच्च शिक्षा के स्तर पर सभी संकायों में शिक्षण, पाठ्य सामग्री तथा परीक्षा का विकल्प भारतीय भाषाओं में भी सुलभ कराया जाना चाहिए। राष्ट्रीय पात्रता व प्रवेश परीक्षा (नीट) एवं संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित परीक्षाएँ तो भारतीय भाषाओं में आरंभ हो गई हैं, परंतु अन्य प्रवेश एवं प्रतियोगी परीक्षाएँ, जो अभी भारतीय भाषाओं में आयोजित नहीं की जा रही हैं, उनमें भी यह विकल्प सुलभ कराया जाना चाहिए। सभी शासकीय तथा न्यायिक कार्यों में भारतीय भाषाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। साथ ही शासकीय व निजी क्षेत्रों में नियुक्तियों, पदोन्नतियों तथा सभी प्रकार के कामकाज में अँग्रेजी भाषा की प्राथमिकता न रखते हुए भारतीय भाषाओं को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। संपूर्ण समाज को अपने पारिवारिक जीवन में वार्तालाप तथा दैनंदिन व्यवहार में मातृभाषा को प्राथमिकता देनी चाहिए। इन भाषाओं तथा बोलियों के साहित्य-संग्रह व पठन-पाठन की परंपरा का विकास होना चाहिए। साथ ही इनके नाटकों, संगीत, लोककलाओं आदि को भी प्रोत्साहन देना चाहिए। चूँकि पारंपरिक रूप से भाषाएँ समाज को जोड़ने का साधन रही हैं, इसलिए सभी लोगों को अपनी मातृभाषा का स्वाभिमान रखते हुए अन्य सभी भाषाओं के प्रति सम्मान का भाव रखना चाहिए। सामाजिक संगठनों, नीति निर्धारकों, जन संचार माध्यमों, पंथ-संप्रदायों के संगठनों, शिक्षण संस्थाओं तथा प्रबुद्धवर्ग को चाहिए कि दैनंदिन जीवन में भारतीय भाषाओं के उपयोग एवं उनके व्याकरण, शब्द चयन और लिपि में परिशुद्धता सुनिश्चित करते हुए उनके संवर्द्धन हेतु हर संभव प्रयास करें।

जन संचार माध्यमों की भूमिका

स्वाभाविक है कि भाषा संरक्षण में जन संचार माध्यमों की बहुत बड़ी भूमिका है। भारतीय भाषाओं के समाचार पत्रों द्वारा आज बड़े पैमाने पर अँग्रेजी के शब्दों का प्रयोग रोमन लिपि में ही होने लगा है। भारतीय भाषाओं के अनेक शब्दों की विलुप्ति के पीछे यह भी एक बड़ा कारण है। जब पाठकों के सामने उनकी अपनी भाषा के बजाय दूसरी भाषा के शब्दों को प्रतिदिन परोसा जाएगा तो धीरे-धीरे दूसरी भाषा के शब्द ही जेहन में बैठते जाते हैं। भारतीय भाषाओं के इस प्रयोग पर सख्त टिप्पणी करते हुए राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित सुप्रसिद्ध भाषाविद डॉ. चांद किरण सलूजा कहते हैं, "भाषा मूलतः संस्कृति का ही अंग है। हर शब्द का अपना एक इतिहास एवं महत्त्व होता है और भाषा के साथ सार्थक्य जुड़ा हुआ है। भाषा विचार की प्रतिपादक होती है। हर शब्द कहीं-न-कहीं एक विचार को बताता है। शब्दों के साथ उनका अपना एक अर्थ जुड़ा हुआ है और वह अर्थ इतिहास से निकलकर आता है। इसका सबसे सुंदर उदाहरण हैं मुहावरे और लोकोक्तियाँ। 'भगीरथ प्रयास' बड़े प्रयास के लिए प्रयुक्त होता है, लेकिन वह पवित्रीकरण और कल्याण के भाव में ही हो सकता है, दुष्ट कर्म के लिए नहीं। श्रवण कुमार की घटना श्रवण कुमार की नहीं, बल्कि माता-पिता की सेवा की घटना है। इसलिए भाषा के साथ इतिहास जुड़ा हुआ है। वर्षों के निरीक्षण के बाद जो सारत्व निकलता है, भाषा उसी सारत्व की प्रवाहिका है। ये तत्त्व शाश्वत होते हैं और शाश्वत तत्त्व ही संस्कृति का अंग बनते हैं। माध्यम उसका भाषा होती है। भाषा के दो कार्य हैं। एक, उन अनुभवों को संग्रहीत करके रखना; और दूसरा, बाद में उन्हें आने वाली पीढ़ियों को प्रदान करना। इसलिए सार्थक शब्दों का प्रयोग ही जन संचार माध्यमों का उद्देश्य होना चाहिए। हम यह मानते हैं कि समाज में सभी लोगों का स्तर समान नहीं होता, इसलिए जन संचार माध्यमों में सरल और सकारात्मक भाषा का प्रयोग होना चाहिए। पत्रकारों के शिक्षण-प्रशिक्षण व पाठ्यक्रम में भी भाषा का प्रश्न शामिल किया चाहिए।"

प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार
संपादक

प्रकाशन विभाग
भारतीय जन संचार संस्थान
अरुणा आसफ अली मार्ग, जेएनयू न्यू कैंपस, नई दिल्ली-110 067

संचार माध्यम

भारतीय जन संचार संस्थान की यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका

खंड 35 (2) आईएसएसएन: 2321-2608 जुलाई-दिसंबर 2023

विषय सूची

1. भारतीय पत्रकारिता कोश : ज्ञान अधिगम का स्रोत 1
चंद्र मणि

2. जनमाध्यम के रूप में लोककथाओं की प्रासंगिकता 9
प्रो. राघवेंद्र मिश्रा

3. बैगा जनजाति की ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में यूट्यूब की भूमिका का अध्ययन 18
डॉ. अनिल कुमार पांडेय

4. ऑनलाइन हिंदी समाचार वेबसाइटों का ऐतिहासिक विकास : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 23
लोकेंद्र सिंह राजपूत और डॉ. शिवेंद्र कुमार मिश्र

5. गांधी का सेवाग्राम : आत्मनिर्भरता की प्रयोगशाला से सामाजिक संप्रेषण 29
डॉ. ईश शक्ति सिंह

6. अमेरिकी समाचार पत्रों में स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों की कवरेज 34
प्रतिभा सिन्हा

7. केंद्रीय विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा की वर्तमान स्थिति का अध्ययन 38
मीनू नावरियाँ और डॉ. लोकनाथ

8. भारत की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियाँ एवं जनसंचार: एक अवलोकन 44
यासिर अरफात और डॉ. अमरेंद्र कुमार

9. ग्रामीण विकास में सोशल मीडिया की उपयोगिता : एक अध्ययन 50
साधिका कुमारी और डॉ. गजेंद्र सिंह अवास्या

10. 'वर्चुअल-विमर्श' में चीन की 'फाइव फिंगर रणनीति' : एक नीति-विश्लेषण 57
डॉ. जयप्रकाश सिंह और संजीव कुमार

11. अराजकता, आतंकवाद और मीडिया : 1990 के दशक में कश्मीर से प्रकाशित समाचार पत्रों का अध्ययन 63
जय भवानी सिंह

12. सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल मापनी का निर्माण एवं प्रमापीकरण 69
प्रो. मनोज कुमार सक्सेना और डॉ. मनमोहन गुप्ता

13. सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं द्वारा संचार के लिए डिजिटल उपकरणों का उपयोग : उत्तर प्रदेश के चुनिंदा गाँवों का अध्ययन 75
अमन दुबे और डॉ. सर्वेश दत्त त्रिपाठी

14. वेब सीरीज के संदर्भ में दर्शकों की व्यापकता और प्राथमिकताएँ : एक अध्ययन 80
डॉ. पवन सिंह मलिक, कुमार मौसम और शिवानी पटेल

15. 'द केरल स्टोरी' फिल्म का समाज पर प्रभाव : एक अध्ययन 88
डॉ. आदित्य कुमार मिश्रा

16. अस्पृश्यता निवारण और बाबासाहब डॉ. बी.आर अंबेडकर : 'मूकनायक' और 'बहिष्कृत भारत' के संदर्भ में एक अध्ययन 95
प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार

17. पुस्तक समीक्षा- जन सरोकार की पत्रकारिता 102

18. आईआईएमसी गतिविधियाँ 105

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 99-104, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

भारतीय पत्रकारिता कोश : ज्ञान अधिगम का स्रोत

चंद्र मणि[1]

सारांश

पाश्चात्य और भारतीय दोनों दृष्टि से कोश की लंबी परंपरा रही है। हालाँकि पाश्चात्य दृष्टि और भारतीय दोनों दृष्टि में कोश की भिन्नताएँ रही हैं। कोश की परंपरा में 'भारतीय पत्रकारिता कोश' इसलिए अलग है, क्योंकि पत्रकारिता का यह पहला कोश है। भारतीय स्वाधीनता का इतिहास पत्रकारिता का भी इतिहास है। स्वाधीनता की लड़ाई में पत्र-पत्रिकाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। तमाम बाधाओं, प्रतिबंध और प्रतिकूल परिस्थितियों के बाद भी भारतीय पत्रकारिता ने अपनी विकास यात्रा तय की। इस विकास यात्रा को समेटने का मूल्यवान काम पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित वरिष्ठ पत्रकार विजयदत्त श्रीधर ने 'भारतीय पत्रकारिता कोश' में किया है। 'भारतीय पत्रकारिता कोश' एक विशेष शोध उपकरण है, जिसमें भारतीय पत्रकारिता के विभिन्न पहलुओं, इतिहास, प्रक्रिया, नैतिकता एवं संस्थान का विस्तार से वर्णन किया गया है। यह कोश आजादी से पहले के पूरे कालखंड की तमाम ऐतिहासिक घटनाओं का दस्तावेज है। प्रस्तुत शोध पत्र में 'भारतीय पत्रकारिता कोश' के महत्त्व को जानने का प्रयास किया गया है, जिसे ज्ञान अधिगम का एक मूल स्रोत माना जा सकता है।

संकेत शब्द : कोश, इनसाइक्लोपीदी, इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका, अमरकोश, हिंदी ज्ञान कोश, समाज विज्ञान कोश, हिंदी साहित्य ज्ञानकोश, भारतीय पत्रकारिता कोश, इतिहास, पत्रकारिता

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य में प्राचीन काल से ही कोश को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। प्राचीन काल में ऋषि-मुनियों ने संस्कृत भाषा की समृद्धि और संस्कृति को संग्रहीत करने के लिए शब्दकोशों का निर्माण किया। वेदों, उपनिषदों और संस्कृत साहित्य में शब्दों का संग्रह विद्यमान था। सबसे प्राचीन कोश 'निघंटु' को माना जाता है। फिर अनेक शब्दकोशों का निर्माण हुआ, जैसे कि अमरकोश, हलायुध कोश, शब्दकल्पद्रुम, वाचस्पत्यम् इत्यादि। भारतीय शब्दकोशों में तत्कालीन ज्ञान, विज्ञान, धर्म, चिकित्सा, शिक्षा और साहित्य के क्षेत्र में अनेकों कोश का विकास हुआ है। इन कोश के माध्यम से असीमित ज्ञान का संग्रह किया गया और विभिन्न विषयों पर विस्तृत जानकारी एकत्रित की गई। समय के साथ-साथ शब्दकोशों का भी विकास हुआ है। इसी कड़ी में एक और उपलब्धि 'भारतीय पत्रकारिता कोश' के रूप में मिली। शिक्षकों, शोधकर्ताओं और मीडियाकर्मियों के लिए 'भारतीय पत्रकारिता कोश' मौलिक स्रोत के रूप में उपयोगी साबित हुआ है। इसके अलावा यह कोश पत्रकारिता के इतिहास के साथ-साथ लोक-माध्यम को भी समझने में मदद करता है। शोध शिक्षा के क्षेत्र में 'भारतीय पत्रकारिता कोश' विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण माना जाता है। भारतीय कोश की परंपरा में यह एक नए अध्याय के रूप में शामिल हुआ है।

पाश्चात्य परंपरा में दिदेरो रचित कोश 'इनसाइक्लोपीदी' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस कोश ने तत्कालीन सरकार को आईना दिखाने का काम किया था। 'इनसाइक्लोपीदी' की बढ़ती लोकप्रियता ने संपादकों और फ्रांस में धार्मिक अधिकारियों के बीच युद्ध को भड़का दिया था (डिडेरॉट, 1999)। संघर्ष के केंद्र में जेसुइट्स (सोसाइटी ऑफ जीसस) थी, जिसने कोश और उसके संपादकों पर हमला करने के लिए 'जेसुइट' पत्रिका का इस्तेमाल किया। यह झगड़ा जारी रहा, जिस कारण अलंबर्त को संपादक पद से इस्तीफा देना पड़ा और दिदेरो को अकेले ही कोश के अगले खंड का संपादन करना पड़ा। बहरहाल, कोश ज्ञान की व्यवस्था से जुड़ा है। वर्षों बाद भी ज्ञान कोश दार्शनिक कार्यों के लिए एक मॉडल के रूप में ही कार्य करता है। इसलिए कोश की प्रासंगिकता हमेशा बनी रहेगी। कोश मानव सभ्यता समाज और संस्कृति के उद्भव और विकास को प्रतिबिंबित करता है। शब्द के बारे में पूर्ण जानकारी की दृष्टि से कोश महत्त्वपूर्ण साधन होते हैं और मनुष्य के बौद्धिक ज्ञान में वृद्धि करते हैं, जिससे मनुष्य का मानसिक विकास होता है। उसी तरह 'भारतीय पत्रकारिता कोश' पत्रकारिता के इतिहास की एक-एक घटनाओं की जानकारी संदर्भ के साथ प्रस्तुत करती है।

शोध उद्देश्य एवं प्रविधि

प्रस्तुत शोध-पत्र ऐतिहासिक प्रकृति का है। इसलिए इस अध्ययन में तथ्यों के संग्रहण हेतु द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण गुणात्मक विधि से किया गया है। ज्ञान कोश की भारतीय परंपरा को समझने के लिए गुणात्मक पड़ताल की गई है। इसके लिए सुविधाजनक सोद्देश्य निदर्शन विधि से पाश्चात्य कोश परंपरा एवं भारतीय कोश परंपरा में हिंदी, संस्कृत, सामाजिक विज्ञान और पत्रकारिता कोश का चयन किया गया है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य ज्ञान कोश की परंपरा में भारतीय पत्रकारिता कोश की भूमिका का अध्ययन करना है।

ज्ञान कोश की पाश्चात्य परंपरा

पाश्चात्य परंपरा में ज्ञान के कोश की अवधारणा यूनानियों की देन है, जिसके मुताबिक वे ज्ञान की विभिन्न शाखाओं के ऐसे एकीकृत स्रोत की रचना करना चाहते थे, जिसकी मदद से सभी नागरिक शिक्षित किए

[1]पीएच.डी शोधार्थी, जनसंचार विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, ईमेल : chandramani949@gmail.com

जा सकें। यूरोपीय ज्ञानोदय के बाद 1755 में सर्वशिक्षा के ज्ञान संबंधी परिवर्तन का श्रेय 'इनसाइक्लोपीदी' के संपादक फ्रांसीसी दार्शनिक डेनिस डिडेरॉट (दिदेरो) को जाता है। उन्होंने अपना यह कार्य गणितज्ञ जीन ले रोंड डी अलंबर्त के साथ मिलकर संपादित किया था। ज्ञानोदय के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण कार्य था, जिसे विज्ञान, कला और व्यापार के क्षेत्र में एक तर्कसंगत शब्दकोश के रूप में पहचान मिली। इसे फ्रांसीसी ज्ञानोदय का सबसे परिवर्तनकारी कार्य माना जाता है। इसे ही आज विश्वकोश के रूप में जाना जाता है। यह विश्वकोश एक दार्शनिक शब्दकोश के रूप में भी जाना जाता है, जिसे एक 'तर्कसंगत शब्दकोश' और 'स्रोत पुस्तक' जैसे दार्शनिक तर्कसंगत वाक्य विन्यास के साथ देखा जाता है। इस बात की चर्चा दिदेरो ने खुद 'एनसाइक्लोपीडिया' शीर्षक लेख में विस्तार से की है। विश्वकोश के संदर्भ में उन्होंने कहा कि उस समस्त ज्ञान को इकट्ठा किया जाए जो अब दुनिया भर में बिखरा हुआ है।

हालाँकि इससे पहले 1704 में जॉन हैरिस कृत 'लेक्सिकॉन टेक्निकम आर ऐन यूनिवर्सल इंग्लिश डिक्शनरी ऑफ आर्ट्स एंड साइंसेज' प्रकाशित हो चुका था (एनसाइक्लोपीडिया, 1998)। जॉन हैरिस एक अँग्रेजी धर्मशास्त्री और वैज्ञानिक थे। 'लेक्सिकन टेक्निकम' नौ विशेषज्ञ संपादकों, दो सामान्य संपादकों की मदद से पूर्ण हो पाया था, जिसके परिणामस्वरूप एक विशाल कार्य को संपन्न किया गया। 'लेक्सिकॉन टेक्निकम' लंबे समय तक बहुत लोकप्रिय था, जो कम-से-कम 1744 तक एप्रैम चैंबर्स के 'साइक्लोपीडिया' के मुख्य प्रतिद्वंद्वी के रूप में कायम रहा। एप्रैम चैंबर्स ने अपने कोश का नाम 'साइक्लोपीडिया' रखा था, जबकि उसके पहले 'साइक्लोपीडिया' या 'इनसाइक्लोपीडिया' शब्द का इस्तेमाल नहीं के बराबर होता था। जब चैंबर्स से पूछा गया कि उन्होंने डिक्शनरी के बजाय साइक्लोपीडिया शीर्षक क्यों चुना? तो उनका जवाब था कि यह शब्द कला और विज्ञान को विभिन्न शाखाओं के आपसी संबंधों को कहीं ज्यादा बेहतर ढंग से व्यक्त करता है (डिडेरॉट, 2019)। चैंबर्स के इस कोश की ख्याति तेजी से पूरे यूरोप में फैलने लगी। उसके कई संस्करण निकल गए और इतालवी समेत यूरोपीय भाषाओं में उसका अनुवाद होने लगा। वहीं 1745 में एप्रैम चैंबर्स ने साइक्लोपीडिया के अनुवाद के लिए दिदेरो के सामने प्रस्ताव रखा और उन्होंने इस प्रस्ताव को स्वीकार लिया। इसके बाद ही दिदेरो अपने विश्वकोश को दुनिया के सामने लेकर आए। उनका विश्वकोश भविष्य के विश्वकोशों के लिए एक नया मानक बना।

दिदेरो और अलंबर्त के ज्ञानकोश 'इनसाइक्लोपीदी' का पहला खंड 1 जुलाई, 1751 को प्रकाशित हुआ। दूसरा खंड 1752 और तीसरा खंड 1753 में जारी किया गया। सातवें खंड तक सभी एक-दूसरे का अनुसरण करते रहे, लेकिन 1758 से इसे निर्देशित करने के लिए दिदेरो को अकेला छोड़ दिया गया और 1772 में उन्होंने कुल 17 खंडों और 11 सचित्र तालिकाओं के साथ कोश को पूरा किया। इसका पूरा नाम Encyclopédie, ou dictionnaire raisonné des sciences, des arts et des métiers था (एनसाइक्लोपीडिया, 1998.बी)। यह विश्वकोश कई मायनों में अलग था। यह पहला विश्वकोश था, जिसमें बहुत से नामित बुद्धिजीवियों एवं शिक्षाविदों के लेख सम्मिलित किए गए थे। यह एक ऐसा विश्वकोश था, जिसने 'यांत्रिक कलाओं' पर सबसे पहले ध्यान दिया। इसके अलावा इस विश्वकोश में 'ज्ञानोदय' (इनलाइटनमेंट) का भी विचार प्रस्तुत किया, जिस कारण इसकी प्रसिद्धि और अधिक हुई। दिदेरो ने अपने लेख में लिखा कि इस विश्वकोश का उद्देश्य लोगों के सोचने के तरीके में परिवर्तन ला देना है। उनकी इच्छा थी कि विश्व के सारे ज्ञान को इनसाइक्लोपीदी में समेट दिया जाए और वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों में यह ज्ञान फैला दिया जाए (डिडेरॉट, 1999)। दिदेरो ने इस विश्वकोश की कल्पना जीवंत विचार की गतिशीलता पर मौजूदा ज्ञान को बदलने के लिए नहीं, बल्कि विचार बदलने के लिए एक इंजन के रूप में की, जिसे टाइम मशीन के रूप समझा जा सकता है। यह विश्वकोश अठारहवीं शताब्दी की महत्तम साहित्यिक उपलब्धि के रूप में जाना जाता है।

दिदेरो और अलंबर्त का मानना था कि 'इनसाइक्लोपीदी' समस्त ज्ञान का दस्तावेजीकरण करेगा। इससे सभी तरह की कलाओं और हस्तकौशल से संबंधित विषयों की जानकारी मिलेगी। इसके अलावा ज्ञान की विभिन्न शाखाओं के वर्गीकरण और उनके अंतरसंबंधों को भी समझने का प्रयास किया जाएगा। यह विश्वकोश सिर्फ संदर्भ ग्रंथ ही नहीं था, बल्कि आस्था और अनास्था का संगम था। इसने उस युग के चर्च और सरकार पर हमला किया और धीरे-धीरे यह विवाद बढ़ता ही चला गया, जिसके कारण दिदेरो और अलंबर्त को संपादक के पद से इस्तीफा देना पड़ा। शायद ही कोई ऐसा विश्वकोश होगा, जिसे राजनीतिक क्षेत्र में इतना बड़ा महत्त्व मिला होगा और जिसने किसी देश के इतिहास और साहित्य पर इतना क्रांतिकारी प्रभाव डाला होगा।

समय के साथ-साथ 'इनसाइक्लोपीदी' का भी प्रकाशन खंड-दर-खंड किया जा रहा था, जो अंततः राजशाही के लिए परेशानी का सबब बनता जा रहा था। परिणामस्वरूप 1751 में पेरिस के आर्चबिशप (ईसाई संप्रदायों में एक उच्च पद) ने 'इनसाइक्लोपीदी' की भर्त्सना की और अगले वर्ष रॉयल कौंसिल ऑफ स्टेट ने उसके प्रकाशन को प्रतिबंधित कर दिया। वहीं 1759 में पेरिस की संसद ने भी कोश की निंदा की और एक आदेश जारी कर दिदेरो और अलंबर्त से सारी सुविधाएँ वापस ले ली गईं (डिडेरॉट, 1999)। इस तरह विश्वकोश को सरकारी दमन का शिकार होना पड़ा। इसमें कोई दो राय नहीं कि ऐसा इतिहास में पहली बार हुआ कि किसी विश्वकोश ने सरकारी तंत्र को हिला दिया और सरकार को उसके खिलाफ कार्रवाई करनी पड़ी।

दिदेरो के विश्वकोश की सफलता कई मायनों में उल्लेखनीय है। वर्षों बाद भी विश्वकोश सभी प्रकार के दार्शनिक कार्यों के लिए एक मॉडल के रूप में कार्य करता रहा। यह अभी भी आधुनिक संस्करण में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। इस कोश को राजनीतिक एवं बौद्धिक सभी दायरों में पढ़ने की अनुशंसा भी की गई थी। 'इनसाइक्लोपीदी' की आधारभूत अवधारणाओं ने समाज-विज्ञानों के विमर्श को अपनी पकड़ में बनाए रखा और आज भी दिदेरो और अलंबर्त को ज्ञानोदय के विकास में उनके अमूल्य योगदान के लिए याद किया जाता है।

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका

दिदेरो और अलंबर्त के 'इनसाइक्लोपीदी' के प्रकाशन के बाद 1768 में स्कॉटलैंड में 'इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका' का पहला संस्करण प्रकाशित हुआ। उसे 32 खंडों में प्रकाशित किया गया था। इस कोश का प्रकाशन दिदेरो और अलंबर्त के कोश को अप्रामाणिक मानकर उसके जवाब में किया गया था। 'इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका' अँग्रेजी भाषा का विश्वकोश है। इस विश्वकोश का प्रिंट संस्करण 2012 से बंद कर दिया गया

और डिजिटल संस्करण शुरू किया गया है। यह विश्वकोश जॉन हेरिस के 'लेक्सिकन टेक्निकम' और फ्रेंच 'इनसाइक्लोपीडी' के साथ प्रतिस्पर्धा में पीछे रह गया (केंट और स्टीवर्ट, 2023)। 'इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका' निरंतर संशोधन करने वाला पहला विश्वकोश था, जिसे संशोधन के उपरांत लगातार पुनर्मुद्रित किया जाता था। 1985 के बाद से 'इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका' के चार भाग हो गए। माइक्रोपीडिया, मैक्रोपीडिया, प्रोपीडिया और सूचकांक। माइक्रोपीडिया और मैक्रोपीडिया में क्रॉस-रेफरेंस का पालन करके जानकारी पाई जाती है। प्रोपीडिया और सूचकांक सामग्री को विषय के आधार पर व्यवस्थित करते हैं।

'इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका' के खंड पाँच के 15वें संस्करण में 'डिक्शनरी' (Dictionary) शब्द के बारे में लिखा गया है कि 1623 में प्रकाशित हेनरी कोकेरन ने अपने ग्रंथ का नाम 'द इंग्लिश डिक्शनरी' (The English Dictionary) रखा। इसके बाद से ही 'डिक्शनरी' (Dictionary) शब्द प्रचलित हो गया (एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका, 1974)। कोश के लिए इसी शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। यहाँ पर अँग्रेजी शब्दकोश की भी चर्चा की जा रही है, क्योंकि आज अँग्रेजी के जो कोश विश्व में सबसे अधिक प्रचलित हैं, उनमें 'ऑक्सफोर्ड' कोश का विशेष महत्त्व है। 1884 में ऑक्सफोर्ड का पहला कोश प्रकाशित हुआ था, लेकिन उसका नाम 'A New English Dictionary on Historical Principles; Founded Mainly on the Materials Collected by The Philological Society' रखा गया। इस कोश के नाम में ऑक्सफोर्ड शब्द का प्रयोग नहीं किया गया था। 1895 में एक और कोश प्रकाशित किया गया, जिसके शीर्षक में ही 'ऑक्सफोर्ड' शब्द का प्रयोग किया गया, जो 'The Oxford English Dictionary' था (अग्निहोत्री, 2017)। यह शब्द आज इतना प्रचलित हो गया कि जब भी शब्दकोश या कोश का नाम लिया जाता है तो सबसे पहले 'ऑक्सफोर्ड' पर ही ध्यान केंद्रित होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह लगभग सभी प्रकार के कोशों का पर्याय बन गया है।

ज्ञान कोश की भारतीय परंपरा

भारतीय परंपरा में सबसे प्राचीन ज्ञानकोश प्रजापति कश्यप द्वारा रचित कोश 'निघंटु' को माना जाता है। निघंटु में वैदिक शब्दों का संकलन है, जिसकी व्याख्या यास्क ने 700 ईसा पूर्व 'निरुक्त' नाम से की थी। इसमें शब्द की 'धातु' लेकर अर्थ बताया गया और उस शब्द का प्रयोग भी बताया गया (रस्तोगी, 2012)। 'निघंटु' का भाष्य 'निरुक्त' है। कई विद्वान् पुराणों को भी ज्ञानकोश की श्रेणी में रखते हैं। दार्शनिक रामअवतार शर्मा ने 'अग्निपुराण' को स्पष्ट रूप से ज्ञानकोश माना है। अग्निपुराण साहित्य में अपनी व्यापक दृष्टि के कारण विशिष्ट स्थान रखता है। विषय की विविधता एवं लोकोपयोगिता की दृष्टि से इस पुराण का विशेष महत्त्व है। विषयवस्तु के आधार पर इसे 'भारतीय संस्कृति का विश्वकोश' कहा जा सकता है। इसमें प्राचीन भारत की विद्याओं का और भौतिकशास्त्रों का व्यवस्थित वर्णन किया गया है। इसके बाद संस्कृत और हिंदी में नाममाला कोशों का उद्भव और विकास प्रतीत होता है। 'निघंटु' एवं 'निरुक्त' के बाद 'शब्दकल्पद्रुम' और 'वाचस्पत्यम्' जैसी रचनाओं को भी ज्ञानकोश की श्रेणी में रखा जा सकता है। पाँचवीं से लेकर अठारहवीं सदी तक की अवधि में रचे गए अनगिनत नाममाला कोशों में अमर सिंह द्वारा रचित 'अमरकोष' का शीर्ष स्थान है। इसे लौकिक संस्कृत का प्रथम कोश माना जाता है।

अमरकोश

'अमरकोष' संस्कृत के कोशों में प्रसिद्ध और लोकप्रिय कोशग्रंथ है। इसके संपादक अमर सिंह थे। यहाँ सबसे पहले शब्दों को समझ लेना जरूरी है। 'श' की जगह पर 'ष' का प्रयोग अमरकोष में किया गया है। दरअसल यह शब्द मूलतः संस्कृत का है। 'संस्कृत को दो भागों में विभक्त करके देखा जाता है, पहला वैदिक संस्कृत और दूसरा लौकिक संस्कृत। वैदिक संस्कृत का प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद है, जहाँ 'कोष' शब्द का प्रयोग किया गया है। लौकिक संस्कृत में 'कोष' और 'कोश' दोनों शब्दों का प्रयोग किया गया है। व्युत्पत्ति की दृष्टि से 'कोश' में 'कुश' धातु है, जिसका अर्थ 'मिलना' है, जबकि 'कोष' में 'कुष' धातु है, जिसका अर्थ 'खींचना', 'निकालना' है (अग्निहोत्री, 2017)। संस्कृत में दोनों शब्दों का प्रयोग किया जाता था। प्रयोग की दृष्टि से संस्कृत और हिंदी साहित्य दोनों में 'कोश' का ही प्रयोग किया जाता है। वहीं अँग्रेजी के शब्द Dictionary के लिए 'कोश' का और Treasure के लिए 'कोष' का प्रयोग किया जाता है।

अमर सिंह के अनुसार अमरकोश का वास्तविक नाम 'नामलिंगानुशासन्' है। अमरकोश में साधारण संस्कृत शब्दों के साथ-साथ असाधारण नामों की भी संख्या अधिक है। कठिन, दुर्लभ और विचित्र शब्दों को ढूँढ़-ढूँढ़कर इस कोश में शामिल किया गया था। यह एक प्रकार से रचनाकार के लिए कर्तव्य माना जाता था। इस कोश में लगभग दस हजार से अधिक नाम हैं। इस कोश को इतना महत्त्वपूर्ण माना गया कि इस पर सत्तर से अधिक टीकाएँ लिखी गईं और रॉजेट ने भी अपने कोश के निर्माण में अमरकोश का आभार माना है। रॉजेट अँग्रेजी के प्रसिद्ध थेसॉरस के रचयिता हैं। अमरकोश की लोकप्रियता में कभी कमी नहीं आई। यहाँ तक कि विद्वानों ने अमरकोश को ही केंद्र में रखकर संस्कृत कोशों को तीन कालखंडों में विभाजित किया है। पहला अमरकोश-पूर्ववर्ती संस्कृत कोश, दूसरा अमरकोशकाल और तीसरा अमरकोशपरवर्ती संस्कृत कोश है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि अधिकतर कोशों ने मुख्य आधार के रूप में अमरकोश का सहारा लिया। मध्यकालीन युग में अधिकांशतः हिंदी कोश अमरकोश से ही प्रभावित अथवा अनूदित थे।

हिंदी ज्ञान कोश

आज भारतीय भाषा में लगभग तीन हजार से अधिक कोश उपलब्ध हैं, जिनमें हिंदी कोशों की संख्या सबसे अधिक है। 13-14वीं शताब्दी में हिंदी के सुप्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो द्वारा रचित 'खालिकबारी' सबसे पुराना और प्रथम कोश माना जाता है। अठारहवीं शताब्दी में यूरोपीय विद्वानों ने व्यवस्थित और उपयोगी कोश की रचना की। इनमें अधिकतर अँग्रेजी-हिंदी कोश थे। हैरिस ने 1790 में अँग्रेजी-हिंदुस्तानी शब्दावली का संकलन किया और इसके आधार पर कोश का निर्माण किया। 'उन्नीसवीं शताब्दी में हिंदी भाषा में सबसे पहला कोश पादरी एम.टी. एडम ने तैयार किया, जो 1829 में 'हिंदी कोश' के नाम से कोलकाता में प्रकाशित हुआ। 1829 में ही फादर मैथ्यू थागरान एडम ने 'डिक्शनरी हिंदी टू हिंदी' प्रस्तुत

की। यह हिंदी में एक अलग प्रकार का पहला कोश था, जिसमें पहली बार हिंदी शब्दों के अर्थ हिंदी में ही दिए गए थे। इसके बाद कई अन्य शब्दकोश हिंदी से संबंधित सामने आए, लेकिन उनकी लोकप्रियता अधिक नहीं थी। 1894 में श्रीधर त्रिपाठी द्वारा रचित 'श्रीधर कोश' की सराहना अधिक हुई। यह कोश किसी हिंदीभाषी भारतीय द्वारा तैयार किया गया पहला कोश था। श्रीधर त्रिपाठी से पहले मुंशी राधेलाल ने भी 1873 में कोश प्रस्तुत किया था।

बीसवीं शताब्दी में अधिकतर कोश प्रादेशिक भाषाओं से अँग्रेजी में और अँग्रेजी से प्रादेशिक भाषाओं में प्रकाशित किए गए थे। इस शती के आरंभ में काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने दस खंडों में 'हिंदी शब्दसागर' नाम से बृहत् हिंदी ज्ञान कोश प्रकाशित किया। यह कोश किसी एक व्यक्ति द्वारा निर्मित न होकर भाषा और साहित्य के मर्मज्ञ अनेक विद्वानों द्वारा तैयार किया गया था। इसमें अर्थ निर्धारण के लिए व्याख्यात्मक पद्धति अपनाई गई थी (दास, 2008)। इसके प्रकाशन के बाद उसका एक और संक्षिप्त संस्करण भी प्रकाशित किया गया। इसे पहला व्यावहारिक और प्रामाणिक हिंदी कोश कहा जाता है। नागरी प्रचारिणी सभा के ही तत्त्वावधान में हिंदी विश्वकोश, हिंदी शब्दसागर एवं पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण हुआ।

बांग्ला भाषा के ज्ञानकोशकार नगेंद्र नाथ बसु ने हिंदी विद्वानों के सहयोग से बांग्ला विश्वकोश के हिंदी रूपांतर 'हिंदी विश्वकोश' की रचना की, जो सन् 1917 में 25 खंडों में प्रकाशित हुआ। महात्मा गांधी ने इसे उपयोगी बताते हुए लिखा कि यह हिंदी के विकास में सहायक होगा (बासु, 1970)। इसके अलावा 1953 में उस्मानिया विश्वविद्यालय द्वारा रचित संक्षिप्त अँग्रेजी-हिंदी कोश, 1958 में रामचंद्र पाठक के भार्गव इंग्लिश-हिंदी डिक्शनरी, हरदेव बाहरी रचित प्रसाद साहित्य कोश और ज्ञानमंडल द्वारा प्रकाशित साहित्य कोश आदि कई कोश उल्लेखनीय हैं। 'हिंदी साहित्य कोश' हिंदी साहित्य एवं उससे संबंधित विषयों का विश्वकोश है। दो भागों में प्रकाशित इस कोश के प्रधान संपादक धीरेंद्र वर्मा थे। इसके प्रथम भाग में पारिभाषिक शब्दावली और द्वितीय भाग में नामवाची शब्दावली का वर्णन है। इसी प्रकार सरकारी और गैर-सरकारी स्तर पर भारतीय भाषाओं में अनेक कोशों और शब्दावलियों का निर्माण हुआ है। केंद्रीय निदेशालय, भारत सरकार द्वारा हिंदी से अनेक भारतीय भाषाओं में कोश निर्मित हुए हैं।

समाज विज्ञान विश्वकोश

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय ने अभय कुमार दुबे के प्रधान संपादकत्व में छह खंडों में 'समाज विज्ञान विश्वकोश' प्रकाशित किया। इस कोश में भारत के बारे में पर्याप्त संख्या में प्रविष्टियाँ दी गई हैं। समाज विज्ञान विश्वकोश हिंदी भाषा में समाज विज्ञान एवं मानविकी से संबद्ध विषयों पर केंद्रित एक विश्वकोश है। इस कोश में अर्थशास्त्र, इतिहास, अंतरराष्ट्रीय संबंध, गांधी-विचार, दर्शन, मनोविज्ञान, मार्क्सवादी विमर्श, मीडिया अध्ययन, फिल्म अध्ययन, टीवी अध्ययन, राजनीति शास्त्र, व्यक्तित्व-कृतित्व, समाज शास्त्र, मानव शास्त्र, स्त्री अध्ययन, साहित्य अध्ययन, भाषा शास्त्र आदि विषयों पर विस्तार से बताया गया है। कुछ प्रविष्टियाँ भूमंडलीकरण एवं उसके आयामों और इतिहास पर हैं। हिंदी क्षेत्र के सांस्कृतिक और बौद्धिक इतिहास के बारे में भी पर्याप्त सामग्री दी गई है। संस्थान निर्माताओं और राजनीतिक सांस्कृतिक अग्रदूतों को भी इस कोश में शामिल किया गया है।

हिंदी साहित्य ज्ञानकोश

हिंदी साहित्य ज्ञानकोश धरोहर है, जो धर्म, संस्कृति, समाज विज्ञान, मीडिया, कला साहित्य, पर्यावरण आदि विषयों के साथ अपने देश और विश्व की सभ्यताओं का विस्तार से वर्णन करती है। ऐसा माना जाता है कि 50 वर्षों के बाद हिंदी में बना यह पहला ज्ञानकोश है। भारतीय भाषा परिषद् कोलकाता और वाणी प्रकाशन के संयुक्त प्रयास से यह कोश सात खंडों में प्रकाशित हुआ है। इसके प्रधान संपादक शंभुनाथ हैं और इसका प्रकाशन अप्रैल 2014 में हुआ। इस कोश में सभी भाषा के विशेषज्ञों के 300 लेखकों की 2600 से अधिक प्रविष्टियाँ हैं। संपादक शंभुनाथ का कहना है कि 'हर युग में साहित्य का विस्तार हुआ है। वर्तमान समय में इसका संबंध जितना राष्ट्रीय संस्कृतियों से है, उतना ही वैश्विक चिंताओं और बहुआयामी मानव विकास से भी। यह भी माना जाने लगा है कि साहित्य का ज्ञान अब एक व्यापक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य और दुनिया की बहुत सारी चीजों को जाने बिना संभव नहीं है (शंभुनाथ, 2019)। यह ज्ञानकोश सामान्य शब्दकोश से इस अर्थ में अलग है कि इसमें सीमित सूचनाओं की जगह शब्द, बीजशब्द या विविध विषयों की अवधारणात्मक विवेचना की गई है।

भारतीय पत्रकारिता कोश

सूचना क्रांति के इस दौर में पत्रकारिता का दायरा काफी बढ़ा है। प्रतिदिन नए-नए समाचारपत्रों एवं पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ हो रहा है। इसके साथ-साथ नए-नए समाचार चैनल और वेबसाइट भी शुरू किए जा रहे हैं। परिणामस्वरूप देश भर में समाचारपत्र-पत्रिकाओं, समाचार चैनलों और मीडियाकर्मियों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। ऐसे में भारतीय मीडिया की विविध सूचनाओं को एक जगह एकत्रित करना कठिन काम है, लेकिन इस काम को वरिष्ठ पत्रकार और पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित विजयदत्त श्रीधर ने पूरा किया है। उन्होंने 'भारतीय पत्रकारिता कोश' दो खंडों में तैयार किया है। यह कोश भारतीय भाषा में तैयार किया गया पहला कोश है। इस कोश के पहले खंड में भारतीय पत्रकारिता के प्रारंभ से लेकर 1900 तक विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रकाशित समाचार पत्रों का कालक्रमानुसार विवरण है और दूसरे खंड में सन् 1901 से 1947 तक की पत्रकारिता का इतिहास दर्ज है। 'भारतीय पत्रकारिता कोश' को विजयदत्त श्रीधर ने आधी-अधूरी सामग्री को एकत्रित कर उसे परिपूर्ण बनाया और फिर पत्रकारिता के इतिहास को विश्लेषित किया है। वास्तव में इस ख्याति के हकदार विजयदत्त श्रीधर हैं, क्योंकि जिस तरह से उन्होंने पत्रकारिता के संपूर्ण इतिहास को ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत करने और पत्र-पत्रिकाओं के सहेजने का काम किया है, वह महत्त्वपूर्ण है।

भारतीय पत्रकारिता कोश के पहले खंड को विजयदत्त श्रीधर भारत के इतिहास का सबसे ज्यादा उथल-पुथल भरा कालखंड मानते हैं। यह वही कालखंड है, जब देश आजादी पाने के लिए आतुर था। इस काल में पत्रकारिता की शुरुआत कैसे हुई और किन संघर्षों से अपनी राह बनाने में उसने सफलता प्राप्त की, इसका पूरा विवरण एक जगह शायद अब तक उपलब्ध नहीं था, लेकिन अब आ गया है और वह भारतीय पत्रकारिता कोश में दर्ज है। इस कोश में उन सभी पत्र-पत्रिकाओं का विस्तार से विवरण दिया गया है, जो उस दौर में निकलती थीं। इसके अध्ययन से उन

सभी पत्र-पत्रिकाओं की कार्य पद्धति को समझा जा सकता है। ऐतिहासिक पत्र-पत्रिकाओं की कार्य पद्धति को समझने के बाद यह सवाल मन में जरूर आता है कि आज पत्रकारिता किस दिशा में जा रही है, जबकि आजादी के पहले का दौर बंदिशों का दौर था और आज लगभग बंदिशें नहीं के बराबर हैं, फिर भी पत्रकारिता अपने उसूलों पर खड़ी नहीं है। आज के दौर की पत्रकारिता सत्ता की रणनीतियों के साथ तालमेल बनाने में व्यस्त है। ऐसे में पत्रकारिता सामाजिक सरोकार से भटक सकती है। जरूरी है कि वह अपने इतिहास को देखे और समझे कि संघर्ष के दौर में भी पत्रकारिता कैसे की जाती थी। इसके लिए भारतीय पत्रकारिता कोश एक मार्गदर्शक के रूप में मदद करता है और आजादी से पहले की वस्तुस्थिति से परिचित भी कराता है।

समय के साथ-साथ पत्रकारिता में भी बदलाव देखा जा सकता है। बदलाव से तात्पर्य है कि तकनीक के विकास ने पत्रकारिता को भी बदल दिया। प्रारंभ में देखा जाए तो भारत में मुद्रण प्रौद्योगिकी का आगमन मिशनरी साहित्य के प्रकाशन के लिए हुआ था, किंतु यह तकनीक पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से लोकचेतना को जाग्रत, प्रेरित और एकताबद्ध करने का माध्यम बनी। इसी तकनीक का उपयोग करके भारतीय भाषाओं में जगह-जगह से पत्र-पत्रिकाएँ निकलीं। वहीं आज तकनीक के निरंतर विकास ने कई वेबसाइट और ई-पत्र-पत्रिकाओं को शुरू किया। बदलते पत्रकारिता परिप्रेक्ष्य की कहानी भी भारतीय पत्रकारिता कोश में उपलब्ध है।

यह कोश भारतीय पत्रकारिता का संदर्भ कोश है। जब भी पत्रकारिता से संबंधित संदर्भ की जरूरत होगी, इस कोश का सहारा लिया जाएगा, क्योंकि इसकी प्रामाणिकता के सबूत सप्रे संग्रहालय में संगृहीत पत्र-पत्रिकाएँ हैं। भारतीय पत्रकारिता कोश के संदर्भ में वरिष्ठ पत्रकार रामबहादुर राय ने कहा है कि हिंदी में भारतीय पत्रकारिता का यह पहला संदर्भ ग्रंथ है। इसे पत्रकारिता का पुराण भी माना जा सकता है। ऐसा पुराण, जिसमें कथा तो है, परंतु काल्पनिकता की जगह यथार्थपरक घटनाएँ हैं। इतिहास के पात्र हैं। वे अपनी भूमिका में देखे जा सकते हैं (राय, 2008)। भारतीय पत्रकारिता के विवरणात्मक परिचय को समझने के लिए यह एक उपयोगी कोश है। इसके अध्ययन से लेखक की शोध की गहनता को भी महसूस किया जा सकता है।

ज्ञानकोश में पत्रकारिता के इतिहास का विवरण कालक्रमानुसार दिया गया है। प्रथम अध्याय भारत में पत्रकारिता के प्रादुर्भाव से शुरू होता है। फिर दूसरा, तीसरा, चौथा... इसी कालक्रमानुसार जारी रहता है। जेम्स आगस्टस हिकी की पत्रकारिता से शुरू होकर 'हिंदी का भाषिक संस्कार 'सरस्वती' पत्रिका पर कोश का अध्याय खत्म होता है। सरस्वती का प्रकाशन जनवरी 1900 में आरंभ होता है। यह वह समय था, जब हिंदी में एक मासिक पत्रिका की आवश्यकता महसूस की जा रही थी, लेकिन इसके लिए साधन नहीं जुटा पा रहे थे। बाबू चिंतामणि घोष और नागरी प्रचारिणी सभा की मदद से इस पत्र का प्रकाशन संभव हो पाया। कोश में सरस्वती के पहले संपादक बाबू श्यामसुंदर दास और 1903 में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी दोनों के संपादन में पत्रिका के विकास क्रम एवं विषयवस्तु का विस्तार से वर्णन किया गया है। कोश का एक-एक अध्याय पत्रकारिता जगत् की अनकही कहानी को बयान करता है। कोश का एक अध्याय मानक अखबार है। इसमें 'हिंदू' के प्रकाशन की कहानी है। इसका प्रकाशन 20 सितंबर, 1878 को चेन्नै से शुरू हुआ। मानक अखबार की गरिमा को बचा के रखने में आज भी हिंदू की प्रतिष्ठा बनी हुई है। हिंदू की साज-सज्जा पर शुरू से ही ध्यान दिया जाता था। संपादकीय बहुत चुस्त, विद्वत्तापूर्ण और पारदर्शी शैली में लिखा जाता था। हिंदू का संपादकीय आज भी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहे छात्र-छात्राओं के लिए उपयोगी माना जाता है। यहाँ तक कि सिविल सर्विसेज की तैयारी कर रहे छात्र-छात्राएँ भी संपादकीय के इंतजार में रहते हैं, क्योंकि हिंदू की निष्पक्षता उसका मुख्य गुण है। हिंदू ने जनता की सेवा और पत्रकारिता के उत्कृष्ट मापदंडों के संरक्षण के संकल्प को हमेशा जीवित रखा।

जीती शाही फरमान की लड़ाई अध्याय में 'समाचार सुधावर्षण' को हिंदी पत्रकारिता का एक गौरवशाली अध्याय बताया गया है। मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर ने एक फरमान निकाला, जिसमें देशवासियों से अपील की गई थी कि अँग्रेजों को देश से बाहर निकाल दें। समाचार सुधावर्षण ने इस फरमान को ज्यों-का-त्यों प्रकाशित किया था (श्रीधर, 2008)। 'अमृत बाजार पत्रिका' ने वर्नाकुलर प्रेस एक्ट को मात देने के लिए रातोंरात अखबार को बांग्ला से अँग्रेजी अखबार में तब्दील कर दिया। वहीं पेशावर से उर्दू का प्रथम समाचारपत्र 'मुर्तजा' प्रकाशित किया गया था, जो साप्ताहिक था। 'शिवशंभु के चिट्ठे' अध्याय में बताया गया है कि कोलकाता से प्रकाशित 'भारत मित्र' ने हिंदीभाषियों को दुनिया की हलचलों से कैसे अवगत कराया। 'भारत मित्र' ने सबसे चुनौतीपूर्ण काम यह किया कि रात को हुंडियों का होने वाला भुगतान बंद करवा दिया।

'कलम और तलवार' अध्याय में 'भारतभ्राता' के तेवरों और संपादकीय टिप्पणी की चर्चा की गई है। जब दादाभाई नौरोजी ब्रिटिश संसद के लिए निर्वाचित हुए तब 'भारतभ्राता' ने टिप्पणी की है कि यह प्रथम बार है कि जब पार्लियामेंट में एक हिंदुस्तानी ने आसन पाया है। हम लोगों को असीम आनंद होता, यदि मिस्टर दादाभाई नौरोजी हमारी ओर से मेंबर चुन कर भेजे जाते, लेकिन हमारी सरकार ने हम लोगों को आज तक यह अधिकार नहीं दिया है कि हम लोग एक भी मेंबर भारत प्रजा की ओर से चुनकर भेज सकें (श्रीधर, 2008, पृ.392-393)। ऐसे वृत्तांत समाचारपत्र-पत्रिकाओं और संपादकों की सोच की गहराई, समझ की प्रौढ़ता और पेशेवर परिपक्वता के ज्वलंत दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं। ऐसी अनगिनत कहानी और सूचनाओं का विश्लेषण इस कोश में मौजूद है। उस समय पत्र-पत्रिकाएँ किस उद्देश्य से निकलते थे, यह जानने के लिए उन सभी पत्र-पत्रिकाओं को देखना होगा, तभी उसके उद्देश्य को जान पाएँगे। इसके लिए यह कोश सबसे उपयोगी है। इस दौर की एक और महत्त्वपूर्ण पहल, जिसे लोकचेतना अभियान कह सकते हैं जो भारतीय समाचारपत्र-पत्रिकाओं में प्रसंग के रूप में प्रकाशित होती थी।

भारतीय पत्रकारिता कोश के दूसरे खंड में बीसवीं शताब्दी की भारतीय पत्रकारिता का वृत्तांत है। इस दौर में पत्रकारिता दुगुने जोश और जुनून के साथ आजादी की लड़ाई में भागीदारी करने लगी। भारत के कोने-कोने से भारतीय भाषाओं में अधिकाधिक समाचारपत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन होने लगा। इस खंड का पहला अध्याय सांस्कृतिक अनुष्ठान है। इसका आरंभ 1901 से होता है। बीसवीं सदी के शुरुआती दौर की बात जब भी होगी तो 'स्वराज' को सबसे पहले याद करना होगा। 'स्वराज' के

संपादकों को मिली सजा इस बात की गवाही देती है कि इसने आजादी के लिए समाज को जगाने का जो संकल्प लिया, वह अद्वितीय था। कोश में 'स्वराज' से संबंधित एक अंश को देखिए—'उम्र ढाई साल, कुल प्रकाशित अंक 75, कुल संपादक 8, सभी संपादकों को कुल मिलाकर सजा और देश निकाला 125 वर्ष।' यह सजा स्वराज के संपादकों को अपनी लेखनी के लिए मिली थी। बावजूद इसके संपादक के लिए विज्ञापन निकलता था, जिसमें स्पष्ट रूप से लिखा जाता था कि जौ की दो सूखी रोटी, एक गिलास पानी और हमेशा जेल जाने की तैयारी का संकल्प संपादक पद की योग्यता है। फिर भी स्वराज के लिए कभी संपादकों की कमी नहीं हुई। बीसवीं सदी राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय अनेक युगांतरकारी घटनाक्रम की साक्षी रही है।

'माडर्न रिव्यू' के संपादक रामानंद चटर्जी की टिप्पणियाँ निर्भीक और दो-टूक होती थीं। जब 'केसरी' के संपादक बाल गंगाधर तिलक को देश निकाला कर दिया गया, तब 'माडर्न रिव्यू' ने आगाह किया कि 'अपनी प्रतिभा, विद्वत्ता, निर्भीकता और मनोबल से तिलक भारतीयों की आशाओं और आकांक्षाओं के प्रतीक बन गए हैं।' 'माडर्न रिव्यू' के तेवर को देखते हुए 'वंदे मातरम्' के संपादक अरविंद घोष ने टिप्पणी की है कि 'माडर्न रिव्यू' ने हमारी पत्रिकाओं के साहित्य में एक नया अध्याय आरंभ किया है, अतिशयोक्ति नहीं होगा। इन तमाम पत्र-पत्रिकाओं का परिचय इस कोश में मिलता है।

1907 में मदन मोहन मालवीय ने 'अभ्युदय' का प्रकाशन आरंभ किया। इसका उद्घोष ही था कि हमारे देश का अभ्युदय सबसे ऊँचा पर्वत नगाधिराज हिमालय की तरह ऊँचा हो। यह पत्र भी स्वतंत्रता संग्राम का समर्थक था। मदन मोहन मालवीय ने ही हिंदी पत्रकारिता में लेखकों के लिए पारिश्रमिक की परंपरा का सूत्रपात किया था। इसके बाद से ही लेखकों को पारिश्रमिक मिलने लगा था। 'अभ्युदय' का तेवर कभी कम नहीं हुआ, हमेशा एक नए अंदाज में खबरों को प्रकाशित करने की क्षमता होती थी। भगत सिंह की फाँसी के बाद 'अभ्युदय' ने मई 1931 में भगत सिंह अंक निकाला। इस अंक में भगत सिंह के बयान को हू-ब-हू प्रकाशित किया कि 'बम केवल बहरों के कान खोलने के लिए फेंके गए थे।' इसका असर ब्रिटिश हुकूमत पर इतना पड़ा कि इस अंक को उसने जब्त कर लिया और संपादक को जेल जाना पड़ा था।

अँग्रेजी का राष्ट्रीय दैनिक 'लीडर' का विस्तृत वर्णन कोश में किया गया है। 24 अक्टूबर, 1909 को मदन मोहन मालवीय के संपादन में इलाहाबाद से इसका प्रकाशन आरंभ हुआ। लीडर जो भी मुद्दा उठाता था, उसका फॉलोअप मुस्तैदी से करता था और संपादकीय टिप्पणियाँ भी धारदार होती थीं। यह इसकी सबसे बड़ी विशेषता थी, लेकिन असहयोग आंदोलन का विरोध करने पर इसकी प्रसार संख्या में कमी आ गई, जिसकी भरपाई पंजाब नरसंहार और ब्रिटिश हुकूमत द्वारा किए गए अत्याचारों को प्रकाशित करने के बाद फिर से बढ़ गई। कई बार यह राह से भटका। जब गांधीजी ने भारत में सत्याग्रह आंदोलन की शुरुआत की तो 'लीडर' ने इसका समर्थन नहीं किया। इसके कारण उसकी साख भी गिरी और भर्त्सना का शिकार होना पड़ा, लेकिन वापस अपनी राह पर लौट आया। यह जानकारी शायद ही आज की पीढ़ी को होगी, लेकिन भारतीय पत्रकारिता कोश ने इस याद को ताजा कर दिया।

बलिपंथी पत्रकारिता में 'प्रताप', 'प्रभा', 'बांबे क्रॉनिकल' और 'पाटलिपुत्र' आदि के बारे में विस्तार से बताया गया है। 'प्रताप' को कभी नहीं भूला जा सकता है। इसके संपादक गणेश शंकर विद्यार्थी एक सांप्रदायिक दंगे में शांति स्थापित करने के प्रयास में शहीद हो गए थे। आज राष्ट्र, राष्ट्रीयता, राष्ट्रवाद जैसे मुद्दे पर बहस होती, लेकिन समझने की कोशिश नहीं के बराबर होती है। ऐसे में 'प्रताप' के अंक को देखना चाहिए कि उस दौर में गणेश शंकर विद्यार्थी राष्ट्र को लेकर क्या कहते हैं? विद्यार्थी जी प्रताप में 'राष्ट्र की नींव' शीर्षक लेख में लिखते हैं कि राष्ट्र महलों में नहीं रहता। प्रकृत राष्ट्र के निवास स्थल वे असंख्य झोंपड़े हैं, जो गाँवों और पुरवों में फैले हुए खुले आकाश के देदीप्यमान सूर्य और शीतल चंद्र और तारागण से प्रकृति का संदेश लेते हैं। इसलिए राष्ट्र की जड़ें तब तक मजबूत नहीं हो सकतीं, जब तक इन लहलहाते पौधों की जड़ों में जीवन की मजबूती का जल नहीं सींचा जाता (श्रीधर, 2008, पृ.649)। भारतीय राष्ट्र के निर्माण के लिए उसके गाँवों और पुरवों में जीवन की ज्योति की आवश्यकता है। गांधीजी भी कहते हैं भारत की आत्मा गाँवों में बसती है। इसी प्रताप में 'चंपारण में अँधेरा' शीर्षक लेख में कहा गया है कि चंपारण में अँग्रेजों द्वारा किसानों को प्रताड़ित किया जाता था, जिसमें किसानों से नील की खेती जबरदस्ती कराई जाती थी। 27 अक्टूबर, 1924 को प्रताप में 'धर्म की आड़' शर्षक से लेख प्रकाशित किया गया। इस लेख में विद्यार्थी जी लिखते हैं कि 'इस समय देश में धर्म की धूम है। उत्पात किए जाते हैं तो धर्म और इनसान के नाम पर और जिद की जाती है, तो धर्म और इनसान के नाम पर रमुआ पासी और बुद्धू फलाँ, धर्म और ईमान को जाने या जाने, लेकिन उनके नाम पर उबल पड़ते हैं और जान लेने और जान देने के लिए तैयार हो जाते हैं।' 1924 में विद्यार्थी जी प्रताप में जो लिख रहे हैं, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है।

बिहार से प्रकाशित 'सर्चलाइट' को कोश ने एक अलग अंदाज में स्थान दिया है। कोश में लिखा गया है कि 'बिहार में स्वतंत्रता संग्राम और जनजागरण का इतिहास तेजस्वी समाचार पत्र 'सर्चलाइट' के बगैर अधूरा है (श्रीधर, 2008, पृ.697)। यह ऐतिहासिक पत्र जन भावनाओं को अभिव्यक्त करने की दिशा में हमेशा अग्रसर रहा। भारतीय पत्रकारिता कोश पत्रकारिता के इतिहास की सूचनाओं के साथ-साथ समकालीन राष्ट्रीय संघर्षों की झलक प्रस्तुत करता है, जो समाचारपत्र-पत्रिकाओं की इबारत के रूप में दर्ज है।

आज सारी दुनिया 'विश्व अहिंसा दिवस' मनाकर जिस महामानव के संदेश का अभिनंदन कर रही है, उस महामानव ने जन-जन से अपने संवाद का माध्यम पत्रकारिता को बनाया था। महात्मा गांधी ने 'इंडियन ओपीनियन', 'यंग इंडिया', 'नवजीवन', 'हरिजन' पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया था। ये पत्रिकाएँ हिंदुस्तान की आत्मा और करोड़ों भारतीयों की भावनाओं से जुड़ी थीं। गांधीजी ने जनमानस को समझने और समझाने के लिए सबसे उन्मुक्त लोकतांत्रिक प्रक्रिया के रूप में पत्रकारिता को समझा। 'यंग इंडिया' के माध्यम से गांधीजी ने टिप्पणियाँ लिखकर हिंदुत्व का खुलासा किया था। 'यंग इंडिया' में लेख के माध्यम से गांधीजी बताते हैं 'मैं हिंदू क्यों हूँ?' उन्होंने कहा कि हिंदू धर्म सबसे अधिक सहिष्णु है। इसमें कट्टरता का जो अभाव है, वह मुझे बहुत पसंद आता है। संदेश यह है कि किसी धर्म की सबसे खूबसूरत चीज उस धर्म की सहिष्णुता है।

पत्रकारिता का एक स्वर बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर के माध्यम से मुखर हुआ। उन्होंने अछूतों के उद्धार के उद्देश्य से 'मूकनायक', 'बहिष्कृत भारत', 'समता', 'जनता' और 'प्रबुद्ध भारत' का प्रकाशन किया। इन पत्रों के माध्यम से बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर ने दलित समस्याओं को उठाने और दलित शोषित आबादियों को जाग्रत करने का बखूबी कार्य किया था। उनकी पत्रकारिता समाज को एक नई दिशा देने एवं उसकी चेतना को उभारने के लिए प्रयासरत थी। अंबेडकर की समूची पत्रकारिता को हम वैकल्पिक पत्रकारिता के रूप में देख सकते हैं। उन्होंने वैकल्पिक पत्रकारिता के प्रतिमान को स्थापित किया। बाबा साहब एक पत्रकार के रूप में भी दलितों की मुक्ति, नए राष्ट्र के निर्माण के लिए कार्य करते रहे।

23 अगस्त, 1923 को कोलकाता से 'मतवाला' का प्रकाशन शुरू हुआ। यह पत्रिका हिंदी में व्यंग्योक्तियों और विनोदी शैली के कारण बहुत लोकप्रिय थी। इस पत्रिका ने हिंदी में हास्य रस के पत्र की कमी को पूरा करने का सफल प्रयास किया था। अध्यात्मिक दर्शन पर केंद्रित पत्रिका 'कल्याण' का प्रकाशन 1926 में गोरखपुर से हुआ। इसके संपादक हनुमान प्रसाद पोद्दार थे। इस पत्रिका ने संस्कृत में लिपिबद्ध ग्रंथों को हिंदी में विशेषांक के रूप में प्रस्तुत किया। हिंदी की अधिकतर पत्रिकाओं ने 'कल्याण' की भूमिका का अभिनंदन किया। 'कल्याण' हिंदी के समाचारपत्र-पत्रिकाओं में ऐसी पहली पत्रिका थी, जिसकी प्रसार संख्या एक लाख हो गई थी। ऐसा ही एक और प्रयास दुलारेलाल भार्गव के संपादन में प्रकाशित मासिक पत्रिका 'सुधा' का था। 'सुधा' में सिर्फ मौलिक रचनाएँ ही प्रकाशित की जाती थीं। मार्च 1920 का 'सुधा' का अंक 'कार्टून विशेषांक' के रूप में प्रकाशित हुआ था। इस अंक में कार्टून की विकास यात्रा और समकालीन कार्टूनिस्ट से संबंधित शोधपरक लेख प्रकाशित किए गए थे। ऐसी ही पत्रकारिता से जुड़ी अनगिनत सूचनाओं और विश्लेषणों का भंडार है विजयदत्त श्रीधर रचित भारतीय पत्रकारिता कोश।

ज्ञान कोश प्रबुद्धता और सार्वभौमिकता के प्रतीक के रूप में कार्य करता है। यह दस्तावेज समय और समय की भावना के बारे में हमेशा बोलने का काम करता है। विजयदत्त श्रीधर के काम में हमेशा समय की उपस्थिति और लुप्त होती सूचनाओं को संदर्भ के साथ प्रस्तुत करने की तीव्रता को देखा जा सकता है। इस कोश से पत्रकारिता के इतिहास को जीवंत रूप में महसूस किया जा सकता है। उन्नीसवीं या बीसवीं सदी की पत्रकारिता के संघर्ष की कहानी को देखना हो तो कोश का अध्ययन अनिवार्य है।

भारतीय पत्रकारिता कोश का एक मूल उद्देश्य अनुभववाद भी हो सकता है। इसलिए कि विजयदत्त श्रीधर ने अपने पत्रकारीय लेखन के दौरान जो कुछ भी अनुभव प्राप्त किया, उसे संदर्भ के साथ प्रामाणिक रूप में व्यवस्थित किया है। ऐसी धारणा है कि अनुभव से बड़ा सत्य नहीं होता है। उन्होंने इस कार्य को दुनिया के लिए एक उपकरण के रूप में प्रस्तुत किया है। ऐसा उपकरण, जो भारतीय पत्रकारिता के इतिहास को परत-दर-परत दिखाने में मदद करता है। यह कोश पत्रकारिता की दुनिया में सक्रिय जुड़ाव के लिए एक घोषणापत्र के रूप में प्रतीत होता है, क्योंकि ऐतिहासिक रूप से उपयोगी लेखों को बड़ी ही खूबसूरती से प्रमाणित और चित्रित किया गया है, जो साहित्यिक और बौद्धिक तंत्र का निर्माण करने में सक्षम है। भारतीय पत्रकारिता कोश से ऐसा प्रतीत होता है कि विजयदत्त श्रीधर ने केवल आने वाली पीढ़ियों के लिए काम करने का संकल्प लिया है, क्योंकि इस ज्ञान कोश से हमारी आने वाली पीढ़ी पत्रकारिता के अस्तित्व से सम्मुख हो पाएगी। वरिष्ठ पत्रकार नारायणदत्त ने सही ही कहा है कि इस अनूठे उपक्रम ने हम सब को सदा के लिए ऋणी बना लिया है। यह ऐसा ऋण है, जिसे ढोने में सुख और लाभ दोनों है। हम सबको अधिक से अधिक इस ऋण का लाभ लेना चाहिए, ताकि इतिहास से सीख कर आने वाले कल को बेहतर कर सकें। यह ऋण को चुकाने का एक सुलभ तरीका हो सकता है।

निष्कर्ष

भारतीय कोश परंपरा साहित्य और ज्ञान के एक महत्त्वपूर्ण हिस्से को दर्शाती है, जिसमें विज्ञान, संस्कृति, इतिहास, धर्म, कला, वास्तुकला, चिकित्सा, ज्योतिष, संस्कृत, भाषा, विद्या और कला आदि के संबंध में जानकारी समृद्ध होती है। भारतीय कोश परंपरा में कई प्राचीन ग्रंथों के सार का समावेश होता है, जो भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को समझने में मदद करती है। कोश ज्ञान के धरोहर को सँजोए रखने में मदद करता है। इसी क्रम में भारतीय पत्रकारिता कोश ने पत्रकारिता के इतिहास को सहेजने का काम किया है। भारतीय पत्रकारिता कोश को ज्ञान अधिगम का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत माना जाता है। इस कोश से भारतीय पत्रकारिता के इतिहास, पत्रकारों के योगदान, भारतीय भाषाओं की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं आदि से संबंधित जानकारी आसानी से प्राप्त हो पाती है। यह एक प्रमाणित और विश्वसनीय संदर्भ ग्रंथ है, जिससे शिक्षक, शोधार्थी, मीडियाकर्मी और छात्र-छात्राएँ अपने लेखन में संदर्भ का प्रयोग कर सकते हैं। इसके माध्यम से भारतीय पत्रकारिता के विभिन्न पहलुओं के बारे में गहराई से समझा जा सकता है और भारत में पत्रकारिता के विकास के संदर्भ में भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। यह एक मूल्यवान स्रोत है, जिससे विभिन्न समयावधि में हुई घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस कोश में उन पत्र-पत्रिकाओं को भी शामिल किया गया है, जो प्रकाशन के कुछ समय बाद बंद हो गए या ब्रिटिश हुकूमत द्वारा जब्त कर लिए गए। ज्ञान कोश एक किताब से कहीं अधिक होता है। इसकी महत्वाकांक्षाएँ बहुत बड़ी होती हैं। इस ग्रंथ में सभी भाषाओं के समाचारपत्र-पत्रिकाओं का प्रामाणिक वृत्तांत लिपिबद्ध करने के साथ-साथ भारतीय नवजागरण की सभी गतिविधियों के यथा प्रसंग का भी उल्लेख किया गया है।

संदर्भ

अग्निहोत्री, आर. (2017) कोश परंपरा : सिंहावलोकन. रचनाकार. https://www.rachanakar.org/2017/04/blog-post_73.html से 24/07/2023 को पुनःप्राप्त.

अवतंस, ए. (2008). हिंदी कोश निर्माण का विकास और चिंताएँ. विश्वभारती. https://rapidiq.files.wordpress.com/2008/10/hindi-kosh-nirman.pdf से 20/07/2023 को पुनःप्राप्त.

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका. (20 जुलाई 1998). परिभाषा, इतिहास, उदाहरण और तथ्य. https://www.britannica.com/

topic/encyclopaedia/Encyclopaedias-in-general से 18/07/2023 को पुनःप्राप्त.

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका. (20 जुलाई 1998बी). परिभाषा, इतिहास, उदाहरण और तथ्य. https://www.britannica.com/topic/encyclopaedia/Encyclopaedias-in-general से 18/07/2023 को पनुःप्राप्त.

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका. (एन.डी.). नेशनल लाइब्रेरी ऑफ स्कॉटलैंड इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका. जेस्टोर. https://www.jstor.org/site/national-library-of-scotland/encyclopaedia-britannica/encyclopaediabritannica-27803311/ से 22/07/2023 को पुनःप्राप्त

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका. (1974). खंड 5, पंद्रहवाँ संस्करण. पृष्ठ.715

गोस्वामी, के. (एन.डी.). भाषाविज्ञान : कोशविज्ञान. ई.पी.जी. पाठशाला. http://epgp.inflibnet.ac.in/epgpdata/uploads/epgp_content/S000018HI/P001757/M023492/ET/1506596694HND_P5_M31_Koshvigyan.pdf से 20/07/2023 को पुनःप्राप्त.

डिडेरॉट, डी. (19 जून 2019). स्टैनफोर्ड इनसाइक्लोपीडिया ऑफ फिलॉसफी. https://plato.stanford.edu/entries/diderot/ से 18/07/2023 को पुनःप्राप्त.

डिडेरॉट, डी. (1999). अठारहवीं सदी की टाइम मशीन : डेनिस डिडेरॉट का विश्वकोश. जेस्टोर. https://www.jstor.org/stable/pdf/41299144.pdf?refreqid=excelsior%3Ac58e4ba0cd551c41764dbc7762b0f376&ab_segments=&origin=&initiator=&acceptTC=1 से 22/07/2023 को पुनःप्राप्त

डिडेरॉट, डी. और अलंबर्त. (एन.डी.). डिडेरॉट और अलंबर्त सहयोगात्मक अनुवाद परियोजना का विश्वकोश. https://quod.lib.umich.edu/d/did/ से 22/07/2023 को पुनःप्राप्त.

दास, एस.एस. (2008). हिंदी शब्द सागर. खंड 1-10, वाराणसी : नागरी प्रचारिणी सभा.

पांडेय, बी. (2022). कोश निर्माण की प्रक्रिया. https://www.youtube.com/watch?v=0ytGZOaz9IM से 20/07/2023 को पुनःप्राप्त

पुस्तकालय, डब्ल्यू.यू. (2023). एक क्रांतिकारी विश्वकोश. विश्वविद्यालय पुस्तकालय. सेंट लुइस : वाशिंगटन विश्वविद्यालय https://library.wustl.edu/news/a-revolutionary-encyclopedia/ से 20/07/2023 को पुनःप्राप्त.

बासु, एन. (1970). हिंदी विश्वकोश खंड -10. https://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.444720/mode/2up?view=theater से 24/07/2023 को पुनःप्राप्त.

बुक्सहिंदी. (एन.डी.). काशी नागरी प्रचारिणी सभा. https://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.482203 से 24/07/2023 को पुनःप्राप्त.

रस्तोगी, के. (2012). समसामयिक अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान. दिल्ली: अविराम प्रकाशन. पृष्ठ 141-149.

राय, आर. (2008). पत्रकारिता का जंतर-मंतर. प्रथम प्रवक्ता, 12 सितंबर, 2008, पृष्ठ-2.

लेवी, एम., केंट, सी. एच. डब्ल्यू., और स्टीवर्ट, डी. ई. (2023). इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका : इतिहास, संस्करण, और तथ्य. https://www.britannica.com/topic/Encyclopaedia-Britannica-English-language-reference-work से 24/07/2023 को पुनःप्राप्त

शंभुनाथ. (2019). हिंदी साहित्य ज्ञानकोश, खंड-1 प्रथम संस्करण. कोलकाता : भारतीय भाषा परिषद. पृष्ठ.9

श्रीधर, वी. (एन.डी.). पत्रकारिता का जंतर-मंतर : रामबहादुर राय. आंचलिक पत्रकार. https://www.anchalikpatrakar.com से 22/07/2023 को पुनःप्राप्त.

श्रीधर, वी. (2008). भारतीय पत्रकारिता कोश. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 9-17, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

जनमाध्यम के रूप में लोककथाओं की प्रासंगिकता

प्रो. राघवेंद्र मिश्रा[1]

सारांश

कथाओं की, किस्से-कहानियों की परंपराएँ इधर फिर से जनमाध्यम विमर्श का विषय हैं। स्टोरीटेलिंग के नामकरण के साथ मल्टीमीडिया की शक्ति का उपयोग कर मनोरंजन, शिक्षा और उत्प्रेरणा के साधन के रूप में इनका उपयोग प्रभावी रूप में किया जा रहा है। मूल रूप से मौखिक परंपरा के स्वर रूप में दुनिया की विविध संस्कृतियों में प्राचीन काल से ही प्रचलित कथा कहने की यह परंपरा समय के साथ, प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों के साथ साम्यता स्थापित करती आई है और इस तरह इसकी प्रासंगिकता एवं उपादेयता सार्वभौमिक बनी रही है। लोककथाएँ केवल मनोरंजन और शिक्षा का माध्यम ही नहीं रही हैं, बल्कि ये एक सांस्कृतिक अवयव भी हैं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी सांस्कृतिक मूल्य एवं व्यवहार इन लोककथाओं के माध्यम से संरक्षित एवं स्थानांतरित होते रहे हैं। इस तरह यह लोककथाएँ संस्कृति की संरक्षक एवं संवर्धक की भूमिका में भी रही हैं। आज डिजिटल स्टोरीटेलिंग के माध्यम से इनके बहुविध अनुप्रयोग सामने आ रहे हैं एवं इनके सम्मोहन में, आकर्षण में युवा पीढ़ी भी उसी तरह बँधती जा रही है, जिस तरह हमारी पुरानी पीढ़ियाँ बँधी रही हैं। एक इंटरैक्टिव माध्यम के रूप में यह लोकमाध्यम अपने आधुनिक रूपांतरणों के साथ एक प्रभावी संप्रेषण माध्यम के रूप में सक्रिय है। प्रस्तुत शोधपत्र विश्लेषणात्मक पद्धति से लोककथाओं की प्रभावशीलता के मूल्यांकन का प्रयास करता है।

संकेत शब्द : लोककथा, लोकमाध्यम, जनमाध्यम, डिजिटल स्टोरीटेलिंग, मौखिक परंपरा

प्रस्तावना

लोककथा की परंपरा हजारों वर्षों से जीवित है। यह बहुत ही प्राचीन, रोचक और साहित्यिक शैली के प्रारंभिक उदाहरण के रूप में मौखिक परंपरा से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही वह कथा की परंपरा है, जिसमें लोकजीवन और लोक का संघर्ष, उसके जीवन से जुड़े विविध भाव, विविध घटनाएँ, प्रेम प्रसंग, नायकों के किस्से, दुःख-दर्द, उपदेश और नीति-निर्देश आदि समाहित होते हैं। 'लोक-कथाओं का जन्म लोक-जीवन से होता है। लोककथाओं का केंद्र बिंदु लोक-जीवन का अनुभव है, जिसको नर-नारी अपनी प्रतिभा के अनुसार 'कथ्य' में बुन लेते हैं' (भाटिया, 1995)। लोककथा लोक के अनुरंजन का हमेशा से प्रमुख माध्यम रही है और ऐसा माना जाता है कि सभ्यता के अनादिकाल से यह प्रचलन में रही है। परियों की कथाएँ दुनिया के बहुत से हिस्सों में लोकप्रिय लोककथा का ही एक रूप हैं। इस तरह लोककथाएँ मौखिक परंपरा की कहानियाँ हैं या ऐसी कहानियाँ हैं, जिन्हें लोग लिखित रूप में कहानियों के बजाय एक-दूसरे को सुनाते हैं। ये दंतकथाओं, मिथकों और परियों की कहानियों सहित कहानी सुनाने की कई परंपराओं से निकटता से जुड़ी हुई हैं। प्रत्येक मानव समाज की अपनी लोककथाएँ होती हैं और अगली पीढ़ियों को सौंपी जाने वाली ये प्रसिद्ध कहानियाँ ज्ञान, सूचना और इतिहास को आगे बढ़ाने का एक महत्त्वपूर्ण तरीका हैं।

परंपरागत संचार सभ्यता के आदिकाल से मौजूद है और दुनिया के हर समाज में इसके विविध रूप प्रचलन में रहे हैं और अभी भी सजीव रूप में उपस्थित हैं। रूप-स्वरूप भले ही बदला हो, लेकिन दुनिया के विकसित यूरोप और उत्तरी अमेरिका में भी ये लोक माध्यम अभी भी मौजूद हैं और आबादी के एक बड़े हिस्से में काफी लोकप्रिय भी हैं। मौखिक संचार की परंपरागत विधियों में, जिसे समग्र रूप से हम लोकवार्ता अथवा फोकटेल के रूप में रखते हैं, यूरोप में परीकथाएँ अथवा फेयरीटेल्स, लोकगाथाएँ, वीरगाथा, नीतिकथाएँ, मुहावरे, पहेलियाँ, चुटकुले आदि पुराने समय से प्रचलन में रहे हैं। परीकथाएँ लोककथा का लोकप्रिय रूप हैं, जो यूरोप में सदियों से प्रचलन में रही हैं। 100 से 200 ईस्वी में रोमन समाज में कामदेव और मानस जैसी परीकथाओं की चर्चा मिलती है। ग्रीस में ईसप काल में, जो छठीं सदी ईसा पूर्व माना जाता है, परीकथाओं का उल्लेख मिलता है।

सिंडरेला की कहानी एक विख्यात लोककथा है, जिसकी मूलकथा अथवा प्रेरक कथा के बारे में माना जाता है कि यह ग्रीको-मिस्र लोककथा, जो ईसा पूर्व पहली सदी की है, उससे उपजी है। सत्रहवीं सदी आते-आते यूरोप में अपनी लोककथाओं को लेकर संग्रह और विस्तार की चेतना का विकास दिखाई देता है और जर्मनी, फ्रांस और अन्य देशों में इनके पुनर्लेखन और संग्रहण का काम शुरू होता है। उत्तरी यूरोप में नृत्य के लिए कथा गाथागीतों का भी उपयोग किया जाता था। यूरोप में राष्ट्रवाद के प्रसार के साथ लोकमाध्यमों जैसे लोकगीतों, लोकसंगीत और लोककथाओं को वरीयता मिली और उनके संरक्षण और संवर्धन का काम किया गया। आज इतिहास और संस्कृति के झरोखे के रूप में और पॉपुलर संगीत के आधार के रूप में इनको पर्यटन नीति के अहम हिस्से के तौर पर लगभग सभी यूरोपीय देशों में विकसित किया गया है।

मौखिक संचार की परंपरा अफ्रीकी महाद्वीप में भी समृद्ध है और सैकड़ों साल पुरानी है। अफ्रीकी लोकवार्ताओं के केंद्र में प्रकृति है और जानवर कहानियों के सूत्रधार हैं, नायक हैं। इस तरह संरचना में ये पंचतंत्र की तरह दिखाई देती हैं। कछुए और खरगोश की लोकप्रिय कथा भी मूल रूप से अफ्रीकी लोकवार्ता है। 'मूनलाइट टेल्स' अफ्रीकी लोककथाओं में काफी लोकप्रिय रही हैं और ये लगभग हर कबीले, हर संस्कृति में पाई जाती हैं। मध्यपूर्व के देशों की बात करें तो अफ्रीका और एशिया से मिस्र, लीबिया, ईरान, इराक, कुवैत, सऊदी अरब, कतर, सायप्रस, लेबनान, सीरिया, इसराइल, बहरीन, संयुक्त अरब अमीरात, यमन, जॉर्डन, ओमान,

[1]पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्य प्रदेश, ईमेल : raghava74mishra@gmail.com

फिलिस्तीन, तुर्की आदि देश और क्षेत्र इसमें शामिल किए जाते हैं। ये बहुत-सी उन जनजातियों के क्षेत्र भी हैं, जो अपनी संपन्न गीत-संगीत, कलाकारी की परंपराओं के लिए जानी जाती हैं। 'अरेबियन नाइट्स' एक प्रसिद्ध और दुनिया भर में लोकप्रिय लोककथा का रूप है। 'अलादीन' और 'अलीबाबा और चालीस चोर' जैसी कहानियाँ मध्य-पूर्व की लोककथाओं के वैश्विक स्तर पर लोकप्रिय उदाहरण हैं।

पूरे चीन में क्षेत्रीय संस्कृति के वैविध्य से भरपूर लोकगीतों, लोककथाओं और मिथकों की मात्रा विशाल और विविध है। वर्षों से चीनी सरकार और विश्वविद्यालय पूरे चीन से लोककथाओं और गीतों का संग्रह कर रहे हैं। इस संग्रह में अब तक 1.8 मिलियन से अधिक कहानियाँ और 3 मिलियन से अधिक लोकगीत जमा हो चुके हैं, जो इस समृद्धि का परिचायक हैं। चीन की मौखिक संचार परंपरा में महाकाव्य (शिशी) के रूप में वर्गीकृत लोकगीत और लंबे गाथागीत या गीतात्मक परियों की कहानियों के समान कथात्मक कविताएँ (ज़ुशीशी) शामिल हैं। लोककथाओं (मिंजियन गुशी), मिथकों (शेन्हुआ), किंवदंतियों (चुआंशुओ), जानवरों की कहानियों (डोंगवु गुशी) और कहानियों की कई अलग-अलग शैलियाँ इनमें शामिल हैं। चीनी मिथकीय रचनाएँ निर्माण, किंवदंती, धर्म, देवता और पौराणिक आँकड़े, ब्रह्मांड विज्ञान, पौराणिक स्थान, पौधे, पदार्थ और पक्षी, ड्रेगन, मछली जैसे, ह्यूमनॉइड, स्तनधारी, सिमियन, साँप जैसा और सरीसृप आदि से भरी पड़ी हैं। जापान के परंपरागत जनमाध्यम जैसे लोकनाट्य, लोकवार्ता, कलाएँ आदि पूरी दुनिया में लोकप्रिय हैं। जापानी लोककथाएँ और पौराणिक कथाएँ सैकड़ों सालों की धरोहर हैं और देश के दो मुख्य धर्मों, शिंतोवाद और बौद्ध धर्म के प्रभाव के साथ-साथ भारत, चीन और अन्य जगहों की कहानियों पर आधारित हैं।

भारत में लोककथाओं की परंपरा

भारत में लोककथाओं और नैतिक कथाओं की सुदृढ़ परंपरा रही है, जिसने लोगों का मनोरंजन करने के साथ-साथ शिक्षा और संस्कार तथा जीवन मूल्य भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित करने का कार्य किया है। भाषा के आरंभ से वर्तमान तक ये कथाएँ जीवंत हैं और लोगों के मध्य लोकप्रिय हैं। इन कथाओं में देवताओं से लेकर सामान्य मनुष्य तक, हमारे सामाजिक प्रसंग, नायक और उनके गाथा वर्णन आदि उपलब्ध हैं। मूल रूप से ये कहानियाँ रामायण, महाभारत, पुराण आदि से प्रेरित हैं और इन ग्रंथों द्वारा स्थापित सांस्कृतिक, सामाजिक और व्यक्तिगत मूल्यों को रोचक ढंग से लोगों के सामने रखने और उन्हें उत्प्रेरित करने का काम करती हैं। संस्कृत की दंतकथाओं का उपयोग आधुनिक भारत में प्रभावी रूप से नैतिक और मूल्य आधारित शिक्षा के लिए किया जा रहा है। इनमें हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक विविधता और नैतिक मूल्यों को पिरोया गया है, जिससे विद्यार्थी उन संस्कारों और मूल्यों से परिचित हो पाते हैं, जो हमारी प्राचीन संस्कृति का आधार रहे हैं।

भारत लोककथाओं का देश है। कथा कहना अथवा कहानी कहने की कला हमारे लोकजीवन का अटूट हिस्सा रही है। हम सबने अपने दादा-दादी से, नाना-नानी से अनेक कहानियाँ सुनी होंगी। उनमें से अधिकतर कहानियाँ उन्हें भी उनके पूर्वजों से मिली हैं। इस तरह श्रुति और स्मृति की शाश्वत परंपरा से ये किस्से-कहानियाँ हमारी पीढ़ी का हिस्सा बनी हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कहानी सुनाना भारत का एक लोकप्रिय लोक माध्यम है। हमारे देश के प्रत्येक समुदाय और क्षेत्र ने अपनी कहानी कहने की शैली विकसित की है, जिसका उपयोग सदस्यों को कहानी सुनाने के लिए किया जाता है। संगीत और वर्णन के संयोजन वाली ये कहानियाँ उपलब्धियों, धार्मिक कथाओं, योद्धाओं की वीरता, पूर्वजों के जीवन और मनोरंजन की कहानियों को प्रस्तुत करती हैं। हमारे महान् महाकाव्य, संस्कृत ग्रंथ, पुराण, पंचतंत्र, हितोपदेश आदि कहानी सामग्री के महान् स्रोत हैं। थोड़े से बदलाव या स्थानीयकरण के साथ ये कहानियाँ अभी भी जीवित हैं और लोगों का मनोरंजन कर रही हैं और उन्हें प्रेरित कर रही हैं।

लोककथा भारत के विशाल लोकसाहित्य का अमूल्य हिस्सा है, जिसमें अनेक प्रकार की कथाएँ, किस्से, कहानियाँ शामिल हैं। इनमें परीकथाएँ, नैतिक और धार्मिक कथाएँ, व्रत कथाएँ, मनोरंजन के लिए बनी कथाएँ, वीरगाथा, दंतकथा, तंत्र कथाएँ, बाल कथाएँ, प्रेम कथाएँ आदि सम्मिलित किए जा सकते हैं। भारत लोककथाओं की आदिभूमि रहा है। वैदिक सभ्यता से पूर्व से लोककथाएँ यहाँ मौजूद रही हैं। वेदों में भी अनेक कथाओं का वर्णन प्राप्त होता है। लोकाथाएँ अनेक रूपों में अभिव्यक्त होती हैं। कुछ कहानियाँ एकल होती हैं और एक कथा कहकर पूर्णविराम लग जाता है, तो कुछ में शृंखला-सी आबद्ध हो जाती हैं। इन कथाओं में कहानी अंत में लौटकर आरंभ की ओर आ जाती है और फिर एक नई कहानी शुरू हो जाती है। 'कथासरित्सागर', 'बेताल पचीसी' और 'सिंहासन बत्तीसी' ऐसी ही कहानियाँ हैं, जिनमें कहानी के पात्र एक नई कहानी बनाते रहते हैं और इस तरह शृंखला का विस्तार होता जाता है। इन कथाओं के पात्र हमारे परिवेश से होते हैं और स्थानीय होते हैं। अनेक पात्र हमारी कल्पनाओं को मूर्त रूप देने के लिए भी गढ़े जाते हैं और उनमें चमत्कारी शक्तियाँ भी होती हैं। प्रकृति इनमें प्रमुखता से मौजूद होती है और वनस्पतियाँ, पेड़-पौधे, नदी, पहाड़ एवं अन्य प्राकृतिक तत्त्व इनमें नायक की तरह होते हैं। पंचतंत्र की कहानियाँ तो जंगल के जानवरों के माध्यम से ही लगभग पूरी कहानी कहती हैं। इसी तरह तोता-मैना की कथा में प्रेमकथा को पक्षियों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। हमारी फंतासियाँ भी इन कहानियों में खूब जगह पाती हैं। परियों का देश, जादूगरनी, दानव, चमत्कारी नायक, शक्तिशाली मददगार, इच्छा पूरी करने वाले उपकरण आदि इन कथाओं का हिस्सा होते हैं। लेकिन ऐसा ही हो, जरूरी नहीं है। हमारे मनोभावों को उकेरने वाली कहानियाँ भी होती हैं और इनमें प्रेम, करुणा, शांति आदि के भाव भी होते हैं। इनमें संदेश छिपा होता है और अक्सर ये लोक कहानियाँ सुखांत होती हैं और कोई-न-कोई सबक जरूर देती हैं।

उद्देश्य के आधार पर लोककथाएँ अनेक प्रकार की हो सकती हैं। हम लोककथाओं को निम्न सामान्य रूपों में विभाजित कर सकते हैं :

नायकों की गाथाएँ : ये नायक वास्तविक और ऐतिहासिक भी हो सकते हैं और काल्पनिक भी। हमारे यहाँ वीर योद्धाओं, सेनानायकों, रक्षकों, राजाओं को आधार बनाकर अनेक लोककथाएँ प्रचलन में हैं। हर समुदाय, हर समूह, हर क्षेत्र का नायक होता है, जिसके कार्यों के आधार पर कहानियाँ बनती हैं। इन कहानियों के माध्यम से उनकी शौर्यगाथा का गान होता है और अगली पीढ़ी उनके बलिदानों से परिचित होती है। हमारे देश में भगवान राम और कृष्ण के अतिरिक्त अनेक ऐतिहासिक,

काल्पनिक नायकों के शौर्य पर आधारित लोककथाएँ प्रचलित हैं। छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश के रीवा संभाग और उत्तर प्रदेश के सोनभद्र के क्षेत्रों में लोरिक-चंदा की कथा खूब प्रचलित है। यह एक प्रेमकथा भी है और वीर कथा भी। इसी कथा के आधार पर इसका गेय रूप लोकगाथा 'चंदैनी' के रूप में भी काफी लोकप्रिय है।

पशु-पक्षी, पेड़-पौधों, प्राकृतिक तत्त्वों और जानवरों से संबंधित : लोककथाएँ मनुष्य और प्रकृति के तादात्म्य और आत्मीय संबंध को भी व्याख्यायित करती हैं। अक्सर कहानियों में कोई बूढ़ा बरगद होता है; पेड़ आदमी से संवाद करते हैं; नदी, पहाड़, झरने आदि जीवंत चरित्र के रूप में प्रस्तुत होते हैं और इस तरह, आदमी और अन्य जीवों के बीच का रिश्ता इन लोकथाओं में स्पष्ट होता है। यह इस बात का भी संकेत होता है कि हमारा प्रकृति से कैसा तादात्म्य रहा है। पंचतंत्र की कहानियाँ इसका जीता-जागता उदाहरण हैं।

बुझौवल और पहेली वाली : हास्य और चुटीलेपन के साथ कही जाने वाली कहानियाँ लोक के मनोविलास और मानसिक व्यायाम का भी साधन होती हैं और ऐसी लोककथाएँ अत्यंत लोकप्रिय रही हैं। इनमें प्रश्नोत्तर शैली का प्रायः उपयोग होता है। कथा में एक समस्या रहती है और उसका समाधान भी होता है। आज भी अकबर-बीरबल को आधार बनाकर रचित कथाएँ हमारा मानसिक व्यायाम कराती हैं। इसी तरह राजा कृष्णदेवराय के दरबार के प्रसिद्ध पंडित तेनाली राम की ऐसी ही कहानियाँ काफी लोकप्रिय हैं। बहुत सारी लोककथाओं में राजा के पास एक बुद्धिमान मंत्री होता है और रानी के पास एक बुद्धिमान दासी होती है, जो समस्या से निकलने का रास्ता सुझाते हैं।

रहस्य-रोमांच से भरी : रहस्य-रोमांच से भरी कहानियों में अक्सर किसी भौगोलिक क्षेत्र की खोज, बहुत सारी चुनौतियों से लड़कर नायक का लक्ष्य हासिल करना आदि शामिल होते हैं। अक्सर कहानी में राक्षस अथवा पिशाच होता है जो खतरनाक परिस्थितियाँ पैदा करता है। गुप्त खजाने की खोज, दुश्मन की जानकारी लेना, ऐयारी की कहानियाँ ऐसी ही कहानियाँ होती हैं।

उपदेशात्मक और नैतिकता बोध कथाएँ : लोककथा की यह सबसे बड़ी विशेषता होती है कि अंत में वह बुराई पर अच्छाई की जीत का संदेश देती है। हमारी अधिकतर लोककथाएँ जीवन मूल्य, सत्य और मानवीय मूल्यों का संदेश देती हैं। अनेक कथाएँ महापुरुषों के उपदेशों पर ही बनी होती हैं। पंचतंत्र और हितोपदेश आदि में उपदेशात्मक और नैतिकता बोध की कहानियाँ कही गई हैं। इनके अतिरिक्त हमारे सारे पौराणिक आख्यान ऐसे ही संदेशों से भरी कथाओं को हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं।

साधु-संतों की कथाएँ : हमारा देश संत-महात्माओं का देश रहा है और उनके त्याग, तपस्या और योगदान से ही इस देश का और इसकी संस्कृति का विकास हुआ है। इन संतों के जीवन से जुड़े चमत्कारों पर बहुत-सी कथाएँ विकसित हुई हैं, जो इनके कार्यों, इनके संदेश और इनके प्रति लोक विश्वास को और भी मजबूत करने का काम करती हैं। ऐसी लोककथाएँ काफी लोकप्रिय भी हैं और अभी भी लगातार नई कथाएँ समाज में प्रचलित हो रही हैं।

बाल कथाएँ : लोककथा का एक महत्त्वपूर्ण कार्य बच्चों का मनोरंजन और उन्हें सीख देना है। लोककथा का एक लोकप्रिय पर्याय ही दादा-दादी, नाना-नानी की कहानियाँ हैं, जो विशेष रूप से बच्चों के लिए बनाई गई हैं। बच्चों के समाजीकरण में इन कथाओं की बड़ी भूमिका है और ये कहानियाँ परोक्ष रूप में सामाजिक एकता, व्यक्तित्व विकास, जीवन मूल्यों की समझ विकसित करने जैसा भी काम करती हैं।

प्रेम कथाएँ : प्रेम कथाएँ लोककथा का बहुत ही सुंदर रूप हैं। प्रेम प्राचीन भारत में कभी भी वर्जित विषय नहीं रहा। इस सुंदर मानवीय अभिव्यक्ति को, कोमल और सृजनात्मक भाव को हमेशा से सकारात्मक दृष्टि से देखा गया है। हालाँकि समय के साथ इस पर बहुत से प्रतिबंध भी लगते चले गए। अनेक लोककथाएँ पूर्व वैदिक काल से ही प्रेम के आख्यान कहती हैं। वैदिक काल और उत्तर वैदिक काल में भी प्रेम कथाएँ लोकप्रिय रही हैं। आदिवासी समाजों में भी अद्भुत प्रेम आधारित लोककथाएँ काफी लोकप्रिय रही हैं। इन कथाओं में पर्याप्त नाटकीयता और उतार-चढ़ाव भी दिखते हैं और अनेक कथाएँ दुखांत रूप में भी प्रचलित हैं। ऐसी ही एक दुखांत प्रेमकथा नर्मदा से जुड़ी हुई है। नर्मदा को चिरयुवा और अक्षत यौवना भी कहा जाता है। गंगा के बाद भारत की सर्वाधिक पवित्र माने जाने वाली इस नदी के इस नामकरण के पीछे स्पष्ट भौगोलिक कारण हैं, लेकिन साथ ही लोक में, विशेष रूप से नर्मदा के उद्गम क्षेत्र अमरकंटक के आदिवासी अंचल में एक अद्भुत लोककथा भी प्रचलित है। अमरकंटक से नर्मदा के अतिरिक्त सोन और जोहिला नदियाँ भी निकलती हैं। प्रचलित लोककथा के अनुसार नर्मदा का विवाह शोणभद्र से तय रहता है। शोणभद्र यानी सोन को नदी के बजाय नद माना जाता है। जोहिला नर्मदा की प्रिय सखी और दासी होती है। नर्मदा सोन को देखने और अपना संदेश देने के लिए जोहिला को भेजती है, जिसे सोन नर्मदा समझ लेता है और प्रणय निवेदन कर देता है। जोहिला सोन के आकर्षण में इस प्रणय निवेदन को ठुकरा नहीं पाती। नर्मदा को जब यह ज्ञात होता है तो वह क्रोध और अपमान में सोन का त्याग कर देती है और विपरीत दिशा में चल पड़ती है। इस प्रकार यह एक दुखांत लोककथा है। वास्तविकता में भी नर्मदा का प्रवाह भारत के प्राकृतिक अपवाह से उल्टा है और सोन नदी में जोहिला का संगम होता है।

इसी तरह महाराष्ट्र के गढ़चिरौली से निकलकर छत्तीसगढ़ में बहने वाली शिवनाथ नदी से भी एक दुखांत लोककथा जुड़ी हुई है। कथा के अनुसार गढ़चिरौली के गोंड राजा के छह भाई और एक बहन थे। बहन का नाम फुलबासन था, जो शिवनाथ नामक गरीब आदिवासी लड़के से प्यार कर बैठी, जिसका राजा के छह भाई विरोध कर रहे थे। राजा ने फिर भी बहन की इच्छा का सम्मान करते हुए परीक्षा स्वरूप शिवनाथ को राजमहल के चारों ओर छह महीने में दीवार खड़ी करने का काम दिया। इस बीच राजा को स्वप्न आता है कि वे नदी पर जो बाँध बनाना चाहते हैं, उसकी सफलता के लिए परिवार के किसी व्यक्ति की बलि चढ़ानी होगी। अन्य भाई शिवनाथ की बलि देने की बात कहते हैं, लेकिन राजा इनकार कर देते हैं। इसी बीच राजा को किसी काम से बाहर जाना होता है और अन्य भाई शिवनाथ को बाँध में चुनवाकर उसकी बलि दे देते हैं। फुलबासन बेसुध होकर शिवनाथ को खोजते हुए बाँध के पास पहुँचती है, जहाँ उसे एक बुढ़िया द्वारा घटना की जानकारी मिलती है। फुलबासन बाँध के उस जगह पर पहुँचती है, जहाँ शिवनाथ को चुनवाया गया था। उसकी एक अँगुली बाहर दिखाई देती है, जिसमें पहनी हुई अँगूठी में फुलबासन की

साड़ी का किनारा फँस जाता है। दुखी फुलबासन शिवनाथ से कहती है कि यहाँ प्यार को समझने वाला कोई नहीं इसलिए चल शिवनाथ, छत्तीसगढ़ जाबो। यह कहकर फुलबासन साड़ी खींचती है, जिससे शिवनाथ नदी बहने लगती है। शिवनाथ के शव के साथ नदी में कूदकर फुलबासन अपने प्राण त्याग देती है। कहते हैं इसीलिए शिवनाथ का पानी सिर्फ छत्तीसगढ़ में ही बहता है। हालाँकि यह इकलौती कथा नहीं है। एक और लोककथा भी आती है, जिसमें प्रकारांतर में ऐसी ही घटना के बाद दोनों प्राण त्याग देते हैं और नदी बहने लगती है।

प्रेम की लोककथाओं में नल-दमयंती से लेकर तोता-मैना तक की कथाएँ हमारे देश में लोकप्रिय हैं। अधिकतर परीकथाएँ भी प्रेम कथा ही होती हैं और अक्सर इनका सुखांत होता है। मलिक मोहम्मद जायसी के लोकप्रिय महाकाव्य पद्मावत का आधार भी एक प्रेमकथा ही है, जो लोककथा के रूप में लोगों के बीच पहले से ही प्रचलित है।

धार्मिक कथाएँ : वेदों में, रामायण में, महाभारत में अनेक लोककथाओं को पाठ का भाग बनाया गया है। पुराणों में लोककथाओं के रूप में ईश्वर की महिमा, शक्ति और ईश्वरीय आस्था का गुणगान करती अनेक कथाएँ शामिल हैं। धार्मिक लोककथाएँ लोगों को धर्म और उससे जुड़े मूल्यों से जोड़ने का काम करती हैं। भारत में भक्ति आंदोलन के साथ अनेक नई धार्मिक लोककथाएँ सामने आईं और पौराणिक कथाओं की लोक व्याख्याएँ नए-नए कथात्मक रूपों में प्रकट हुई। वस्तुतः धार्मिक पारंपरिक संप्रेषण में कथा वार्ता एक महत्त्वपूर्ण रूप है, जो भारत में अत्यंत प्रचलित है। हमारे परिवारों में कथा श्रवण की परंपरा रही है और विशेष व पवित्र तिथियों, त्योहार, पर्व, व्रत आदि के अवसर पर कथा सुनने की परंपरा अभी भी सजीव है। सत्यनारायण व्रत की कथा, हरतालिका तीज व्रत की कथा, करवा चौथ की कथा के अतिरिक्त नागपंचमी की कथा, अन्य देवी-देवताओं की कथा लोग श्रद्धा के साथ और सामूहिक रूप में सुनते हैं। भागवत महापुराण की कथा सुनना हर हिंदू के जीवन का एक बड़ा अवसर माना जाता है। इसी तरह रामकथा श्रवण भी लोकप्रिय है। ये धार्मिक लोककथाएँ आस्था, विश्वास और धार्मिक मूल्यों से लोगों को जोड़ने का काम करती हैं और काफी लोकप्रिय हैं।

सामाजिक कथाएँ : सामाजिक लोककथाएँ सामाजिक मूल्यों और सामाजिक व्यवहार सिखाने का काम करती हैं। ये कथाएँ स्वीकृत सामाजिक व्यवहार से लोगों को परिचित कराती हैं और इस तरह उसके सही समाजीकरण में सहायक होती हैं। जो सामाजिक व्यवहार स्वीकार्य नहीं हैं, उनकी भी जानकारी इन कथाओं के माध्यम से लोगों को मिलती है। इसके अतिरिक्त सामाजिक संबंधों और उसकी महत्ता, सामाजिक मेलजोल आदि भी इन कथाओं के विषय होते हैं। सामाजिक लोकरीति और विश्वास इन कथाओं में अभिव्यक्त होता है।

परी कथाएँ, भूत-प्रेत, राक्षस, दानव और फंतासी कथाएँ : विषम परिस्थितियों में, अनजान और भयानक शत्रुओं से सामना और उनका शमन इन कहानियों का प्रतिपाद्य होता है। ये कल्पना लोक की कहानियाँ कहती हैं और इनमें नायक-नायिका के साथ-साथ खलनायक के रूप में राक्षस, चुड़ैल, डायन, भूत-प्रेत आदि होते हैं। फंतासियों में राजकुमार अथवा नायक होते हैं और वे राजकुमारी अथवा परी को इस विषम परिस्थिति से निकालते हैं। ऐसी कथाएँ हमारे अंदर बैठे डर का भी प्रतिनिधित्व करती हैं और इस डर से निकलने का रास्ता भी दिखाती हैं।

इन कथाओं में से कुछ का उद्देश्य किसी सबक, किसी संदेश, किसी नीति को सिखाना होता है तो कुछ शुद्ध मनोरंजन के लिए होती हैं। नायकों की गाथाओं में वास्तविक नायकों के साथ-साथ काल्पनिक नायकों की कहानियाँ होती हैं। पशु-पक्षी और जानवरों की कहानियों का लोकप्रिय और सटीक उदाहरण विष्णु शर्मा का पंचतंत्र है। तोता-मैना की कहानी पशु-पक्षी और प्रेम कथा दोनों का उदाहरण है। रहस्य-रोमांच से भरी कहानियों का उदाहरण विक्रम-बेताल की कहानी है। उपदेशात्मक और नैतिकता बोधकथाओं में हम कथासरित्सागर, पंचतंत्र और पौराणिक, धार्मिक कथाओं को रख सकते हैं। साधु-संतों की कहानियों में हम महान् संतों के जीवन पर आधारित और प्रचलित कथाओं को रख सकते हैं।

भारत में लोकथाओं का व्यवस्थित रूप में प्रस्तुतीकरण वेदों से माना जाता है। उपनिषदों में भी कथाएँ आती हैं। पुराण तो कथाओं से भरे पड़े हैं। इसके अतिरिक्त प्राचीन भारत में अनेक महत्त्वपूर्ण कृतियाँ तैयार हुईं, जिनमें उस समय का सामाजिक-धार्मिक दर्शन और जीवन मूल्यों को कथाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया था। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

तालिका-1 : भारत में प्रचलित कुछ प्रसिद्ध लोककथा संग्रह

क्र. स.	रचना	रचनाकार
1.	वृहत्कथा	वररुचि
2.	कथासरित्सागर	सोमदेव भट्टराव
3.	वृहत्कथा श्लोक संग्रह	बुधस्वामी
4.	वृहत्कथा मंजरी	क्षेमेंद्र
5.	पंचतंत्र	विष्णु शर्मा
6.	हितोपदेश	नारायण पंडित
7.	बेताल पंचविंशति (पचीसी)	बेताल भट्ट
8.	सिंहासनद्वात्रिंशति	क्षेमेंद्र
9.	शुकसप्तति	चिंतामणि भट्ट
10.	जातक कथा	बुद्ध घोष

लोककथा के अतिरिक्त लोकगाथा भी कथा प्रस्तुत करने का ही गेय रूप है, जो हमारे देश में काफी लोकप्रिय है। इसमें वीरगाथा, प्रेमगाथा आदि आते हैं। गेयता और नायकों का वर्णन इसकी लोकप्रियता का मजबूत आधार है। अँग्रेजी में लोकगाथा के लिए बलाड शब्द का प्रयोग हुआ है, जिसका अर्थ काव्यात्मक कथा है। सामान्यतया लोकगाथा एक सुगठित, कहानी का गेय रूप में प्रस्तुतीकरण है, जो कथा के चरम अथवा निर्णायक पहलू का वर्णन करती है। इसमें कथा के पूर्वसूत्र जोड़ने की जगह मुख्य घटना वर्णन के केंद्र में होती है। गाथाओं में सामान्यतया ज्यादा चरित्र नहीं होते और कुछ पात्रों की सहायता से ही वर्णन को भावप्रवणता से ऊँचाई प्रदान की जाती है। सामान्यतया लोकगाथा के रचयिता का नाम रचना के साथ नहीं होता अथवा अज्ञात होता है। इनमें एक समूह से दूसरे समूह और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में जाते-जाते परिवर्तन भी होते रहते हैं। अनेक विद्वान् लोकगाथा को स्वतंत्र रूप का दर्जा देते हैं।

लोकगाथाओं में गेयता के साथ-साथ संगीत का होना भी अनिवार्य-सा है। लोकगाथा अधिकांशतः शौर्य और बलिदान पर आधारित होती है, लेकिन प्रेम कथाएँ और अन्य कथाएँ भी लोकगाथा के रूप में प्रस्तुत की जाती हैं। भारत में अनेक प्रसिद्ध लोकगाथाएँ हैं। 'आल्हा' बुंदेलखंड

की प्रसिद्ध लोकगाथा है, जो वीर रस का अद्भुत उदाहरण है। इसी तरह छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश के आदिवासी अंचलों में लोकप्रिय 'चंदैनी' एक प्रसिद्ध लोकगाथा है, जिसमें वीर लोरिक और चंदा की प्रेमकथा का प्रसंग आता है। राजा भरथरी और रानी सामदेई की कथा भी प्रसिद्ध लोकगाथा है, जिसे सारंगी की धुन पर नाथ संप्रदाय के जोगियों द्वारा गाया जाता है। इसी तरह नाथ संप्रदाय के राजा गोपीचंद, जो बाद में जोगी हो गए, उनकी गाथा भी काफी लोकप्रिय है। नाग पंचमी के अवसर पर गाई जाने वाली बिहुला-बाला लखंदर की गाथा, बाबू कुँवर सिंह की गाथा, सोरठी, ढोला-मारू, सोहनी-महिवाल आदि भी प्रसिद्ध लोकगाथाएँ हैं। कुछ अन्य प्रसिद्ध भारतीय लोकगाथाओं में फूलकुँवर, बरफुकन (असमिया), श्रवणकुमार, रानी चंद्रावली (अवधी), सावित्री चरित्र, सतिराह (उड़िया), कितूर चेन्नमा, उत्तरादेवी (कन्नड़), नल-दमयंती, कृष्ण-चंद्रावली, बाला-हारू (कुमाऊँनी), सती गनक, सोन-हलामन, ढोला-मारुनी (गुजराती), पंडवानी, फुलबासन, फूलकुँवर (छत्तीसगढ़ी), अल्ली अर्सनी माने, मदुरैवीरनकडे (तमिल), बोबिली कथा, बुर्रा कथा, हरि कथा (तेलुगु), दुल्लहभाटी, मिर्जा-साहिब, हीर-राँझा (पंजाबी), बाबा जित्तो, बाबा नाहर सिंह (डोगरी), गोरखनाथ, भोगीपाल की लोककथाएँ (बांग्ला), मोरध्वज, गुरु गुग्गा (ब्रज), रछरा, सारंगा-भारंगा, संत-बसंत (बुंदेली), विजयमल, शोभा नायक बंजारा, बिहुला (भोजपुरी), सल्हेस, दिना भदरी, हरिश्चंदर दानी (मैथिली), खंबा थोइबी, मोइरंगसा (मणिपुरी), पोवाडा, गोंधली गीत (मराठी), उन्नियार्चा, अरोम लुन्नी (मलयालम), ढोला-मारू, निहालदे सुल्तान, पृथ्वीराज, जलाल-बुबना (राजस्थानी), मुर्मुहुल गाथा (संथाली), वीर जवाहरमल, भूरा-बादल, जयमाल फट्टा, अमर सिंह राठौर (हरियाणवी) आदि शामिल हैं।

पंचतंत्र, जातक कथाएँ, हितोपदेश आदि लोककथा के रूप में प्रभावी रचनाएँ हैं। इसके अतिरिक्त बृहत्कथा, वेताल पंचविंशति, जैनचूर्णी या जैनकथा भी कुछ लोकप्रिय लोककथाएँ हैं। शुकसप्तशती, पंचतंत्र काफी प्रभावी और प्रचलित लोककथाएँ हैं, जिनका अनेक भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित है। पंचतंत्र पाँच शीर्षकों के तहत लघुकथाओं का एक संग्रह है, जो मित्र भेद, मित्र संप्राप्ति, काकोलुकियम (कौवा और उलूक), प्राप्ति एवं हानि, अपरीक्षित कर्म आदि पाँच शीर्षकों में विभाजित है। पंचतंत्र के लेखक के रूप में विष्णुशर्मा का नाम आता है, जिनके काल के समय में अनेक मत प्रचलित हैं। यह काल 1200 ईसवी से लेकर 300 ईसा पूर्व तक निर्धारित किया जाता है, जिसमें से 300 ईसा पूर्व पर अधिकतर विद्वान् सहमत हैं। पंचतंत्र धार्मिक विषयों से इतर दुनिया की सर्वाधिक अनूदित होने वाली रचना है (विनय, सौम्या, 2018)।

'जातक कथाएँ' बौद्ध ग्रंथ त्रिपिटक का 10वाँ भाग है। 'जातक कथाएँ' बुद्ध से संबंधित कथाएँ हैं। इन कथाओं में भगवान बुद्ध के पूर्वजन्मों की कथाएँ हैं। प्रत्येक कथा में महात्मा बुद्ध का एक संदेश छिपा है। हालाँकि कुछ विद्वानों का मानना है कि कुछ जातक कथाएँ, गौतमबुद्ध के निर्वाण के बाद उनके शिष्यों द्वारा कही गई हैं।.... जातक कहानियाँ पाली बौद्ध लेखों की शाखाओं में हैं। इनमें वे 35 कहानियाँ भी हैं, जिनका संकलन उपदेश देने के लिए किया गया था। इनकी रचना का समय तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व से पहले का माना जाता है' (हिंदस्वराज, एन.डी.)। इसी तरह 'हितोपदेश' संस्कृत में लिखी उपदेशात्मक कथाओं की पुस्तक है, जो पंचतंत्र पर आधारित मानी जाती है। 'हितोपदेश' के रचनाकार नारायण पंडित माने जाते हैं और इसका रचनाकाल तीसरी सदी ईसा पूर्व का माना जाता है। हितोपदेश कथाएँ चार भागों—मित्रलाभ, सुहृदभेद, विग्रह और संधि में विभाजित हैं। इसमें कुल 41 कथाएँ और 679 नीति विषयक पद्य हैं और इस तरह यह रचना पद्य और गद्य दोनों का मिश्रण है (शर्मा, 2020)।

गाथा और लोकगाथा की परंपरा गेय रूप से प्राचीन भारत के ही समय से विद्यमान रही है। भारत में राजतंत्र के सुदृढ़ होने और राजा की सर्वोच्च ईश्वरीय सत्ता के रूप में स्थापना के बाद से ही उसकी प्रशस्ति में, उसकी उपलब्धियों का बखान करने के लिए और प्रजा-पालक के रूप में उसकी छवि को जनता के सामने लाने के लिए गाथाएँ रची और गाई गई। इसके अतिरिक्त लोकनायकों के लिए भी गाथाएँ रची गई और उनका जनता में काफी प्रसार था। 'लोकगाथाओं के अध्ययन की दृष्टि से भारतीय लोकसाहित्य बेहद महत्त्वपूर्ण है। यहाँ की भाषाओं—संस्कृत, प्राकृत, पाली, अपभ्रंश तथा मध्यकालीन क्षेत्रीय भाषाओं में विपुल परिमाण में लोक ने गाथाओं का सृजन किया, जो विविध रूपों में गाई और कही जाती हैं। वेद, उपनिषद्, पुराण, बौद्ध, जैन एवं अन्य दार्शनिक ग्रंथों पर भी इन गाथाओं का प्रभाव देखा जा सकता है। भारतीय लोकगाथाएँ लोक की साहित्यिक अभिव्यक्ति और सुदूर अतीत की परंपरा की संवाहक हैं। इनके तत्त्व ऋग्वेद की स्तुतियों में भी देखे जा सकते हैं' (सिंह, 2019)। इस तरह लोकगाथा की परंपरा के आधार वेदों, ब्राह्मण ग्रंथों आदि से ही दिखाई देते हैं। वैदिक साहित्य के समानांतर आख्यान का लोकप्रिय साहित्य विकसित होने लगा था, जो रामायण, महाभारत, पुराण आदि में दिखता है। 'पतंजलि (दूसरी सदी ई.पू.) ने वासवदत्ता, सुमनोत्तरा और भैमरथी—इन तीन आख्यायिकाओं का नाम-निर्देश किया है। उस युग में ये तीन आख्यायिकाएँ लिखी गई थीं, पर अब ये प्राप्त नहीं होतीं। आख्यान, उपाख्यान, आख्यायिका आदि उस समय की लोकप्रिय कथाओं के रूप में थे, जिन्हें सूत, मगध, चारण या कुशी-लव लोगों के सामने गा-गाकर या कहकर प्रस्तुत करते थे' (त्रिपाठी, एन.डी.)। बाद के समय में अनेक राजाओं और उनके विजयों को लेकर लोकगाथाएँ सृजित हुईं, जैसे विक्रमादित्य, सातवाहन नरेश, चोल नरेश आदि, जिनमें लोकगायन की पद्धति में उनके शौर्य और पराक्रम का वर्णन था।

किस्सागोई और लोककथा की परंपरा भारत में प्राचीन काल से ही समृद्ध रही और मध्यकाल में इस परंपरा में अनेक नए आयाम जुड़े। मुस्लिम सभ्यता के आगमन के बाद जहाँ अरबी कथाओं के पात्र और चरित्र हमारी किस्सागोई का हिस्सा बने, वहीं मध्यकालीन वीरों, नायक-नायिकाओं आदि को केंद्र बनाकर भी किस्से प्रचलन में आए। इसके साथ-साथ पेड़-पौधे, पशु और पक्षी आदि भी इन कथा-कहानियों का अटूट हिस्सा रहे। गोपीचंद, राजा भरथरी, गोगाजी आदि लोककथाएँ उत्तर भारत में काफी लोकप्रिय हैं। इसी तरह ढोलामारू, चरणदास चोर, लोरिक-चंदा की प्रेम कथा मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड और उत्तर प्रदेश के विशेष रूप से पठारी और आदिवासी इलाकों में काफी प्रचलित हैं। वस्तुतः देश भर में आदिवासी अंचलों में, ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक लोककथाएँ प्रचलन में रही हैं, जो प्रेमकथा, वीरगाथा, पौराणिक चरित्रों, भक्ति और धर्म आदि से जुड़ी हुई हैं। प्रसिद्ध तोता-मैना की कहानी की उत्पत्ति पृथ्वीराज चौहान से जोड़ी जाती है। इसी तरह अकबर-बीरबल की कहानियाँ और तेनालीराम की

कहानियाँ भारत में मध्ययुगीन लोककथा का लोकप्रिय उदाहरण हैं, जिन्हें लोग आज भी पसंद करते हैं।

भारत में लोकथाओं के विविध रूप हर भाग, हर समुदाय, हर समाज में प्रचलित और लोकप्रिय हैं और इनके माध्यम से मनोरंजन के अतिरिक्त सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक लाभ भी लोग अर्जित करते हैं। उत्तर भारत में लोग भागवत कथा के सत्र आयोजित करते हैं, जहाँ विशेषज्ञ कथावाचक भागवत पुराण की कहानी सुनाते हैं। यह कथा, कहानी कहने की एक भारतीय शैली है, जो हिंदुओं के बीच बहुत लोकप्रिय है। इसे पवित्र अनुष्ठान के रूप में माना जाता है, जहाँ कथाकार (व्यास या आचार्य) भागवत पुराण, रामायण और अन्य पवित्र पुस्तकों की व्याख्या करते हैं। हम अपने घरों में सत्यनारायण कथा का आयोजन किया करते हैं, जो कहानी कहने का एक और रूप है, जो लोगों में नैतिक और धार्मिक मूल्यों को स्थापित करता है। हमारे अनेक व्रत-त्योहार लोककथाओं पर आधारित हैं अथवा कथाएँ इनका अनिवार्य हिस्सा हैं। इन कथाओं के आधार पौराणिक हो सकते हैं, लेकिन ये अपनी संरचना, विकास और उपयोग में लोककथा हैं। उत्तर भारत में महिलाओं द्वारा रखा जाने वाला हरतालिका तीज व्रत इसका सबसे बड़ा उदाहरण है, जिसमें एक लोककथा का श्रवण व्रत का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग है।

लोककथाएँ : प्रभावशाली जनमाध्यम के रूप में

लोककथा बहुत ही प्राचीन, रोचक और साहित्यिक शैली के प्रारंभिक उदाहरण के रूप में मौखिक परंपरा से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही वह कथा की परंपरा है, जिसमें लोकजीवन और लोक का संघर्ष, उसके जीवन से जुड़े विविध भाव, विविध घटनाएँ, प्रेम प्रसंग, नायकों के किस्से, दुःख-दर्द, उपदेश और नीति-निर्देश आदि समाहित होते हैं। लोककथा लोक के अनुरंजन का हमेशा से प्रमुख माध्यम रही है और ऐसा माना जाता है कि सभ्यता के अनादिकाल से यह प्रचलन में रही है। परियों की कथाएँ दुनिया के बहुत से हिस्सों में लोकप्रिय लोककथा का ही एक रूप हैं। इस तरह लोककथाएँ मौखिक परंपरा की कहानियाँ हैं या ऐसी कहानियाँ जिन्हें लोग लिखित रूप में कहानियों के बजाय एक-दूसरे को सुनाते हैं। ये दंतकथाओं, मिथकों और परियों की कहानियों सहित कहानी सुनाने की कई परंपराओं से निकटता से जुड़ी हुई हैं। प्रत्येक मानव समाज की अपनी लोककथाएँ होती हैं और अगली पीढ़ियों को सौंपी जाने वाली ये प्रसिद्ध कहानियाँ, ज्ञान, सूचना और इतिहास को आगे बढ़ाने का एक महत्त्वपूर्ण तरीका हैं। लोककथाएँ किसी भी समाज के अन्य लोकमाध्यमों की तरह, भावनाओं, आवश्यकताओं, संघर्षों और मानस के अन्य पहलुओं को प्रतिबिंबित करती हैं, जो लोगों को एक विशिष्ट संस्कृति का हिस्सा होने के परिणामस्वरूप प्राप्त होती हैं। लोककथाएँ संभवतः मानवीय विचारों की सबसे सघन, मौलिक, पुरातन और उपयुक्त अभिव्यक्ति हैं (सहाय, 2000)।

लोककथाओं को हर समाज में मनोरंजन, शिक्षा और संस्कृति के संरक्षण के लिए साझा किया गया है। अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा के लिए यूनेस्को के कन्वेंशन-2003 (कारने, 2008) में इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि विविध संस्कृतियों के लोगों को एक साथ लाने में और उनके मध्य संवाद सुनिश्चित करने में लोककथाएँ एक अमूल्य भूमिका निभाती हैं। आज वैश्वीकरण और सामाजिक परिवर्तन के समय में विभिन्न समुदायों के बीच संवाद आवश्यक हो गया है और लोककथाएँ मौखिक और सांस्कृतिक परंपराओं और मूल्यों को संरक्षित करके और समन्वयवादी दृष्टि का विस्तार करके इसमें सहायक हो रही हैं। लोककथाएँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक परंपरा के रूप में आगे बढ़ती रही हैं और इस प्रक्रिया में समय के अनुसार इनमें व्यापक बदलाव भी होते हैं। ये बदलाव इन्हें प्रासंगिक बनाए रखते हैं। बदलाव के साथ-साथ ये लोककथाएँ हमारे शाश्वत मूल्यों को बढ़ाने का काम करती हैं। लोककथाओं में स्पष्ट और आवर्तक विषय होते हैं। अच्छाई हमेशा पुरस्कृत होती है, नायक और नायिका हमेशा खुशी से रहते हैं, जबकि खलनायक उनके कृत्य के हिसाब से दंडित होते हैं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी कहानी बदल सकती है, लेकिन इसका मूल संदेश वही रहता है।

इस प्रकार लोककथाएँ शिक्षकों और अभिभावकों के लिए मूल्य शिक्षा प्रदान करने का रोचक जरिया भी होती हैं। लोककथाएँ समाज की आशाओं, आशंकाओं को रूप और आकार देने के प्रयास को दर्शाती हैं और तमाम प्रश्नों के हल भी बताती हैं। लोककथाओं के माध्यम से हमारे विश्वास और सांस्कृतिक मूल्य संरक्षित होते हैं। आज इनमें से कई पुरानी कहानियों को कल्पना की उड़ान माना जाता है, लेकिन वे जीवित रहती हैं, क्योंकि वे हमारे आश्चर्य और आकांक्षाओं की भावना के लिए टॉनिक का काम करती हैं। इसके अलावा लोककथाओं में वर्णित दृष्टि से हम अनेक बार मार्गदर्शन भी प्राप्त करते हैं और यह तार्किकता और वैज्ञानिकता जैसे आधुनिक पैमानों से भी प्रभावी होता है। सोने (2018) कैमरून की लोककथाओं के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अफ्रीका में मनोरंजन के आधुनिक माध्यमों के वर्चस्व के बाद भी कहानी की परंपरा जीवित है और आज की कथाएँ समाज के समसामयिक अनुभवों और अंतर्संबंधों के अनुरूप नए सदर्भों को प्रस्तुत करने का, नए मूल्यों और विचारों को प्रसारित करने का काम कर रही हैं। केहिंडे (2010) लोककथाओं को परिवार और समाज को जोड़ने, जीवन में मूल्यों का समावेश करने का प्रभावी साधन और सामाजीकरण का जरिया मानते हैं।

सांस्कृतिक रूप से अनेक तरह की इच्छाओं की अभिव्यक्ति के लिए सामाजिक रूप से स्वीकृत माध्यम होने के साथ-साथ सांस्कृतिक ट्रांसमीटर के रूप में लोककथाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। 'काव्य की तरह ही लोककथा भी अपनी बुनावट में सांस्कृतिक तत्त्वों को समेटे हुए होती है' (रामानुजन, 2006)। लोककथाएँ एक निश्चित समय में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से लोगों की आजीविका और मनोविज्ञान में सबसे कल्पनाशील खिड़कियों में से एक प्रदान करती हैं। ये रंगीन आख्यान बीते युग से एक संस्कृति की पहचान, प्रथाओं, मूल्यों और मानदंडों को जीवंत करते हैं जो भाषण, खेल और वाचालता, ग्रामीण जीवन और देशज व्यवहार, समकालीन दृष्टिकोण और विश्वास पर अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकते हैं।

भारत लोककथाओं के मामले में हमेशा से समृद्ध रहा है। लोककथाएँ युगों से हमारी संस्कृति का एक शाश्वत हिस्सा रही हैं। जब भारतीय लोककथाओं की बात आती है तो विविध धर्मों, भाषाओं और संस्कृतियों के देश में कहानियों और लघुकथाओं की एक पूरी शृंखला सामने आती है। भारतीय लोककथाओं में कहानियों और पौराणिक किंवदंतियों की एक विस्तृत शृंखला है, जो जीवन के सभी पक्षों को इनके माध्यम से प्रस्तुत

करती है। यह शृंखला 'पंचतंत्र', 'हितोपदेश', 'वृहद्कथा', 'जातक' आदि से लेकर 'अकबर-बीरबल' और बाद तक की दिलचस्प कहानियों तक जाती है। 'रामायण', 'महाभारत' जैसे महान् भारतीय महाकाव्य महान् आत्माओं के जीवन से प्रेरित उपदेशात्मक कहानियों से भरे हुए हैं।

नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण होने के कारण भारतीय लोककथाएँ बच्चों के लिए आदर्श कहानियाँ गढ़ती हैं, जिनमें उदात्त मूल्यों का समावेश होता है। लोककथाओं की आवश्यकता छोटे बच्चों के शिक्षण में भी महसूस की गई है। ये भाषा और संस्कृति का बोध कराने की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण हैं। इसी बात को इंगित करते हुए कमलेश चंद्र जोशी (2000) स्पष्ट करते हैं कि 'प्राथमिक कक्षाओं में भाषा-विकास के लिए लोककथाएँ काफी महत्त्वपूर्ण होती हैं। इन्हें सुनने में बच्चे कौतूहल, कल्पनाशीलता और वर्णनात्मकता को लेकर सक्रिय रहते हैं।' वस्तुतः लोककथाएँ लोक का प्रतिनिधित्व करती हैं और ये सदियों तक मौखिक परंपराओं में जीवित रही हैं, जिससे इनमें विशिष्ट भाषाई और संरचनात्मक खूबियाँ समाहित हो जाती हैं। इनमें नए और लोकप्रचलित शब्द समाहित होते हैं, प्राकृतिक ध्वनियों का भरपूर उपयोग होता है, जिससे ध्वन्यात्मक व्याकरणिक प्रकृति का समावेश होता है। इस तरह ये कथाएँ बच्चों के अनुकूल और उन्हें परिवेश से जोड़ने में सक्षम हो जाती हैं (ल्विन, 2015)। लोककथाओं को अनेक अध्ययनों में छात्रों के अध्ययन कौशल में सुधार, शब्दावली समृद्धि और अंतर-सांस्कृतिक मूल्यों की समझ विकसित करने में सहायक माना गया है। (न्योमन, & गाना, 2018; फिनलेसन, 2012)

ये सभी प्राचीन कहानियाँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही हैं, जो आज की पीढ़ी के साथ पारंपरिक मूल्यों का बंधन बना रही हैं। भागवत महापुराण सहित अन्य पुराणों में अनेक लोककथाओं को स्थान मिला है। देश में हर समुदाय, हर धर्म, हर क्षेत्र की अपनी-अपनी लोककथाएँ हैं और इनमें से अधिकतर आज अंतरक्षेत्रीय रूप से लोकप्रिय हैं। भारतीय जनजातियों की भी मोहक और वैविध्यपूर्ण लोककथाएँ हैं, जो उनके परिवेश, चरित्रों, प्रकृति से उनके संबंध, उनकी सामाजिक परंपराओं, नायकों, प्रेम कहानियों को हमारे सामने रखने का काम करती हैं। ये लोककथाएँ जनजातीय सामाजिक इतिहास की भी धरोहर हैं। जैसा कि बैरियर एल्विन (2007) स्पष्ट भी करते हैं कि अगरिया लोककथाओं में उनके गोत्रवाद का बड़ा ही सरल व निश्चित ढंग से वर्णन किया गया है। पोरसेल्वी (2023) ने लोककथाओं को व्यवस्थित रूप से सामाजिक वैचारिकी विकसित करने का प्रभावी माध्यम माना है। उनके अनुसार लोककथाओं के वर्ण्य विषय, उनमें समाहित मोटिफ पर्यावरण के प्रति संवेदनशील दृष्टि विकसित करने में सहायक हैं, जिन्हें उन्होंने 'एनवायर्नमेंटल ह्यूमनिटी' कहकर संबोधित किया है।

लोककथाएँ एवं आधुनिक जनमाध्यम

लोककथाओं ने सिनेमा और डिजिटल मीडिया, दोनों पर अपनी छाप छोड़ी है। अनेक लोकप्रिय कथाओं के आधार पर फिल्मों का निर्माण हुआ है। महाभारत, रामायण, पौराणिक आख्यानों को आधार बनाकर अनेक लोकप्रिय फिल्में बनाई गई हैं। शाहरुख खान की फिल्म 'पहेली' विजयदान देथा की राजस्थानी लोककथा पर आधारित है। इसी कहानी पर मणि कौल ने 1973 में 'दुविधा' फिल्म बनाई थी, जिसके लिए उन्हें निर्देशन का राष्ट्रीय पुरस्कार भी मिला था। 'तुंबाड' फिल्म मराठी लोककथा के आधार पर बनी है। 'मिर्जया' फिल्म का आधार पंजाबी लोककथा मिर्जा और साहिबा है, तो हाल में आई 'विक्रम वेधा' (तमिल- 2017 और हिंदी 2022) बेताल पचीसी से प्रेरित है। वास्तव में भारतीय सिनेमा अपने आरंभ से ही पौराणिक और लोककथाओं, लोकप्रसंगों से कहानियाँ लेकर फिल्में बनाता रहा है। भारत की पहली फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' इसका सटीक उदाहरण है। भगवान राम और कृष्ण से जुड़े प्रसंगों के अतिरिक्त सावित्री-सत्यवान से लेकर अनेक संत, महापुरुषों के जीवन पर आधारित फिल्में बनीं और लोकप्रिय हुईं। देविका बोस के निर्देशन में बनी फिल्म 'पूरन भगत' पंजाबी लोककथा पर आधारित थी, जिसे काफी सफलता भी मिली थी। तेलुगु में बनी 'बाला' नगम्मा की कहानी 'बुर्राकथा' से ली गई थी। इसी तरह अरबियन नाइट्स की प्रसिद्ध कहानी 'अली बाबा और चालीस चोर' पर इसी नाम से हिंदी में फिल्म बनी और तेलुगु में एन.टी. रामाराव अभिनीत 'अलीबाबा 40 दोंगालु' 1970 में निर्मित हुई। यह सूची अत्यंत व्यापक है और इन सीमित उदाहरणों के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि भारतीय लोककथाओं के आधार पर लगभग सभी भाषाओं में फिल्में बनीं और इनमें से अधिकतर को काफी लोकप्रियता भी मिली।

लोकथाओं पर आधारित फिल्में एक ओर हमारी लोकसंस्कृति के विविध रूपों और भावों को सामने लाने का काम करती हैं, तो वहीं दूसरी ओर इनसे सामाजिक मान्यताओं, प्रतीकों, मूल्यों को भी समझने में मदद मिलती है। लोक इन कथाओं से जुड़ा होता है और अक्सर इनका उपयोग बच्चों के मनोरंजन और शिक्षण के लिए करता है। इसके अतिरिक्त अनेक लोककथाएँ हमारे आदि ग्रंथों जैसे पुराण, रामायण, महाभारत आदि का हिस्सा होती हैं अथवा हमारे पौराणिक नायक और ऐतिहासिक चरित्र इनका आधार होते हैं और इनका सिनेमाई चित्रण भी काफी लोकप्रिय होता है। सिनेमा को मास एंटरटेनर कहा जाता है और इस रूप में उसे निखारने में लोककथाओं के सिनेमाई रूपांतरण का बड़ा योगदान रहा है। 'भारतीय सिनेमा के शुरुआती ढाई-तीन दशकों तक किस्सों, लोककथाओं, गाथाओं, पौराणिक कथाओं, रामायण और महाभारत की कथाओं से पटकथाएँ तैयार की जाती रहीं। इसके पीछे लोकमानस में इनकी जबरदस्त स्वीकृति थी। इससे साफ जाहिर है कि सिनेमा के सामने लोक ही एक राजमार्ग था और वह इससे अलग जाने का जोखिम नहीं उठा सकता था' (अपर्णा, 2021)।

लोककथाओं के टीवी के अनुरूप भी रूपांतरण हुए हैं और ये काफी लोकप्रिय भी हुए हैं। हाल के दिनों में दूरदर्शन पर लोककथाओं पर आधारित धारावाहिक 'किवदंती' का प्रसारण किया गया है। वास्तव में टीवी के लिए पौराणिक और ऐतिहासिक विषय धारावाहिक को लोकप्रिय बनाने का मंत्र रहे हैं। रामायण और महाभारत की अद्भुत लोकप्रियता इसका जीवंत प्रमाण है। दूरदर्शन पर ही 'विक्रम बेताल', 'अलिफ लैला', 'पोटली बाबा की', 'पंचतंत्र की कहानियाँ' सहित अनेक धारावाहिक निर्मित हुए और काफी लोकप्रिय रहे। एनीमेशन के आगमन और उसकी लोकप्रियता ने लोककथाओं और उसके चरित्रों के लिए नया मंच प्रदान किया है। लोककथाएँ विशेष रूप से बच्चों में हमेशा से लोकप्रिय रही हैं और इनकी संरचना में सहजता के साथ मूल्यों की शिक्षा प्रदान करना,

स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करना और आसपास के चरित्रों के माध्यम से कल्पनाओं का रोचक संसार बुनना शामिल हैं।

आधुनिक एनीमेशन मीडिया ने भारत में बाल मनोरंजन और शिक्षण के माध्यम के रूप में भी अपने को प्रतिष्ठित किया है। एनीमेशन द्वारा कहानी कहने की सदियों पुरानी कला को असंख्य नए प्रारूपों में पैकेज तैयार कर वितरित किया जाता है। यह अलिखित इतिहास और मौखिक परंपराओं के एक महत्त्वपूर्ण पहलू को सामने लाने में भी मदद करता है। विभिन्न प्रिंट-प्रकाशन गृह और दृश्य-श्रव्य प्रसारण नेटवर्क युवा दर्शकों के लिए कहानी प्रस्तुत करने के लिए (जो लोककला और मौखिक परंपराओं से निकली हैं) पहल कर रहे हैं। इस प्रक्रिया में ये अमूर्त विरासत के एक महत्त्वपूर्ण हिस्से को संरक्षित और संवर्धित करने में मदद कर रहे हैं। हालाँकि अक्सर इतिहास और सांस्कृतिक प्रतीकों के पैटर्न को विकृत करने और बदलने के आरोपों के साथ इनकी आलोचना की जाती है, फिर भी बच्चों के लिए एनीमेशन मीडिया की पहुँच और प्रभाव को अंतः और अंतर-सांस्कृतिक संप्रेषण की आधुनिक वैश्विक दुनिया में कम नहीं किया जा सकता है (बाजपेयी, 2014)।

सौभाग्यवश हमारे पौराणिक आख्यानों में अनेक ऐसे चरित्र हैं, जो महानायक होने के साथ-साथ एनीमेशन रूपांतरण के लिए भी अत्यंत उपयुक्त हैं। हनुमान ऐसे ही नायक हैं। हनुमान आराध्य होने के साथ-साथ लोकदेवता की भी प्रतिष्ठा रखते हैं, अतः इनकी उपासना अत्यंत सरल और अनेक कर्मकांडों और प्रतिबंधों से मुक्त भी है। हनुमान अतुलनीय शारीरिक शक्ति और बौद्धिक कौशल के प्रतीक हैं और उनके जन्म से लेकर बाल्यकाल की अवधि के अनेक आख्यान विशेष रूप से बच्चों को बहुत पसंद आते रहे हैं। हनुमान के जीवन से जुड़े मिथक, उनका विराट् लेकिन सरल व्यक्तित्व, वानर रूप, बलशाली और चतुर होना एनीमेशन उद्योग को आज के सुपर हीरो की टक्कर का भारतीय सुपर हीरो बनाने का मौका देते हैं, जो आधुनिक भारतीय रुचियों के अनुरूप भी है (मित्रा, 2019)। हनुमान के अतिरिक्त छोटा भीम के रूप में बच्चों के बीच अत्यंत लोकप्रिय चरित्र भी भीम के बलशाली चरित्र से प्रेरित है। बाल कृष्ण भी एनीमेशन के रूप में अत्यंत लोकप्रिय चरित्र है। इसके अतिरिक्त लव-कुश, अर्जुन आदि को आधार बनाकर भी लोकप्रिय एनिमेशन कार्यक्रम निर्मित हुए हैं। पौराणिक गाथाओं के अतिरिक्त पंचतंत्र की कहानियाँ और उनमें वर्णित चरित्र भी एनीमेशन के रूप में भारतीय मनोरंजन उद्योग के उल्लेखनीय उत्पाद रहे हैं, जो लोककथाओं की लोचनीयता और समय के साथ होने वाले तकनीकी परिवर्तनों से उनके तादात्म्य के सामर्थ्य का भी प्रतीक हैं। एनिमेटेड चरित्रों और कार्यक्रमों का सांस्कृतिक दृष्टि से भी महत्त्व है और वैश्विक पॉपुलर कल्चर का हिस्सा बनने की जगह नए समय में अपने मूल्यों के अनुरूप बच्चों को विकसित करने में इनकी बड़ी भूमिका है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि लोककथाएँ महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक तत्त्व हैं, जिनका महत्त्व केवल मनोरंजन और रचनात्मक वैशिष्ट्य तक सीमित नहीं है। यह अंतर-सांस्कृतिक संप्रेषण, सांस्कृतिक मूल्यों के हस्तांतरण और स्वस्थ मनोरंजन के उपयोगी माध्यम हैं। ये कथाएँ नैतिकता, अनुशासन, सामाजिक बोध और मानसिक प्रेरणा प्रदान करती हैं। इनकी लोचनीयता और टेक्नोलॉजी-फ्रेंडली होना इन्हें डिजिटल मीडिया और आधुनिक संचार साधनों के अनुरूप बनाने के लिए सर्वथा उपयुक्त है, जिससे इनमें नयापन बना रहता है और नई पीढ़ी तक इनकी पहुँच भी सुगम होती है। इस प्रकार कह सकते हैं कि डिजिटल प्रौद्योगिकी एवं संचार के अन्य माध्यमों ने कहानी प्रस्तुत करने की कला पर व्यापक प्रभाव डाला है। आज डिजिटल और सोशल मीडिया मंच, वीडियो, पॉडकास्ट, ब्लॉग, टैबलेट आदि के माध्यम से कहानियाँ प्रस्तुत की जा रही हैं। लेकिन सूक्ष्मता से देखें तो इन्हें प्रस्तुत करने के तरीके और परंपरागत कहानी कहने के तरीके में अनेक साम्यताएँ नजर आ सकती हैं। प्रौद्योगिकी ने कहानी कहने के पुराने तरीकों को बदलने के बजाय उसकी प्रभावशीलता को बढ़ाने और उन्हें अधिक सुलभ और रोचक बनाने का काम किया है। लोककथाओं ने सदियों से मौखिक परंपराओं में लोगों के लिए मनोरंजन और मूल्य शिक्षण का काम किया है और उनकी यह शक्ति अभी भी बनी हुई है।

संदर्भ

अपर्णा. (2021, जून 26). सिनेमा में लोकतत्त्व की बाजारू नुमाइश. https://gaonkelog.com/market-exhibition-of-democracy-in-cinema/ से पुनःप्राप्त.

एल्विन, वी. (2007). अगरिया. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन.

कारने, ए. (2008). इंटेंजिबल कल्चरल हेरिटेज : ग्लोबल अवेयरनेस एंड लोकल इंटरेस्ट (इंटेंजिबल हेरिटेज, पृष्ठ 223-240). रूटलेज.

केहिंडे, ए. (2010). स्टोरी-टेलिंग इन द सर्विस ऑफ सोसाइटी : एक्सप्लोरिंग द यूटीलिटेरियन वैल्यू ऑफ नाइजीरियन फोकटेल्स. ल्यूमिना, 21(2), 1-17.

जोशी, & कमलेश, सी. (2000). क्या बताती हैं हमें लोक-कथाएँ?. शिक्षा विमर्श, 22-24.

त्रिपाठी, आर. (एन.डी.). भारतीय कथा परंपरा. https://www.hindisamay.com/content/1063/1/ से पुन:प्राप्त.

न्योमन, एम.आई.बी., & गाना के.डी.जी.ए. (2018). फोकटेल्स एज मीनिंगफुल कल्चरल एंड लिंगविस्टिक रिसोर्सेज टू इंप्रूव स्टूडेंट्स रीडिंग स्किल्स. लिंगुआ साइंटिया, 25(2), 83-88.

पोरसेल्वी, पी.एम.वी. (2023). एनवायरनमेंटअल ह्युमनिटीज इन फोकटेल्स : थ्योरी एंड प्रैक्टिस. टेलर & फ्रांसिस.

फिनलेसन, एम.एम.ए. (2012). लर्निंग नैरेटिव स्ट्रक्चर फ्रॉम ऐनोटेटिड फोकटेल्स (डाक्टरल डिजरटेशन, मेसाचुसेट्स इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी).

बाजपेयी, एल.एम. (2014). पैटर्निंग स्टोरीटेलिंग : ओरल ट्रेडिशन्स एंड हिस्ट्री इन मॉडर्न एनीमेशन मीडिया इन इंडिया. सार्क कल्चर, 3.

भाटिया, के. सी. (1995). भूमिका. ब्रज की लोक-कथाएँ : एक अध्ययन (सं. ब्रजभूषण चतुर्वेदी). वृंदावन : वृंदावन शोध संस्थान.

मित्रा, एम. (2019). कीपिंग अप विथ हनुमान : रीइमाजिनिंग द मिथ ऑफ हनुमान थ्रू एनीमेशन. डेनियल जर्नल ऑफ रिलीजन, 18 (1), 7.

रामानुजन, ए.के. (2006). भारत की लोककथाएँ. नई दिल्ली : नेशनल बुक ट्रस्ट.

ल्विन, एस.एम. (2015). यूसिंग फोकटेल्स फॉर लैंग्वेज टीचिंग. द इंग्लिश टीचर, 44 (2).

विनय, के. वाई. और सौम्या, एल. (2018). पंचतंत्र टेल्स : एन इफेक्टिव टूल फॉर इनकल्केटिंग लाइफ स्किल्स एंड मैनेजमेंट स्किल्स इन मैनेजमेंट एजुकेशन. इंटरनेशनल जर्नल इन मैनेजमेंट एंड सोशल साइंसेज, खंड-6, अंक 1, जनवरी-मार्च।

शर्मा, पी.वी. (2020). हितोपदेश. भोपाल : मंजुल प्रकाशन.

सहाय, एस. (2000). द फोक टेल्स ऑफ बिहार : एन एंथ्रोपोलॉजिकल पर्सपेक्टिव. फोकलोर : इलेक्ट्रॉनिक जर्नल ऑफ फोकलोर, (13), 93-102.

सिंह, एस. (2019, सितंबर, 24). लोकगाथाओं की भारतीय परंपरा और राजस्थानी लोकगाथाओं का स्वरूप. https://www.sahapedia.org/laokagaathaaon-kai-bhaarataiya-paranparaa-aura-raajasathaanai-laokagaathaaon-kaa-savarauupa से पुन:प्राप्त.

सोने, ई.एम. (2018). द फोकटेल एंड सोशल वैल्यूज इन ट्रेडिशनल अफ्रीका. ईस्टर्न अफ्रीकन लिटरेरी एंड कल्चरल स्टडीज, 4(2), 142-159.

हिंदी स्वराज (एन.डी.). https://hindiswaraj.com/lokpriya-jatak-kathayen-in-hindi/ से पुन:प्राप्त.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 18-22, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

भारत की आजादी का अमृत महोत्सव

बैगा जनजाति की ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में यूट्यूब की भूमिका का अध्ययन

डॉ. अनिल कुमार पांडेय[1]

सारांश

भारतीय ज्ञान परंपरा, विश्व की समृद्ध एवं पुरातन ज्ञान परंपराओं में से एक है। जनजातीय समुदाय की ज्ञान परंपराएँ, भारतीय ज्ञान परंपरा का ही अटूट हिस्सा हैं। जनजातीय ज्ञान परंपराएँ संपूर्ण विश्व को न केवल प्राकृतिक संसाधनों के संचयन के साथ उनके समुचित प्रबंधन और दोहन की जानकारी देती हैं, बल्कि मानव जीवन और प्रकृति के परस्पर साहचर्य में रहकर, संतुलित और स्थिर विकास अर्जित करने के उपक्रम को भी प्रतिपादित करती हैं। जनजातीय ज्ञान परंपराओं के अंतर्गत परंपरागत गीत-संगीत, नृत्य कलाओं सहित जनजातीय समूहों के रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, आवास संरचना, चिकित्सा, खेती, पारंपरिक संचार और वन्य जीवन आदि से संबंधित ज्ञान के क्षेत्र समाहित हैं। जनजातियों की पारंपरिक ज्ञान परंपराओं का दस्तावेजीकरण नहीं होने की वजह से, सदियों से अर्जित पारंपरिक ज्ञान आगामी पीढ़ियों में हस्तांतरित नहीं होने के कारण लुप्तप्राय-सा हो गया है। बैगा जनजाति की ज्ञान परंपराएँ भी अन्य जनजातीय समुदायों की तरह ही कमजोर आर्थिक स्थिति एवं निरक्षरता के आधिक्य के कारण दम तोड़ रही हैं। तथाकथित कुलीनता और सभ्य समाज के नाम पर बैगा जनजाति के पारंपरिक ज्ञान की लंबे समय से उपेक्षा होती आई है। बैगाओं की ज्ञान परंपराओं को अंधविश्वास की चादर कहकर ढकना कोई नई बात नहीं है। ऐसे में, डिजिटल संचार माध्यम के रूप में वीडियो शेयरिंग वेबसाइट यूट्यूब बैगाओं की ज्ञान परंपराओं के दस्तावेजीकरण के साथ ही उनके संरक्षण के एक महत्त्वपूर्ण टूल के रूप में सामने आया है। प्रस्तुत शोध पत्र में बैगा जनजाति की ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में डिजिटल संचार माध्यम के रूप में यूट्यूब की भूमिका का अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया है।

संकेत शब्द : जनजातीय ज्ञान परंपराएँ, बैगा जनजाति, पारंपरिक ज्ञान, स्वदेशी ज्ञान, डिजिटल संचार, यूट्यूब

प्रस्तावना

जनजातियाँ मानव विकास के रास्ते में पीछे रह गए गिरिजन हैं, जो आज भी अपनी प्रकृति हितैषी जीवनचर्या और अलग सामाजिक जीवनशैली के कारण कथित आधुनिक समाज से अलग अपना अस्तित्व रखते हैं। जनजातीय समुदाय के लोग एक निश्चित भू-भाग में निवास करते हैं। साथ ही, इनकी संस्कृति और इनके रीति-रिवाज भी मुख्यधारा के समाज से भिन्न होते हैं। सरल अर्थों में कहें तो जनजातियाँ निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करने वाला वह मानव समुदाय है, जो एक सामान्य संस्कृति के साथ ही किसी एक आदि-पूर्वज से अपना उद्भव मानता है। आदिवासी, गिरिजनवासी, आदिम जाति, वनवासी जैसे विशेष नामों से पुकारे जाने वाले जनजातीय समुदाय को भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति के नाम से संबोधित किया गया है। देश में पूर्व से लेकर पश्चिम तक और उत्तर से लेकर दक्षिण तक जनजातियों के साथ-साथ परंपराओ का विविधीकरण भी देखने को मिलता है।

जनजातीय संस्कृति, भारतीय संस्कृति का अभिन्न और अटूट हिस्सा है। देश के विभिन्न राज्यों में निवासित जनजातियों ने अपनी संस्कृति के जरिये भारतीय संस्कृति को एक असाधारण पहचान दी है। बैगा जनजाति की संस्कृति समृद्ध और अनोखी है। बैगा जनजाति अपनी विशिष्ट संस्कृति, भाषा-बोली और अपनी अन्य रुचिर परंपराओं के लिए प्रख्यात है। बैगा जनजाति में भी अन्य जनजातियों की तरह ही विभिन्न ज्ञान क्षेत्रों में एक उन्नत-सी ज्ञान परंपरा देखने को मिलती है। बैगाओं द्वारा चिरकाल से अर्जित पारंपरिक ज्ञान आज दीपशिखा बनकर संपूर्ण बैगा जनजाति को आलोकित कर रहा है। बैगाजन मध्य भारत, विशेषकर मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और झारखंड राज्य के वन क्षेत्रों में निवास करने वाले 'विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह' में से एक हैं (बैगा ट्राइब, 2020)। बैगाजन खुद को न केवल धरती के 'आदि' निवासी के रूप में स्थापित करते हैं, बल्कि स्वयं को 'प्रकृति पुत्र' कहलाना भी पसंद करते हैं। आदिम जनजाति के रूप में आज भी अपनी स्वतंत्र पहचान कायम रखने वाले बैगा, पारंपरिक रूप से न्यूनतम साधनों में जीवनयापन के लिए भी नामजद हैं (रसेल, 1916)।

इस तथ्य में कोई दो राय नहीं है कि मानव की सृजनात्मक क्षमता, किसी भी अन्य सांसारिक प्राणी से ज्यादा होती है। मानव अपनी इन्हीं बौद्धिक क्षमताओं के उपयोग से अपनी समस्याओं के समाधान के लिए ज्ञान का सृजन करता है। मानव द्वारा सृजित यही ज्ञान पीढ़ी-दर-पीढ़ी संकलित होकर नदी की धारा के समान अनवरत प्रवाहमान रहता है। भारतीय प्रायद्वीप की भौगोलिक स्थितियाँ विषमताओं से परिपूर्ण हैं। ऐसे में, अलग-अलग भौगोलिक स्थितियों में भिन्न-भिन्न ज्ञान परंपराओं का सृजन होना स्वाभाविक है। जंगलों की गोद में सोने और आँख खोलने वाले बैगाओं का प्रकृति के साथ अद्भुत सामंजस्य है। बैगा जनजाति का पारंपरिक ज्ञान एक ओर जहाँ विपुल मौखिक साहित्य के रूप में मौजूद है, वहीं कृषि, हस्तशिल्प, नृत्य-संगीत, चित्रकला, पशुपालन, वनोपज संग्रहण, वनस्पतियों की पहचान और उनके औषधीय उपयोग संबंधी ज्ञान भी समुदाय में व्याप्त विभिन्न परंपराओं के रूप में यत्र-तत्र आधे-अधूरे रूप में विद्यमान है। बैगाओं में व्याप्त परंपरागत ज्ञान से न केवल बैगा समुदाय बल्कि संपूर्ण मानव जाति ही लाभान्वित होती दिख रही है। ऐसे में, समाज विज्ञानियों के द्वारा अन्य जनजातियों सहित बैगा जनजाति की समृद्ध ज्ञान परंपराओं में आधुनिक समाज जीवन की बढ़ती जटिलताओं और समस्याओं के समाधान ढूँढ़ने के प्रयास स्वाभाविक ही हैं। जनजातीय

[1]सहायक प्राध्यापक (पत्रकारिता एवं जनसंचार), राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेक्टर-1, पंचकुला, हरियाणा, ईमेल : gcpklanil@gmail.com

ज्ञान परंपराओं के विधिवत अध्ययन एवं विश्लेषण के लिए उनका लिपिबद्ध होना परम आवश्यक है, लेकिन, दुर्भाग्य से ऐसा नहीं है। बैगा जनजाति से संबंधित ज्ञान परंपराओं का भी विधिवत् प्रलेखन देखने को नहीं मिलता है। वैसे तो बैगा जनजाति की संस्कृति, संस्कार और सभ्यता पर कई पुस्तकें और शोध कार्य देखने को मिल जाते हैं, तिस पर भी बैगाओं की ज्ञान परंपराओं से नि:सृत ज्ञान आज भी बैगा समुदाय सहित सर्वजन को सुलभ नहीं है।

समय के साथ उन्नत होती तकनीक ने संचार के डिजिटलीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। डिजिटल संचार के एक बड़े मंच के रूप में यूट्यूब से आजकल सभी लोग परिचित हो गए हैं। आज के समय में स्मार्टफोन रखने वाला हर व्यक्ति या तो यूट्यूब पर वीडियो देखता है या फिर उस पर वीडियो अपलोड करता है। यूट्यूब वीडियो देखने और शेयर करने वाला दुनिया का सबसे बड़ा वीडियो शेयरिंग ऑनलाइन प्लेटफॉर्म है, जिसमें किसी भी प्रकार की जानकारी से संबंधित वीडियो अपलोड किए जा सकते हैं। डिमांड सेज डॉट कॉम के अनुसार, वर्तमान समय में पूरी दुनिया में लगभग 2 अरब 21 करोड़ से अधिक यूट्यूब चैनल सक्रिय हैं, वहीं देश में यूट्यूब के लगभग 46.7 करोड़ उपयोगकर्ताओं के होने के कारण भारत को यूट्यूब उपयोगकर्ताओं का घर भी कहा जाता है। वेबसाइट के ही एक अन्य आँकड़े के अनुसार, लगभग 12.2 करोड़ यूट्यूब उपयोगकर्ता वेबसाइट और अन्य एप्लीकेशनों के माध्यम से प्रतिदिन यूट्यूब देखते हैं (रूबी, 2023)। देश में यूट्यूब की लोकप्रियता दिनोंदिन बढ़ती ही जा रही है। सभी आयु वर्ग के उपयोगकर्ताओं के सम्मिलित होने के कारण डिजिटल संचार के एक प्रमुख मंच के रूप में स्थापित यूट्यूब बैगा जनजाति की पारंपरिक ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। डिजिटल संचार के इस मंच ने बैगा जनजाति के पारंपरिक ज्ञान, विविधता और महत्त्व को न केवल दुनिया भर के लोगों तक पहुँचाया है, बल्कि आधुनिक दुनिया की ओर एक खिड़की भी खोली है, जो बैगाओं को आश्चर्य से भरी आधुनिक दुनिया के रंग-ढंग से भलीभाँति परिचित कराती है।

शोध उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र के निम्नलिखित दो उद्देश्यों हैं :

- बैगा जनजाति की पारंपरिक ज्ञान परंपराओं का समकालीन आकलन।
- बैगा जनजाति में व्याप्त पारंपरिक ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में यूट्यूब की भूमिका का अध्ययन।

शोध प्रविधि

नितांत वर्णात्मक एवं गुणात्मक प्रकृति के इस शोध पत्र में निर्धारित किए गए उद्देश्यों के अंतर्गत बैगा जनजाति में व्याप्त पारंपरिक ज्ञान परंपराओं से संबंधित तथ्यों का संकलन एवं विश्लेषण बैगा संस्कृति के जानकार विद्वानों, बैगा संस्कृतिकर्मियों के अनौपचारिक साक्षात्कारों सहित विभिन्न पुस्तकों, समाचार पत्रों, समाचार पत्रों की वेबसाइटों, समाचार पोर्टलों और विभिन्न यूट्यूब चैनलों में उपलब्ध सामग्री के माध्यम से किया गया है।

चर्चा एवं विश्लेषण

प्रस्तुत शोध पत्र में डिजिटल संचारकर्ताओं, विशेषकर यूट्यूबरों और उनके यूट्यूब चैनलों द्वारा बैगा जनजाति की पारंपरिक ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में किए जा रहे उनके योगदान के चयनात्मक विश्लेषण से पूर्व यहाँ पर बैगाओं में व्याप्त ज्ञान परंपराओं का संक्षिप्त अवगाहन करना न केवल बैगाओं की समृद्ध ज्ञान परंपराओं के समकालीन आकलन में मददगार साबित होगा, बल्कि ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में यूट्यूब की भूमिका को भी उद्घाटित करने में पथ प्रदर्शक की तरह कारगर सिद्ध होगा।

बैगा जनजाति की ज्ञान परंपराएँ

बैगाओं के जातिगत संस्कारों, प्रथाओं, लोकोत्सवों, लोकगीतों तथा लोक विश्वासों के अध्ययन से स्पष्ट है कि बैगाओं की ज्ञान परंपराएँ चिरकालिक हैं। "बैगा जनजाति के लोगों के दैनिक जीवन के तौर-तरीके, तीज-त्योहार, लोकाचार तथा दैनिक संवाद जिस वैज्ञानिकता का संकेत देते हैं, उससे साबित होता है कि बैगा समुदाय के लोगों ने अपनी सामान्य जीवनचर्या को पर्यावरण अनुकूल, सरल, सहज तथा जनजातीय समाजोनुरूप बनाने का प्रयास किया था" (पांडेय, 2022)। बैगा जनजाति की ज्ञान परंपराएँ प्राकृतिक संसाधनों के संचय, प्रबंधन और उनके उपयोग कौशल पर आधारित हैं। बैगाओं की जीवनचर्या का प्रकृति के साथ समन्वय बेजोड़ किस्म का है। बैगा वन संपदा, वन्य औषधीय रोगोपचार, पारंपरिक कृषि, और वन्य प्राणियों के कुशल जानकार होते हैं।

सुदूर जंगलों में रहने वाले बैगाओं के लिए वनोपज संग्रहण उनकी आजीविका के प्रमुख स्रोतों में से एक है। ऐसे में, वन संपदा के बारे में उनकी जानकारी के स्तर का ऊँचा होना स्वाभाविक ही है। जंगलों से प्राप्त वनोपज और विभिन्न किस्म की जड़ी-बूटियों का संग्रह बैगा या तो बेचने के लिए या फिर स्वयं के रोगोपचार के लिए करते हैं। बैगा जनजाति में प्रचलित औषधीय ज्ञान परंपरा का आज भी कोई सानी नहीं है। बैगाओं की पारंपरिक रोगोपचार पद्धति विश्वसनीय होने के साथ मुफ़ीद भी है। वैसे तो हर बैगा किसी-न-किसी जड़ी-बूटी के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी रखता है, लेकिन विधिवत् पारंपरिक चिकित्सकीय ज्ञान बैगा समुदाय के कुछ गिने-चुने लोग ही अर्जित कर पाते हैं। बैगाओं में झाड़-फूँक, तंत्र-मंत्र, पूजा-अनुष्ठान के माध्यम से भी इलाज करने का दावा किया जाता है, लेकिन इस प्रकार की चिकित्सा का कोई वैज्ञानिक आधार प्रायः नहीं होता है। बैगाओं में साक्षरता का प्रतिशत उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति की तरह ही काफी कम है, लिहाजा कथित आधुनिक अथवा विकसित कहे जाने वाले समाजों द्वारा परंपरागत जनजातीय चिकित्सा पद्धतियों को अविश्वास और संदेह की दृष्टि से देखना कोई असामान्य बात नहीं है। परंतु यह भी सच है कि बैगा जनजाति का वनौषधीय ज्ञान अनेकों बार चमत्कृत करने वाला होता है। उदाहरण के तौर पर बैगा वैद्य आज भी बिना किसी औपचारिक प्रशिक्षण के "शरीर की हड्डी टूटने, बवासीर तथा दमा श्वास, एलर्जिक अस्थमा का इलाज गारंटी से स्थायी तौर पर कर लेते हैं" (चौरसिया, 2009)। वहीं, दुर्गम स्थानों में स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं होने की स्थिति में बैगा 'जरीया' पौधे की ढाई पत्तियों को चबाने के बाद उसके रस को निगलकर संभावित पेट या मूत्र संबंधी विकारों से निजात पा लेते हैं (यादव, 2020)। आज हम कोई भी छोटी-सी बीमारी होने पर बिना सोचे, सीधे अस्पताल का रुख कर लेते हैं, वहीं बैगाजन कई असाध्य से असाध्य रोगों का इलाज भी अपनी परंपरागत उपचार पद्धति के माध्यम से अत्यंत ही सरलता से कर लेते हैं। बैगाओं में रोगोपचार का यह पारंपरिक ज्ञान, बैगा जनजाति की समृद्ध ज्ञान परंपराओं से ही तो नि:सृत हुआ है।

बैगाओं की पारंपरिक कृषि विषयक ज्ञान परंपरा भी रोगोपचार संबंधी ज्ञान परंपरा की तरह ही अनूठी और निराली है। कभी बेवर कृषि करने वाले बैगा आज पूर्णतया स्थायी खेती करने वाली जनजाति में परिवर्तित हो गए हैं। यह बात सत्य है कि बैगाओं में साक्षरता का स्तर तुलनात्मक रूप से अत्यंत कम है, बावजूद इसके उन्हें यह पता है कि कौन-सा अनाज उनकी सेहत के लिए बेहतर है। इस बात को 'बेवर बीज बैंक' बनाकर प्रसिद्ध हुई लहरी बाई बैगा के उदाहरण से समझा जा सकता है। मध्य प्रदेश के डिंडोरी जिले के बजाग जनपद के सिलपिड़ी गाँव की रहने वाली लहरी बाई साक्षर नहीं हैं, लेकिन उन्हें पता है कि मोटे अनाज (मिलेट) का संरक्षण कैसे किया जाता है? मोटे अनाज के पारंपरिक बीजों को बचाने की ललक लहरी बाई में ऐसी है कि उन्होंने इंदिरा आवास योजना के तहत मिले दो कमरों के छोटे से घर के एक कमरे में एक बीज बैंक स्थापित कर लिया है। इस बीज बैंक में उन्होंने मोटे अनाजों की विभिन्न प्रजातियों, जैसे–कोदो, कुटकी, सनवा, मढ़िया, सालहर, काग और बाजरा सहित लगभग 150 से अधिक दुर्लभ बीजों को संरक्षित किया है। लहरी बाई अपने बीज बैंक में संरक्षित इन बीजों को अपने गाँव सहित आसपास के लगभग दो दर्जन गाँवों के किसानों को बाँट देती हैं। वहीं फसल आने पर किसान बिना कोई मूल्य लिए अपनी उपज का एक छोटा हिस्सा लहरी बाई को उपहार स्वरूप भेंट कर देते हैं (गुड न्यूज टुडे, 2023)।

आज दुनिया को यह ज्ञात हो चुका है कि सारी दुनिया का पेट मोटे अनाज ही भर सकते हैं। यही वजह है कि संपूर्ण विश्व संयुक्त राष्ट्र संघ के आह्वान पर वर्ष 2023 को अंतरराष्ट्रीय मिलेट वर्ष के रूप में मना रहा है। भारत सरकार ने भी 2023 के बजट में मोटे अनाजों के उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए 'श्री अन्न' नाम की योजना की शुरुआत की घोषणा की है। मोटे अनाज की महत्ता इस बात से ही उजागर होती है कि इनसानी स्वास्थ्य के लिए बेहद फायदेमंद होने के कारण इन्हें 'सुपर फूड' की संज्ञा दी गई है। शहरी और कथित सभ्य पढ़े-लिखे लोगों को अब कहीं जाकर पता चल रहा है कि मोटे अनाज वजन घटाने में मददगार होने के साथ ही हृदय रोग की संभावनाओं को कम करने में सक्षम हैं, जबकि बैगा जनजाति के लाखों लोगों के पारंपरिक खानपान में मोटे अनाजों के पकवान सदियों से ही उनकी थाली का हिस्सा रहे हैं।

मध्य प्रदेश के उमरिया जिले की लोढ़ा गाँव निवासी जोधइया बाई बैगा, अपनी बैगा चित्रकारी के लिए न केवल देश में, बल्कि विदेशों में भी विख्यात हैं। हाल ही में उन्हें भारत सरकार द्वारा बैगा चित्रकला को संरक्षित कर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाने के लिए पद्मश्री पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया है। इससे पहले विगत वर्ष में भी अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर उन्हें तत्कालीन राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद द्वारा महिला सशक्तीकरण की दिशा में असाधारण कार्य के लिए 'नारी शक्ति पुरस्कार' से सम्मानित किया जा चुका है। जोधइया बाई, बैगा जनजाति के धार्मिक विश्वासों में की गई देवलोक की परिकल्पना के साथ ही पर्यावरण और वन्य जीव, विशेषकर, बाघ पर की गई अपनी चित्रकारी के लिए पहचानी जाती हैं। जोधइया बाई बैगा दशकों से पारंपरिक बैगा जनजातीय संस्कृति और दर्शन को न केवल लकड़ी, बल्कि हस्तनिर्मित पेपर और कैनवास पर भी अपनी चित्रकारी के माध्यम से लोकप्रिय बना रही हैं। उल्लेखनीय है कि बैगा बाघ को अपना छोटा भाई मानते हैं। बैगा बघेसुर बाबा के नाम से उसकी पूजा-अर्चना भी करते हैं। बैगाओं द्वारा बाघ की पूजा करना, महज एक संयोग मात्र नहीं है। बैगा अपने परंपरागत ज्ञान के बलबूते यह बात सदियों से भलीभाँति जानते आए हैं कि जंगल का पारिस्थितिकी तंत्र बाघ पर ही निर्भर है। 'बाघ हैं तो जंगल है' की सोच आज की नहीं, बल्कि बैगाओं के पुरखों द्वारा सदियों से बाघ के पूजने की परंपरा में प्रस्फुटित नजर आती है। इसी तरह से विवाह के अवसर पर किए जाने वाले परघौनी नृत्य के समय डिंडोरी जिले के बजाग विकासखंड के ग्राम धुरकुटा निवासी पद्मश्री अर्जुन सिंह धुर्वे और उनके साथियों के थिरकते पाँव और बैगा गीतों से लरजते होंठ बैगा ज्ञान परंपराओं का ही बखान करते दिखते हैं।

बैगा जनजाति में व्याप्त उपर्युक्त वर्णित पारंपरिक ज्ञान प्रलेखित नहीं होने; आधुनिकता की चकाचौंध से नई पीढ़ी में पारंपरिक ज्ञान को अर्जित करने की घटती ललक और धार्मिक-सामाजिक निषेधों के कारण, बैगाओं में गतिमान पारंपरिक ज्ञान का प्रवाह तालाब के पानी की भाँति धीरे-धीरे स्थिर होता जा रहा था। ऐसे में, उदारीकरण की बयार और सरकारी नीतियों के बेहतर क्रियान्वयन के चलते बैगाओं की लगातर बेहतर होती सामाजिक-आर्थिक स्थिति और वैकल्पिक जन माध्यम के रूप में इंटरनेट आधारित डिजिटल मीडिया की आमद ने पूरे परिदृश्य को ही बदल दिया है। यह बात सही है कि बैगा क्षेत्रों में सभी जन माध्यमों की न्यूनाधिक उपलब्धता है, बावजूद इसके इन सभी माध्यमों में बैगाओं की समान पहुँच नहीं है। अलबत्ता, पिछले एक दशक में मोबाइल नेटवर्क की बेहतर होती स्थिति ने कमोबेश हर युवा के हाथ में स्मार्टफोन सुलभ करके सभी जन माध्यमों तक उनकी पहुँच को आसान बना दिया है। इंटरनेट के बढ़ते उपयोग और सर्वसुलभ होते डिजिटल संचार टूलों ने जनजातीय ज्ञान परंपराओं को सहेजने में तकनीकी प्रेमी लोगों के हाथ मजबूत किए हैं। परिणामस्वरूप श्रुति परंपराओं और उनके साधकों तक सीमित रहने वाला ज्ञान आज हर किसी की पहुँच के दायरे में आ गया है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि बैगा जनजाति की लगभग लुप्त होती जा रही ज्ञान परंपराओं को संरक्षित करने के लिए इंटरनेट में मुफ्त में उपलब्ध ऑनलाइन वीडियो शेयरिंग वेबसाइट यूट्यूब एक तारणहार की भूमिका में अवतरित हुई है। यूट्यूब अपने पंजीकृत उपयोगकर्ताओं को बिना किसी शुल्क के असीमित वीडियो अपलोड करने की सुविधा देता है। वहीं, इन वीडियो को देखने वाले, पसंद करने वाले, टिप्पणी करने और यूट्यूब सहित अन्य डिजिटल माध्यमों में शेयर करने वाले उपयोगकर्ताओं को भी किसी तरह का शुल्क नहीं देना पड़ता है। यह अलग बात है कि विज्ञापनरहित वीडियो देखने के लिए उपयोगकर्ताओं को यूट्यूब द्वारा सशुल्क प्रीमियम सदस्यता दी जाती है।

बैगा ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में कारगर यूट्यूब

इंटरनेट के आगमन ने पारंपरिक ज्ञान को सहेजना पहले से कहीं अधिक सुगम बना दिया है। आज यूट्यूब डिजिटल संचार के एक प्रमुख मंच के रूप में उभरा है। गूगल के बाद सर्वाधिक प्रयोग किए जाने वाले सर्च इंजन के रूप में यूट्यूब की लोकप्रियता आज युवाओं के सिर चढ़कर बोल रही है। यूट्यूब सन् 2005 में अस्तित्व में आने वाली एक ऐसी ऑनलाइन वीडियो साझा करने वाली वेबसाइट है, जिसमें उपयोगकर्ता वीडियो को अपलोड करने के साथ ही दुनिया भर में कहीं भी इसे देख सकते हैं। यूट्यूब की शुरुआत पेपाल कंपनी से जुड़े स्टीव चैन, चाड हर्ले और जावेद करीम ने

की थी, जिसे नवंबर 2006 में गूगल ने अपने स्वामित्व में ले लिया। यूट्यूब पर सामान्य जानकारी वाले वीडियो से लेकर म्यूजिक वीडियो, टीवी शो, फिल्म ट्रेलर, ब्लॉग, ट्यूटोरियल और अन्य श्रेणियों के वीडियो सहज ही उपलब्ध होते हैं (विकिपीडिया, 2005)। सूचना, मनोरंजन और शिक्षण के उल्लेखनीय माध्यम के रूप में स्थापित हो चुके यूट्यूब का जनजातीय संस्कृति और उनकी ज्ञान परंपराओं के संरक्षण में भी विशेष योगदान है। यूट्यूब जनजातीय संस्कृति के विविध रंगों को जनजातीय समुदायों सहित अन्य गैर-जनजातीय लोगों तक पहुँचाकर समृद्ध जनजातीय संस्कृति के संरक्षण और प्रलेखन में भरपूर मदद कर रहा है। वर्तमान में बैगा जनजाति से संबंधित वीडियो, ऑडियो रिकॉर्डिंग, फोटोग्राफ, ई-बुक्स और ब्लॉग लेखों जैसी डिजिटल सामग्री को डिजिटल संचारकर्ताओं द्वारा यूट्यूब सहित अन्य सोशल मीडिया मंचों पर साझा करके प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से बैगा जनजाति की पारंपरिक ज्ञान परंपराओं को संरक्षित करने का प्रयास किया जा रहा है।

बैगाओं की संस्कृति और सदियों से उनके द्वारा अर्जित ज्ञान यूट्यूब के माध्यम से आज बड़ी संख्या में लोगों तक आसानी से पहुँच रहा है। यूट्यूब पर बैगा संस्कृति और संस्कारों से जुड़े वीडियो, गाने, लघु और डॉक्यूमेंट्री फिल्मों के साथ-साथ उनकी ज्ञान परंपराओं से जुड़ी अन्य विषयवस्तु भी विपुल मात्रा में उपलब्ध हैं, जिनके माध्यम से बैगा संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को जानने और समझने का अवसर समुदाय के लोगों सहित अन्य गैर जनजातीय लोगों को भी मिल रहा है। वीडियो शेयरिंग वेबसाइट यूट्यूब पर उपलब्ध 'सीजी टूरिस्ट गाइड' नाम के यूट्यूब चैनल का ही उदाहरण ले लें तो यह बात पूर्णत: स्पष्ट हो जाती है। इस यूट्यूब चैनल को अब तक 2.14 लाख उपयोगकर्ताओं के साथ 9,05,85,438 व्यू मिल चुके हैं (सीजी टूरिस्ट गाइड, 2023)। इस यूट्यूब चैनल में ऑडियो-वीडियो के रूप में उपलब्ध डिजिटल सामग्री के माध्यम से बैगाओं की जीवनचर्या सहित बैगानी संस्कृति के महत्त्वपूर्ण तथ्यों और आम जीवन की समस्याओं को उजागर करने की सफल कोशिश की गई है। भारत सरकार के जनजातीय कार्य मंत्रालय के यूट्यूब चैनल में भी देश की अन्य जनजातियों की तरह ही बैगा जनजाति से संबंधित कई वीडियो साझा किए गए हैं। मोटे अनाज के संरक्षण में महती योगदान देने वाली लहरी बाई बैगा पर केंद्रित एक वीडियो हाल ही में इस चैनल पर साझा किया गया है। इस वीडियो में लहरी बाई मोटे अनाज के बीजों को सहेजने के बारे में बता रही हैं (जनजातीय कार्य मंत्रालय, 2023)। वहीं, देश के सबसे बड़े लोक प्रसारक प्रसार भारती के यूट्यूब चैनल 'प्रसार भारती आर्काइव्स' में ट्राइब्स ऑफ इंडिया शृंखला के अंतर्गत 'बैगा : भारत की एक जनजाति' नाम से साझा की गई वृत्तचित्र फिल्म बैगा जनजाति की सामाजिक-आर्थिक स्थिति सहित बैगा जनजाति के विभिन्न सांस्कृतिक पक्षों को बड़ी ही सहजता से प्रस्तुत करती है (प्रसार भारती अर्काइव्स, 2021)।

'डीके808' नाम के यूट्यूब चैनल, जिसके उपयोगकर्ताओं की संख्या लगभग 3.62 लाख है, में छत्तीसगढ़ राज्य के कबीरधाम जिले की पंडरिया तहसील के एक गाँव में आयोजित बैगा शादी के वीडियो को अप्रैल 2022 में साझा किया गया था (डीके808, 2022)। वर्तमान में इस वीडियो को 13 हजार से अधिक लाइक और 50,66,635 से अधिक व्यू मिल चुके हैं। बैगा जनजाति की शादी की परंपराओं को लेकर तैयार किए गए 15 मिनिट के इस वीडियो को 50 लाख से अधिक व्यू मिलना, इस बात को स्पष्ट करता है कि बैगा जनजाति की संस्कृति और उनकी परंपराओं के बारे में लोग ज्यादा से ज्यादा परिचित होना चाहते हैं। इसी चैनल में बैगा जनजाति के लोकनृत्यों पर आधारित एक अन्य वीडियो भी साझा किया गया है। इस वीडियो में पारंपरिक परिधानों के साथ पारंपरिक संगीत वाद्यों की थाप पर नृत्य कर रहे बैगा महिला-पुरुषों को देखकर बैगाओं की नृत्य परंपराओं की समृद्धता का अंदाजा लगाया जा सकता है। वहीं, 'मनोहर पटेल' नाम के यूट्यूब चैनल में डिंडोरी जिले के बजाग जनपद के धुरकुटा गाँव के वयोवृद्ध बैगा थानूलाल ओदरिया से किए गए साक्षात्कार का वीडियो साझा किया गया है (पटेल, 2022)। इस वीडियो में थानूलाल ओदरिया बड़ी सहजता से बैगाओं की वैभवशाली गीत परंपराओं की चर्चा कर रहे हैं। इस वीडियो के व्यू ज्यादा तो नहीं हैं, लेकिन इस वीडियो में विलुप्त होती बैगा परंपराओं की टीस को जरूर अनुभव किया जा सकता है।

यूट्यूब पर मौजूद 'साहापीडिया' नाम के यूट्यूब चैनल में बैगा महिलाओं और उनके शारीरिक अलंकरणों पर लगभग 42 मिनट के विस्तारित वीडियो को 2.2 लाख से ज्यादा व्यू मिल चुके हैं। इस वीडियो में बैगा संस्कृति के जानकार डॉ. बसंत निरगुणे बैगा गोदना परंपरा के बारे प्रामाणिक और अनोखी जानकारियाँ साझा करते हुए नजर आ रहे हैं। यूट्यूब पर उपलब्ध 'नरेंद्र त्रिपाठी' नाम के एक अन्य चैनल में 'जड़ी-बूटियों के जानकार बैगा' शीर्षक से एक वीडियो उपलब्ध है (त्रिपाठी, 2022)। इस वीडियो में वन औषधियों के प्रति बैगाओं के लगाव और ललक को देखा जा सकता है। 'मोर मितान' नाम के यूट्यूब चैनल पर बैगा जनजाति की सांस्कृतिक परंपराओं, विशेषकर गोदना पर दो वयोवृद्ध बैगा महिलाओं का साक्षात्कार और उनके द्वारा गाए गए गीत देखने योग्य हैं (मोर मितान, 2021)। यूट्यूब पर इस वीडियो को अब तक 1.5 लाख से अधिक व्यूज मिल चुके हैं। 'नरेश विश्वास' नाम के यूट्यूब चैनल में दादा और नाती के बीच बेवर खेती को लेकर हुए संवाद का वीडियो पारंपरिक बैगा कृषि परंपराओं के दस्तावेजीकरण का नायाब नमूना है (विश्वास, 2022)। दोनों के बीच संपन्न परस्पर वार्तालाप के इस वीडियो में कृषि विषयक बैगा ज्ञान परंपरा के दर्शन सुलभ हो जाते हैं। 'नरेश विश्वास' के ही यूट्यूब चैनल में, 'कोदो : ए स्मार्ट क्रॉप' नाम से साझा किए गए एक अन्य वीडियो में 'कोदो' के बारे में अद्भुत जानकारी साझा की गई है (विश्वास, 2018)।

वर्तमान में बैगा जनजाति की सामाजिक-आर्थिक स्थिति सहित विभिन्न सांस्कृतिक पक्षों को उजागर करने वाले पहलुओं, जैसे–बैगाओं के रहन-सहन, खानपान, वेशभूषा, रीति-रिवाज, नृत्य-गीत-संगीत, तीज-त्योहार और गोदना आदि पर विभिन्न यूट्यूब चैनलों में कई वीडियो सहज ही उपलब्ध हैं। वहीं, ज्यादा खोजने पर बैगाओं के धार्मिक विश्वास एवं लोक मान्यताओं के साथ ही पारंपरिक रोगोपचार से संबंधित वीडियो सामग्री भी कई यूट्यूब चैनलों में देखने को मिल जाती है। समय के साथ यूट्यूब पर बैगाओं के विभिन्न सांस्कृतिक आयामों के साथ ही उनकी स्वदेशी ज्ञान परंपराओं को उजागर करने वाली विषयवस्तु की मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है। अब तो आलम यह है कि बैगा जनजाति के ही कई लोगों ने भी अपने धार्मिक और सांस्कृतिक पक्षों को प्रचारित-प्रसारित करने के लिए अपने खुद के यूट्यूब चैनल बना लिए हैं। आज से कुछ समय पहले तक दैनंदिन जीवन की विभिन्न वाचिक परंपराओं के रूप में संरक्षित रहने वाली बैगा ज्ञान परंपराओं को यूट्यूब ने संरक्षित

और संवर्धित करने में अनन्य सहयोग किया है। बैगाओं की ज्ञान परंपराओं को सहेजने का जो काम सदियों में नहीं हो पाया था, वह काम यूट्यूब ने लगभग दो दशकों में ही कर दिखाया है। यह बात सही है कि बैगा ज्ञान परंपराओं का अधिकांश हिस्सा लिपिबद्ध नहीं होने के कारण अब लुप्त हो चुका है, लेकिन जनजाति के शेष बचे पारंपरिक ज्ञान को यूट्यूब चैनलों ने सहेजकर डिजिटल संचार के एक उत्कृष्ट टूल के रूप में अपनी सार्थक भूमिका को स्थापित किया है।

निष्कर्ष

जनजातीय समुदायों की ज्ञान परंपराएँ भारतीय संस्कृति के इतिहास और विरासत का एक मूल्यवान हिस्सा हैं। बैगा जनजाति की समृद्ध संस्कृति और ज्ञान परंपराएँ आज भी भौतिकता की अग्नि में दग्ध मानवता को सही दिशा देने में सक्षम है। लिहाजा बैगाओं का अपनी संस्कृति के प्रति सचेत रहना और उसे संरक्षित रखने का प्रयास करना स्वाभाविक है। इंटरनेट के आगमन से संभव हुए डिजिटल संचार ने बैगा जनजाति की संस्कृति और उनकी ज्ञान परंपराओं के संरक्षण और संवर्धन में सार्थक भूमिका निभाई है। इसमें कोई संशय नहीं कि संस्कृति और उसकी ज्ञान परंपराओं का संरक्षण और संवर्धन केवल और केवल सरकार और शिक्षण संस्थाओं की ही जिम्मेदारी नहीं है। कोई भी संस्कृति और ज्ञान परंपराएँ तभी पल्लवित और पुष्पित होती हैं, जब संबंधित समुदाय के लोग अपनी संस्कृति के अर्जित संस्कारों और ज्ञान परंपराओं को अगली पीढ़ी के सक्षम हाथों में इस उम्मीद के साथ आगे बढ़ाते हैं कि वे आत्मीयता के साथ उन्हें स्वीकार करके अपनी अगली पीढ़ी में संचरित करने का हरसंभव प्रयास करेंगे। आज बैगा संस्कृति के लगभग सभी रंग, गीत-संगीत-नृत्य, कथाएँ, पारंपरिक खानपान, तीज-त्योहार, वेशभूषा और जीवनचर्या आदि ऑडियो-वीडियो के रूप में यूट्यूब पर उपलब्ध हैं। यह स्थापित तथ्य है कि बैगा जनजाति की ज्ञान परंपराओं का अधिकांश मौलिक रूप से उनकी जीवनशैली से जुड़ा हुआ है। बैगाओं की सांस्कृतिक परंपराओं के प्रलेखन और उनके संवर्धन के लिए बैगा जनजाति के लोगों का डिजिटली साक्षर होना आज के समय की माँग है, जो यूट्यूब के रूप में पूरी हो रही है। यूट्यूब के माध्यम से बैगा संस्कृति आज दुनिया भर की संस्कृतियों के साथ अपना तादात्म्य स्थापित करने में सक्षम हो रही है। यूट्यूब ने अन्य जातीय समूहों की संस्कृतियों के साथ ही बैगा जनजाति के संस्कृति-संस्कारों और उसकी बची-खुची ज्ञान परंपराओं के संरक्षण और संवर्धन में जो भूमिका अदा की है, वह बैगा जनजाति पर किए गए एक उपकार की तरह है, जिसे आज के डिजिटल युग में अनदेखा करना नामुमकिन-सा है।

संदर्भ

गुड न्यूज टुडे. (2023, फरवरी 5). मिलेट्स सीड बैंक : इस आदिवासी महिला ने पेश की मिसाल, 150 किस्म के मिलेट्स को सहेजकर घर में बनाया बीज बैंक. https://www.gnttv.com/offbeat/story/millets-seed-bank-built-by-this-tribal-woman-in-her-home-in-madhya-pradesh-507700-2023-02-05. से पुन:प्राप्त.

चौरसिया, वी. (2009). प्रकृति पुत्र बैगा. भोपाल : मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी.

जनजातीय कार्य मंत्रालय. (2023, मई 11). मिलिए, MP के बैगा जनजाति की लहरी बाई से जिन्हें अंतरराष्ट्रीय मिलेट्स वर्ष की ब्रांड एंबेसडर बनाया [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=B-2DlNxKarY से पुन:प्राप्त.

डीके808. (2022, अप्रैल 14). बैगा जनजाति में आज भी पुरानी परंपरा में होता है शादी [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=c1CefyfZhIg से पुन:प्राप्त.

त्रिपाठी, एन. (2022, अप्रैल 26). जड़ी-बूटियों के जानकार बैगा [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=zjdRmr_d_Uo से पुन:प्राप्त.

पटेल, एम. (2022, जुलाई 6). बैगा जनजाति के बबा संग अलकरहा गोठबात। जुन्ना जुन्ना गोठ बात [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=A_kgHKiMnUo से पुन:प्राप्त.

प्रसार भारती अर्काइव्स. (2021, सितंबर 10). बैगा ट्राइब्स | ट्राइब्स ऑफ इंडिया [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=WNtNzwF_yRg से पुन:प्राप्त.

पांडेय, ए. के. (2022). बैगा जनजाति की संचार परंपराओं पर जनमाध्यमों का प्रभाव (अनपब्लिशस्ड डॉक्टोरल थीसिस). महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, भारत.

बैगा ट्राइब. (2020, जनवरी 20). https://www.drishtiias.com/daily-news-analysis/baiga-tribe से पुन:प्राप्त.

मोर मितान. (2021, मई 2). बैगा आदिवासी दाई मन संग गुरतुर गोठ बात [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=Ne1rjUW8adw से पुन:प्राप्त.

यादव, आर. (2020, मई 29). वैदिक चिकित्सा में बैगाओं का ज्ञान आज भी सर्वोच्च | नॉलेज ऑफ बैगाज इज स्टिल दि हाईएस्ट इन वैदिक मेडिसिन | पत्रिका न्यूज. https://www.patrika.com/dindori-news/knowledge-of-baigas-is-still-the-highest-in-vedic-medicine-6146501 से पुन:प्राप्त.

रसेल, आर. वी. (1916). द ट्राइब्स एंड कास्ट्स ऑफ सेंट्रल प्रोविंसेस ऑफ इंडिया (वॉल्यूम. 3 एण्ड 4). मैकमिलन एंड कंपनी, लिमिटेड.

रूबी, डी. (2023, अप्रैल 10). यूट्यूब स्टैटिस्टिक्स 2023 : डेटा फॉर ब्रॉण्ड्स एंड क्रिएटर्स. https://www.demandsage.com/youtube-stats से पुन:प्राप्त.

विकिपीडिया. (2005, दिसंबर 25). यूट्यूब. https://en.wikipedia.org/wiki/YouTube से पुन:प्राप्त.

विश्वास, एन. (2018, अगस्त 20). कोदो – ए स्मार्ट क्रॉप [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=bh6EF8DrUWY से पुन:प्राप्त.

विश्वास, एन. (2022, अक्टूबर 14). बेवर खेती- दादी नाती संवाद [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=vNUqXLo019U से पुन:प्राप्त.

साहापीडिया. (2020, जनवरी 29). बैगा वूमेन एंड बॉडी डेकोरेशंस : आर्नामेंट्स एंड टैटू कल्चर [वीडियो]. https://www.youtube.com/watch?v=86CRplNHkwY से पुन:प्राप्त.

सीजी टूरिस्ट गाइड. (2023, मई 21). https://www.youtube.com/@CGTOURISTGUIDE/about से पुन:प्राप्त.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 23-28, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

ऑनलाइन हिंदी समाचार वेबसाइटों का ऐतिहासिक विकास : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

लोकेंद्र सिंह राजपूत[1] और डॉ. शिवेंद्र कुमार मिश्र[2]

सारांश

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी में विकास के साथ भारतीय हिंदी पत्रकारिता में भी विकास के नए युग की शुरुआत हुई है। हिंदी पत्रकारिता का दायरा अब मुद्रित माध्यमों से आगे बढ़कर ऑनलाइन माध्यमों तक पहुँच गया है। इंटरनेट के कारण हिंदी पत्रकारिता को नया विस्तार मिला। मोबाइल फोन में इंटरनेट की उपलब्धता ने सामान्य लोगों तक भी संचार माध्यमों को पहुँचा दिया है। ऑनलाइन पत्रकारिता के कारण सामाजिक परिवर्तन भी दृष्टिगोचर हो रहा है। अब पाठकों के सामने समाचार प्राप्त करने का नया विकल्प है, जो अन्य परंपरागत संचार माध्यमों की अपेक्षा अधिक तीव्र, सुविधाजनक एवं सहज उपलब्ध है। वर्तमान समय में पाठक समाचार प्राप्त करने के लिए केवल समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं के मुद्रित स्वरूप पर ही आश्रित नहीं हैं, अपितु समाचार वेबसाइट के रूप में उसके सामने ऐसा माध्यम उपलब्ध है, जहाँ से वह जब चाहे समाचार प्राप्त कर सकता है। तकनीक के विकास के कारण अब इंटरनेट पर भाषा का बंधन भी टूट गया है। हिंदी पाठकों को समाचार वेबसाइटें हिंदी में ही समाचार सामग्री उपलब्ध करा रही हैं। तेजी से बदलती तकनीक के साथ हिंदी समाचार वेबसाइटों की विकास यात्रा भी जारी है। प्रस्तुत अध्ययन ऑनलाइन हिंदी समाचार वेबसाइटों के ऐतिहासिक विकास के अध्ययन पर केंद्रित है। इस अध्ययन में मूलतः यह अध्ययन किया गया है कि किस प्रकार हिंदी वेबसाइटों का विकास हुआ और उनके सामने किस प्रकार की चुनौतियाँ आई।

संकेत शब्द : हिंदी समाचार वेबसाइट, डिजिटल मीडिया, ऑनलाइन मीडिया, वेब मीडिया, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, इंटरनेट

प्रस्तावना

भारत में आधुनिक पत्रकारिता की शुरुआत 1780 में हुई, जब आयरिश मूल के जेम्स ऑगस्टस हिक्की द्वारा 29 जनवरी को कलकत्ता से पहला समाचार पत्र 'कलकत्ता जेनरल एडवरटाइजर' प्रकाशित किया गया। यह अँग्रेजी में प्रकाशित होता था। इसे ही 'हिक्की गजट' भी कहा गया। भारत में इसे आधुनिक पत्रकारिता की नींव का पहला पत्थर माना जाता है। भारत की पत्रकारिता में 1780 से 1818 तक के समय को अँग्रेजी पत्रकारिता का काल माना जाता है, इस दौर में जितने भी समाचार पत्र प्रकाशित हुए, सब अँग्रेजी में थे। सन् 1818 के बाद भारत में बांग्ला, गुजराती, फारसी सहित अन्य भाषाओं में समाचार पत्रों का प्रकाशन शुरू हुआ। पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने 30 मई, 1826 को कोलकाता से ही 'उदंत मार्तंड' का प्रकाशन शुरू कर हिंदी पत्रकारिता का शुभारंभ किया। सन् 1920 से भारत में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की दस्तक होती है। सबसे पहले रेडियो आया और उसके बाद टेलीविजन। रेडियो से समाचार प्रसारण करने का एकाधिकार अब तक भारत सरकार के पास ही है, जबकि टेलीविजन के क्षेत्र में आज अनेक निजी समाचार प्रदाता टीवी चैनल आ चुके हैं। भारत में समाचारों के प्रसारण का नवीनतम माध्यम है वेबमीडिया, जिसे डिजिटल मीडिया, ऑनलाइन मीडिया और इंटरनेट मीडिया भी कहा जा रहा है। समाचार पत्रों, रेडियो और टेलीविजन पत्रकारिता की तुलना में इंटरनेट आधारित वेब पत्रकारिता की उम्र बहुत कम है, परंतु कम समय में ही वेब मीडिया ने बहुत विस्तार कर लिया है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास के साथ आज वेब पत्रकारिता की पहुँच और अधिक व्यापक हुई है। बड़े शहरों से लेकर छोटे कस्बों एवं दूर-दराज के गाँवों में भी लोग इंटरनेट के माध्यम से कंप्यूटर और मोबाइल फोन पर समाचार प्राप्त कर पा रहे हैं। वेब मीडिया की ताकत है कि यह किसी एक सीमित भू-भाग तक प्रसारित नहीं है, अपितु इसका प्रसारण क्षेत्र समूचा विश्व है।

भारत में ऑनलाइन मीडिया की शुरुआत 1990 के बाद होती है। भारत में वर्ष 1995 में प्रथम भारतीय वेबसाइट 'इंडिया वर्ल्ड डॉट कॉम' की शुरुआत हुई। ऑनलाइन समाचार उपलब्ध कराने का सबसे पहला प्रयोग इसी वेबसाइट ने किया था। वर्तमान समय में लगभग सभी समाचार पत्रों और समाचार चैनलों की समाचार वेबसाइटें हैं। इसके साथ ही अनेक समाचार संस्थान ऐसे भी उभरकर सामने आए हैं, जो केवल वेबसाइट के माध्यम से ही पाठकों को समाचार उपलब्ध करा रहे हैं और इन समाचारों को पाठक अपनी सुविधा से कभी भी और कहीं भी प्राप्त कर सकते हैं, बशर्ते उसके पास इंटरनेट की उपलब्धता हो और ऑनलाइन सामग्री तक पहुँचने का साधन हो।

मार्शल मैकलुहान ने अपनी पुस्तक 'अंडरस्टैंडिंग मीडिया : द एक्सटेंशन ऑफ मैन' में कल्पना की थी कि समूची दुनिया एक वैश्विक गाँव बनने की ओर अग्रसर है। मैकलुहान ने 1964 में यह कल्पना की थी, तब उनके इस विचार पर किसी को विश्वास नहीं हुआ, परंतु सूचना और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में लगातार हो रहे विकास ने मार्शल मैकलुहान की इस कल्पना को साकार कर दिया है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास ने इस विशाल दुनिया को एक वैश्विक गाँव में परिवर्तित कर दिया है। इंटरनेट के कारण आज सूचनाओं का प्रवाह इतना तीव्र एवं सजीव है कि संचार के क्षेत्र में भौगोलिक दूरी का कोई अर्थ नहीं रह गया है। आज वेब मीडिया के माध्यम से पूरी दुनिया में समाचार प्रसारण के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन आ चुका है। जिस तेजी से वेब मीडिया का प्रसार हो रहा है, उसे देखकर विद्वान अनुमान लगा रहे हैं कि यह शताब्दी ऑनलाइन मीडिया की है।

[1]शोधार्थी, जागरण लेकसिटी यूनिवर्सिटी, भोपाल, ईमेल : lokendra777@gmail.com
[2]सहायक प्राध्यापक, जागरण लेकसिटी यूनिवर्सिटी, भोपाल, ईमेल : shivendra.mishra@jlu.edu.in

भारत में हिंदी वेब मीडिया के विकास की यात्रा का सिंहावलोकन करने पर ज्ञात होता है कि हिंदी समाचार वेबसाइटों के सामने अनेक प्रकार की चुनौतियाँ आई हैं। भारत में जब वेब पत्रकारिता की शुरुआत हुई तब इंटरनेट की दुनिया में अँग्रेजी भाषा का ही एकाधिकार था। वेब पर हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में लेखन की तकनीक विकसित नहीं हुई थी। इसलिए वेबमीडिया के शुरुआती दौर में अँग्रेजी की समाचार वेबसाइटें तेजी से विकसित हुईं और प्रचलन में आईं। आरंभ में वेब मीडिया का प्रचलन और उपयोग अँग्रेजी भाषा जानने वाले छोटे वर्ग तक ही सीमित था। हिंदी भाषी लोगों का एक बड़ा पाठक वर्ग वेब मीडिया का लाभ नहीं उठा पा रहा था, परंतु, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास और यूनिकोड फॉण्ट के आने के बाद से हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में तेजी से समाचार वेबसाइटें प्रारंभ हुई हैं। वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखक जयप्रकाश मानस के अनुसार, "वेब मीडिया खासकर हिंदी में पत्रकारिता के विकास में मुख्य बाधा हिंदी में तकनीकी का अभाव रहा है, पर वह भी लगभग अब हल की ओर है। विंडोज तथा लाइनेक्स और ऑपरेटिंग सिस्टम का इंटरफेस भी हिंदी में बन चुका है।" हिंदी में तकनीक के विकास के लिए व्यावसायिक क्षेत्र के साथ शासकीय स्तर पर भी उल्लेखनीय प्रयास हुए हैं। केंद्रीय सूचना एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार की इकाई सेंटर फॉर डवलपमेंट ऑफ एडवांस कंप्यूटिंग (सीडॉक) द्वारा न केवल हिंदीभाषियों, अपितु अन्य भारतीय भाषा-भाषियों के लिए अपनी भाषा में इंटरनेट के उपयोग करने एवं सामग्री निर्माण करने सुविधाएँ विकसित की गईं। इस प्रकल्प के माध्यम से सरकार ने भाषा तकनीक में विकसित उपकरणों को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए वेबसाइटें भी विकसित कीं, जिनके माध्यम से कोई भी व्यक्ति इन उपकरणों का उपयोग नि:शुल्क कर सकता है। सीडॉक ने हिंदी के विभिन्न आकर्षक यूनिकोड फॉण्ट तैयार किए हैं और उन्हें कंप्यूटर पर चलाने के लिए की-बोर्ड भी तैयार किए हैं। इसके साथ ही वर्तनी संशोधक और फॉण्ट परिवर्तक उपकरण भी विकसित किए हैं। हिंदी एवं अन्य भाषा-भाषियों का रुझान देखकर तकनीक के क्षेत्र में काम करनेवाली कंपनियों ने भी अपनी सुविधाओं को विभिन्न भाषाओं के अनुकूल तैयार करने पर जोर दिया।

लंबे समय तक वेब मीडिया तक पाठकों की पहुँच आसान नहीं थी। वेबसाइटों से समाचार प्राप्त करने के लिए पाठकों के पास इंटरनेट और कंप्यूटर या अन्य उपकरण का होना आवश्यक है। प्रारंभ में इंटरनेट एवं कंप्यूटर इतने महँगे थे कि ये सामान्य लोगों की पहुँच से दूर थे, परंतु समय के साथ इंटरनेट और कंप्यूटर क्रांति हुई, सामान्य लोगों तक इनकी पहुँच बढ़ी। मोबाइल क्रांति और 4जी इंटरनेट की क्रांति ने इस समस्या का लगभग समाधान कर दिया है। मोबाइल फोन पर इंटरनेट की उपलब्धता ने वेब मीडिया तक पाठकों की पहुँच बढ़ा दी है। अब बड़ी संख्या में लोग मोबाइल फोन पर इंटरनेट का उपयोग करके सूचनाएँ एवं समाचार प्राप्त कर रहे हैं। 'द इकॉनोमिक टाइम्स' (2019) के अनुसार, "भारत में कुल इंटरनेट उपयोगकर्ताओं में से 87 प्रतिशत नियमित उपयोगकर्ता हैं। अधिक संख्या में उपयोगकर्ता इंटरनेट का उपयोग करने के लिए मोबाइल फोन का उपयोग करते हैं।"

शोध उद्देश्य

- ऑनलाइन हिंदी समाचार वेबसाइटों के विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।
- ऑनलाइन हिंदी समाचार वेबसाइटों की चुनौतियों का अध्ययन करना।
- वेब मीडिया के विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध में विश्लेषणात्मक एवं विवेचनात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। शोध हेतु द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है, जिसमें पुस्तकें, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, शोध पत्र एवं वेबसाइट शामिल हैं।

साहित्य समीक्षा

द्विवेदी (2022) ने अपने शोधपत्र 'डिजिटल माध्यमों से मिल रही हैं प्रिंट मीडिया को गंभीर चुनौतियाँ' में बताया है कि प्रिंट मीडिया को अपने चरमोत्कर्ष तक पहुँचने में लगभग 100 वर्ष का समय लगा, जबकि डिजिटल मीडिया को यह स्थिति प्राप्त करने में लगभग 15 वर्ष का समय ही लगा है। शोध का निष्कर्ष है कि भारत में ऑनलाइन मीडिया के तेजी से होते विस्तार को देखा गया है। इसी का परिणाम है कि क्षेत्रीय समाचार संगठनों को भी अपने प्रिंट समाचार पत्रों के ऑनलाइन संस्करण शुरू करने पड़े हैं। शोध के अनुसार ऑनलाइन समाचारपत्रों के साथ ही सोशल मीडिया जैसे फेसबुक, ट्विटर, ब्लॉग और मोबाइल फोन के बढ़ते उपयोग ने परंपरागत मीडिया को चुनौती दी है।

राजावत एवं अमिता (2022) के शोधपत्र 'भारत में वेब पत्रकारिता का विहंगावलोकन' के अनुसार, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विस्तार एवं विकास के साथ ही प्रिंट समाचारपत्र-पत्रिकाओं के वेब संस्करण बढ़ते जा रहे हैं। इसके अलावा अब स्वतंत्र रूप से भी समाचार वेबसाइट की संख्या बढ़ती जा रही है। अपने शोधपत्र में उन्होंने ऐसे स्वतंत्र समाचार पत्रों का उल्लेख भी किया है—स्क्रॉल डॉट इन, फर्स्ट पोस्ट डॉट कॉम, रीडिफ डॉट कॉम, तहलका डॉट कॉम, द प्रिंट, द क्विंट इत्यादि। शोधकर्ताओं के अनुसार वेब संस्करणों एवं समाचार वेबसाइट में हो रही वृद्धि के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का विकास, फोन सेवा प्रदान करने वाले टेलिकॉम ऑप्रेटर, सस्ते स्मार्टफोन, सस्ते इंटरनेट डाटा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इसके साथ ही शोधकर्ताओं ने पाया कि संवादात्मक (इंटरेक्टिविटी), बहुपद (मल्टीमेडिअलिटी), अतिपाठ्यता (हायपरटेक्सटुअलिटी) और तात्कालिकता (इम्मेडिअसी) जैसी विशेषताओं के कारण भी वेब पत्रकारिता का प्रचलन बढ़ रहा है।

किट और टेंग ने मलेशिया में 'प्रिंट न्यूज पेपर वर्सेस ऑनलाइन न्यूज मीडिया : ए क्वांटिटेटिव स्टडी ऑन यंग जनरेशन प्रेफरेंस' का अध्ययन किया। अपने अध्ययन में उन्होंने पाया कि युवाओं का रुझान ऑनलाइन संस्करण की ओर है। वे अखबार की मुद्रित प्रति के बजाय स्मार्टफोन या टेबलेट पर अखबार पढ़ना पसंद कर रहे हैं। इस अध्ययन में मुद्रित अखबार पढ़ने वालों की संख्या भी काफी पाई गई।

पिंपलापुरे (2018) ने अपने शोध 'इंपैक्ट ऑफ डिजिटल मीडिया ऑन न्यूजपेपर इंडस्ट्री' में पाया कि इंटरनेट ने समाचार पत्रों के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ा दी है और समाचार वितरित करने के तरीके को प्रभावित किया है। अप्रत्यक्ष रूप से, इंटरनेट ने विज्ञापन प्रवृत्तियों, उपभोक्ता व्यवहार और नवीन प्रौद्योगिकियों के उदय को प्रभावित किया है। नतीजतन,

समाचारपत्रों को वेब के साथ एकीकृत करने के लिए मजबूर किया गया है और अब लगभग 80 प्रतिशत समाचारपत्र एकीकृत रूप से वेब और प्रिंट प्रारूप में संचालित हो रहे हैं। शोध का निष्कर्ष यह भी है कि समाचारपत्रों को विषयवस्तु को लेकर नए सिरे से विचार करने की आवश्यकता है। उन्हें वेब, मोबाइल और सोशल मीडिया पर विविध दर्शकों की सेवा करने के लिए लक्षित सामग्री की एक विस्तृत शृंखला विकसित करने की आवश्यकता है।

कुशवाहा (2017) ने अपने शोध 'न्यू मीडिया का विस्तार, प्रिंट समाचार पत्रों के लिए चुनौती' में पाया कि पाठक प्रिंट समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचारों पर सहजता से अपनी प्रतिक्रिया नहीं दे पाते हैं। किसी समाचार पर उन्हें अपने विचार व्यक्त करना है या सहमति-असहमति जताना है, तो पाठकों को या तो पत्र लिखना पड़ता है या फिर ई-मेल के माध्यम से अपनी प्रतिक्रिया देनी होती है, परंतु ऑनलाइन मीडिया में पाठक सरलता से अपनी प्रतिक्रिया दे सकते हैं। वेबसाइट पर प्रकाशित समाचार को पढ़ते समय ही समाचार के आखिर में दिए गए कमेंट बॉक्स में पाठक ऑनलाइन ही अपनी टिप्पणी दर्ज करा सकते हैं। अर्थात् ऑनलाइन मीडिया में पाठकों की प्रतिपुष्टि भी त्वरित प्राप्त होती है। शोधकर्ता ने यह भी पाया है कि परंपरागत मीडिया को तेजी से बदलती तकनीक और पाठकों की रुचि के अनुरूप अपनी विषयवस्तु की लेखन शैली एवं उसके प्रस्तुतीकरण में बदलाव लाना चाहिए।

विषयवस्तु का विश्लेषण

विगत दो दशक में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास के कारण समाचारों के आदान-प्रदान में व्यापक बदलाव आया है। इंटरनेट क्रांति ने समाज जीवन के राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक सहित विविध क्षेत्रों को प्रभावित किया है। "सूचना प्रौद्योगिकी ने न सिर्फ संचार को गति दी है, बल्कि लोगों को अभिव्यक्ति के नए अवसर भी उपलब्ध करवाए हैं। इस क्रांति से पत्रकारिता भी इससे अछूती नहीं रह गई है। इससे सूचना और समाचार की दुनिया में बृहद् अंतर देखने को मिला है। वास्तव में इस परिवर्तन से पत्रकारिता और समाचार की दुनिया में मौलिक और संरचनात्मक बदलाव हुए हैं। एक प्रकार से इंटरनेट के साथ ही सूचना प्रौद्योगिकी के विकास ने समाचारों के परंपरागत माध्यम (रेडियो, टेलीविजन, और मुद्रित) से इतर ऑनलाइन यानी कि इंटरनेट पर उपलब्ध करा दिया है। इससे विभिन्न वेबसाइटों के माध्यम से सूचना और समाचार ऑनलाइन प्राप्त होने लगे हैं" (राजावत एवं अमिता, 2022)।

इंटरनेट क्रांति के समय में समाचार संप्रेषण के लिए एक नए माध्यम का उदय हुआ है, जिसे डिजिटल मीडिया, न्यू मीडिया और वेब मीडिया के नामों से जाना जा रहा है। इसी नए मीडिया का प्रमुख अंग है, समाचार वेबसाइट। वेबसाइटों के माध्यम से टेक्स्ट, विजुअल और ऑडियो के रूप में समाचार सामग्री का प्रसारण किया जा रहा है। जैसा कि ज्ञात है, वेब मीडिया इंटरनेट पर आधारित है। दुनियाभर में इंटरनेट के विकास के साथ ही वेब मीडिया का विकास और फैलाव हुआ है। कैलिफोर्निया में 29 अक्टूबर, 1969 को दो केंद्रों को आपस में डिजिटल रूप में जोड़ने के साथ 'अरपा नेट' की शुरुआत हुई थी। वर्ष 1971 के अंत तक अरपा नेट से 15 केंद्र जुड़ चुके थे। केवल दो वर्ष में अरपा नेट के इस विस्तार ने इंटरनेट के भविष्य की ओर स्पष्ट संकेत कर दिया था। अरपा नेट की यात्रा लगभग 20 वर्ष तक जारी रही, जो 1990 में समाप्त हुई और अरपा नेट शब्द औपचारिक तौर पर इंटरनेट में परिवर्तित हो गया। 1969 में चार होस्ट कंप्यूटरों से शुरू हुई यह यात्रा 1990 तक कंप्यूटरों की लगभग तीन लाख की संख्या तक पहुँच चुकी थी।

मेवाड़ विश्वविद्यालय के पत्रकारिता विभाग की विभागाध्यक्ष प्रियंका द्विवेदी ने 'टेक्निकल टुडे' पत्रिका में प्रकाशित अपने एक आलेख में लिखा है—"1970 में ब्रिटेन में 'टेलीटेक्स्ट' के माध्यम से डिजिटल पत्रकारिता का प्रारंभ हुआ। 'टेलीटेक्स्ट' एक ऐसी प्रणाली है, जिसमें कोई भी जानकारी तुरंत एवं संक्षिप्त रूप में दे दी जाती है। यह प्रणाली भी वर्तमान में डिजिटल पत्रकारिता के समान ही है। ऑनलाइन समाचारपत्रों का चलन तब से बढ़ गया, जब अमेरिका के नाइट-राइडर समाचारपत्र समूह ने एटी एंड टी के साथ मिलकर पाठकों की माँग पर उनके कंप्यूटर पर समाचार उपलब्ध कराना शुरू किया।" इंटरनेट के उपयोग से कंप्यूटर पर समाचार उपलब्ध करने के प्रयोगों को लोगों का इतना अच्छा प्रतिसाद मिला कि 1990 के बाद से ही बड़ी संख्या में समाचार संस्थाओं ने अपनी समाचार वेबसाइटें बनाकर, उनके माध्यम से लोगों तक समाचार पहुँचाना प्रारंभ कर दिया।

'अरपा नेट' के प्रयोग के साथ कैलिफोर्निया से शुरू हुई इंटरनेट की यह यात्रा लगभग दो दशक बाद भारत पहुँचती है। भारत में 1995 में पहली बार विदेश सेवा निगम लिमिटेड के प्रयास से इंटरनेट आता है। सन् 1995 में ही प्रथम भारतीय वेबसाइट 'इंडिया वर्ल्ड डॉट कॉम' की शुरुआत हुई। ऑनलाइन समाचार उपलब्ध कराने का सबसे पहला प्रयोग इसी वेबसाइट ने किया था। "उस समय दुनियाभर में भारत की 95 प्रतिशत सूचनाएँ इंडिया वर्ल्ड डॉट कॉम के माध्यम से जाती थीं" (सिंह, 2007)।

ऑनलाइन माध्यम से लोगों तक समाचार पहुँचाने का यह तरीका बहुत ही कम समय में लोकप्रिय होने लगा और समूचा पत्रकारिता जगत् इस ओर आकर्षित होने लगा। भारत के मीडिया घरानों ने भी तकनीक के महत्त्व और उसके भविष्य को देखते हुए इंटरनेट आधारित डिजिटल मीडिया को अपनाना शुरू कर दिया। "भारतीय समाचारपत्रों में चेन्नई का 'द हिंदू' पहला समाचारपत्र है, जिसने 1995 में अपना इंटरनेट संस्करण जारी किया। 8 अप्रैल, 1996 को 'टाइम्स ऑफ इंडिया' ने अपनी वेबसाइट शुरू की। 'हिंदुस्तान टाइम्स' ने भी 14 अगस्त, 1996 को अपना इंटरनेट संस्करण शुरू कर दिया" (कुमार, 2005)। 1995 से 1998 तक, केवल तीन वर्ष में ही लगभग 48 समाचार पत्र ऑनलाइन हो गए थे, इनमें हिंदी के केवल 5 समाचारपत्र ही शामिल थे (ठाकुर, 2009)।

हिंदी समाचार वेबसाइटों का विकास एवं चुनौतियाँ

भारत में ऑनलाइन पत्रकारिता एवं वेबसाइटों के विकास क्रम में 1995 में 'द हिंदू' के इंटरनेट संस्करण शुरू होने के लगभग चार वर्ष बाद 1999 में 'वेबदुनिया' नाम से हिंदी भाषा में पहली समाचार वेबसाइट प्रारंभ हुई। भारत के प्रमुख हिंदीभाषी राज्य मध्य प्रदेश के प्रमुख समाचार संस्थान 'नई दुनिया' को यह श्रेय जाता है। मध्य प्रदेश के इंदौर से प्रकाशित दैनिक समाचारपत्र 'नई दुनिया' ने हिंदी समाचार वेबसाइट 'वेबदुनिया' शुरू कर हिंदी पत्रकारिता के समक्ष ऑनलाइन पत्रकारिता के नए द्वार खोल दिए।

हालाँकि 'वेबदुनिया' से पहले हिंदी दैनिक समाचारपत्र अपनी समाचार वेबसाइटें शुरू कर चुके थे; जिनमें 7 दिसंबर, 1996 को 'नई दुनिया' की वेबसाइट नईदुनिया डॉट कॉम के अलावा 17 जनवरी 1997 को 'दैनिक जागरण', 4 मार्च 1997 को 'हिंदी मिलाप', 24 जुलाई 1998 को 'अमर उजाला', 19 फरवरी 1998 को 'राजस्थान पत्रिका', 17 अप्रैल 1998 को 'दैनिक भास्कर' की शुरू हुई वेबसाइटें शामिल हैं। परंतु 'वेबदुनिया' सही मायनों में पूर्णरूप से विकसित पहली हिंदी समाचार वेबसाइट थी। वेबदुनिया जब शुरू हुई तब तकनीकी बाधाओं के कारण क्षेत्रीय भाषाओं में किसी समाचार वेबसाइट की कल्पना भी कठिन थी। हिंदी समाचार वेबसाइट के रूप में वेबदुनिया का आना एक आश्चर्यचकित करनेवाली घटना थी। 'समाचार फॉर मीडिया' से बातचीत में वेबदुनिया के संपादक रहे जयदीप कर्णिक कहते हैं—"जिस समय वेबदुनिया की शुरुआत की गई थी, उस समय हमारा प्रतिस्पर्धी तो कोई नहीं, पर उस दौर में हमें न जाने कितनी तकनीकी समस्याओं की चुनौती से हर पल निपटना होता था। हम उस समय से पाठकों को एक ऐसा हिंदी का मंच उपलब्ध कराने की कोशिश में लगे थे, जहाँ वे तमाम विषयों पर सामग्री प्राप्त कर सकें। वेबदुनिया की ताकत उसका समय के अनुरूप खुद को ढालना है। जब एक ऐसा समय आया कि पाठक संपादकीय सामग्री से मुँह मोड़ने लगा तो हमने वेबवार्ता का प्रारूप प्रयोग कर विचार की दुनिया से पाठकों को जोड़ा और यह प्रयोग काफी सफल सिद्ध हुआ। पोर्टल पर वीडियो बुलेटिन का प्रारंभ नवंबर 2014 में हुआ, जो कि इंटरनेट पर हिंदी न्यूज पोर्टल के इतिहास में पहली शुरुआत है। पहली बहुभाषी ईमेल सेवा ईपत्र, विश्व का पहला हिंदी सर्च इंजन, फोनेटिक की-बोर्ड, ई-वार्ता, पहला ई-कॉमर्स आदि कई उपलब्धियाँ बेवदुनिया के नाम पर ही दर्ज हैं।"

स्पष्ट है कि वेबदुनिया ने हिंदी में समाचार देने के लिए तकनीकी चुनौतियों को स्वीकार करते हुए उनका समाधान भी निकाला। वेबदुनिया ने पाठकों तक हिंदी में समाचार पहुँचाने के लिए फॉण्ट से लेकर कुंजी-पटल तक विकसित किए और अन्य समाचार संस्थानों को राह दिखाई। हिंदी समाचार वेबसाइटों के विकास में मुख्य बाधा हिंदी में तकनीक का अभाव रहा है, परंतु समय के साथ अब यह समस्या पूरी तरह समाधान की ओर अग्रसर है। हालाँकि आज दूरदराज के क्षेत्रों में इंटरनेट तो पहुँच गया है, लेकिन अब भी उसकी गति इतनी कम है कि वेबमीडिया का उपयोग कठिन हो जाता है। 4जी क्रांति के बाद भारत में अब 5जी इंटरनेट की सुविधा उपलब्ध होनी शुरू हो गई है, परंतु इसके बावजूद अधिकतर क्षेत्रों में इंटरनेट की गति काफी धीमी है। इंटरनेट की यह गति समाचार वेबसाइटों तक पाठकों की सहज पहुँच में बाधा बनती है। "भारत में इंटरनेट की धीमी गति और सीमित आबादी तक इसकी पहुँच, पोर्टलों के विस्तार से जुड़ी एक अन्य प्रमुख बाधा है। वेब आधारित समाचार संगठनों के समक्ष एक चुनौती प्रौद्योगिकी में हो रहे बदलावों और नए वेब अनुप्रयोगों के अनुसार खुद को अनुकूलित करने से संबंधित है। वेब समाचार उपभोक्ताओं के अनुभवों को बेहतर बनाए रखने के लिए मीडिया संस्थानों को बदलते वक्त के साथ अपने स्वरूप को अनुकूलित करने के लिए निवेश करते रहना आवश्यक है" (बंसल, 2015)।

प्रारंभ में जब हिंदी में समाचार वेबसाइटें शुरू की जा रही थीं, तब तकनीकि समस्याएँ बहुत थीं। विशेषकर हिंदी के फॉण्ट को लेकर एकरूपता नहीं थी। कंप्यूटर में हिंदी के फॉण्ट उपलब्ध नहीं होने से वेबसाइट को पढ़ा जाना संभव नहीं होता था। पाठकों को सबसे पहले वेबसाइट से, उसके द्वारा उपयोग में लाया जा रहा फॉण्ट डाउनलोड करके अपने कंप्यूटर में इंस्टॉल करना पड़ता था, तब ही वह उस वेबसाइट की सामग्री पढ़ सकता था। ऐसे में अलग-अलग वेबसाइटों को पढ़ना पाठकों के लिए कठिन था, क्योंकि कई वेबसाइटों के फॉण्ट अलग थे। पाठकों के सामने यह एक बड़ी समस्या थी। बाद में जब यूनिकोड फॉण्ट का विकास हुआ, तब हिंदी वेबसाइटों को फॉण्ट की समस्या से मुक्ति मिली। उसके बाद हिंदी वेबसाइटों का चलन एवं विकास भी तेजी से बढ़ा। हिंदी भाषा के लिए यूनिकोड फॉण्ट होने से पाठकों के साथ ही वेबसाइट संचालकों को भी सुविधा हो गई। वेबसाइट के लिए अलग से फॉण्ट डिजाइन कराने की आवश्यकता नहीं रह गई। "यूनिकोड के प्रयोग से सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि एक कंप्यूटर पर दर्ज किया गया पाठ (टेक्स्ट) विश्व के किसी भी अन्य यूनिकोड आधारित कंप्यूटर पर खोला जा सकता है। इसके लिए अलग से उस भाषा के फॉण्ट को इस्तेमाल करने की अनिवार्यता नहीं है, क्योंकि यूनिकोड केंद्रित हर फॉण्ट में सिद्धांतत: विश्व की हर भाषा के अक्षर मौजूद हैं। कंप्यूटर में पहले से मौजूद इस क्षमता को सिर्फ सक्रिय करने की जरूरत है.... हिंदी जाननेवाला व्यक्ति यूनिकोड आधारित किसी भी कंप्यूटर में टाइप कर सकता है, भले ही वह विश्व के किसी भी कोने में क्यों न हो" (दाधीच, 2010)।

"आरम्भ में अखबारों की इंटरनेट से जुड़ने के गति बहुत धीमी थी। वर्ष 2006 तक विभिन्न भाषाओं के सिर्फ 114 समाचारपत्र ही ऑनलाइन उपलब्ध हो पाए थे" (मिश्र, 2020), लेकिन पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न बदलावों से इस माध्यम के विकास और विस्तार में अभूतपूर्व वृद्धि देखने को मिली है। दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर, नवभारत टाइम्स, अमर उजाला, जनसत्ता, हिंदुस्तान, राजस्थान पत्रिका, लोकमत, पांचजन्य, प्रभात खबर, पंजाब केसरी, आजतक, जी न्यूज, इंडिया टीवी, एनडीटीवी, एबीपी न्यूज जैसे बड़े समाचार संस्थानों के साथ ही आज भारत में हिंदी के मझले और छोटे समाचार संस्थानों की भी समाचार वेबसाइटें हैं। अब तो अनेक संस्थान ऐसे भी अस्तित्व में हैं, जो सिर्फ वेबसाइट के माध्यम से ही समाचारों का संप्रेषण कर रहे हैं। 'प्रभा साक्षी' ऐसा पहला संस्थान है, जिसका समाचार वेबसाइट प्रारंभ होने से पूर्व मुद्रित समाचारपत्र प्रकाशित नहीं होता था। 26 अक्तूबर, 2001 को नई दिल्ली से हिंदी समाचार वेबसाइट प्रभासाक्षी डॉट कॉम की शुरुआत की गई थी। तहलका, द प्रिंट, ऑप इंडिया, द क्विंट, द सूत्र, गाँव कनेक्शन, बीबीसी हिंदी, आईचौक, द वायर, संवाद डॉट इन, वीएसके भारत, न्यूज भारती, इनशॉर्ट सहित अनेक संस्थान स्वतंत्र रूप से वेबसाइट और मोबाइल अनुप्रयोग के माध्यम से हिंदी में समाचार उपलब्ध करा रहे हैं। स्थानीय स्तर पर भी अनेक वेबसाइटें संचालित की जा रही हैं, जो हिंदी में स्थानीय पाठकों को स्थानीय समाचारों के साथ देश-विदेश के समाचार उपलब्ध करा रहे हैं। प्रतिष्ठित समाचार संस्थानों की समाचार वेबसाइटें अब अनुप्रयोग (एप्लीकेशन) के रूप में भी पाठकों के लिए उपलब्ध हैं, जो उपयोग करने में पाठकों के लिए अधिक सुविधाजनक हैं। इन समाचार अनुप्रयोगों को अपनी रुचि के अनुकूल करके पाठक प्राथमिकता के आधार पर अपनी पसंद के समाचार प्राप्त कर सकते हैं।

वेब मीडिया के पाठकों में वृद्धि

इंटरनेट एंड मोबाइल एसोसिएशन ऑफ इंडिया के आँकड़े बताते हैं कि "भारत में फिलहाल 50 करोड़ 40 लाख इंटरनेट उपयोगकर्ता हैं, जो कि विश्व में चीन के बाद दूसरे सबसे ज्यादा उपयोगकर्ता हैं। चीन में सबसे ज्यादा इंटरनेट उपयोगकर्ता मौजूद हैं और उनकी संख्या 85 करोड़ के आसपास है। चीन के इस आँकड़े को भारत 2025 में पीछे छोड़ देगा। 2025 तक देश में सक्रिय इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या 90 करोड़ हो जाएगी। बीते एक वर्ष में शहरी क्षेत्रों में इंटरनेट की पहुँच में 6 प्रतिशत बढ़ोतरी हुई है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह वृद्धि 14 प्रतिशत हुई है। अर्थात् अब इंटरनेट के उपयोगकर्ता ग्रामीण क्षेत्रों में भी तेजी से बढ़ रहे हैं। भारत में इंटरनेट के उपयोगकर्ता बढ़ेंगे तो हिंदी समाचार वेबसाइटों पर भी बड़ी संख्या में पाठक बढ़ेंगे, क्योंकि बहुभाषी भारत के हिंदीभाषी राज्यों की जनसंख्या 46 करोड़ से अधिक है। 2011 की जनगणना के मुताबिक भारत की 1.2 अरब जनसंख्या में से 41.03 प्रतिशत की मातृभाषा हिंदी है। हिंदी को दूसरी भाषा के तौर पर उपयोग करने वाले अन्य भारतीयों को शामिल कर लिया जाए तो देश के लगभग 75 प्रतिशत लोग हिंदी बोल सकते हैं। प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं में से 21 प्रतिशत उपयोगकर्ता हिंदी सामग्री उपयोग करते हैं। इंटरनेट पर अँग्रेजी सामग्री के उपभोग में 19 प्रतिशत वृद्धि की तुलना में इंटरनेट पर हिंदी में सामग्री के उपभोग में वर्ष-दर-वर्ष 94 प्रतिशत तक वृद्धि देखी गई है।

वेबसाइटें इसलिए भी लोकप्रिय हो रही हैं, क्योंकि आज इंटरनेट की उपलब्धता सुगम है और वेबसाइट के माध्यम से पाठक अविलंब समाचार प्राप्त कर लेते हैं। मोबाइल फोन की क्रांति ने ऑनलाइन पत्रकारिता को और गति दी है। मोबाइल फोन पर पाठक इंटरनेट की उपलब्धता होने पर अपनी सुविधानुसार कभी भी और कहीं भी वेबसाइट के माध्यम से समाचार प्राप्त कर सकता है। "आने वाले दिनों में वेब पत्रकारिता निश्चित तौर पर वह मुकाम पाएगी, जो प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने पाया है। वेबमीडिया तेजी से बड़े शहरों से होता हुआ छोटे शहरों और अब कस्बा-ग्रामीण क्षेत्रों में पैर पसार रहा है" (कुमार, 2004)। अब से एक दशक पहले वेब मीडिया को लेकर वरिष्ठ पत्रकारों द्वारा जो कहा जा रहा था, आज वह सच साबित होता दिख रहा है। ऑनलाइन मीडिया ने भौगोलिक बाधाएँ समाप्त कर दी हैं। अब सुदूर गाँव में बैठा व्यक्ति भी समाचारों का आदान-प्रदान कर रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट के उपयोगकर्ता बढ़ रहे हैं एवं ऑनलाइन सूचना एवं समाचार प्राप्त करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। हिंदी वेब मीडिया के विकास एवं विस्तार से भविष्य का संकेत भी मिलता है। भारत में वेब मीडिया विभिन्न चुनौतियों का समाधान करते हुए आगे बढ़ रहा है। सूचना और संचार प्रौद्योगिकी जिस प्रकार लगातार विकसित हो रही है, उसके कारण से वेब मीडिया में भी विकास हो रहा है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं :

- हिंदी समाचार वेबसाइट के विकास के विश्लेषणात्मक अध्ययन से यह तथ्य सामने आता है कि भारत में प्रारंभ में हिंदी में तकनीक का अभाव होने के कारण हिंदी के समाचार संस्थानों ने धीमी गति से अपनी समाचार वेबसाइटें शुरू कीं। वर्ष 1998 में हिंदी की केवल तीन समाचार वेबसाइट थीं। 2006 में भी हिंदी सहित विभिन्न भारतीय भाषाओं के केवल 114 समाचार वेबसाइट सक्रिय थीं, परंतु ऑनलाइन मीडिया के प्रभाव को देखते हुए विकसित तकनीक के आने के बाद तेज गति से भारत के समाचार संस्थानों ने अपनी समाचार वेबसाइटें शुरू कीं।
- यह तथ्य भी ध्यान में आता है कि हिंदी के मुद्रित समाचारपत्रों और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की तुलना में हिंदी की ऑनलाइन समाचार वेबसाइटों ने कम समय में अधिक तेजी से अपना स्थान बनाया है।
- हिंदी समाचार वेबसाइट के विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने से यह तथ्य सामने आता है कि तकनीक के विकास के साथ हिंदी समाचार वेबसाइट का विकास हुआ है। आगे भी विकास की यह यात्रा जारी रहने की संभावनाएँ हैं, क्योंकि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी में तेजी के साथ विकास हो रहा है। सूचना एवं संचार के नए माध्यम अब केवल शहरों तक सीमित नहीं रह गए हैं। शहरी क्षेत्रों के साथ ही अब ग्रामीण क्षेत्रों में भी तेजी से इंटरनेट के उपयोगकर्ताओं की संख्या में वृद्धि हो रही है। ग्रामीण क्षेत्रों से भी वेब मीडिया को पाठक प्राप्त हो रहे हैं।
- वर्तमान समय सूचना क्रांति का है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास के कारण आज ऑनलाइन पत्रकारिता में हिंदी वेबसाइटों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। बड़े समाचार संस्थान जहाँ अपनी वेबसाइट को पाठकों के लिए और अधिक सुविधाजनक बना रहे हैं, नई तकनीक के अनुरूप वेबसाइटों को विकसित किया जा रहा है, वहीं नई स्वतंत्र समाचार वेबसाइटें भी शुरू हो रही हैं।
- इंटरनेट के उपयोगकर्ताओं की बढ़ती संख्या को देखते हुए अनुमान लगाया जा रहा है कि स्वतंत्र समाचार वेबसाइट की संख्या में और तेजी आएगी। कम कीमत में स्मार्टफोन और कम दरों पर तेज गति के इंटरनेट की उपलब्धता ने हिंदी समाचार वेबसाइट के लिए नई संभावनाएँ पैदा की हैं।

संदर्भ

किट, एल. सी & तेंग, जी. डब्ल्यू. (2022). प्रिंट न्यूजपेपर वर्सेस ऑनलाइन न्यूज मीडिया : ए क्वांटिटेटिव स्टडी ऑन यंग जनरेशन प्रेफेरेंस. https://www.academia.edu/6125892/Print_Newspaper_versus_Online_News_Media_A_Quantitative_Study_on_Young_Generation_Preference से 10 अक्टूबर, 2022 को पुन:प्राप्त.

कुमार, एस. (2004). इंटरनेट पत्रकारिता (प्रथम संस्करण ed.). तक्षशिला प्रकाशन, नईदिल्ली.

कुशवाह, आर. (2017, अक्टूबर). न्यू मीडिया का विस्तार, प्रिंट समाचारपत्रों के लिए चुनौती. पैरिपैक्स-इंडियन जर्नल ऑफ रिसर्च, 6(10), 44-45.

ठाकुर, के. (2009, नवंबर 13). ऑनलाइन जर्नलिज्म इन इंडिया : एन एक्सप्लनेटरी स्टडी ऑफ इंडियन न्यूजपेपर्स ऑन द नेट. मीडिया सीन इन इंडिया. https://mediasceneindia.blogspot.com/2009/11/online-journalism-in-india-exploratory.html से 16 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

द इकॉनोमिस्ट. (2006). हू किल्ड द न्यूजपेपर. https://www.economist.com/leaders/2006/08/24/who-killed-the-newspaper से 16 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

दाधीच, बी.एस. (2010). यूनिकोड का जादू. In वेब पत्रकारिता (प्रथम संस्करण ed., p. 70). दिल्ली: श्री नटराज प्रकाशन.

द्विवेदी, पी. (2017, नवंबर 22). नए जमाने की पत्रकारिता है ऑनलाइन जर्नलिज्म. टेक्नीकल टुडे. https://technicaltoday.in/%E0%A4%A8%E0%A4%8F-%E0%A4%9C%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A5%87-%E0%A4%95%E0%A5%80-%E0%A4%AA%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%95%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%BF%E0%A4%A4%E0%A4%BE-%E0%A4%B9%E0%A5%88/ से 5 नवम्बर, 2022 को पुन:प्राप्त.

द्विवेदी, एस. (2022). डिजिटल माध्यमों से मिल रही हैं प्रिंट मीडिया को गंभीर चुनौतियाँ. संचार माध्यम, 34(1), 1-3.

पिंपलापुरे, एम. ए. (2018, जून). इंपैक्ट ऑफ डिजिटल मीडिया ऑन न्यूजपेपर इंडस्ट्री. पैरिपैक्स-इंडियन जर्नल ऑफ रिसर्च, 7(6), 156–159.

बंसल, एस. (2015, मार्च 26). मीडिया एंड इंटरटेनमेंट इंडस्ट्री इज एक्स_पेक्टेड टू ग्रो एट 13 पर्सेंट इन 2015. मिंट. https://www.livemint.com/Consumer/BX0GUxdzpGYXlSdBLr7e6H/Media-and-entertainment-industry-is-expected-to-grow-at-13.html से 16 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

मानस, जे. (2010). वेब पत्रकारिता कल, आज और कल. In वेब पत्रकारिता (प्रथम संस्करण ed., pp. 15-18). दिल्ली : श्री नटराज प्रकाशन.

मिश्र, यू. (2020, जुलाई-दिसंबर). इंटरनेट पर उपलब्ध हिंदी समाचार-पत्रों के स्वरूप का अध्ययन. संचार माध्यम, 32(2), 60-68.

राजावत, एम. एस., & अमिता. (2022, 03 31). भारत में वेब पत्रकारिता का विहंगावलोकन. अपनी माटी. https://www.apnimaati.com/2022/03/blog-post_82.html से 16 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

वेबदुनिया पोर्टल के 16 साल पूरे, संपादक जयदीप कर्णिक ने याद किए वो दिन. (2015, सितंबर 23). समाचार फॉर मीडिया. https://www.samachar4media.com/media-forum/first-hindi-news-portal-webdunia-completes-16-years-3343.html से 16 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

सिंह, डी. (2007). भारतीय इलेक्ट्रॉनिक मीडिया (प्रथम संस्करण ed.). प्रभात प्रकाशन, दिल्ली.

हिंदी कंटेंट कंजप्शन ऑन इंटरनेट ग्रोइंग एट 94 पर्सेंट. (2015, अगस्त 18). बिजनेस टुडे. https://www.businesstoday.in/technology/internet/story/google-says-hindi-content-consumption-on-internet-growing-at-94-percent-52686-2015-08-18 से 16 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 29-33, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

गांधी का सेवाग्राम : आत्मनिर्भरता की प्रयोगशाला से सामाजिक संप्रेषण

डॉ. ईश शक्ति सिंह[1]

सारांश

1933 में महात्मा गांधी ने वर्धा से हरिजन यात्रा की शुरुआत की और इस दौरान वे भारत के गाँवों की बर्बाद होती आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था, गाँवों में गंदगी, बेकारी, छुआछूत-भेदभाव जैसी समस्याओं से रूबरू हुए। ब्रिटिश शासन ने भारतीय समाज के विविध पक्षों पर नकारात्मक प्रभाव डाला। ब्रिटिश शासन की नीतियों से शिक्षा में अँग्रेजी का प्रभाव बढ़ रहा था तथा रोजगार और आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था बर्बाद हो रहे थे। महात्मा गांधी ने रचनात्मक कार्यक्रमों की दिशा में पहल का एकमात्र रास्ता चुना। 1936 में सेवाग्राम आश्रम की स्थापना गांधी ने की, जहाँ से सभी रचनात्मक कार्यक्रमों को गति प्रदान की जाती थी। आत्मनिर्भरता की प्रयोगशाला के रूप में सेवाग्राम आश्रम का उद्देश्य बाहरी और मानसिक गुलामी से मुक्ति के लिए भारतीय जनमानस के बीच सामाजिक संप्रेषण करना था। महात्मा गांधी ने रचनात्मक कार्यों को गति देने के लिए वर्धा में अनेक संस्थाओं की स्थापना की। 1934 से 1946 तक सेवाग्राम में रहकर गांधी ग्रामीण बुनियाद से अहिंसक समाज निर्माण का मार्ग खोजते रहे। उनकी रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रति प्रतिबद्धता को विभिन्न समाचार पत्रों द्वारा कवर किया जा रहा था और प्रतिष्ठित जर्नलों में लेख प्रकाशित हो रहे थे। महात्मा गांधी ने मौखिक, लिखित और जनसंपर्क के माध्यम से जनता को इस अभियान से जोड़ने का कार्य किया। महात्मा गांधी का मानना था कि रचनात्मक कार्य तभी सफल हो सकता है जब भारतीय आमजन के बीच इसको लेकर सामाजिक संप्रेषण किया जाएगा। महात्मा गांधी द्वारा ग्राम स्वराज्य व हिंद स्वराज्य के लिए किए जाने वाले प्रयासों के चलते वह समय राष्ट्रीय जागरण का था। वर्धा के कार्यों का प्रचार-प्रसार पूरे देश में हो रहा था व लोग इन कार्यक्रमों से जुड़कर इस अभियान को सफल बनाने में लगे हुए थे।

संकेत शब्द : सेवाग्राम आश्रम, रचनात्मक कार्यक्रम, सांगठनिक संस्था, आत्मनिर्भरता, सामाजिक संप्रेषण

प्रस्तावना

महात्मा गांधी ऐसे दौर में पैदा हुए, जिस समय भारत ब्रिटेन का गुलाम था। ब्रिटिश शासन ने भारत में यहाँ के आमजन को सिर्फ शारीरिक गुलाम ही नहीं बनाया था, अपितु सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, भाषाई, मानसिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी इन पर अपना आधिपत्य जमाया था। उस दौर में महात्मा गांधी भारत की खो रही आत्मनिर्भरता से चिंतित थे। इसके लिए उन्होंने पहल की और पूरे भारत को एकजुट किया। आत्मनिर्भरता की प्रयोगशाला के रूप में सेवाग्राम आश्रम का उद्देश्य बाहरी और मानसिक गुलामी से मुक्ति के लिए भारतीय जनमानस के बीच सामाजिक संप्रेषण करना था। महात्मा गांधी 1915 में दक्षिण अफ्रीका से भारत आए और लेखन कार्य, जनसंपर्क, राजनीतिक सहभागिता, संगठनात्मक कार्यों से देश के संपूर्ण जनमानस को एकजुट करने का यत्न किया। भारत के आमजन के बीच महात्मा गांधी की छवि व भूमिका एक समाजसेवी, राजनेता व कुशल समाज प्रबंधक के रूप में थी। ऐसे में भारतीय जनमानस महात्मा गांधी के कार्य, विचार व संप्रेषण से प्रेरित होकर स्वतंत्र भारत, आत्मनिर्भर भारत के निर्माण हेतु संगठित होने लगा।

उस समय सामाजिक रूप से कई कमियाँ देश की आम जनता और समाज के बीच व्याप्त थीं। इन कमियों का कारण परंपरागत रूप से चली आ रही छुआछूत-भेदभाव जैसी कुरीतियाँ थीं। उनका फायदा ब्रिटिश शासन अपने हित में उठा रहा था। इन समस्याओं को महात्मा गांधी बखूबी समझ रहे थे और उन्हें दूर करना गांधी के लिए अति आवश्यक हो गया था। इसके लिए महात्मा गांधी ने पिछड़े, दलित समाज के लोगों के उत्थान के लिए 'हरिजन सेवक संघ' के तहत कार्य किया और भारत के विभिन्न प्रांतों का दौरा भी किया। देश में छुआछूत की भावना व्याप्त थी, जो गांधी को पसंद नहीं थी। अछूतों के लिए गांधी ने 'हरिजन' शब्द का प्रयोग किया। उस समय अछूतों के लिए देश में समस्या इस कदर थी कि उन्हें मंदिरों तक में प्रवेश की मनाही थी। शिक्षा ग्रहण करने की मनाही थी। सड़कों पर चलने में भी कई तरह की मनाही थी। ऐसे अनेक सामाजिक-आर्थिक कठोर प्रतिबंध थे, जिनकी ओर गांधी का ध्यान गया। 30 सितंबर, 1932 को महात्मा गांधी के प्रयासों से 'अखिल भारतीय अस्पृश्यता विरोधी संगठन' खड़ा हुआ। यही संगठन बाद में 'हरिजन सेवक संघ' के रूप में कार्य करने लगा। महात्मा गांधी अस्पृश्यता से इस कदर नफरत करते थे कि उनका एक कथन है, "साम्राज्य की डायरशाही को मैं शैतानियत कहता हूँ। अस्पृश्यता को भी मैं उतनी ही भयंकर शैतानियत मानता हूँ।" 7 नवंबर, 1933 को महात्मा गांधी ने हरिजन उत्थान के लिए दस महीने तक देश के प्रत्येक प्रांत का दौरा प्रारंभ किया। इन दस महीनों का प्रत्येक दिन अस्पृश्यता की समस्या का अध्ययन और उस समस्या को हल करने के उपाय सोचने में गुजरा। गांधी इस यात्रा के पश्चात् वर्धा की भूमि पर 1934 में पहुँचे (उपाध्याय, 2014)।

ब्रिटिश शासन ने भारतीय समाज के विविध पक्षों पर जो नकारात्मक प्रभाव डाला, उस पर प्रकाश डालना गांधी के रचनात्मक कार्यक्रम के पीछे के लक्ष्य से परिचित करवाता है। ब्रिटिश शासन की नीतियों से शिक्षा में अँग्रेजी का प्रभाव बढ़ रहा था, रोजगार और आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था बर्बाद हो रही थी। ब्रिटिश शासन अपनी शिक्षा पद्धति को आधुनिक शिक्षा पद्धति बताते हुए पूरे भारत की शिक्षा व्यवस्था में फेर-बदल कर रहा था। ब्रिटिश शासन ने वर्ष 1835 में 'इंग्लिश एजुकेशन एक्ट-1835' लागू किया। इस एक्ट ने भारत की पूरी शिक्षा व्यवस्था का

[1]सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग. महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय, कटनी, मध्य प्रदेश.

चेहरा बदल दिया। ब्रिटिश शासन को भारत में कोई कौशल-दक्ष व्यक्ति नहीं, बल्कि जो उसके शासन के लिए क्लर्कियल कार्य कर सकें, ऐसे शिक्षित व्यक्ति चाहिए थे। इसलिए उसने ऐसी ही शिक्षा व्यवस्था बनाई, जहाँ पर लोग ज्यादा सवाल न करें, ज्यादा कौशलयुक्त न हों और वे बस एक बताया हुआ काम लगातार करते रहें। उन्होंने शिक्षा व्यवस्था में जानबूझकर ऐसी हेर-फेर की कि व्यक्ति की जिज्ञासा ही समाप्त हो जाए (मूर्ति, 2018)। ऐसे में देशज भाषा के साथ ही स्वरोजगार के आधार पर संकट आने लगा और आत्मनिर्भररूपी ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अस्तित्व पर भी बड़ा संकट आया, जिसकी चिंता और सुधार के लिए महात्मा गांधी ने बड़ा कदम उठाना अति आवश्यक समझा। गांधी ने वर्धा में रचनात्मक कार्यक्रमों की दिशा में पहल का एक विशेष रास्ता चुना।

शोध उद्देश्य एवं प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य 1934 से 1946 तक महात्मा गांधी द्वारा सेवाग्राम (वर्धा) के चयन के कारण, देश की आजादी में सेवाग्राम आश्रम का महत्त्व और रचनात्मक कार्यक्रम की प्रासंगिकता को सामने रखना है। यह भी कि सेवाग्राम आश्रम के माध्यम से विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं की स्थापना कर महात्मा गांधी भारतीय जनमानस को भारत की आजादी का वास्तविक अर्थ बताने के लिए कैसे सामाजिक संप्रेषण का कार्य करते हैं? प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक स्रोतों से तथ्यों को लिया गया है, जिनमें महात्मा गांधी के विभिन्न हस्तलिखित पत्र और लेख सहित उनके समकालीन स्वतंत्रता सहयोगियों के हस्तलिखित पत्र और पुस्तकें शामिल हैं। गांधी के वर्धा काल के दौरान प्रकाशित लेखों और समाचार पत्रों से सामग्री ली गई है। इसके साथ ही विभिन्न संदर्भ पुस्तकों से तथ्यों को एकत्र किया गया है। द्वितीयक स्रोतों से एकत्र समस्त तथ्यों को गुणात्मक और विवरणात्मक शोध प्रविधि में प्रस्तुत किया गया है।

वर्धा में गांधी के आगमन का उद्देश्य

उस समय महात्मा गांधी के मार्गदर्शन में चलने वाले अनुयायी जमनालाल बजाज वर्धा में रहा करते थे। जमनालाल आर्थिक रूप से संपन्न-समृद्धशाली व्यक्ति थे। जमनालाल बजाज का जब गांधी से परिचय हुआ तब उन्होंने महात्मा गांधी को वर्धा में आश्रम बनाने का प्रस्ताव दिया। महात्मा गांधी ने गुजरात से ही देशसेवा करने का हवाला देकर इनकार कर दिया। जमनालाल बजाज ने गांधीजी से वर्धा में भी सत्याग्रह आश्रम की शाखा खोलने का अनुनय किया। ऐसे में गांधी ने 1921 में वर्धा जाने और वर्धा आश्रम के संचालन का कार्यभार विनोबा भावे को सौंपा। उसके बाद से पूरा जीवन विनोबा भावे यहीं रहे। महात्मा गांधी से पत्राचार के माध्यम से जमनालाल बजाज वर्धा में कार्य करते रहे। असहयोग आंदोलन में जेल गए हुए व्यक्तियों के परिवारों की व्यवस्था के लिए 1923 में 'महिला आश्रम' शुरू हुआ। देशभर के गांधी विचार के कार्यकर्ताओं और कार्यक्रमों को मदद करने की दृष्टि से 'गांधी सेवा संघ' की स्थापना की गई। इस प्रकार सत्याग्रह आश्रम की शाखा का विकास हुआ (गांधी, 2014)। आश्रम के माध्यम से तमाम ग्रामीण सेवा का कार्य किया जाता रहा। महिलाओं के प्रशिक्षण, ग्राम क्षेत्र में सेवा केंद्र, कुष्ठ सेवा, गो-सेवा, चर्मोद्योग इत्यादि रचनात्मक कार्यों के माध्यम से लोगों को एकजुट किया जाने लगा और इस तरह सत्याग्रह आश्रम व्यापक होता गया।

1930 में गांधीजी ने नमक सत्याग्रह के दौरान प्रण किया कि 'स्वराज्य लिए बिना वे साबरमती आश्रम नहीं आएँगे'। 7 नवंबर, 1933 को महात्मा गांधी ने वर्धा से हरिजन यात्रा की शुरुआत की और इस दौरान वे भारत के गाँवों की बर्बाद होती आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था, गाँवों में गंदगी, बेकारी, छुआछूत-भेदभाव जैसी समस्याओं से रूबरू हुए। 1933 में शुरू हुए लंबे समय की हरिजन यात्रा और इस दौरान यात्रा के अनुभवों ने महात्मा गांधी को काँग्रेस छोड़ने और वर्धा आकर रहने को विवश किया। काँग्रेस में रहने के दौरान गांधीजी का प्रयास रहा कि प्रत्येक काँग्रेसी रचनात्मक कार्यों में लगे। काँग्रेस के कार्यकर्ता इसके लिए तैयार न हो सके। हरिजन यात्रा के दौरान भी काँग्रेसियों के बीच रहते हुए अपने रचनात्मक कार्यों को लेकर कई कटु अनुभवों का सामना गांधी ने किया। अंत में 1934 में काँग्रेस छोड़कर महात्मा गांधी ने ग्राम सेवा में लगने का निर्णय लिया। महात्मा गांधी को यह पूर्ण विश्वास हो गया था कि सत्य एवं अहिंसा पर आधारित रचनात्मक कार्यक्रम को आगे बढ़ाए बिना देश को स्वराज्य नहीं मिल सकता। महात्मा गांधी को यह भरोसा था कि रचनात्मक कार्यक्रम ही लोगों को, समाज और राष्ट्र को आत्मनिर्भर बना सकता है (बिड़ला, 2019)। इसी के लिए उन्हें वर्धा आना पड़ा। यहाँ आकर गांधीजी ने सत्याग्रह आश्रम की गतिविधि को और तेज किया। कई संगठनों का निर्माण किया। धीरे-धीरे लोग उनके रचनात्मक कार्यों से जुड़ने लगे। हालाँकि गांधीजी इस समय तक राजनीतिक रूप से कम लेकिन सामाजिक रूप से कहीं अधिक सक्रिय हो गए थे। वर्धा में आने के पश्चात् महात्मा गांधी को यहाँ की समस्याओं का सामना करना पड़ा, शारीरिक कष्ट सहने पड़े, बीमार हुए, किंतु फिर भी लोगों के बीच उनकी सहभागिता के साथ रचनात्मक कार्यक्रम को आगे बढ़ाया।

सेवाग्राम आश्रम और रचनात्मकता

महात्मा गांधी वर्धा की भूमि पर रचनात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से भारतीय समाज में सामाजिक-आर्थिक विकास से बदलाव लाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने विभिन्न संगठनों की स्थापना भी की। गांधी का यह विश्वास था कि ब्रिटिश उपनिवेश के राजनैतिक बंधनों से मुक्त होने मात्र से भारत की मुक्ति सुनिश्चित नहीं होगी, क्योंकि जिस प्रकार से ब्रिटिश उपनिवेश ने राजनीतिक रूप से हमें गुलाम बना रखा है, इसके साथ कहीं-न-कहीं हम सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से भी उनके प्रभाव में बँधे हुए हैं। ऐसे में हम आजाद हो जाने के पश्चात् भी गुलाम ही रहेंगे। हमारी आत्मनिर्भरता लुप्त होती जा रही है, ग्रामीण आर्थिक संरचना टूटती दिख रही है, ब्रिटिश भाषा की शिक्षा से हमारी सांस्कृतिक पहचान खत्म हो रही है, इसे रोकने का कार्य रचनात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से ही हो सकता है। भारत गाँवों में बसता है, इसलिए गाँवों को आत्मनिर्भर बनाना होगा (दाधीच, 2014)। इस प्रयास में गांधी ने अपना सेवा कार्य वर्धा में समर्पित किया। 1936 में गांधी ने जब सेवाग्राम आश्रम की स्थापना की तो यह सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन की कार्यशाला और प्रयोगशाला बनकर उभरा।

देश को आजाद कराने के लिए महात्मा गांधी जहाँ राजनीतिक रूप से सक्रिय होकर लड़ाई लड़ रहे थे, वहीं देश में सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के लिए हरिजन यात्रा ने उनका इस ओर भी ध्यानाकर्षण कराया कि बिना गाँवों की समस्या हल किए, उन्हें आत्मनिर्भर बनाए बिना

भी देश की आजादी अथवा देश को आजाद कराने का कोई अर्थ नहीं है। इस यात्रा के लिए 1933 में गांधी वर्धा आए, परंतु स्थायी रूप से 1934 में वर्धा के मगनवाड़ी में रहना प्रारंभ किया। मगनवाड़ी में रहने की व्यवस्था जमनालाल बजाज ने की थी। 1934 में ही महात्मा गांधी ने 'अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ' की स्थापना मगनवाड़ी में की। मगनवाड़ी में महात्मा गांधी लगभग 2 वर्ष रहे और विभिन्न ग्रामोद्योगों के पुनरुद्धार का काम हाथ में लिया। गांधी वर्धा के मगनवाड़ी में जरूर रहे, किंतु इनकी इच्छा किसी ग्रामीण क्षेत्र में रहकर सेवा कार्य करने की थी। वर्धा से 5 मील दूर दक्षिण दिशा में 'सेगाँव' नामक गाँव में जाकर लोगों के समक्ष अपनी बात रखते हुए उन्होंने कहा, "मेरा मानना है ग्राम स्वराज से हिंद स्वराज का रास्ता तय होगा। मैं यहाँ आकर आप सभी के बीच रहकर आपके रास्ते और गाँव के आसपास का हिस्सा साफ करके, बीमारों की सेवा करके और गाँव के मरे हुए उद्योगों को पुनर्जीवित करके आपकी सेवा करने की कोशिश करूँगा। अगर इसमें आप मेरे साथ सहयोग करेंगे तो मुझे आनंद होगा" (उपाध्याय, 2014)।

महात्मा गांधी जब साबरमती आश्रम में थे तो उनके साथ कार्य करने वाले कई कार्यकर्ता भी वर्धा आए। यहाँ पहले से जमनालाल बजाज व विनोबा भावे के साथ कार्य कर रहे कार्यकर्ताओं को मिलाकर गांधी के ग्राम सेवा कार्य के लिए अच्छी संख्या हो गई थी। 30 अप्रैल, 1936 को मगनवाड़ी से पैदल यात्रा कर गांधी सेवाग्राम पहुँचे। यहाँ महात्मा गांधी के रहने के लिए साधारण झोंपड़ी का निर्माण किया गया। गांधीजी के कई साथियों-मित्रों को उनका यह नया प्रयोग नहीं जँचा। इसका कारण सुदूर ग्रामीण क्षेत्र में बसना और डाक या तार की व्यवस्था न हो सकने के कारण संपर्क असुविधा थी। चूँकि देश की आजादी में लगे विभिन्न राजनेता महात्मा गांधी के मार्गदर्शन में राजनीतिक कार्य कर रहे थे, इसलिए वे गांधी के ग्राम सेवा व रचनात्मक कार्यक्रम की प्रयोगधर्मिता से परेशान थे। सेवाग्राम जाने के बाद गांधीजी को कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। सेगाँव या सेवाग्राम साफ-सफाई के दृष्टिकोण से बहुत गंदा गाँव था। गांधीजी वहाँ पहुँचने के बाद स्वयं बीमार हो गए थे। गाँव में मलेरिया फैल गया था। गांधीजी इस बीमारी से उबरने के बाद सेगाँव के निर्माण कार्य में जुट गए (गांधी, 2014)। धीरे-धीरे आश्रम का निर्माण व विस्तार किया गया। आश्रम में गांधीजी के साथ अन्य कई कार्यकर्ता भी रहते थे। हालाँकि गांधीजी सेगाँव में सेवाभाव व रचनात्मक कार्यों के लिए गए थे, इसलिए इसका नामकरण 'सेवाग्राम' किया (गांधी, 2017)। सेवाग्राम की कठिन परिस्थितियों में गांधीजी अकेले ही रहने का सोचते थे, लेकिन धीरे-धीरे यहाँ भी साथी जुड़ते गए और आश्रम जीवन अस्तित्व में आया।

1934 से 1946 तक सेवाग्राम में रहकर गांधी ग्रामीण बुनियाद से अहिंसक समाज निर्माण का मार्ग खोजते रहे। उस दौरान की पत्रिकाओं में प्रकाशित कुछ लेखों में 'महात्मा गांधीज ग्रेटेस्ट वेपन' (1938), 'ए विजिट टू वर्धा' (1942), 'ए पीप इन टू द गांधी आश्रम एट सेवाग्राम' (1945), 'ए विजिट टू सेवाग्राम बाई ए पिलग्रिम' (1948) सेवाग्राम आश्रम की भौतिक बनावट, आश्रम के दैनिक क्रियाकलाप, गाँव की व्यवस्था, आश्रम की कार्यप्रणाली इत्यादि की व्याख्या प्रत्यक्ष अवलोकन के आधार पर की गई थी। इन लेखों में सेवाग्राम आश्रम की व्यवस्था के बारे में कहा गया है कि गाँव के बाहर तीन रंगों का राष्ट्रीय झंडा फहर रहा है। गाँव में सुंदर झोंपड़ियाँ हैं, जिनकी संख्या करीब 200 है। ये झोंपड़ियाँ व्यवस्थित रूप से बसाई गई हैं और इनके सामने चौड़े-चौड़े रास्ते हैं। यहाँ साफ-सफाई बहुत अच्छी हुई है। झोंपड़ियों के बीच की जगह में फल-फूल, सब्जियों की खेती की गई है। पूरा गाँव साफ-सुथरा दिखाई देता है। यहाँ लोग अपने-अपने कार्यों में लगे हुए हैं। लोग यहाँ अपना समय बेकार नहीं करते, हर कोई किसी-न-किसी कार्य में लगा हुआ है। इस गाँव के बीच में एक छोटी-सी सुंदर झोंपड़ी है, जिसमें महात्मा गांधी रहते हैं। इस झोंपड़ी में आश्रम के लोगों का और राजनीतिक लोगों का भी लगातार आना-जाना होता रहता है। यहाँ हर कोई अपने जूते व चप्पल घर के बाहर ही निकालकर प्रवेश करता है। इस कालोनी में शांति, अनुशासन, व्यस्तता, भरपूर साफ-सफाई और सुंदरीकरण देखा जा सकता है। इस कॉलोनी या आश्रम में कई संगठित गतिविधियाँ चल रही हैं; जैसे—वर्धा बुनियादी शिक्षा स्कूल, कताई और बुनाई विभाग, डेयरी फॉर्म, कताई और सिलाई विभाग इत्यादि। गांधीजी अपनी झोंपड़ी में स्वयं चरखे से सूत कातते नजर आ जाएँगे।

भारतीय जन को गाँव की महत्ता दर्शाने के लिए महात्मा गांधी ने रचनात्मक कार्यक्रम शुरू किया। महात्मा गांधी ने मशीनीकरण से दूर ग्रामीण क्षेत्र के विकास और उसे आर्थिक रूप से मजबूत करने की योजना रखी। ग्राम की स्वच्छता, रचनात्मक कार्यक्रम, विभिन्न कार्य समितियों के निर्माण से महात्मा गांधी को यह आशा थी कि भारतीय गाँव सामाजिक-आर्थिक रूप से समृद्ध होंगे। इस स्थान को उन्होंने प्रयोगशाला के रूप में अपनाया। गांधीजी आश्रम से ग्रामीण उत्थान और आर्थिक विकास के रचनात्मक कार्यक्रम के साथ ही भारत की आजादी के लक्ष्य पर भी बने हुए हैं। नई तालीम से आत्मनिर्भरता लाने के लिए यहाँ स्लोगन लिखा है कि 'आप सीखते हैं तो कमाते हैं'। सेवाग्राम में संचालित कार्यक्रम का क्षेत्रीय और राष्ट्रीय महत्त्व है, क्योंकि यह एक प्रशिक्षण कैंप की तरह है। आश्रम में खान-पान की व्यवस्था, पूजा-पाठ, आश्रम व्रत, साफ-सफाई, पहनावा, शाम की प्रार्थना भजन इत्यादि मानवीय जीवन को अनुशासित करते हैं (एंड्रूज,1938; राव,1945; सरन,1948; सिंह,1942)। इन लेखों में सेवाग्राम व आश्रम की व्यवस्था के चित्रण से यह स्पष्ट होता है कि महात्मा गांधी की रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रति प्रतिबद्धता ने कितनी सफलता प्राप्त की है।

रचनात्मक कार्यक्रम व सामाजिक-आर्थिक संगठन

1921 में जमनालाल बजाज के आग्रह पर महात्मा गांधी ने विनोबा भावे को वर्धा जाने और आश्रम बनाने व उसके माध्यम से जनसेवा कार्य करने का सुझाव दिया। विनोबा भावे अपने कुछ साथियों के साथ वर्धा आए और जमनालाल बजाज के साथ कार्य शुरू किया। महात्मा गांधी के वर्धा आने से पूर्व महिला आश्रम, गांधी सेवा संघ, कुष्ठ सेवा केंद्र, गौ सेवा, चर्मोद्योग इत्यादि सेवा कार्य आरंभ हो गए थे। महात्मा गांधी जब वर्धा आए तो मगनवाड़ी में 1934 में ग्रामोद्योग संघ की स्थापना की। इस प्रकार लगभग 2 वर्षों तक पहले से चल रहे सेवा कार्य और सेवाग्राम जाने से पहले स्थापित किए गए संगठनों के आधार पर गांधी कार्य करते रहे। महात्मा गांधी के सेवाग्राम जाने के बाद आश्रम का निर्माण करना और लोगों के माध्यम से रचनात्मकता के कार्य को गति देना संभव हुआ। महात्मा गांधी के कुछ रचनात्मक कार्यक्रम थे, जिनको पूरा करने के लिए संगठनों की स्थापना आवश्यक थी। 1935 में ट्रस्ट की बैठक में स्वीकृत

विधान में 'गांधी सेवा संघ' संस्था द्वारा रचनात्मक कार्यों में खादी प्रचार, जिसका कार्य हाथ से सूत कातना, हाथ से बुनाई का पुनरुद्धार करना, ग्राम सेवा जिसमें ग्रामीण उद्योगों-व्यवसायों का पुनरुद्धार करना, जन की शारीरिक व नैतिक स्थिति का सुधार और उनकी शिक्षा, आरोग्य इत्यादि से संबंधित कार्य करना था। खादी प्रचार, ग्राम सेवा के अतिरिक्त राष्ट्रीय शिक्षा, राष्ट्रभाषा प्रचार, मद्य एवं मादक पदार्थ प्रतिबंध, हरिजन सेवा, कौमी एकता, स्त्री जाति सुधार, रोग निवारण और सुश्रूषा, संकट निवारण, गौ सेवा, गांधी साहित्य प्रचार इत्यादि कार्य करना तय हुआ। धीरे-धीरे गांधी ने इन कार्यों में कुछ और भी महत्त्वपूर्ण विषयों को जोड़ा, जिन पर कार्य करना आवश्यक था। समाज अहिंसा की दिशा में प्रगति कर सके, इस दृष्टि से अहिंसक समाज की रचना में विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रम सुझाए (प्रताप, 2011; गांधी, 2011)।

इन कार्यों को वर्गीकृत किया जाए तो इनका एक संगठित उद्देश्य हमारे समक्ष प्रस्तुत होगा।

- नई तालीम : राष्ट्रभाषा, प्रांतीय भाषाएँ, आर्थिक समानता, बड़ों की तालीम, बुनियादी शिक्षा, पशु सुधार, किसान, दूसरे ग्रामोद्योग व खादी।
- व्यवस्था : सत्याग्रह, संगठन- ग्राम सभा।
- परिस्थिति अनुरूप : नशाबंदी, गाँवों की सफाई, आरोग्य के नियमों की शिक्षा, कुष्ठ सेवा।
- सेवा कार्य : सांप्रदायिक एकता, अस्पृश्यता निवारण, स्त्री, मजदूर, आदिवासी, विद्यार्थी-युवक।

इस प्रकार इन रचनात्मक कार्यों को गति देने के लिए अनेक संगठित संस्थाओं की स्थापना की गई। 1936 में 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' की स्थापना वर्धा में की गई। महात्मा गांधी का मानना था कि यदि हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाना है तो प्रचार कार्य सर्वव्यापी और सुसंगठित होना ही चाहिए। 1934 में ग्रामोद्योग संघ की स्थापना हुई। 1936 में ही सेवाग्राम आश्रम की स्थापना गांधी ने की, जहाँ से सभी रचनात्मक कार्यक्रमों को गति प्रदान की जाती थी और सभी संगठनों की स्थापना की गई। उस समय सेवाग्राम आश्रम सभी कार्यक्रमों के संचालन की केंद्रीय संस्था थी। नई तालीम कुटी की स्थापना 1937 में की गई, जो अपने वृहद् उद्देश्यों के साथ ग्राम, रोजगार, शिक्षा, प्रशिक्षण इत्यादि के लिए जानी जाती थी। 1941 में गो-सेवा संघ की स्थापना की गई। वर्धा में चार सत्याग्रह आश्रम की स्थापना हुई, जिसमें पहला सत्याग्रह आश्रम महिलाश्रम वर्धा में, दूसरा सत्याग्रह आश्रम नालवाड़ी में, तीसरा सत्याग्रह आश्रम ग्राम सेवा मंडल-गोपुरी में और चौथा सत्याग्रह आश्रम परमधाम-पवनार में हुई। संस्थाओं की स्थापना के इस क्रम में अखिल भारतीय चर्खा संघ, कृषि-गो पालन (गो-सेवा संघ) गोपुरी, गोपुरी में चर्मालय, कस्तूरबा दवाखाना (सेवाग्राम), महारोगी सेवा समिति (दत्तपुर, वर्धा), हिंदुस्तानी प्रचार सभा (काकवाड़ी, वर्धा), मातृ सेवा संघ (सूतिका गृह, वर्धा), गांधी सेवा संघ (बजाजवाड़ी, वर्धा), सर्व सेवा संघ (सेवाग्राम) इत्यादि विभिन्न संस्थाओं की स्थापना कर रचनात्मक कार्यक्रमों को सुचारु रूप से चलाया गया (ठक्कर, 2009; प्रताप, 2011; गांधी, 2017)।

रचनात्मक कार्य और सामाजिक संप्रेषण

देश को पूर्णरूप से आजाद कराने के लिए मात्र ब्रिटिश उपनिवेश को भारत से बाहर करना ही एक उपाय नहीं था। लंबे समय से ब्रिटिश उपनिवेश ने भारतीय भाषा, शिक्षा, रोजगार, उद्योग, चिकित्सा, छुआछूत-सद्भाव, ग्रामीण सामाजिक-आर्थिक संरचना इत्यादि को अंदर से प्रभावित किया था। गांधी की दृष्टि में इन चीजों में सुधार जागरूकता, अभ्यास और सामाजिक संप्रेषण से ही संभव हो सकता था। महात्मा गांधी इन मुद्दों को बखूबी समझ रहे थे, इसलिए उन्होंने रचनात्मक कार्यक्रम को वर्धा के सेवाग्राम स्थान पर आश्रम की स्थापना करके प्रयोगशाला के रूप में काम किया। रचनात्मक कार्यों से संबंधित विभिन्न संस्थाओं की स्थापना की और इसका उद्देश्य जन-जन तक पहुँचे, इसके लिए स्वयंसेवकों को इस कार्यों से जोड़ा गया। स्वयंसेवकों से गांधी का सीधा संवाद था कि वे आमजन की सेवा और सामाजिक संप्रेषण करें। महात्मा गांधी ने मौखिक, लिखित और जनसंपर्क के माध्यम से जनता को इस अभियान से जोड़ने का कार्य किया (तेंदुलकर, 1953)। महात्मा गांधी का मानना था कि रचनात्मक कार्य तभी सफल हो सकता है जबकि भारतीय आमजन के बीच इसको लेकर सामाजिक संप्रेषण किया जाएगा। इसके लिए वे 1933 से लेकर 1946 तक कई प्रांतों का दौरा भी करते रहे (सुमन, 1969)। महात्मा गांधी अपने समय के सहयोगियों से भी इसके लिए आग्रह करते हैं। महात्मा गांधी इसके लिए प्रयासरत रहे और गुजराती, अँग्रेजी सहित हिंदी भाषाओं में चिट्ठी-पत्री लगातार करते रहे। उनके प्रयासों को सफलता भी प्राप्त हो रही थी। महात्मा गांधी संयुक्त प्रांत के शिक्षा मंत्री संपूर्णानंद को 26 जुलाई, 1939 को रेलगाड़ी में एक पत्र लिखते हैं—"भाई संपूर्णानंद जी, आपका तार कल रात्रि को मिला। नई तालीम के लिए 2000 पाठशाला खोलने का निश्चय बहुत बड़ा कार्य है। मेरी सलाह है कि प्रयत्न सर्वथा सफल होगा। आपको इस साहस के लिए मेरा धन्यवाद।" (संपूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड 70, 1978) इस पत्र का मूल पाठ इस प्रकार है :

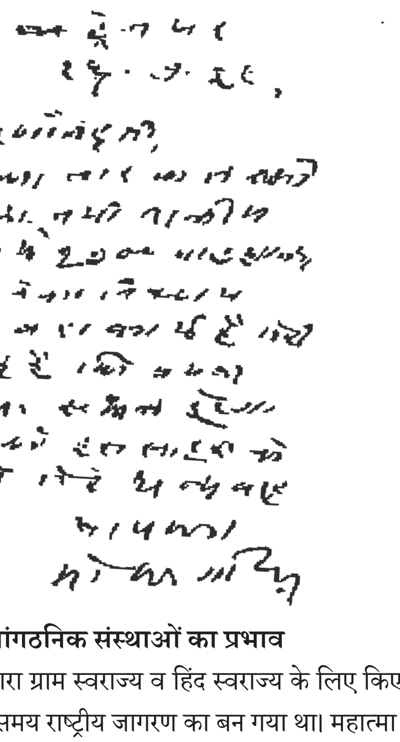

गांधी के कार्य व सांगठनिक संस्थाओं का प्रभाव

महात्मा गांधी द्वारा ग्राम स्वराज्य व हिंद स्वराज्य के लिए किए जाने वाले प्रयासों से वह समय राष्ट्रीय जागरण का बन गया था। महात्मा गांधी देश में आमजन के बीच रचनात्मक कार्य व उद्देश्यों का प्रसार करने के लिए अपने भाषणों, सम्मेलनों, पत्रों, लेखों, और स्वयंसेवकों के द्वारा सामाजिक संप्रेषण से राष्ट्रीय जागरण का कार्य कर रहे थे। उनके संदेश

और विचार कार्य लेख के रूप में निरंतर 'हरिजन पत्रिका' और 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित होते रहते थे, जिसका प्रभाव स्थानीय समाज व राष्ट्रीय स्तर पर दिखाई दे रहा था। महात्मा गांधी के कार्यों का मीडिया कवरेज उस दौरान देश के 'द बांबे क्रॉनिकल', 'द हिंदुस्तान टाइम्स', 'द हिंदू' जैसे प्रतिष्ठित समाचार पत्रों में व विभिन्न प्रतिष्ठित पत्रिकाओं 'द कलकत्ता रिव्यू', 'द मॉडर्न रिव्यू', 'द इंडियन रिव्यू', 'द एशियाटिक रिव्यू', 'एजुकेशनल इंडिया' इत्यादि में लेखों के माध्यम से सामने आया करता था। गांधी के सेवाग्राम में रहने के दौरान अनेक रचनात्मक संस्थाएँ वर्धा में गतिशील थीं। इन सभी संस्थाओं में आपसी भाईचारा था। वर्धा का पूरा वातावरण महात्मा गांधी के विचारों से प्रभावित था। विद्यार्थी और शिक्षक के साथ-साथ आमजन भी चर्खा काता करते थे। पूरे वर्धा में आमजन एकजुट होकर साफ-सफाई किया करते थे। गांधी स्वयं भी हरिजन मोहल्ले में जाकर सामूहिक सफाई का कार्य किया करते थे। वर्धा में स्थापित किए गए रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता गांधी से निरंतर संपर्क बनाए रखते थे और उनसे अपने काम के लिए मार्गदर्शन लिया करते थे। आमजन रचनात्मक संस्थाओं से जुड़कर स्वराज व आत्मनिर्भरता के अभियान को पूरा करने में अपना भरपूर समय दिया करते थे। वर्धा के कार्यों का प्रचार-प्रसार पूरे देश में हो रहा था व लोग इन कार्यक्रमों से जुड़कर इस अभियान को सफल बनाने में लगे हुए थे।

निष्कर्ष

महात्मा गांधी द्वारा स्थापित विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं का कार्य आज भी जारी है। वर्धा की इन संस्थाओं से आज भी लोग जुड़कर सेवा कार्य कर रहे हैं। महात्मा गांधी एक प्रयोगधर्मी व्यक्तित्व के थे, इसलिए उन्होंने अपने रचनात्मक कार्यक्रमों को गति देने के लिए संस्थाओं की स्थापना की। इस साधन से ग्राम स्वराज्य से हिंद स्वराज्य की दिशा में साध्य प्राप्त करने हेतु प्रयोगशाला के रूप में महाराष्ट्र स्थित विदर्भ प्रांत के वर्धा जिले से दूर सेगाँव नामक स्थान पर सेवाग्राम आश्रम की स्थापना की। वर्तमान समय में भारतीय जनता पार्टी की सरकार महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यों को आत्मनिर्भर भारत की दिशा में साकार करने पर पहल कर रही है। महात्मा गांधी का रचनात्मक कार्यक्रम आत्मनिर्भर बनाने पर केंद्रित था, वहीं भारत सरकार आत्मनिर्भर भारत की दिशा में महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर कार्य कर रही है। योजनाओं, नीतियों और अभियानों से जनता की भागीदारी सुनिश्चित हो सके, इसके लिए पर्याप्त सामाजिक संप्रेषण भी किया जा रहा है। महात्मा गांधी की नई तालीम योजना पर केंद्रित नई शिक्षा नीति-2020 का निर्माण किया गया, जिसका उद्देश्य है कि भारतीय भाषाओं में रोजगारपरक शिक्षा प्रदान की जा सके। नई तालीम योजना और भारतीय भाषाओं को लेकर जो विचार गांधी के थे, आज उस दिशा में कार्य हो रहा है। महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यक्रमों में साफ-सफाई या स्वच्छता प्रमुख कार्य था, जिसको स्वच्छ भारत अभियान के रूप में जन सहभागिता के साथ सफल बनाने की दिशा में कार्य हो रहा है। आत्मनिर्भर गाँव और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुरक्षित करना रचनात्मक कार्यक्रम का हिस्सा था, इस दिशा में कौशल विकास मिशन और रेलवे स्टेशनों पर 'वोकल फॉर लोकल' के तहत 'एक स्टेशन एक उत्पाद' योजना के रूप में ग्रामीण कौशल और स्थानीय उत्पाद को बढ़ावा देने का कार्य हो रहा है। रचनात्मक कार्यक्रम की दिशा में महात्मा गांधी का उद्देश्य और विचार ग्राम स्वराज्य से हिन्द स्वराज्य की ओर था, आज गांधी के इस विचार को आगे बढ़ाते हुए आत्मनिर्भर भारत की दिशा में कार्य हो रहा है। उस दौर में रचनात्मक कार्यक्रम को लेकर महात्मा गांधी के उद्देश्य और विचार आज के दौर में भी प्रासंगिक मिलते हैं। वर्धा की भूमि महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज्य से हिंद स्वराज्य के स्वप्न की कर्मभूमि के रूप में पूरे देश में जानी और पहचानी जाती है।

संदर्भ सूची

उपाध्याय, एच. (2014). बापू कथा : 1920-1948. वाराणसी : सर्व सेवा संघ.

एंड्रूज, सी. एफ. (1938). महात्मा गांधीज ग्रेटेस्ट वेपन. द मॉडर्न रिव्यु, नवंबर, पृष्ठ 544-546. http://www.Southasiaarchive.Com/Content/Sarf.120016/204713/003 से पुन:प्राप्त.

गांधी, के, एवं पांडे, के. (संपा.). (2014). सेवाग्राम की गांधी गंगा : सेवाग्राम- वर्धा के गांधीजनों का संक्षिप्त परिचय. वर्धा : गांधी सेवा संघ.

गांधी, के. (संपा.). (2011). रचनात्मक कार्यक्रम : विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय. वर्धा : गांधी सेवा संघ.

गांधी, के. (संपा.). (2017). सेवाग्राम चित्रावली : गांधीजी के ग्राम सेवा के प्रयोग की झलक. वर्धा : गांधी सेवा संघ.

ठक्कर, ए. वी. (2009). हिंदी की प्रचार संस्थाएँ स्वरूप और इतिहास. वर्धा : राष्ट्रभाषा प्रचार समिति.

तेंदुलकर, डी. जी. (1953). महात्मा : लाइफ़ ऑफ मोहनदास करमचंद गांधी, वॉल्यूम 4, 1934-1938. नई दिल्ली : पब्लिकेशन डिवीजन,

दाधीच, एन. (2014). महात्मा गांधी का चिंतन. जयपुर : रावत पब्लिकेशन.

पत्र सं. 35. (1978). संपूर्ण गांधी वाङ्मय खंड-70. अहमदाबाद : नवजीवन ट्रस्ट.

प्रताप, ए. (2011). गांधी सेवा संघ का इतिहास : अहिंसा के प्रयोग. वाराणसी : सर्व सेवा संघ.

बिड़ला, जी. (2019). गांधीजी की छत्रछाया में. नई दिल्ली : सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन.

मूर्ति, एन. एस. आर. (2018). द हिस्ट्री ऑफ इंग्लिश एजुकेशन इन इंडिया : ए ब्रीफ स्टडी. जेआरएसपीईएलटी, 10 (2), पृष्ठ 1-7. https://www.jrspelt.com/wp-content/uploads/2018/11/Murthy-Education-in-India.pdf से पुन:प्राप्त.

राव, आर. वी. (1945). ए पीप इन टू द गांधी आश्रम एट सेवाग्राम. द मॉडर्न रिव्यु, दिसंबर, पृष्ठ 370-371. http://www.Southasiaarchive.Com/Content/Sarf.120016/204798/009 से पुन:प्राप्त.

सरन, एस. (1948). ए विजिट टू सेवाग्राम बाई ए पिलग्रिम. द मॉडर्न रिव्यु, अगस्त. पृष्ठ 128-130. http://www.Southasiaarchive.Com/Content/Sarf.120016/204830/011 से पुन:प्राप्त.

सिंह, डी. (1942). ए विजिट टू वर्धा. द मॉडर्न रिव्यु, अक्टूबर, पृष्ठ 313-314. http://www.Southasiaarchive.Com/Contect/Sarf.120016/204760/007 से पुन:प्राप्त.

सुमन, आर. (1969). उत्तर प्रदेश में गांधीजी. लखनऊ : प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 34-37, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

अमेरिकी समाचार पत्रों में स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों की कवरेज

प्रतिभा सिन्हा[1]

सारांश

11 सितंबर, 1893 को शिकागो में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में स्वामी विवेकानंद द्वारा दिया गया भाषण बहुत पहले से ही किंवदंती बन चुका है। उन्होंने अपने भाषण का आरंभ 'मेरे अमेरिकी भाइयो एवं बहनो' संबोधन के साथ करके भारत की विश्व बंधुत्व, वसुधैव कुटुम्बकम, सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु जैसी सूक्तियों को चरितार्थ किया था। अमेरिका प्रवास के दौरान स्वामी विवेकानंद ने शिकागो सम्मेलन के अलावा भी कई स्थानों पर व्याख्यान दिए। मीडिया का काम किसी विषय या व्यक्ति के प्रति दृष्टिकोण निर्माण का कार्य करना भी है। अमेरिकी समाचार पत्रों ने शिकागो सम्मेलन से पूर्व, शिकागो सम्मेलन के दौरान एवं शिकागो सम्मेलन के उपरांत स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों को किस प्रकार अपने समाचार पत्रों में कवर किया, इसका वर्णनात्मक अध्ययन प्रस्तुत शोध आलेख में किया गया है।

संकेत शब्द : स्वामी विवेकानंद, विश्व धर्म सम्मेलन, शिकागो हेराल्ड, क्रिटिक, शिकागो इंटर ओसियन, डिट्राएट, फ्री प्रेस, अपील-एवलांश

प्रस्तावना

'मेरे अमेरिकी भाइयो और बहनो' ये पाँच शब्द सुनते ही हमारे मस्तिष्क पटल पर जिस व्यक्तित्व की छवि उभरती है वह हैं स्वामी विवेकानंद। 1893 का यह वह दौर था जब भारत पर ब्रिटिश शासन था। पश्चिमी देश भारत को असभ्य और अशिक्षित समझते थे और भारत को शिक्षित करने के लिए ईसाई मिशनरियों को भेजा जाता था। धर्म संसद का आयोजन ईसाई धर्म की श्रेष्ठता सिद्ध करने के उद्देश्य से किया गया था (बर्क, 2013)। लेकिन स्वामी विवेकानंद ने धर्म संसद में अपने वक्तव्य से भारत की प्राचीन संस्कृति, सभ्यता और ज्ञान से पश्चिमी देशों को परिचित करवाया। शिकागो सम्मेलन स्वामी विवेकानंद के जीवन का स्वर्णिम अध्याय बन गया। भारतीय वेदांत का आधुनिक अर्थों में दिव्य संदेश देकर विवेकानंद ने जो कार्य भारत के लिए किया, वह आधुनिक भारतीय इतिहास का सर्वोच्च कीर्तिमान बन गया (रोलाँ, 1965)। स्वामी विवेकानंद ने अपनी विदेश यात्रा के दौरान सर्वाधिक समय अमेरिका के विभिन्न शहरों में व्याख्यान देकर व्यतीत किया, उनके व्याख्यानों को अमेरिकी समाचार पत्रों ने अपने-अपने ढंग से कवर किया।

अमेरिकी समाचार पत्रों में कवरेज

अमेरिका के शिकागो शहर में आयोजित विश्व धर्म संसद में व्याख्यान के बाद स्वामी विवेकानंद चर्चा में आए, लेकिन विश्व धर्म संसद से पहले भी उनके व्याख्यानों को अमेरिकी समाचार पत्रों ने कवर किया। अमेरिका के शिकागो हेराल्ड, क्रिटिक, शिकागो इंटर ओसियन, डिट्राएट, फ्री प्रेस और अपील-एवलांश जैसे प्रतिष्ठित समाचार-पत्रों में स्वामी विवेकानंद पर कवरेज देखने को मिलती है। स्वामी विवेकानंद द्वारा विश्व धर्म संसद में भाग लेने के दो उद्देश्य थे। पहला यह कि हिंदू धर्म की अन्य धर्मों के समक्ष श्रेष्ठता का प्रतिपादन करना और दूसरा उद्देश्य भारत की गरीबी के निवारण के लिए अमेरिका की समृद्धि का सहयोग प्राप्त करना। स्वामी विवेकानंद के मतानुसार भारत के लोगों को धर्म की अधिक या श्रेष्ठतर धर्म की आवश्यकता नहीं है, परंतु जैसा कि वे व्यक्त करते हैं; 'व्यावहारिकता' की आवश्यकता है; और वे इस आशा को लेकर इस देश में आए हैं कि वे अमेरिकी जनता का ध्यान करोड़ों पीड़ित लोगों की इस महान आवश्यकता की ओर आकृष्ट कर सकें *(सालेम इवनिंग न्यूज, 1893)*।

शोध उद्देश्य

- शिकागो में विश्व धर्म संसद से ठीक पहले स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों की अमेरिकी समाचार पत्रों में कवरेज का अध्ययन।
- धर्म संसद में दिए गए स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों की अमेरिकी समाचार पत्रों में कवरेज का अध्ययन।
- धर्म संसद के उपरांत स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों की अमेरिकी समाचार पत्रों में कवरेज का अध्ययन।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध आलेख ऐतिहासिक प्रकृति का है। इस अध्ययन में तथ्यों के संग्रहण के लिए द्वितीयक स्रोतों का इस्तेमाल किया गया है। अमेरिका के तत्कालीन समाचार पत्रों तथा मेरी लुई बर्क की पुस्तक 'स्वामी विवेकानंद इन द वेस्ट न्यू डिस्कवरीज' में प्रकाशित सामग्री का वर्णनात्मक अध्ययन किया गया है। द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त तथ्यों का गुणात्मक विश्लेषण किया गया है।

विश्व धर्म संसद से पहले की कवरेज

सत्रह दिनों तक चलने वाली विश्व धर्म संसद की शुरुआत 11 सितंबर, 1893 को हुई। इस धर्म संसद में भाग लेने के लिए स्वामी विवेकानंद 31 मई, 1893 को शिकागो के लिए रवाना हुए। शिकागो जाते हुए जिन स्थानों पर विवेकानंद रुके, वहाँ उन्होंने व्याख्यान दिए। जैसे स्वामी विवेकानंद ने

[1] *पीएच.डी. शोधार्थी, जनसंचार विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र. ईमेल:* pratibhasinha133@gmail.com

मैसाचुसेट्स के फ्रामिंघम, बोस्टन, सालेम और एनिस्क्वाम में व्याख्यान दिए। उन्होंने अपने व्याख्यानों के जरिये अमेरिकी लोगों को भारत की संस्कृति, भारतीय लोगों के रीति-रिवाज, रहन-सहन से भी अवगत कराया। बोस्टन के समाचार पत्र 'इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट' ने 23 अगस्त, 1893 के अंक में लिखा, "भारत के एक ब्राह्मण भिक्षु स्वामी विवेकानंद, जो सितंबर में शिकागो में आयोजित होने वाली धर्म संसद में जाने वाले हैं, मिस केट सनबोर्न के मेटकॉफ मास में उनके परित्यक्त फॉर्म में अतिथि हैं। कल शाम उन्होंने अपने देश के शिष्टाचार, रीति-रिवाजों और रहन-सहन के तरीके पर सेनबोर्न रेफोर्मेट्री फॉर विमेन के लोगों को संबोधित किया (इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट, 1893)। स्वामी विवेकानंद ने 28 अगस्त, 1893 को वेसली प्रार्थनागृह में व्याख्यान दिया इस व्याख्यान को 'सालेम इवनिंग न्यूज' ने 29 अगस्त, 1893 के अंक में 'अ मोंक फ्रॉम इंडिया' (भारत से एक भिक्षु) शीर्षक के तहत कवर किया। इस समाचार के उपशीर्षक हैं—सालेम ऑडियंस इंट्रेस्टेड इन हिज रिमार्क (सालेम के दर्शकों ने उनके व्याख्यान में दिलचस्पी दिखाई), हि हैज नो फेथ इन मिशनरीज (वह मिशनरियों पर विश्वास नहीं करते), एक्सप्लेन्ड् द बैड कंडीशन ऑफ विमेन इन हिज लैंड (अपने देश की महिलाओं की दयनीय स्थिति को बताया) (सालेम इवनिंग न्यूज, 1893)। इस कवरेज में स्पष्ट कहा गया है कि स्वामी विवेकानंद के व्याख्यान को अमेरिका के लोग पसंद कर रहे थे, उनके व्याख्यानों में रुचि दिखा रहे थे। 29 अगस्त, 1893 को 'डेली गजट' ने इसी समाचार को प्रकाशित किया, जिसका शीर्षक है 'राजा स्वामी विविकानोंद' (उन दिनों अमेरिका के विभिन्न समाचार पत्रों में स्वामी विवेकानंद के नाम की वर्तनी गलत प्रकाशित की जाती थी)। 'डेली गजट' के समाचार का उपशीर्षक है—हैज बट लिटल फेथ इन द मिशनरीज (मिशनरियों में कम विश्वास रखते है), हस्बैंड ऑफ इंडिया नेवर लाई, नेवर प्रेसेकुट (भारत के पति कभी झूठ नहीं बोलते, कभी सताते नहीं), हिज पर्पस हियर टू ऑर्गनाइज मोंक्स फॉर इंडस्ट्रियल पर्पसेस (उनका उद्देश्य यहाँ औद्योगिक उद्देश्यों के लिए भिक्षुओं को संगठित करना) (डेली गजट, 1893)।

'सालेम इवनिंग' समाचार पत्र के शीर्षक में स्वामी विवेकानंद ने भारत में महिलाओं की स्थिति को बताया। उन्होंने इस संदर्भ में बताया कि प्राचीन काल में जब धर्म का उदय हुआ उस समय महिलाएँ आध्यात्मिक प्रतिभा और मानसिक शक्ति के लिए विख्यात थीं, लेकिन वर्तमान समय में महिलाएँ खाने-पीने, गप्प लड़ाने और चुगली-चवाई के अलावा कुछ नहीं करती। अतः प्राचीन काल की तुलना में महिलाओं की स्थिति अभी खराब है। शिकागो धर्म महासभा से पहले स्वामी विवेकानंद ने ईस्ट चर्च एवं एपिस्कोपल चर्च में भी व्याख्यान दिया। 1 सितंबर, 1893 को 'सालेम इवनिंग' में प्रकाशित समाचार में बताया गया है कि अन्य साधुओं की भाँति विवेकानंद अपने देश में सत्य, पवित्रता और मानव-बंधुत्व के धर्म का उपदेश करते हुए यात्रा अवश्य करते थे, किंतु उनकी दृष्टि से कोई भी बड़ी अच्छाई अथवा बुराई नहीं छिप सकती थी। वे अन्य धर्मों के व्यक्तियों के प्रति अत्यंत उदार हैं और अपने से मतभेद रखनेवालों से प्रेमपूर्ण वाणी ही बोलते हैं (सालेम इवनिंग, 1893)। सालेम इवनिंग न्यूज की कवरेज के आधार पर यह कहा जा सकता है कि स्वामी विवेकानंद 'सर्व धर्म समभाव' की भावना रखते थे। स्वामी विवेकानंद के प्रति सालेम के समाचार पत्रों का दृष्टिकोण सकारात्मक रहा। 'डेली गजट' के 5 सितंबर, 1893 के अंक में प्रकाशित कवरेज है—भारत के राजा स्वामी विविरानांड (स्वामी विवेकानंद) ने रविवार की शाम को भारतीय धर्म तथा अपनी मातृभूमि के गरीब निवासियों के संबंध में भाषण दिया। श्रोताओं की संख्या अच्छी थी, परंतु इतनी अधिक नहीं थी, जितनी कि विषय की महत्ता अथवा रोचक वक्ता के लिए अपेक्षित थी। सन्यासी अपने देश की वेशभूषा में थे और प्रायः चालीस मिनट बोले। उन्होंने कहा कि आज भारत की, जो पचास वर्ष पूर्व का भारत नहीं है, सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि मिशनरी जनता को धार्मिक नहीं, अपितु औद्योगिक शिक्षा प्रदान करें। जितने धर्म की हिंदुओं को आवश्यकता है, वह उनके पास है और हिंदू धर्म संसार का सबसे प्राचीन धर्म है। सन्यासी बड़े सुंदर वक्ता हैं और उन्होंने अपने श्रोताओं का ध्यान पूर्णरूपेण आकृष्ट किए रखा (डेली गजट, 1893)। स्वामी विवेकानंद का मानना था कि भारत का सनातन धर्म विश्व का सबसे प्राचीन धर्म है, विश्व के प्राचीन ज्ञान का उदय भारत से हुआ है, भारत के पास चार वेदों का ज्ञान है, उपनिषद् का ज्ञान है, भारत को मिशनरियों के बजाय औद्योगिक शिक्षा की आवश्यकता है।

विश्व धर्म संसद के दौरान कवरेज

11 सितंबर, 1893 की सुबह 'आर्ट इंस्टिट्यूट ऑफ शिकागो' में धर्म संसद का शुभारंभ हुआ। धर्म संसद का आयोजन मानव जाति के एकीकरण एवं उत्थान के लिए किया गया था। 12 सितंबर, 1893 को धर्म संसद में स्वामी विवेकानंद के उद्घाटन भाषण को सबसे अधिक कवरेज देने वाले शिकागो के समाचार पत्रों में 'हेराल्ड', 'शिकागो इंटर ओशन', 'ट्रिब्यून' शामिल हैं। 'हेराल्ड' ने स्वामी जी का पूर्ण व्याख्यान कवर किया है। कवरेज के अनुसार धर्म संसद में स्वामी विवेकानंद ने भारत की संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम' के भावों को व्यक्त करते हुए कहा, "*मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूँ, जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सार्वभौम स्वीकृति, दोनों की ही शिक्षा दी है। हम लोग सर्व धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते, वरन् समस्त धर्मों को सच्चा मानकर स्वीकार करते हैं*" (बर्क, 2013, पृ.83)।

शिकागो सम्मलेन के उद्घाटन के अगले दिन 12 सितंबर, 1893 के अंक में 'शिकागो टाइम्स' ने स्वामी विवेकानंद के व्यक्तित्व का वर्णन इस प्रकार किया है—जिस चेहरे और पोशाक ने सबसे अधिक ध्यान आकर्षित किया, विशेष रूप से महिलाओं को, वह स्वामी विवेकानंद का था, विवेकानंद एक ब्राह्मण भिक्षु हैं, और हार्वर्ड के प्रो. राइट ने यह कहते हुए उदधृत किया है कि वे दुनिया के सर्वश्रेष्ठ शिक्षित व्यक्तियों में से एक हैं (शिकागो टाइम्स, 1893)। हालाँकि 'शिकागो टाइम्स' ने यह भी लिखा कि स्वामी विवेकानंद की लोकप्रियता का कारण महिलाओं का उनके प्रति आकर्षण और उनकी सुदंरता है। 'शिकागो टाइम्स' ने लिखा कि स्वामी विवेकानंद के व्यक्तित्व में उनके ज्ञान का तेज झलकता है, वे अपने तथ्य प्रामाणिक तरीके से रखते हैं। यही वजह है कि हॉवर्ड विश्वविद्यालय के प्रो. राइट स्वामी विवेकानंद के ज्ञान से बहुत प्रभावित थे। उनका मानना था विवेकानंद दुनिया के सर्वश्रेष्ठ विद्वानों में से एक हैं। अमेरिका के लोगों के लिए यह बड़े आश्चर्य की बात थी कि किसी 30 वर्ष के युवा सन्यासी में धर्म और दर्शन का इतना अद्भुत ज्ञान था, अनोखी तार्किक क्षमता थी। 'बोस्टन इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट' के 30 सितंबर, 1893 के अंक में शिकागो धर्म संसद की 23 सितंबर की रिपोर्ट देखने को मिलती है। इस कवरेज में बताया गया कि सम्मेलन में विवेकानंद का भाषण आकाश की भाँति

विस्तीर्ण था, उसमें सभी धर्मों की सर्वोत्तम बातों का एक अंतिम विश्वधर्म के रूप में समावेश था—मानवता के प्रति प्रेम, ईश्वर-प्रेम के लिए सत्कार्य, न कि दंड के भय से अथवा लाभ की आशा से। सम्मलेन में वे अपने भावों की और आकृति की भव्यता के कारण बड़े जनप्रिय हैं। उनके मंच पर आने मात्र पर हर्षध्वनि होने लगती है और हजारों व्यक्तियों का वह विशिष्ट सम्मान वे बालसुलभ संतोष की भावना से स्वीकार करते हैं, उनमें गर्व की तनिक भी झलक नहीं होती। निर्धनता एवं आत्म-त्याग से सहसा इस वैभव और उत्कर्ष में पहुँच जाना इस विनम्र युवक ब्राह्मण सन्न्यासी के लिए भी अवश्य ही एक अजीब अनुभव होगा (बोस्टन इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट, 1893)।

विश्व धर्म संसद के बाद की कवरेज

11 सितंबर, 1893 से 27 सितंबर, 1893 तक चलने वाले विश्व धर्म सम्मेलन के बाद भी अमेरिकी समाचार पत्रों में स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों की कवरेज देखने को मिलती है। 7 अक्टूबर, 1893 'आउटलुक' के अंक में लिखा गया कि स्वामी विवेकानंद ने ईसाई मिशनरी के कार्यों की आलोचना की। उनके मतानुसार वे केवल उनके अति पवित्र विश्वासों के प्रति घृणा प्रदर्शित करने के लिए और अपने देशवासियों को उनके द्वारा दी जाने वाली नैतिकता और आध्यात्मिकता की शिक्षा की जड़ काटने आए हैं (आउटलुक, 1893)। स्वामी विवेकानंद ईसाई धर्म के विरोधी नहीं थे, वे विरोध करते थे भारत में धर्म का पाठ पढ़ाने आई ईसाई मिशनरियों का। उन्होंने अपने व्याख्यानों में कहा कि भारत में ईसाई मिशनरियों द्वारा दी जा रही धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी, भारत को औद्योगिक शिक्षा की आवश्यकता थी। 'क्रिटिक' समाचार पत्र में पत्रकार लूसी मोनरो ने 7 अक्टूबर, 1893 की रिपोर्ट में लिखा है—"धर्म महासभा के आविर्भाव ने हमारी आँखें खोल दीं कि प्राचीन धर्मों के तत्त्वदर्शन में आधुनिकों के लिए बहुत अधिक सौंदर्य है। जब हमने यह स्पष्ट रूप से देख लिया, तब शीघ्र ही उनके व्याख्याताओं में हमारी रुचि उत्पन्न हुई और एक विशेष उत्सुकता के साथ हम ज्ञान की खोज के लिए अग्रसर हुए। महासम्मेलन की समाप्ति पर इसे प्राप्त करने का सबसे अधिक सुलभ साधन स्वामी विवेकानंद के भाषण और प्रवचन थे, जो अब भी इस शहर (शिकागो) में हैं" (क्रिटिक, 1893)। अमेरिका के लोग स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों में रुचि ले रहे थे, क्योंकि स्वामी विवेकानंद जीवन से जुड़े हर पहलू पर चर्चा करते थे, वे लोगों द्वारा पूछे गए प्रश्नों का उत्तर बड़े सहजतापूर्वक देते थे। तत्कालीन समाचार पत्रों में यह विज्ञापन भी छपता था कि स्वामी विवेकानंद का अगला व्याख्यान किस स्थान पर होने वाला है? किस विषय पर स्वामी जी व्याख्यान देंगे। 'डेट्रॉएट ट्रिब्यून' के 19 फरवरी, 1894 के अंक में प्रकाशित एक विज्ञापन है, जिसमें बताया गया था कि विवेकानंद का अतिरिक्त व्याख्यान यूनाइटेरियन चर्च में बुधवार 21 फरवरी को आयोजित होने वाला है। इस व्याख्यान का विषय प्रेम है। इसमें प्रवेश राशि 50 सेंट है। 'डेट्रॉएट ट्रिब्यून' के अतिरिक्त डेट्रॉएट जर्नल' में भी इस प्रकार से विज्ञापन देखने को मिलते हैं।

भारतीय संस्कृति और संचार

स्वामी विवेकानंद जब अमेरिका गए तो वहाँ के लोग उनके परिधान पर हँसते थे। बच्चे उनके पीछे दौड़ते थे। कुछ लोगों ने पागल समझ कर पत्थर भी मारा। लोगों ने उनका बहुत मजाक बनाया, बावजूद इसके उन्होंने अपनी भारतीय वेशभूषा का त्याग नहीं किया। स्वामी विवेकानंद अमेरिका में अपनी संस्कृति और सभ्यता को साथ लेकर गए। कहीं लोगों ने उनकी वेशभूषा का मजाक बनाया तो कहीं लोग उनकी वेशभूषा से आकर्षित भी हुए। 12 सितंबर, 1893 को 'शिकागो टाइम्स' ने अपनी कवरेज में उनकी पोशाक पर टिप्पणी करते हुए लिखा है—"विवेकानंद असाधारण रूप से सुंदर और ऐसी विशेषताओं के युक्त थे, जो हर किसी का ध्यान आकर्षित कर रहे थे। उनकी पोशाक चमकीले नारंगी रंग की थी और उससे उस रंग का एक लंबा कोट और रेगुलेशन पगड़ी पहनी थी" (शिकागो टाइम्स, 1893)। स्वामी विवेकानंद के व्यक्तित्व का वर्णन 'शिकागो एडवोकेट' में भी देखने को मिलता है। 'शिकागो एडवोकेट' के 28 सितंबर, 1893 के अंक में लिखा है—"कुछ मामलों में सबसे आकर्षक व्यक्तित्व, ब्राह्मण भिक्षु सौमी विवाकानंद (Saumi Vivakananda) थे, जो अपने लहराते नारंगी लबादे, केसरिया पगड़ी, सुरूप सुंदर चेहरा, गहरी सूक्ष्म मर्मज्ञ आँखें और प्रसन्नचित थे। एकाग्रता से भरा उनका व्यक्तित्व यह दर्शाता था कि कैसे वे अपने गुणों में निपुण हैं। अँग्रेजी का उनका ज्ञान ऐसा है मानो यह उनकी मातृभाषा है" (शिकागो एडवोकेट, 1893)। 'बोस्टन इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट' ने 30 सितंबर, 1893 के अंक में लिखा कि उनके संतुलित सिर पर नारंगी अथवा लाल रंग की पगड़ी शोभायमान होती है और उनका चोगा (जो इस वस्त्र का वास्तविक नाम नहीं है) कमरबंद से बँधा हुआ है और घुटनों के नीचे गिरता है। वह कभी चमकीले नारंगी रंग के और कभी गहरे लाल रंग का होता है। वे उत्तम अँग्रेजी बोलते हैं और उन्होंने किसी भी गंभीरता से पूछे गए प्रश्न का उत्तर दिया" (बोस्टन इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट, 1893)। स्वामी विवेकानंद अपने परिधान के जरिये अपनी संस्कृति का संचार कर रहे थे। लूसी मोनरो की 'क्रिटिक' में प्रकाशित 7 अक्टूबर, 1893 की रिपोर्ट में बताया गया है कि उनकी संस्कृति, उनकी वाग्मिता और उनके आकर्षक व्यक्तित्व ने हमें हिंदू सभ्यता का नया भाव प्रदान किया। वे एक रोचक व्यक्ति हैं और पीले वस्त्रों की भूमिका में उनका सुंदर, बुद्धिमत्तापूर्ण, क्रियाशील चेहरा तथा गंभीर संगीतमय स्वर किसी को भी तुरंत अपने पक्ष में आकृष्ट कर लेता है (क्रिटिक, 1893)। स्वामी विवेकानंद के व्यक्तित्व एवं उनकी संचार शैली ने सभी को प्रभावित किया, उनके चेहरे के भाव इतने स्पष्ट थे मानो वे अपने भावों से संचार कर रहे हों। यात्राओं और व्याख्यानों के दौरान स्वामी विवेकानंद वेदांत के प्रसार के लिए अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस से संबंधित पुस्तिकाओं का भी वितरण करते थे।

हिंदू धर्म और दर्शन

स्वामी विवेकानंद ने हिंदू धर्म एवं दर्शन पर भी कई व्याख्यान दिए। 'इवैंस्टन इंडेक्स' ने 7 अक्टूबर, 1893 की अपने कवरेज में बताया कि हिंदू दर्शन की विस्मयकारक व्याख्या के कारण उन्होंने बहुत अधिक लोगों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है (इवैंस्टन इंडेक्स, 1893)। पुनर्जन्म पर व्याख्या में स्वामी विवेकानंद ने कहा "पुनर्जन्म का सिद्धांत यद्यपि इस देश के लिए नया और न समझ में आनेवाला सा है, तथापि प्रायः सभी धर्मों का आधार होने के कारण पूर्व में सुविख्यात है। जो इसे धर्म-सिद्धांत के रूप में नहीं मानते, वे भी इसके विरोध में कुछ नहीं कहते। पुनर्जन्म का सिद्धांत मनुष्य को इस छोटी-सी पृथ्वी तक ही सीमित नहीं कर देता। उसकी आत्मा दूसरी उच्चतर पृथ्वियों में जा सकती है, जहाँ उसका

उच्चतर अस्तित्व होगा, पाँच इंद्रियों के बजाय आठ इंद्रियों वाला होगा और इस तरह बना रहकर वह अंत में पूर्णता और दिव्यता की पराकाष्ठा तक पहुँचेगा और परमलोक में लिप्त हो जाएगा" (इवैंस्टन इंडेक्स, 1893)। 'क्रिटिक' ने 7 अक्टूबर, 1893 के अंक में लिखा "विवेकानंद ने कहा कि यदि धर्मशास्त्र और धर्म सिद्धांत तुम्हारे सत्य की खोज के मार्ग में बाधक हैं, तो उन्हें अलग रख दो। निष्पक्षतापूर्वक सोचना, सभी प्राणियों से प्रेम के लिए प्रेम करना और पवित्र जीवन व्यतीत करना सीखो। तब सत्य का प्रकाश तुम्हें आलोकित कर देगा" (क्रिटिक, 1893)।

स्वामी विवेकानंद ने कभी इस बात पर जोर नहीं दिया कि मनुष्य को धार्मिक होना चाहिए, वह हमेशा जीवन की वास्तविकता पर बल देते थे। उनका मानना था कि सभी मनुष्य समान हैं और सभी प्राणियों में ईश्वर का वास है। 'विस्कोंसिन स्टेट जर्नल' ने 21 नवंबर, 1893 के अंक में लिखा है—"पिछली रात कांग्रेशनल चर्च में विख्यात हिंदू सन्यासी विवेकानंद द्वारा दिया हुआ भाषण अत्यंत रोचक था और उसमें ठोस दर्शन और श्रेष्ठ धर्म की बहुत-सी बातें थीं। यद्यपि वे मूर्तिपूजक कहे जा सकते हैं, पर ईसाई धर्म उनकी प्रदत्त अनेक शिक्षाओं का अनुसरण कर सकता है। उनका धर्म विश्व की तरह व्यापक है, जिसमें सभी धर्मों और कहीं भी पाए जाने वाले सत्य का समावेश है। उन्होंने इस बात की घोषणा की कि 'भारतीय धर्म' में धर्मांधता, अंधविश्वास और जड़ विधि-विधान का कोई स्थान नहीं है" (विस्कोंसिन स्टेट जर्नल, 1893)। इस कवरेज में भी देखने को मिलता है कि स्वामी विवेकानंद अंधविश्वासों का विरोध करते हैं, वे कहते हैं कि भारतीय संस्कृति, हिंदू धर्म कभी भी अंधविश्वासी होना नहीं सिखाते।

निष्कर्ष

कुशल संचार की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि वह लोगों पर गहरा प्रभाव डालती है। निसंदेह स्वामी विवेकानंद पश्चिमी देशों की यात्रा के दौरान एक कुशल संचारक के रूप में उभरकर सामने आए। धर्म संसद के लिए स्वामी विवेकानंद का अमेरिका में यात्रा करना और विभिन्न स्थानों पर अपने भारतीय संस्कृति, सभ्यता और ज्ञान को लोगों के सामने रखना और उसे तत्कालीन अमेरिकी समाचार पत्रों द्वारा कवर किया जाना यह भी दर्शाता है कि उनका व्याख्यान प्रभावी रहा। अमेरिका के विभिन्न समाचार पत्रों में स्वामी विवेकानंद का सकारात्मक कवरेज यह स्पष्ट करता है कि उन्होंने धर्म संसद में मजबूती से अपनी बात रखी। उनकी भूमिका प्रभावी संचारक के रूप में रही। धर्म संसद के बाद स्वामी विवेकानंद द्वारा अमेरिका के विभिन्न शहरों में दिए गए व्याख्यानों का भी कवरेज होता रहा। शिकागो धर्म संसद में स्वामी जी द्वारा दिए गए व्याख्यानों की चर्चा अमेरिका ही नहीं, पूरे विश्व में हुई। उस व्याख्यान के बाद ही अमेरिका के चर्चित समाचार पत्रों में स्वामी विवेकानंद को कवर किया गया। उस व्याख्यान के बाद ही स्वामी विवेकानंद को समूचे विश्व में प्रसिद्धि मिली।

संदर्भ :

आउटलुक. (1893, अक्टूबर 7). *विवेकानंद साहित्य-खंड 10*.(2014). अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 236.

इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट. (1893, अगस्त 23). मैरी लुई बर्क, (2013). *स्वामी विवेकानंद इन द वेस्ट न्यू डिस्कवरीज*. अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 25.

इवैंस्टन इंडेक्स. (1893, अक्टूबर 7). *विवेकानंद साहित्य-खंड 10.(*2014). अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 239-240.

क्रिटिक. (1893, अक्टूबर 7). *विवेकानंद साहित्य-खंड 10*.(2014). अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 236-237.

डेली गजट. (1893, अगस्त 29). मैरी लुई बर्क, (2013). *स्वामी विवेकानंद इन द वेस्ट न्यू डिस्कवरीज*. अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 48-50.

डेली गजट. (1893, सितंबर 5). *विवेकानंद साहित्य-खंड 10*.(2014). अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 231.

बर्क, एम. एल. (2013). *स्वामी विवेकानंद इन द वेस्ट न्यू डिस्कवरीज*. कोलकाता : अद्वैत आश्रम.

बर्क, एम. एल. (2013). *स्वामी विवेकानंद इन द वेस्ट न्यू डिस्कवरीज*. अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 83.

बोस्टन इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट. (1893, सितंबर30). *विवेकानंद साहित्य-खंड 10*.(2014). अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 232-234.

रोलाँ, आर. (1965). *द लाइफ ऑफ रामकृष्ण*. कोलकाता : अद्वैत आश्रम.

विस्कोंसिन स्टेट जर्नल (1893, नवंबर 21). *विवेकानंद साहित्य-खंड 10*.(2014). अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 241-242.

शिकागो टाइम्स. (1893, सितंबर 12). मैरी लुई बर्क, (2013). *स्वामी विवेकानंद इन द वेस्ट न्यू डिस्कवरीज*. अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 86-87.

सालेम इवनिंग न्यूज. (1893, अगस्त 29). मैरी लुई बर्क, (2013). *स्वामी विवेकानंद इन द वेस्ट न्यू डिस्कवरीज*. अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 46-48.

सालेम इवनिंग. (1893, सितंबर 1). विवेकानंद साहित्य-खंड 10.(2014). अद्वैत आश्रम, पृष्ठ 230-231.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 38-43, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

केंद्रीय विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा की वर्तमान स्थिति का अध्ययन

मीनू नावरियाँ[1] और डॉ. लोकनाथ[2]

सारांश

भारत में मीडिया शिक्षा की एक सौ वर्ष की यात्रा पूर्ण हो चुकी है। इसका विकास टुकड़ों में होने की वजह से शिक्षण-प्रशिक्षण का मसौदा भी समय-समय पर बदलता रहा है। भारत में मीडिया शिक्षा की दृष्टि से देखा जाए तो सन् 1920 से लेकर 1961 तक केवल छह विश्वविद्यालयों में ही पत्रकारिता विभाग रहा है। 100 वर्षों के लंबे समय के बाद भी मीडिया शिक्षा व्यावहारिक एवं सैद्धांतिक, पाठ्यक्रम में एकरूपता, स्पष्ट व व्यवस्थित अनुशासन, विभागीय नाम विविधता, वर्तमान समय के अनुरूप शिक्षण-प्रशिक्षण कार्यक्रम जैसी अनेक विविधताओं से घिरी है। यही बाध्यता मीडिया शिक्षा के अंतरराष्ट्रीय स्तर तक पहुँच में रुकावट बन रही है। इसलिए वर्तमान में मीडिया शिक्षा में नवाचार की गहन आवश्यकता है, ताकि इसकी कमियों पर काम करके आवश्यक सुधार किया जा सके। प्रस्तुत शोध-पत्र के माध्यम से मीडिया शिक्षा की वर्तमान स्थिति और बहुनाम पद्धति, पाठ्यक्रम आदि चुनौतियों का अध्ययन किया गया है।

संकेत शब्द : पत्रकारिता, मीडिया शिक्षा, जर्नलिज्म एजुकेशन, मीडिया पाठ्यक्रम, केंद्रीय विश्वविद्यालय

प्रस्तावना

भारत प्राचीन काल से ही प्रामाणिक कथाकार रहा है। इसका प्रमाण वेद, पुराण, रामायण, महाभारत, बुद्ध की जातक कथाएँ तथा अनेक साहित्य ग्रंथ और रचनाएँ हैं। पत्रकारिता भी 'स्टोरी टेलिंग' की ही एक विधा मानी जाती है। पत्रकारिता की यह छाप आज सिटीजन जर्नलिज्म के रूप में भी हमारे सामने है। आजादी से पूर्व मीडिया की संज्ञा केवल अखबार यानी प्रिंट को दी जाती थी। इसका मुख्य कारण यह था कि भारत में पत्रकारिता की नींव में स्वतंत्रता संग्राम रहा है। राजा राममोहन राय की 'संवाद कौमुदी', महात्मा गांधी का 'इंडियन ओपिनियन', बाल गंगाधर तिलक के 'केसरी' और 'मराठा' से लेकर गणेश शंकर विद्यार्थी का 'प्रताप', मदन मोहन मालवीय का 'अभ्युदय', बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर का 'मूकनायक', अरविंद घोष का 'वंदेमातरम्' आदि इसके धरातल में थे। स्वतंत्रता सेनानियों द्वारा निकाले गए अनेकानेक समाचार पत्रों का उद्देश्य समस्त देश को एक सूत्र में पिरोना और जागरूक करना था। शिक्षा हेतु जागरूकता फैलाने और देश में व्याप्त कुरीतियों को जड़ से समाप्त करने में पत्रकारिता शुरुआत से ही एक जरिया रही है। पत्रकारिता पाठ्यक्रम के रूप में मीडिया शिक्षा की शुरुआत वर्ष 1920 में डॉ. एनी बेसेंट ने थियोसोफिकल सोसायटी की छाँव में की। यह पत्रकारिता में पाठ्यक्रम की शुरुआत थी। वह बीज आज एक विशालकाय वृक्ष बन गया है। आज भारत में अधिकतर विश्वविद्यालयों में जन संचार एवं पत्रकारिता की शिक्षा प्रदान की जा रही है।

भारत में आज मीडिया शिक्षा उत्कर्ष पर है। इसके पाठ्यक्रम में कई विषयों की विविधता रही है। कई प्रादेशिक भाषाओं की पत्रकारिता का विकास देखा जाए तो आजादी से पूर्व स्वतंत्रता संग्राम की ललक में हिंदी, अँग्रेजी, उर्दू, बांग्ला, तेलगू, मलयालम, मराठी आदि पत्र-पत्रिकाओं एवं समाचार पत्रों की रचनात्मकता के सहारे पत्रकारिता आगे बढ़ी है। प्रिंट मीडिया के बाद देश में रेडियो और टेलीविजन के उद्भव ने पत्रकारिता को व्यवसायीकरण से जोड़ दिया। इससे पत्रकारिता में और भी नए विषय सम्मलित हो गए। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि जैसे-जैसे तकनीक ने प्रगति की है मीडिया शिक्षण के क्षेत्र में भी विज्ञापन, जनसंपर्क जैसे नए विषय सम्मलित होते गए हैं। 20वीं सदी में तकनीकी क्रांति के दौर में कदम रखते ही सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने संचार माध्यमों में क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। इस दौर में इससे पूर्व के सभी माध्यमों का मिश्रण श्रव्य-दृश्य-रिकॉर्डेड, वास्तविक समय में प्रसारण आदि सभी एक मंच पर उपलब्ध हैं। आज हर माध्यम के अनेक विकल्प हैं। साथ ही मीडिया शिक्षा के लिए चुनौतीपूर्ण स्थिति भी है। इसमें हरेक माध्यम का अपना एक अलग क्षेत्र है। इसके साथ ही न्यू मीडिया, सोशल मीडिया, वेब कास्टिंग, पॉडकास्टिंग, तकनीकों और संसाधनों में कंप्यूटर, इंटरनेट (वेबसाइट, ब्लॉग, ई-मेल), लाइव प्रसारण (रेडियो, टेलीविजन, वेब कास्टिंग, रिकॉर्डेड प्रसारण तकनीक (पॉड कास्टिंग, ऑडियो, वीडियो प्लेयर, स्टोरेज डिवाइज), टेलीफोनिक, सेटेलाइट जैसे अनेक संसाधनों को शामिल कर लिया गया है। ऐसे में शिक्षकों के लिए विषयगत विविधता और इसका शिक्षण वर्तमान समय की सबसे बड़ी चुनौती बन गए हैं। भारत में मीडिया शिक्षा को सतही स्तर पर देखें तो समझ पाएँगे कि इसमें सैद्धांतिक और व्यावहारिक के मध्य कड़ी बहस तो है ही, पाठ्यक्रम में पश्चिमी प्रभाव, एकरूपता की कमी, मीडिया शिक्षा परिषद, विषय समग्रता, शिक्षाविदों की कौशल-प्रशिक्षण जैसी अनेकानेक समस्याएँ भी हैं। इन समस्याओं का समाधान करना वर्तमान समय की विशेष आवश्यकता बन गई है।

स्वतंत्रता से पूर्व मीडिया शिक्षा

भारत में पत्रकारिता की शुरुआत करने का श्रेय जेम्स ऑगस्टस हिक्की को जाता है। हिक्की ने कलकत्ता में वर्ष 1780 में 'बंगाल गजट' समाचार पत्र से पत्रकारिता की नींव रखी। वहीं वैश्विक रूप से पत्रकारिता की शुरुआत 1434 के मध्य में मुद्रण तकनीक के विकास के साथ शुरू हो चुकी थी। उसके बाद अलग-अलग देशों में अलग-अलग काल में

[1]शोधार्थी, जनसंचार एवं पत्रकारिता विभाग, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ, ईमेल : meenunawariya4110@gmail.com
[2]सहायक आचार्य, जनसंचार एवं पत्रकारिता विभाग, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ, ईमेल : loknath.vns@gmail.com

पत्रकारिता का उदय हुआ। पत्रकारिता शिक्षण का इतिहास 19वीं शताब्दी से रहा है। संजय गौर के अनुसार, "मीडिया शिक्षा की शुरुआत के तौर पर विलार्ड जी. ब्लीयर ने सन् 1905 में विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में जर्नलिज्म को पाठ्यक्रम के रूप पढ़ाना शुरू किया" (गौर, 2006, पृ.180)। वहीं पत्रकारिता को प्रशिक्षण के तौर पर देखा जाए तो सर्वप्रथम "अमेरिका में सन् 1908 में मसौरी विश्वविद्यालय ने पत्रकारिता विभाग की स्थापना की थी" (झा, 2020, पृ. 23)। इससे पूर्व में एक तथ्य यह भी है कि पीत पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रमुख स्थान बनाने वाले अमेरिकी पत्रकार जोसेफ पुलित्जर ने कोलंबिया विश्वविद्यालय को 20 लाख डॉलर का अनुदान पत्रकारिता शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए दिया था। लेकिन इस काम को पूरा होने में एक दशक का समय लग गया। इसके बाद वर्ष 1912 में कोलंबिया विश्वविद्यालय ने पत्रकारिता विभाग शुरू किया और वैश्विक स्तर पर पत्रकारिता शिक्षण की पहचान स्थापित की (गौर, 2006, पृ. 193)।

भारत में पत्रकारिता शिक्षण की शुरुआत स्वतत्रंता संग्राम से मानी जाती है। प्रारंभ में पत्रकारिता का उद्देश्य राष्ट्रीय आंदोलन, वैचारिक बहस और समाज में व्याप्त जातिवाद, कुरीतियों, भेदभाव इत्यादि के विरुद्ध प्रशिक्षित और जागरूक करना रहा। उस समय की जरूरत के हिसाब से आजादी के आंदोलन की आवाज, जनता के एकीकरण, अँग्रेजों की दमनकारी नीतियों से जनता को जागरूक करने आदि उद्देश्यों के लिए पत्रकारिता का जन्म हुआ। राजा राममोहन राय, बाल गंगाधर तिलक, अरविंद घोष, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, गणेश शंकर विद्यार्थी, सुभाषचंद्र बोस, भीमराव अंबेडकर, मदन मोहन मालवीय आदि अनेक स्वतंत्रता सेनानियों के उस दौर में चर्चित समाचार पत्र रहे, जिनका उद्देश्य भारत को गुलामी से आजादी दिलाना था। स्वतंत्रता से पूर्व पत्रकारिता का इतिहास इसी के इर्द-गिर्द घूमता रहा। पत्रकारिता शिक्षण-प्रशिक्षण की शुरुआत भारत में सन् 1920 में श्रीमती एनी बेसेंट ने की। उन्होंने मद्रास में थियोसोफिकल सोसायटी के तहत पत्रकारिता प्रशिक्षण कार्यक्रम हेतु प्रिंटिंग प्रेस लाकर छात्रों को पत्रकारिता का ज्ञान देना शुरू किया। लेकिन इसके कुछ समय बाद ही पत्रकारिता प्रशिक्षण की रफ्तार धीमी पड़ गई। वर्ष 1936 में डॉ. जे.बी. कुमारप्पा ने मुंबई में अमेरिकी कॉलेज ऑफ जर्नलिज्म, बांबे की स्थापना की। भारत में सर्वप्रथम अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में सन् 1938 में पत्रकारिता प्रशिक्षण-सर्टीफिकेट कोर्स की शुरुआत की गई, लेकिन दुर्भाग्यवश यह मात्र दो साल में ही बंद हो गया। इसी प्रकार वर्ष 1941 में पृथ्वीपाल सिंह के प्रयास स्वरूप पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर में भारत विभाजन से पूर्व पत्रकारिता शिक्षण में एकवर्षीय पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा पाठ्यक्रम की शुरुआत की गई। यह भारत का प्रथम व्यावसायिक पत्रकारिता विभाग बना। इस विभाग के विभागाध्यक्ष पृथ्वीपाल सिंह थे।

स्वतंत्रता के बाद मीडिया शिक्षा

भारत में स्वतंत्रता के बाद मीडिया शिक्षा में कई प्रमुख बदलाव परिलक्षित हुए। स्वतंत्रता प्राप्ति तक कई माध्यमों का विकास हो चुका था। उस समय पत्रकारिता का उद्देश्य संपूर्ण भारत में एकीकरण की लहर पैदा करना और देश को एक साथ विकास की धारा में पिरोना था। इसी दौरान मीडिया शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रगति हुई। अनेक प्रमुख शिक्षण संस्थानों में नए पाठ्यक्रम संचालित होने शुरू हुए। कलकत्ता विश्वविद्यालय में सन् 1950 में दो वर्षीय डिप्लोमा कोर्स शुरू किया गया। "महाराजा कॉलेज, मैसूर में वर्ष 1951 में, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद में सन् 1954 में, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली में सन् 1965 में, गुवाहाटी विश्वविद्यालय में सन् 1967 में, कोल्हापुर विश्वविद्यालय में सन् 1968 में, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ में साल 2008 में, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में साल 2007 में, काशी हिंदू विश्वविद्यालय में सन् 1973 में, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल में सन् 1990 में, गौहाटी विश्वविद्यालय, गौहाटी में सन् 1967-68 में मीडिया शिक्षण का पाठ्यक्रम शुरू किया गया" (द्विवेदी, 2011, पृ. 34)। केरल के त्रिवेंद्रम विश्वविद्यालय में सन् 1976 में जे.एम.सी और पी.एच.डी पाठ्यक्रम शुरू किया गया है। वहीं तथ्य यह भी है कि "वर्ष 1981 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मीडिया शिक्षा की स्थिति के लिए देश भर में जाँच के लिए प्रो. के.ई. ईपन और बी.एस. ठाकुर के नेतृत्व में कमेठी गठित की गई। इस रिपोर्ट में आया कि वर्ष 1981 तक देश में केवल 25 विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा संचालित की जा रही थी" (कुमार, 2021, पृ. 321)। इसके बाद से मीडिया शिक्षा में कोर्स के प्रति जागरूकता बढ़ाई गई। जम्मू-कश्मीर में सन् 1985 से कश्मीर विश्वविद्यालय द्वारा पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग स्थापित किया गया।

गौरतलब है कि भारत में पत्राचार द्वारा पत्रकारिता कार्यक्रम शुरू करने का श्रेय राजस्थान विश्वविद्यालय को जाता है। "सन् 1976 में जयपुर के पत्राचार अध्ययन संस्थान ने एकवर्षीय पी.जी. डिप्लोमा कोर्स शुरू किया, जो बाद में वर्ष 1988 में वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय में बीजेएमसी के साथ सम्मिलित कर लिया गया। इसके बाद वर्ष 2000 में इसी विश्वविद्यालय ने एम.जे.एम.सी. पाठ्यक्रम की भी शुरुआत की। सन् 1990 में राजस्थान विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग ने मीडिया शिक्षा एम.ए. और एम.फिल. पाठ्यक्रम के ऐच्छिक प्रश्नपत्र के रूप में शुरू किया, जिसे बाद में बंद करके वर्ष 2001 में एम.जे. पाठ्यक्रम के रूप में सम्मलित कर लिया गया। राजस्थान के जोधपुर में जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय द्वारा सन् 1992 में एम.जे. पाठ्यक्रम संचालित किया गया। मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय ने वर्ष 1992 में एकवर्षीय डिप्लोमा कोर्स के साथ शुरुआत की। महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा ने वर्ष 2005 से दोवर्षीय पाठ्यक्रम एम.ए. जनसंचार माध्यम एवं संप्रेषण संचालित किया। इसी प्रकार धीरे-धीरे भारत में अनेक विश्वविद्यालयों ने मीडिया शिक्षा के विभागों की शुरुआत की" (जैन, 2005, पृ. 141)।

शोध का उद्देश्य

- केंद्रीय विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा की वर्तमान स्थिति का पता लगाना
- मीडिया शिक्षा के विविध नामों का अध्ययन करना
- वर्तमान में मीडिया शिक्षा में संचालित पाठ्यक्रम को स्पष्ट करना

शोध प्रश्न

- केंद्रीय विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा की स्थिति कैसी है?
- क्या विविध नाम पद्धति मीडिया शिक्षा को प्रभावित करती है?
- क्या मीडिया शिक्षा के शैक्षणिक स्तर में बदलाव की आवश्यकता है?

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध-पत्र के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है। साथ ही उपलब्ध साहित्य समीक्षाओं, शोध-पत्रों, पत्रिकाओं, पुस्तकों, संबंधित आलेखों का अध्ययन किया गया है। शोध-पत्र 'केंद्रीय विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा की वर्तमान स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन' प्रस्तुत करता है। इसमें मुख्य रूप से केंद्रीय विश्वविद्यालयों की वर्तमान स्थिति को इंगित करने के साथ ही विश्वविद्यालयों में संचालित पत्रकारिता विभाग के विविध नामों का अध्ययन किया गया है। इसके साथ ही मीडिया शिक्षा के पाठ्यक्रमों का भी अध्ययन किया गया है। अध्ययन में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा जनवरी-2023 की केंद्रीय विश्वविद्यालयों की सूची को लिया गया है। उसी के माध्यम से ऑनलाइन केंद्रीय विश्वविद्यालयों की अधिकृत वेबसाइटों से विश्वसनीय सूचनाओं को शोध अध्ययन में शामिल किया गया है। अध्ययन में कुल 56 केंद्रीय विश्वविद्यालयों में से मीडिया शिक्षा संचालित करने वाले 43 केंद्रीय विश्वविद्यालयों को अध्ययन का आधार बनाया गया है।

मीडिया शिक्षा की वर्तमान स्थिति एवं विविध नामों का अध्ययन

मीडिया शिक्षा में पत्रकारिता विभाग की विविध नाम पद्धति यानी 'नामिनक्लेचर' एक प्रकार की समस्या बन चुकी है। इसका असर आज मीडिया विभागों में पढ़ा रहे मीडिया शिक्षकों पर पड़ता है। पत्रकारिता विभाग विश्वविद्यालयों में संचालित अन्य पाठ्यक्रम की भाँति अलग से रखा जाता है (झा, ए.के. 2020)। कुछ विश्वविद्यालयों में विभाग की आवश्यकताओं के अनुरूप वित्त पोषण नहीं हो पाता है। वहीं अधिकतर विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता विभाग संचालित है, लेकिन प्रशिक्षण हेतु संपूर्ण संसाधनों का अभाव है। भारत में पत्रकारिता विभाग विविध नाम, जैसे—जर्नलिज्म एंड मास कम्युनिकेशन, मीडिया स्टडीज, मीडिया कल्चरल स्टडी, कम्युनिकेशन स्टडी आदि नामों से विभाग संचालित हैं, जो बाहरी तौर पर देखने से मीडिया शिक्षा के शैक्षणिक स्तर पर प्रश्नचिह्न लगाते हैं। ये मीडिया शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। इसका प्रभाव अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मीडिया शिक्षा की सर्वव्यापी पहचान, शैक्षणिक दृष्टि को प्रभावित करता है।

तालिका-1 (केंद्रीय विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा के विभागों के नामों का विवरण)

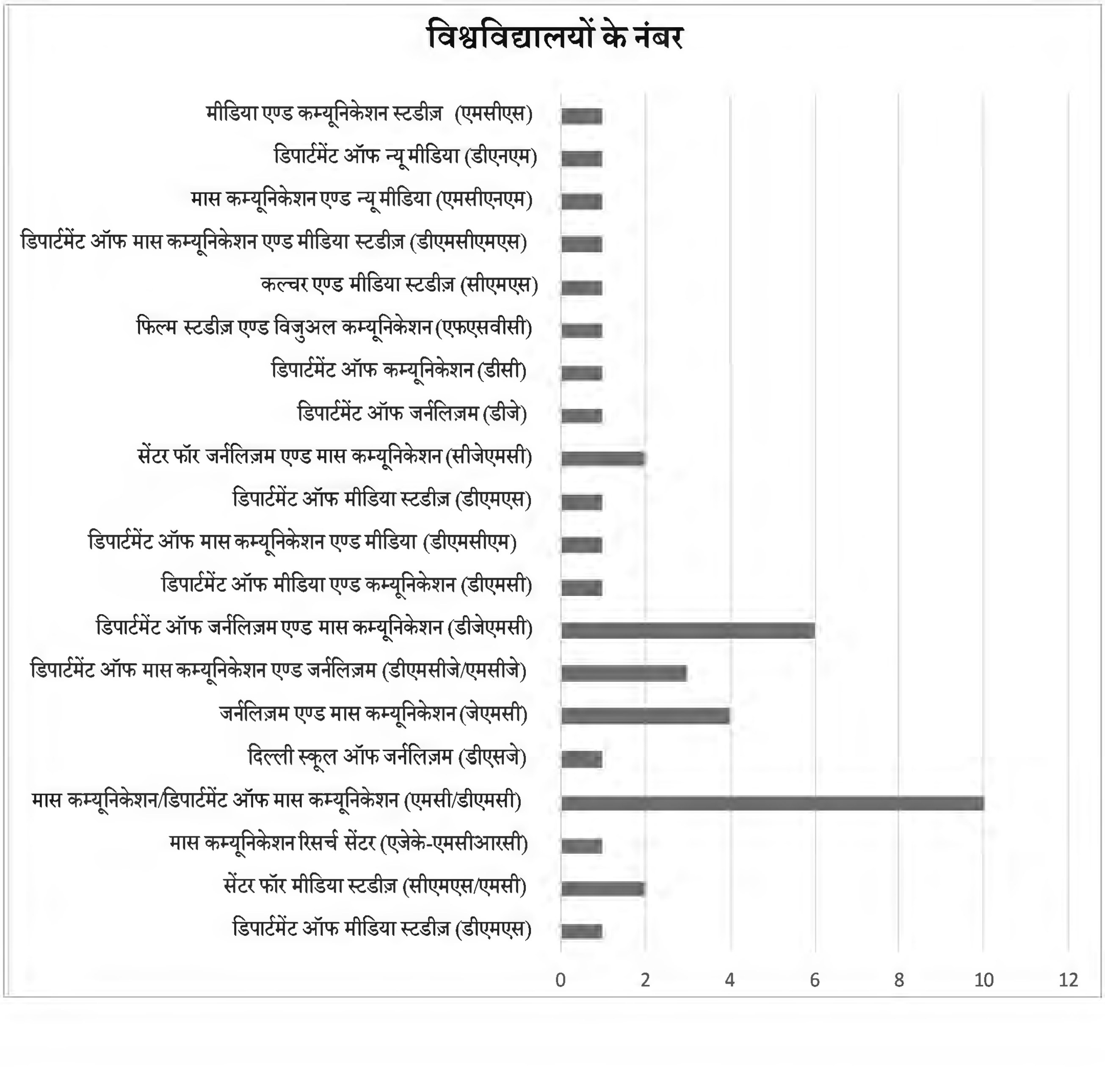

तालिका-01 में केंद्रीय विश्वविद्यालयों में संचालित पत्रकारिता विभाग की नाम पद्धति को दर्शाया गया है। सारणी का विश्लेषण करने पर देखा जा सकता है कि 10 केंद्रीय विश्वविद्यालयों में 'जनसंचार विभाग' (Department of Mass Communication) नाम से विभाग संचालित किया जा रहा है, जबकि 'पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग' (Journalism and Mass Communication) के नाम से 6 विश्वविद्यालयों में विभाग संचालित हैं। वहीं सारणी के आधार पर देखें तो 'सेंटर फॉर मीडिया', 'डिपार्टमेंट ऑफ न्यू मीडिया', 'सेंटर फॉर मीडिया स्ट्डीज', 'सेंटर फॉर जर्नलिज्म एंड मास कम्युनिकेशन', 'फिल्म स्ट्डीज एंड विजुअल कम्युनिकेशन', 'कल्चरल एंड मीडिया स्ट्डीज', 'मीडिया स्ट्डीज', 'डिपार्टमेंट ऑफ इलेक्ट्रॉनिक मीडिया एंड मास कम्युनिकेशन' जैसे विविध नामों से विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता विभाग संचालित किए जा रहे हैं। यह बहुनाम पद्धति वर्तमान में मीडिया शिक्षा में भटकाव की स्थिति पैदा कर रही है। अन्य विषयी विभाग, जैसे—गृहविज्ञान, भूविज्ञान, भौतिकशास्त्र, जीवविज्ञान, ग्रामीण प्रबंधन विभाग एवं हिंदी विभाग जैसे अनेक विभाग एक ही नाम से व्यवस्थित रूप से देखने को मिलते हैं। फिर यही व्यवस्था हमें मीडिया शिक्षा में क्यों नहीं देखने को मिलती? कारणवश समस्या यह भी हो जाती है कि छात्र मीडिया शिक्षा में आना चाहते हैं, लेकिन उन्हें यह ज्ञान ही नहीं हो पाता कि यह विभाग इस विश्वविद्यालय में किन प्रोग्राम के साथ संचालित है। उनके साथ भटकने वाली स्थिति प्रवेश प्रारंभ के प्रथम चरण से ही शुरू हो जाती है। कई बार समय पर विभाग की जानकारी नहीं होने के कारण कई विद्यार्थियों को अपने कैरियर से समझौता करना पड़ता है। वहीं कई बार आंतरिक रूप से देखा जाता है कि शिक्षण संस्थानों में अन्य विभागों की तुलना में मीडिया शिक्षा को कम आँका जाता है। इसकी वजह से विभाग को प्रशिक्षण व अन्य सुविधाओं के लिए तुलनात्मक रूप से फंडिंग कम दी जाती है। ऐसी कई खामियाँ हैं, जो मीडिया शिक्षा को अन्य विषय अनुशासन से कमजोर आँकने की ओर इशारा करती हैं। अब मीडिया शिक्षा में बाहरी आवरण को सुधारने की आवश्यकता है।

मीडिया शिक्षा के पाठ्यक्रम में बदलाव की आवश्यकता

पाठ्यक्रम में अंतर, मीडिया शिक्षा के प्रारंभ से ही प्रमुख समस्या रही है। इस विषय पर लगातार बहस भी की जाती रही है, लेकिन एक ठोस सुधार नहीं दिखाई पड़ता। आज मीडिया शिक्षा भारत के अधिकतर विश्वविद्यालयों में संचालित की जा रही है। मीडिया शिक्षा के प्रोग्राम में स्नातक (बी.एम.सी.जे.), स्नातकोत्तर (जे.एम.सी.) और डॉक्टोरल (पीएच.डी) डिग्री एवं सर्टीफिकेट कोर्स, डिप्लोमा कोर्स, सीबीसीएस, ऑनर्स, वैकल्पिक विषय आदि संचालित किए जा रहे हैं। इन विभिन्न प्रोग्रामों में प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, न्यू मीडिया, संचार, अंतरराष्ट्रीय संचार, एजेंसी, जनसंपर्क, संचार सिद्धांत, विज्ञापन, रेडियो, विकास संचार, फोटोग्राफी, फिल्म, विपणन, मीडिया प्रोडक्शन, रिपोर्टिंग आदि अनेक विषयों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। इन विषयों में कई ऐसे विषय शामिल हैं, जो सैद्धांतिक ज्ञान से परिपूर्ण हैं। वहीं कई ऐसे विषय भी हैं, जो व्यावहारिक ज्ञान से परिपूर्ण हैं। मीडिया शिक्षा जितनी सैद्धांतिक है, उतनी ही व्यावहारिक भी है। मीडिया शिक्षा की यह प्रमुख विशेषता शुरुआत से रही है, लेकिन इसके समुचित संतुलन का भारतीय मीडिया शिक्षा में अभाव रहा है।

प्रस्तुत अध्ययन में केंद्रीय विश्वविद्यालयों के मीडिया शिक्षा विभाग के स्नातक (बी.एम.सी.जे), स्नातकोत्तर (एम.जे.एम.सी) का अध्ययन किया गया, जिसमें मुख्य रूप से स्नातक (बी.एम.सी.जे) प्रोग्राम और स्नातकोत्तर (एम.जे.एम.सी) के पाठ्यक्रम में एक ही विषय समानता देखी गई। जैसे कि विकास संचार, स्नातक पाठ्यक्रम में सम्मलित विषय है, वहीं स्नातकोत्तर के पाठ्यक्रम में भी समान विकास संचार को ही पढ़ाया जा रहा है। इन दोनों में बिल्कुल समान स्तरीय पाठ्यक्रम है। इसके साथ ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा जुलाई 2015 में राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा के स्वरूप, स्तर और समानता लाने के उद्देश्य से सीबीसीएस को लागू किया गया था, जिसके अंतर्गत अनिवार्य विषय, जर्नल इलेक्टिव सब्जेक्ट, सब्जेक्ट, विषय आधारित ऐच्छिक (Discipline Specific Elective), कौशल संवर्धक (Skill Enhacement Course) पाठ्यक्रम को इसके अनुरूप विभाजित किया गया है। लेकिन कई विश्वविद्यालयों द्वारा इसे संपूर्ण रूप से लागू नहीं किया है। वहीं लागू करने वाले विभागों में पाठ्यक्रम की इकाइयों का आवंटन, पाठ्यक्रम की संख्या, विशेष पत्र और अनिवार्य पत्रों का प्रावधान आदि व्यवस्थित नहीं किए गए हैं। पाठ्यक्रम के साहित्य पुनरावलोकन से पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़, भारत में (1962) प्रोफेसर पी.पी.सिंह ने भारतीय पत्रकारिता शिक्षा के पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्चा, प्रशिक्षण के संदर्भ में वर्ष 1971 में विशेष रिपोर्ट सौंपी। इस रिपोर्ट में उन्होंने बताया कि "भारत में पत्रकारिता शिक्षा के लिए आंदोलन हाल ही में शुरू हुआ है। पेशेवर पत्रकारिता में समृद्ध परंपराओं वाले मानकीकरण की विशेष आवश्यकता है और इसके साथ ही क्षेत्रीय भाषाओं की जरूरतों को पूरा करने के लिए अधिक से अधिक पत्रकारिता विभागों की आवश्यकता है। पत्रकारिता को ऐसे प्रशिक्षण की विशेष आवश्यकता है, जो सरकार और पेशेवर संगठनों द्वारा मान्यता प्राप्त हो। पत्रकारिता शिक्षा में शिक्षण के साथ व्यावहारिक प्रशिक्षण की सुविधाओं से छात्रों को सुनिश्चित सुविधाएँ प्राप्त होनी चाहिए। छात्रों के व्यावहारिक प्रशिक्षण के लिए अनुभवी मीडियाकर्मी, वरिष्ठ व्याख्याताओं द्वारा विषय का अध्ययन करने और छात्रों को प्रशिक्षण विधियों को सीखने के अवसर दिए जाने चाहिए, ताकि पत्रकारिता का अधिक विकास हो सके। शिक्षण के स्तर में सुधार लाने के लिए प्रोफेसरों के व्याख्यान हेतु आदान-प्रदान होना चाहिए। पत्रकारिता शिक्षा में सैद्धांतिक और व्यावहारिक ज्ञान का संतुलन होना चाहिए। इससे छात्रों का मार्गदर्शन होगा। भारत में पेशेवरों की बढ़ती माँगों को पूरा करने के लिए अधिक और बेहतर पत्रकारिता विभागों-संस्थानों की विशेष आवश्यकता है" (सिंह, 1971, पृ. 171)।

मूर्ति ने पाठ्यक्रम सामग्री और पाठ्यक्रम की दुविधा: 'भारतीय पत्रकारिता शिक्षा : सिद्धांत, अभ्यास और अनुसंधान' विषय पर अध्ययन में पाया कि "भारतीय मीडिया शिक्षा में प्राथमिक तौर पर शैक्षणिक स्तर में पाठ्यक्रम पर पुनर्विचार की अति आवश्यकता है। साथ ही पत्रकारिता शिक्षा को मीडिया उद्योग से जोड़ना होगा। वर्तमान में भारतीय पत्रकारिता शिक्षा के समक्ष अलगाव की स्थिति बनी हुई है। एक ओर जहाँ मीडिया व्यावहारिक प्रशिक्षण है तो दूसरी ओर सैद्धांतिक। दोनों के मध्य संतुलन चुनौतीपूर्ण है। मीडिया का प्रशिक्षण कौशल वर्तमान माँगों को पूरा नहीं कर पा रहा है। सार्वजनिक एवं निजी तौर पर संचालित मीडिया संस्थान-विभाग पाठ्यक्रम को नया रूप देने में विफल रहे हैं। अतः देखा जा सकता है कि

मीडिया शिक्षा के पाठ्यक्रम में समय के साथ बदलाव करने व विषय पर कार्य करने की आवश्यकता है, ताकि हर मीडिया विद्यार्थी वर्तमान समय के अनुरूप अधिक ज्ञान प्राप्त कर सके (मूर्ति, 2011, पृ. 42)।

मुलर ने बैंगलोर विश्वविद्यालय में पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग के पाठ्यक्रम में विद्यार्थी की संतुष्टि का अध्ययन किया। इस अध्ययन में उपयुक्त प्रश्नावली के माध्यम से तथ्यों का संग्रहण किया गया। मीडिया शिक्षकों के कौशल की धारणा और वर्तमान पाठ्यक्रम की जाँच की गई। अध्ययन से निष्कर्ष निकाला गया कि "पत्रकारिता और जनसंचार, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में वर्गीकृत है। अतः इसमें आवश्यक नवाचार को अपना कर पाठ्यक्रम को संतुलित किया जाना चाहिए" (मुलर, 2014, पृ. 18)। जिंदल ने मीडिया शिक्षा के पाठ्यक्रम पर अध्ययन में बताया कि "वर्तमान में पत्रकारिता शिक्षा की तर्कसंगत क्षमता विकसित करने की आवश्यकता है। मीडिया के प्रवाह को समझने के लिए नई मीडिया प्रथाओं को अपनाना होगा। पत्रकारिता के संबंध में पेशेवरों व शिक्षकों को मीडिया के सभी गुणों और कौशल, नई तकनीक के साथ अपडेट होना होगा, केवल तभी इन्हें मीडिया छात्रों तक पहुँचाया जा सकता है" (जिंदल, 2020, पृ. 247)।

तालिका-2 (केंद्रीय विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा के पाठ्यक्रमों का विवरण)

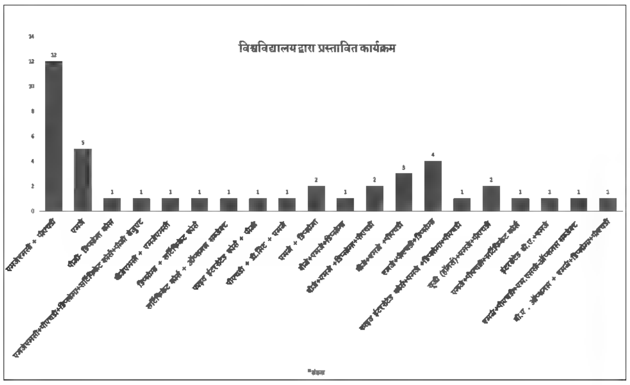

प्रस्तुत सारणी संख्या-2 में केंद्रीय विश्वविद्यालयों में संचालित कोर्स को देखा जा सकता है। इसमें स्नातकोत्तर 'जर्नलिज्म एंड मास कम्युनिकेशन' तथा पी.एच.डी कोर्स सर्वाधिक 12 विश्वविद्यालयों में संचालित हैं, जबकि स्नातक और स्नातकोत्तर तथा पी.एच.डी कोर्स के एक साथ संपूर्ण कोर्स को देखा जाए, तो बहुत कम संख्या में युनिवर्सिटियों द्वारा संपूर्ण कोर्स संचालित किए जा रहे हैं। पत्रकारिता शिक्षा के कोर्स का विश्लेषण करने पर यह भी देखा जा गया है कि कई विश्वविद्यालयों में केवल सर्टीफिकेट कोर्स, डिप्लोमा और ऑप्शनल कोर्स के रूप में इसे संचालित किया जा रहा है। वहीं, कई विश्वविद्यालयों में केवल स्नातकोत्तर स्तरीय कोर्स को ही अपनाया गया है। अतः मीडिया शिक्षा के शिक्षण कार्यक्रम में मानदंड की आवश्यकता है, ताकि विश्वविद्यालयों में डिग्री, डिप्लोमा कार्यक्रम अनिवार्य रूप से संचालित किए जाएँ और विद्यार्थी व शिक्षक दोनों के लिए अधिक अवसर प्राप्त हो सकें।

मीडिया शिक्षा का शिक्षण मॉडल व अनुशासन

मीडिया शिक्षा का शिक्षण मॉडल समय की माँग के अनुरूप बदलता रहा है। इसके साथ ही यह एक गंभीर बहस का विषय भी रहा है कि मीडिया शिक्षा का अनुशासन कैसा होना चाहिए? क्या सही शिक्षण मॉडल होना चाहिए? यह ऐतिहासिक जटिलता हमारी मीडिया शिक्षा में शुरुआत से ही रही है। यह मतभेद आज भी है कि प्रोफेशनल कोर्स, स्पेशल इलेक्टिव कोर्स, बहुविषयक, कॉम्प्रीहेंसिव, मेटाडिसिप्लेनरी आखिर किस प्रकार के अनुशासन को मीडिया शिक्षा में व्यवस्थित अनुशासन के रूप में लागू किया जाए। वहीं प्रैक्टिस बेस्ड, हैंड ऑन एक्सपिरियंस, होलिस्टिक बेस्ड आदि किस प्रकार के शिक्षण मॉडल के विकल्प को अपनाया जाए। इसके लिए समय-समय पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा एक विशिष्ट अनुशासन और शिक्षण मॉडल लागू करने के दिशा-निर्देश दिए जाते हैं, लेकिन इसे नियमबद्ध होने की आवश्यकता है।

संदीप मुप्पिडी ने अपने अध्ययन में बताया कि "पत्रकारिता शिक्षा की शिक्षण जटिलता का समाधान प्रारंभ से ही भारतीय विश्वविद्यालयों, राज्यों, केंद्रीय और निजी शैक्षणिक संस्थानों द्वारा प्रासंगिक तौर पर कोर पाठ्यक्रम के रूप में किया जा सकता था, जिसमें औद्योगिक आवश्यकताओं और अकादमिक रूप से सामाजिक विज्ञान की आवश्यकताओं का मिश्रित शिक्षण मॉडल प्रस्तुत करना चाहिए था। लेकिन यह नहीं किया जा सका। वर्तमान में मीडिया शिक्षा में नई प्रौद्योगिकी और सैद्धांतिक संचार विषय एक साथ सम्मिलित किए जा सकते हैं। इस दिशा में लगातार कार्य करने की आवश्यकता है, ताकि मीडिया शिक्षा को एक सक्षम 'फ्रंट रैंकिंग' स्वतंत्र अनुशासन का दर्जा प्राप्त हो सके। पत्रकारिता शिक्षा की इस कमी को आज भी अकादमिक अनुशासन महसूस करता है" (मुप्पिडी, 2008, पृ. 305)।

तालिका-3 (मीडिया शिक्षा के अनुशासन का मॉडल)

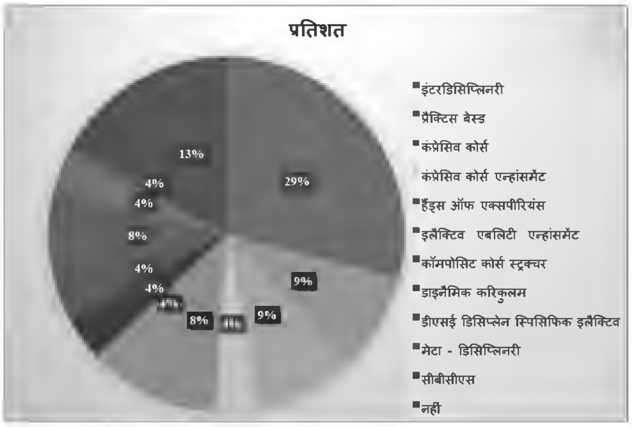

सारणी संख्या-3 से स्पष्ट है कि मीडिया शिक्षा के शैक्षणिक स्तर में किस अनुशासन मॉडल को अधिकत्तम रूप से लागू किया जा रहा है। स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है कि अंतर विषयक अनुशासन सर्वाधिक 31 प्रतिशत विश्वविद्यालयों ने अपनाया है, जबकि सीबीसीएस 4 प्रतिशत ने अपनाया है। वहीं 13 प्रतिशत ऐसे भी विश्वविद्यालय हैं, जिन्होंने अपने कोर्स और अनुशासन से संबंधित अधिक जानकारी आधिकारिक वेबसाइट पर नहीं दी है। साथ ही कॉम्प्रीहेंसिव अनुशासन को 9 प्रतिशत विश्वविद्यालयों ने अपनाया है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मीडिया शिक्षा के शैक्षणिक अनुशासन स्तर को एक नियम, स्पष्टता और उचित मानदंडों के प्रावधान के साथ लागू करने की आवश्यकता है, ताकि अनुशासन का असमान-वितरण, गुणवक्ता के मापदंड और एक समरूपता के साथ मीडिया शिक्षा के शैक्षणिक स्तर को लागू किया जा सके।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध-पत्र 'केंद्रीय विश्वविद्यालयों में मीडिया शिक्षा की वर्तमान स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन' से स्पष्ट है कि विविधता में एकता रूपी हमारे देश की पहचान को रेखांकित करती मीडिया शिक्षा संचालित की जा रही है। विविधता में एकता भले ही हमारे देश की खूबसूरत पहचान है, लेकिन पत्रकारिता शिक्षा के उज्ज्वल भविष्य के लिए इसकी खामियों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। मीडिया शिक्षा को एक ही नाम के साथ, एक ही अनुशासन और व्यवस्थित प्रकार से संचालित करने की विशेष आवश्यकता है। अध्ययन के तौर पर कहा जा सकता है कि विश्वविद्यालयों में संचालित पत्रकारिता विभागों की नाम पद्धति में अनेक विविधताएँ हैं। इन विविधताओं का परिणाम यह है कि मीडिया विद्यार्थी या जो विद्यार्थी मीडिया शिक्षा की पढ़ाई करने के इच्छुक हैं, उन्हें विभाग की जानकारी समय रहते उपलब्ध नहीं हो पाती है। इसका एक असर यह भी है कि विश्वविद्यालयों में कई बार मीडिया शिक्षकों को अन्य विभागों की तरह तवज्जो नहीं मिल पाती है तो कहीं प्रशिक्षण हेतु वित्तीय सहायता नहीं मिल पाती है। इसलिए अन्य विषयों की भाँति मीडिया शिक्षा में भी एक ही विभागीय नाम पद्धति की आवश्यकता है, जिससे मीडिया शिक्षा का स्तर अधिक बेहतर बन सके। इसके लिए व्यवस्थित शैक्षणिक दृष्टिकोण पाठ्यक्रम की संरचना मजबूत होनी चाहिए।

शिक्षण संस्थान में संचालित पाठ्यक्रम में इकाइयों का आवंटन, पाठ्यक्रम की संख्या, विशेष पत्र और अनिर्वाय पत्रों का प्रावधान, मानकपूर्ण होना चाहिए। पाठ्यक्रम नियम, मानक, मानदंडों के साथ संचालित होने चाहिए। पाठ्यक्रम का अध्ययन करने पर देखा गया कि एक ही डिग्री के लिए अलग-अलग पाठ्यक्रम संचालित हैं। विषय विशेषज्ञता में कोई ठोस व्यवस्थित नियम लागू नहीं है। पाठ्यक्रम के साथ एक साल के डिप्लोमा कोर्स एवं सर्टीफिकेट कोर्स के भी गैर-समान वितरण और अंतर इंगित हुए हैं। अध्ययन से स्पष्ट कहा जा सकता है कि मीडिया शिक्षा की शैक्षणिक संरचना, जैसे—पाठ्यक्रम में एकरूपता, इकाइयों का सही आवंटन और मीडिया शिक्षा के विभागों की विविध नाम शैली आदि प्रमुख समस्याओं को विशेष नियम एवं मानदंडों के प्रावधान के साथ सुधार करने की आवश्यकता है। आज मीडिया शिक्षकों पर एक उत्तरदायित्व है देश के लिए सशक्त, ईमानदार और काबिल पत्रकार तैयार करने की। यह तभी संभव है जब हम अपनी खामियों पर एक साथ कार्य करेंगे। आज मीडिया शिक्षा के पाठ्यक्रम को हाईग्रेड अपडेट होने की आवश्यकता है, क्योंकि आज मीडिया विद्यार्थी को अधिक वैचारिकता, चिंतन, प्रशिक्षण से परिपूर्ण और अद्यतन होने की आवश्यकता होती है। विद्यार्थी की इन आवश्यकताओं के अनुरूप पाठ्यक्रम में बदलाव होने चाहिए, ताकि मीडिया शिक्षा के कल के भविष्य को अधिक बेहतर बनाया जा सके। मीडिया शिक्षा के लिए एक परिषद् हो, जो मीडिया शिक्षा के संपूर्ण ढाँचे पर गुणवत्तापूर्ण, मानकीकरण तय कर सके और मीडिया शिक्षा को नई ऊँचाइयों तक ले जा सके।

संदर्भ

ईपन, के.ई. & ठाकुर, बी.एस. (1981). *रिपोर्ट ऑन द स्टेट्स ऑफ जर्नलिज्म एंड मास कम्युनिकेशन एजुकेशन इन इंडिया*. नई दिल्ली : यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमीशन.

कुमार, आर. (2018). *मेपिंग द लैंडस्केप ऑफ जर्नलिज्म एजुकेशन इन इंडियन लैंग्वेजेज*. नई दिल्ली : कम्युनिकेटर. इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ मास कम्युनिकेशन.

जैन, आर. (2005). *जनसंचार में करियर. पत्रकारिता एवं जनसंचार प्रशिक्षण*. जयपुर : सबलाइम पब्लिकेशन्स.

दत्ता, ए. (2020). हंड्रेड *इयर्स ऑफ मीडिया एंड जर्नलिज्म एजुकेशन इन इंडिया*. https://nenow.in/north-east-news/100-years-of-media-and-journalism-education-in-india.html से पुनःप्राप्त.

द्विवेदी, एस. (2011). *मीडिया शिक्षा: मुद्दे और आपेक्षाएं*. नई दिल्ली : यश पब्लिकेशन.

देसाई, के. एम. (2017). *जर्नलिज्म एजुकेशन इन इंडिया: मेज ओर मोजेइक*. यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास एट ऑस्टिन : ग्लोबल जर्नलिज्म एजुकेशन. https://www.academia.edu/33237553/Journalism_Education_in_India_Maze_or_Mosaic_Chapter_5_Page_136_113_In_Global_Journalism_Education_In_the_21st_Century_Challenges_and_Innovations_Edited_by_Robyn_Goodman_and_Elanie_Steyn से पुनःप्राप्त.

नंदा, व., सहाय, यू. (2009). *मीडिया शिक्षा में क्राफ्ट बनाम कंटेन्ट*. सामयिक प्रकाशन : न्यू दिल्ली.

नेहा, जे. (2020). द ड्रिफ्ट इन जर्नलिज्म एजुकेशन इन इंडिया विज-अ-विज न्यू मीडिया : यूज ऑफ न्यू मीडिया बाय एडमिनिस्ट्रेटर्स /एजुकेटर्स इन जर्नलिज्म स्कूल्स. एशिया पेसिफिक मीडिया एजुकेटर, सेज पब्लिकेशन.

मूर्ति, सी.एस.एच.एन. (2011). डाइलेमा ऑफ कोर्स कंटेंट एंड करिकुलम इन इंडियन जर्नलिज्म एजुकेशन : थ्योरी प्रैक्टिस एंड रिसर्च. एशिया पेसिफिक मीडिया एजुकेटर, 21, 2011. https://ro.uow.edu.au/cgi/viewcontent.cgi?article=1337&context=apme&httpsredir=1&referer=से पुनःप्राप्त

मुलर, पी. (2014). स्टेटस ऑफ लर्नर्स सैटिस्फैक्शन इन जर्नलिज्म एंड मीडिया एजुकेशन इन चेंजिंग टाइम: ए स्टडी ऑन द यूजी एंड पीजी स्टूडेंट्स ऑफ द जर्नलिज्म एंड मास कम्युनिकेशन विद रिगार्ड टू बैंगलोर यूनिवर्सिटी सिलेबस. https://www.academia.edu/8604117/Status_of_Learner_s_Satisfaction_in_Journalism_and_Media_Education_in_Changing_Times_A_study_on_the_UG_and_PG_students_of_the_Journalism_and_Mass_Communication_with_regard_to_Bangalore_University_Syllabus से पुनःप्राप्त

सिंह, पी. पी. (1971). जर्नलिज्म एजुकेशन इन इंडिया : बैकग्राउंड पेपर्स कंपाइल्ड फॉर टीचर्स. सेमीनार ऑन जर्नलिज्म एजुकेशन इन इंडिया : बेकग्राउंड एंड स्टेट्स इन सेवन एशियन एरियाज, 23–32, द ईस्ट–वेस्ट कम्युनिकेशन सेंटर, होनोलुलु हवई. https://files.eric.ed.gov/fulltext/ED117729.pdf से पुनःप्राप्त.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 44-49, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

भारत की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियाँ एवं जनसंचार: एक अवलोकन

यासिर अरफात[1] और डॉ. अमरेंद्र कुमार[2]

सारांश

किसी भी देश की प्रगति में जनस्वास्थ्य की अहम भूमिका होती है। जनसामान्य का खराब स्वास्थ्य देश की अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल असर डालता है। इसलिए हर सरकार आम लोगों के बेहतर स्वास्थ्य की दिशा में निरंतर कदम उठाती है। स्वास्थ्य स्थिति का आकलन और स्वास्थ्य संरचना विकसित करने से लेकर स्वास्थ्य नीति बनाने तक का काम सरकारें करती हैं। भारत सरकार भी आजादी के बाद से ही लगातार स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने की दिशा में प्रयासरत है। विगत 75 वर्षों में स्वास्थ्य सुधार के लिए कई समितियाँ गठित की गईं। राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न स्वास्थ्य योजनाओं को क्रियान्वित किया गया और समय-समय पर स्वास्थ्य नीतियों को मूर्त रूप दिया गया। भारत सरकार की ओर से अब तक तीन स्वास्थ्य नीतियाँ लागू की गई हैं। पहली स्वास्थ्य नीति वर्ष 1983 में, दूसरी वर्ष 2002 में और तीसरी वर्ष 2017 में लाई गई। तीनों नीतियों के अध्ययन से पता चलता है कि उनकी प्राथमिकताएँ अपने समय की स्वास्थ्य जरूरतों को पूरा करना थीं। सभी पहलुओं का गहन परीक्षण करने के बाद बेहतर स्वास्थ्य के लिए स्वास्थ्य के मूलभूत ढाँचे को खड़ा करना भी उनका लक्ष्य था। इन नीतियों की सफलता के लिए आवश्यक तत्त्व जनसंचार को उस अनुपात में स्थान नहीं दिया गया, जितना उसे मिलना चाहिए था। वहीं वर्ष 2014 के बाद राष्ट्रीय स्तर पर 'लांच' होने वाली राष्ट्रीय योजनाओं में जनसंचार का व्यापक प्रयोग किया गया। लेकिन प्रयोग के स्तर पर कई कठिनाइयों व जनमानस के बीच 'हेजिटेंसी' का भी सामना करना पड़ा। प्रस्तुत अध्ययन में तीनों स्वास्थ्य नीतियों की विषयवस्तु का विश्लेषण जनसंचार के प्रयोग की दृष्टि से किया गया है।

संकेत शब्द : स्वास्थ्य संचार, राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति-1983, राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति-2002, राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति-2017

प्रस्तावना

स्वास्थ्य मानव जीवन का महत्त्वपूर्ण आयाम है। गुणवत्तायुक्त स्वास्थ्य सेवा तक लोगों की पहुँच सुनिश्चित करना हर सरकार की जिम्मेदारी है। इसे प्रदान करने के लिए सरकारें अपनी क्षमता अनुसार कार्य करती हैं। भारत सरकार ने भी पिछले 75 वर्षों में स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता और विस्तार के लिए कई स्तर पर योजनाओं और स्वास्थ्य नीतियों के कार्यान्वयन से जुड़े कदम उठाए हैं। हालाँकि, विशाल आबादी और क्षेत्रीय विविधताओं के कारण सरकार को कई तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है (नेशनल हेल्थ प्रोफाइल-2021, 2022; बाजपई, 2018)। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष के स्टेट ऑफ वर्ल्ड पॉपुलेशन रिपोर्ट, 2023 के अनुसार भारत वर्ष 2023 के मध्य तक विश्व की सबसे बड़ी जनसंख्या वाला देश हो जाएगा। इस रिपोर्ट के अनुसार चीन की 1.4257 मिलियन के मुकाबले भारत की जनसंख्या 1.4286 मिलियन होने का अनुमान है (रॉयटर्स, 2023)। इतनी बड़ी संख्या तक स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराना जटिल कार्य है। हालाँकि सरकार ने पिछले वर्षों में स्वास्थ्य सेवा में महत्त्वपूर्ण प्रगति की है, लेकिन स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच, गुणवत्ता और सामर्थ्य में अभी भी नवाचार की आवश्यकता है। हर व्यक्ति तक स्वास्थ्य संरचना को पहुँचाना आसान नहीं है, लेकिन जनसंचार के क्षेत्र में हुई प्रगति का उपयोग कर आर्थिक रूप से वंचित और हाशिये की आबादी तक आसानी से पहुँचा जा सकता है (बनर्जी, 1983)।

जनसंचार माध्यमों का उचित उपयोग कर कई स्वास्थ्य समस्याओं से बहुत आसानी से निपटा जा सकता है। नेशनल हेल्थ प्रोफाइल 2021 के अनुसार मातृ मृत्यु अनुपात (एमएमआर) 2015-2017 में प्रति 1,00,000 जीवित जन्मों पर 122 से घटकर 2016-2018 में 113 हो गया। इसी तरह, शिशु मृत्यु दर (आईएमआर) 2015 में प्रति 1,000 जीवित जन्मों पर 41 से घटकर 2019 में 32 हो गई। इन आँकड़ों को और कम किया जा सकता था, अगर लक्ष्य समूहों तक समय पर मूलभूत जानकारी पहुँचा दी जाती। स्टडी में इस बात का साफ संकेत है कि संसाधन के अभाव में ही नहीं, बल्कि जानकारी के अभाव में भी माँ और परिवार के सदस्य अपेक्षित स्वास्थ्य व्यवहार नहीं करते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की नॉन कम्यूनिकेबल डिजिज कंट्री प्रोफाइल (2018) रिपोर्ट के अनुसार, भारत में होने वाली कुल मौतों में गैर संचारी रोग (एनसीडी) का हिस्सा 63% है, जिसमें कैंसर, मधुमेह, हृदय रोग, स्ट्रोक, क्रोनिक लंग डिजीज या क्रोनिक ऑब्सट्रक्टिव पल्मोनरी डिजीज (सीओपीडी) से होने वाली मौतें शामिल हैं। समय पर उचित जानकारी इन बीमारियों से निजात में क्रांतिकारी परिणाम ला सकती है। सीओपीडी को भारत में दमा के नाम से जानते हैं और अधिकांश लोगों का मानना है कि यह लाइलाज है। हालाँकि, समय पर इलाज और बचाव के माध्यम से इस पर पूर्ण रूप से काबू पाया जा सकता है और लोग स्वस्थ जीवन जी सकते हैं (कल्डेरॉन व अन्य, 2004)।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में तकनीक का उपयोग और जनसंचार के माध्यम से इस तरह की कई स्वास्थ्य समस्याओं का निवारण हो सकता है। स्वास्थ्य समस्याओं के निदान के लिए सरकारें प्रयासरत हैं। सरकार की प्राथमिकता और सक्रियता स्वास्थ्य से जुड़े प्रोग्राम और पॉलिसी से पता चलती है। आजादी के बाद भारत सरकार ने कई स्वास्थ्य योजनाओं को लागू किया है और दर्जनों स्वास्थ्य समितियाँ मसलन—मुदालियर कमेटी, चड्ढा कमेटी, मुखर्जी कमेटी इत्यादि का गठन किया गया (आईएपीएमएस, 2013)। वहीं अब तक तीन स्वास्थ्य नीतियों को राष्ट्रीय स्तर पर अमल

[1]शोधार्थी, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, ईमेल : arfatyasir5@gmail.com
[2]सहायक आचार्य, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, ईमेल : akgore@gmail.comigntu.ac.in

में लाया गया है। पहली स्वास्थ्य नीति वर्ष 1983 में, दूसरी 2002 तथा वहीं तीसरी 2017 में लागू की गई (दूबे, 2021)। इन पॉलिसी डॉक्यूमेंट में जनस्वास्थ्य को विस्तृत तौर पर परिभाषित करने की कोशिश की गई है व जनस्वास्थ्य से जुड़ी समस्याओं पर भी व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया है। शोधपत्र में, प्रस्तुत राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियों में जनसंचार के प्रयोग के आयाम को सामने लाने का प्रयास किया गया है, क्योंकि पब्लिक गवर्नेंस में जनसंचार की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है।

इन दिनों जनसंचार का उपयोग व्यापक तौर पर किया जा रहा है। जनसंचार की महत्ता को देखते हुए सरकार भी अपनी कार्यप्रणाली में जनसंचार को शामिल करने पर जोर दे रही है। खासकर कोविड काल में जिस प्रकार जनसंचार के विविध माध्यमों की उपादेयता देखने को मिली, इससे स्पष्ट है कि आने वाले समय में सरकार और सरकारी कार्यप्रणाली में इसका उपयोग बढ़ेगा। इस अध्ययन में भारत सरकार की पूर्व में लागू स्वास्थ्य नीति में जनसंचार के तत्त्वों का विश्लेषण किया गया है।

शोध उद्देश्य

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य यह जानने का प्रयास है कि भारत सरकार की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियों को आम जनता तक पहुँचाने के लिए जनसंचार के प्रयोग को किस हद तक समाहित किया गया है। अब तक तीन स्वास्थ्य नीतियों में जन जागरूकता के लिए जनसंचार के किस स्वरूप का उपयोग किया गया है? साथ ही जनसंचार की स्वास्थ्य जागरूकता में क्या व्यापक भूमिका हो सकती है, इस दिशा में भी एक नया दृष्टिकोण रखने की कोशिश है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए स्वास्थ्य से संबंधित पॉलिसी डॉक्यूमेंट का विश्लेषण किया गया है, जिसमें अब तक भारत सरकार द्वारा लागू तीन राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियाँ (स्वास्थ्य नीति-1983, स्वास्थ्य नीति-2002 तथा स्वास्थ्य नीति-2017) शामिल हैं। इस नीतियों में स्वास्थ्य से जुड़े हुए आयामों के साथ जनसंचार पहलुओं का विशेष रूप से अध्ययन किया गया है। इसके साथ ही स्वास्थ्य सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए समय-समय पर गठित की गई विभिन्न स्वास्थ्य कमेटियों की रिपोर्ट का भी अध्ययन किया गया है।

परिणाम एवं विश्लेषण

भारत सरकार की स्वास्थ्य नीतियों से पता चलता है कि देश की स्वास्थ्य व्यवस्था, संरचना और स्वास्थ्य सुविधाओं को लेकर क्या ब्लू प्रिंट है। नेशनल हेल्थ पॉलिसी (एनएचपी) यानी राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति स्वास्थ्य क्षेत्र में भारत सरकार के नजरियों और प्राथमिकताओं को स्पष्ट रूप से रेखांकित करती है। आजादी के बाद से अब तक कुल तीन राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियाँ (एनएचपी) अमल में लाई गई हैं। पहली और दूसरी स्वास्थ्य पॉलिसी भारत की स्वास्थ्य सेवाओं की बेहतरी एवं जनसामान्य की जरूरतों को पूरा करने की दिशा में सरकार की दृष्टि स्पष्ट करती हैं, वहीं वर्ष 2017 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति स्वास्थ्य को व्यापक स्वरूप में देखने और विस्तार देने की दिशा में महत्त्वपूर्ण पड़ाव है। स्वास्थ्य नीति-2017 में स्वास्थ्य से जुड़े संभावित सभी पहुलओं पर बल देने की कवायद की गई है। व्यक्ति के स्वास्थ्य को पाँच प्राथमिकताओं के साथ देखने की पहल की गई है। इससे पहले जहाँ केवल 'क्यूरेटिव अप्रोच' को प्राथमिकता दी जाती थी और स्वास्थ्य से जुड़ी संरचनाओं को विकसित करने पर बल था, वहीं वर्तमान परिस्थितियों में स्वास्थ्य संरचनाओं पर बढ़ते भार और जरूरतों को देखते हुए 'होलिस्टिक अप्रोच' अपनाने की बात की गई है (तालिका-1)।

तालिका-1: राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियाँ (नेशनल हेल्थ पॉलिसीज) और उनके प्रमुख उद्देश्य

नेशनल हेल्थ पॉलिसी (एनएचपी)	प्राथमिकता 01	प्राथमिकता 02	प्राथमिकता 03	प्राथमिकता 04	प्राथमिकता 05
एनएचपी-1982	प्रिवेंटिव (निवारक)	प्रमोटिव (प्रोत्साहक)	रिहैबिलिटेटिव (पुनर्वास देखभाल)	-	-
एनएचपी-2002	प्रिवेंटिव (निवारक)	क्यूरेटिव (उपचारात्मक)	प्रमोटिव (प्रोत्साहक)	ट्रोमा केयर (आघात देखभाल)	-
एनएचपी-2017	प्रिवेंटिव (निवारक)	प्रमोटिव (प्रोत्साहक)	क्यूरेटिव (उपचारात्मक)	पैलिएटिव केयर (प्रशामक देखभाल)	रिहैबिलिटेटिव (पुनर्वास देखभाल)

पहली स्वास्थ्य नीति-1982 के अध्ययन से ज्ञात होता है कि स्वास्थ्य का महत्त्वपूर्ण बिंदु उपचार था और उपचार के लिए संसाधन जुटाना व स्वास्थ्य संरचना विकसित करने की सरकार के सामने खास चुनौती थी। इससे पहले कई समितियाँ भी गठित की गई थीं। लगभग सभी समितियों ने स्वास्थ्य सुविधाओं को कमोबेश क्लीनिकल आयाम तक सीमित रखा और देशभर में पीएचसी, सीएचसी और जिला अस्पताल को देशभर में स्थापित करने की प्राथमिकता दी। साथ ही देश में स्वास्थ्य सेवा को बेहतर करने में आड़े आ रही फंड के साथ मौजूदा स्वास्थ्य संरचनाओं की खराब स्थिति को लेकर भी चिंता व्यक्त की। वहीं स्वास्थ्य से जुड़े विविध पहलुओं को समझने और सामने लाने के लिए समय-समय पर विभिन्न समितियाँ गठित होती रहीं, लेकिन उन सबका फोकस मूलभूत स्वास्थ्य सुविधाओं के इर्द-गिर्द ही घूमता रहा। स्वास्थ्य सेवाओं को आमजन तक पहुँचाने में जनसंचार का प्रभावी रूप से इस्तेमाल करने की कोशिश कम दिखती है। तालिका-2 में महत्त्वपूर्ण समितियों के उद्देश्य और संचार से जुड़े प्रमुख तत्त्वों का विश्लेषण दर्शाया गया है।

तालिका-2 : स्वास्थ्य से जुड़ी प्रमुख समितियाँ और संचार संबंधित प्रमुख सिफारिशें

क्र. स.	वर्ष	समिति का नाम	उद्देश्य	संचार से जुड़ी प्रमुख सिफारिशें
1.	1943	भोरे समिति	स्वास्थ्य की स्थिति का आकलन करना और स्वास्थ्य सेवाओं की संरचना विकसित करना	सामान्य शिक्षा तथा स्वास्थ्य शिक्षा के द्वारा स्वास्थ्य जागरूकता।
2.	1959	मुदालियर समिति	वर्तमान स्वास्थ्य की स्थिति का सर्वेक्षण करना तथा भविष्य के लिए एक बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं की सिफारिश करना।	रेडियो के अतिरिक्त फिल्म, पोस्टर, पैंपलेट, चार्ट, फलालैन-ग्राफ, नाटक, कठपुतली शो आदि का सभी क्षेत्रीय भाषाओं में उपयोग करने की तत्काल आवश्यकता पर बल दिया।
3.	1963	चड्ढा कमेटी	राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम के व्यवस्थाओं पर सलाह तथा परिवार नियोजन की स्थिति का आकलन करना	स्वास्थ्य शिक्षा विधि के प्रयोग करने पर जोर दिया, परंतु रिपोर्ट में यह कही भी जिक्र नहीं किया गया कि वह कौन कौन-सी विधि होगी।
4.	1965	मुखर्जी कमेटी	परिवार नियोजन की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना	शैक्षिक और प्रचार प्रयासों को मजबूत करने की आवश्यकता पर जोर दिया। मुख्य संचार माध्यम सहित विशेष मीडिया के उपयोग पर भी जोर दिया।
5.	1966	मुखर्जी कमेटी	धन की कमी के कारण प्रमुख स्वास्थ्य कार्यक्रमों का सही ढंग से लागू न होने की समस्याओं का समाधान ।	स्वास्थ्य शिक्षा पर जोर दिया गया। जनसंचार का विशेष उल्लेख नहीं।
6.	1967	जंगलवाला कमेटी	स्वास्थ्य सेवाओं का एकीकरण	स्वास्थ्य शिक्षा की गति पर संतोष व्यक्त किया और इसकी महत्ता को स्वीकार किया गया। जनसंचार की चर्चा नहीं की गई।
7.	1973	करतार सिंह कमेटी	स्वास्थ्य और परिवार नियोजन के लिए बहुउद्देश्य स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं से संबंधित	जनसंख्या तक स्वास्थ्य शिक्षा को पहुँचाने पर जोर दिया गया। इसके लिए स्वास्थ्य सेंटर पर आने वाले लोगों को शिक्षण सामग्री वितरित करने का सुझाव।
8.	1975	श्रीवास्तव कमेटी	मेडिकल एजुकेशन तथा सपोर्ट मैनपॉवर से संबंधित	स्वास्थ्य के लिए शैक्षणिक मापदंड तैयार करना।
9.	1986	बजाज कमेटी	हेल्थ मैनपॉवर प्लानिंग, प्रोडक्शन एंड मैनेजमेंट से संबंधित	स्वास्थ्य के लिए शैक्षणिक मापदंड तैयार करना।
10.	1992	कृष्णन कमेटी	पिछली स्वास्थ्य समिति के रिपोर्ट की उपलब्धियों और प्रगति की समीक्षा करना।	आउटरिच सेवाओं के रूप में जनसंख्या शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा पर जोर दिया।

स्वास्थ्य समितियों के गठन के उद्देश्य और सिफारिशों के अध्ययन से साफ है कि भारत की स्वास्थ्य संरचना सन् 1943 में आई भोरे कमेटी पर आधारित है। इसके अनुसार थ्री-टायर स्वास्थ्य संरचना की व्यवस्था की गई थी—प्राइमरी, सेकेंडरी तथा टर्सीअरी। प्राथमिक हेल्थ सेंटर का आशय यह था कि स्थानीय स्तर पर लोग अपनी बीमारी का निदान पीएचसी में जाकर करा सकें और और विशेष स्वास्थ्य की जरूरतें जिला स्तर पर पूरी की जानी थी। वहीं विशेष बीमारी का इलाज रेफरल अस्पताल की व्यवस्था राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर की गई थी। बाद की कमेटियों ने भी इस मूल ढाँचे को निरंतर जारी रखने की सिफारिश की है। इस कड़ी में बाद में सीएचसी भी शामिल कर दिया गया। जनसंचार के प्रयोग को लेकर किसी विशेष तरह का अलग प्रावधान नहीं था, बल्कि स्वास्थ्य शिक्षा के लिए सामान्य शिक्षा पर जोर दिया गया था।

स्वास्थ्य सेवा में जनसंचार की भूमिका और उपयोगिता को सर्वप्रथम मुदालियर कमेटी ने प्रभावी तरीके से रेखांकित किया। भोरे कमेटी के बाद स्वास्थ्य के विविध पहलुओं को लेकर 1983 तक गठित अन्य कमेटियों में मुदालियर को छोड़कर अन्य में प्रभावी रूप से जनसंचार के प्रयोग पर कम बल दिया गया। डॉ. ए. एल. मुदालियर की अध्यक्षता में 'स्वास्थ्य सर्वेक्षण और योजना समिति' के रूप में जानी जाने वाली समिति को स्वास्थ्य क्षेत्र की स्थिति का आकलन करने के लिए नियुक्त किया गया था। कमेटी ने देश में प्राइमरी हेल्थ सेंटर (पीएचसी) की स्थिति को संतोषजनक नहीं माना और सुझाव दिया कि नए पीएचसी शुरू करने के स्थान पर पूर्व में मौजूद पीएचसी की स्थिति के सुधार पर अधिक ध्यान देना चाहिए। इस कमेटी ने परिवार नियोजन के संदर्भ में स्वीकार किया कि परिवार नियोजन की समस्या को लगातार जनता के सामने रखने के लिए केंद्रीय और राज्य स्वास्थ्य विभागों द्वारा रेडियो सहित सभी उपलब्ध मीडिया का भरपूर उपयोग नहीं किया गया है। कमेटी ने तत्कालीन जनसंवाद के क्षेत्र में

उपयोग हो रहे माध्यमों का भरपूर तरीकों से उपयोग करने का पक्ष मजबूती से रखा। रेडियो के अतिरिक्त फिल्म, पोस्टर, पैंफलेट, चार्ट, फलालैन-ग्राफ, नाटक, कठपुतली शो आदि का सभी क्षेत्रीय भाषाओं में उपयोग करने की तत्काल आवश्यकता पर जोर दिया।

वहीं 1982 में आई पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति भी स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर करने, स्वास्थ्य संरचना विकसित करने और बेहतर मापदंड के अनुसार देश में स्वास्थ्य सुविधाएँ प्रदान करने की दिशा में पहल तक ही सीमित रही। इस पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति ने प्रिवेंटिव, प्रमोटिव तथा रिहैबिलेटेटिव केयर पर ध्यान देने की वकालत की। हालाँकि इसके बाद देश की स्वास्थ्य संरचना में गुणात्मक वृद्धि देखने को मिली। वहीं बढ़ती जनसंख्या और आमजन के स्वास्थ्य सेवाओं पर अत्यधिक भार के कारण स्वास्थ्य सुविधाओं का प्रदर्शन संतोषजनक नहीं साबित हुआ। लोगों की स्वास्थ्य जरूरतें और सरंचनात्मक भार को कम करने की चिंता वर्ष 2002 की दूसरी स्वास्थ्य नीति में स्पष्ट दिखती है। जन स्वास्थ्य अब सिर्फ सरकार की जिम्मेदारी नहीं रह गई थी। 1991 के निजीकरण और वैश्विकरण की प्रक्रिया का भाग स्वास्थ्य सेवाओं में भी देखने को मिलता है। 2002 की स्वास्थ्य नीति ने पहले छोटे स्तर पर काम कर रहे प्राइवेट सेक्टर को स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध कराने की दिशा में आगे आने के लिए वैकल्पिक अवसर प्रदान किया।

इस पॉलिसी में स्वास्थ्य सेवा में तकनीक के प्रयोग पर भी बल दिया गया, लेकिन जनसंचार के स्वास्थ्य सुविधाओं को सुलभ बनाने एवं स्वास्थ्य जागरूकता में प्रयोग को लेकर मुखर स्थिति नहीं थी। हालाँकि, इस दौरान टेलीमेडिसिन और ट्रेडिशनल नॉलेज डिजिटल लाइब्रेरी (टीकेडीएल) जैसे नवाचार भारत की स्वास्थ्य सेवाओं के वैश्विक स्तर की प्रतिस्पर्धा में शामिल होने की दिशा में महत्त्वपूर्ण पहल है (राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति-2002)। साथ ही जो सबसे बड़ा परिवर्तन देखने को मिलता है, वह है—स्वास्थ्य की दृष्टि से ग्रामीण और शहरी खाई को पाटने का। देश के कई हिस्सों में एम्स स्थापित करने की पहल को स्वास्थ्य के क्षेत्र के विकेंद्रीकरण की दिशा में अहम माना जा सकता है, क्योंकि बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं को सभी लोगों तक पहुँचने में यह अहम पड़ाव बना। डायग्नोस्टिक क्षेत्र में भी पॉलिसी डॉक्यूमेंट ने निर्णायक भूमिका अदा की है। पिछले दो दशकों में स्वास्थ्य क्षेत्र में डायग्नोसिस और इलाज में सफलता मिली है। उसके पीछे 'डायग्नोस्टिक टूल्स' एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। साइंटिफिक डायग्नोसिस की वजह से बीमारियों के इलाज की सफलता दर और शल्य चिकित्सा में अप्रत्याशित वृद्धि दर्ज की गई। दूसरी स्वास्थ्य नीति की वजह से कुपोषण सहित अन्य स्थानीय बीमारियों पर काबू पाया गया। वहीं ट्रॉमा सेंटर की स्थापना ने भी दुर्घटनाओं के कारण से होने नुकसान को कम किया (राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति-2002)।

तीसरी स्वास्थ्य नीति-2017 ने स्वास्थ्य को समग्रता के तौर पर देखने की कोशिश की। यह जनस्वास्थ्य से जुड़े सभी पहलुओं को सामने लाकर एक बड़ा चित्र प्रस्तुत करती है। पहले की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियाँ और योजनाएँ चिकित्सा केंद्रित थीं, वहीं अब इसे व्यापक रूप देकर हेल्थ वेलनेस के नजरिये से देखा जाने लगा है। इस पॉलिसी के तहत पूर्व में लागू की गई योजनाओं से हुए लाभ का संदर्भ लेते हुए स्वास्थ्य क्षेत्र में बदलाव की रूपरेखा पेश की गई। वैसे तो जनसंचार माध्यम के सीधे प्रयोग और उपयोग की बात यहाँ भी कम है, लेकिन प्रमोटिव हेल्थ केयर में जनसंचार के प्रयोग को बढ़ावा देने के भरपूर संकेत मिलते हैं। साथ ही डिजिटल तकनीक का इस्तेमाल कर पूरे जनस्वास्थ्य परिदृश्य को बदलने की भी पहल की गई है। एम-हेल्थ व डिजिटल हेल्थ के प्रयोग को बढ़ावा देने की दिशा में स्पष्ट रूपरेखा तैयार करने बात की गई है। तकनीक आधारित जनस्वास्थ्य संरचना विकसित करने की पहल का लाभ कोविड-19 के दौरान आम लोगों को मिला। इस दौरान कई तरह के नए डिजिटल प्लेटफार्म सरकार की ओर से शुरू किए गए (नेशनल हेल्थ ब्लूप्रिंट, 2019; बाजपई, 2020)।

आरोग्य सेतु का उपयोग आम लोगों के बीच जिस तेजी से प्रचलन में आया, उसका लाभ स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े सभी हितधारकों को मिला। अफवाहों को रोकने, लोगों में वैक्सीन हेजीटेंसी को खत्म करने से लेकर वैक्सीन लगवाने तक की यात्रा, इस एप के अभाव में संभव नहीं थी (कोडाली, 2020)। फिलहाल, स्वास्थ्य से जुड़े सैकड़ों सरकारी और गैर-सरकारी ऐप उपलब्ध हैं। हर दिन नए प्रयोग आम लोगों को स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराने के लिए किए जा रहे हैं।

तीसरी स्वास्थ्य नीति में सूचना-प्रसार पर जोर दिया जा रहा है। यही कारण है कि जनस्वास्थ्य के क्षेत्र में जनसंचार के सभी पहलुओं के उपयोग की संभावनाएँ तलाशी जा रही हैं। स्वास्थ्य आधारित वेबसाइट तथा एप की सहायता से जन सामान्य को स्वास्थ्य सुविधाएँ पहुँचाने की दिशा में भी सरकार प्रयत्नशील है। ई-संजीवनी, आयुष्मान भारत जैसे देशव्यापी प्लेटफार्म स्वास्थ्य सुविधाओं के उपयोग एवं उपभोग को सरल और सुलभ बनाने में अहम कड़ी साबित हो रहे हैं (अंबेकर व अन्य, 2021)। वहीं, गहन देखभाल (क्रिटिकल केयर) के लिए अस्पतालों में बेड संख्या की लाइव जानकारी, सूचना तंत्र की उपयोगिता के प्रयोग से संभव हुई है। सरकार की ओर से रियल टाइम इनफोर्मेशन एकत्रित करने और साझा करने की कवायद निश्चित तौर पर आगे के जनस्वास्थ्य के क्षेत्र में सुखद अनुभव की ओर इशारा करती है।

निष्कर्ष

वर्तमान स्वास्थ्य नीतियों के विश्लेषण से साफ है कि जनस्वास्थ्य को बेहतर करने के लिए एवं आम लोगों तक बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ पहुँचाने के लिए सरकार की ओर से निरंतर प्रयास जारी है। हालाँकि, स्वास्थ्य नीतियों में अधिक महत्त्व स्वास्थ्य संरचना विकसित करने एवं उपचारी चिकित्सा पर दिया जाता रहा है। स्वास्थ्य के विभिन्न पहलुओं को सामने लाने और उस पर कार्य करने की दिशा में सरकार की गंभीरता इस बात से दिखती है कि स्वास्थ्य नीतियों के अलावा समय-समय पर रोग विशिष्ट योजनाएँ लागू की गई हैं (आईएपीएसएम, 2013)। पिछले वर्षों में एमएमआर, टीएफआर, आईएमआर में तेजी से कमी आई है। भारत ने मातृ और शिशु मृत्यु दर को कम करने में प्रगति की है। लेकिन इन सुधारों के बावजूद क्षेत्रीय विषमताओं को दूर करने और देश भर में गुणवत्तापूर्ण मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं तक समान पहुँच सुनिश्चित करने की चुनौतियाँ बनी हुई हैं (नेशनल हेल्थ प्रोफाइन 2021, 2022)। इन चुनौतियों का समाधान करने और सार्वभौमिक स्वास्थ्य कवरेज की दिशा में काम करने के लिए भारत सरकार ने स्वास्थ्य नीति 2017 में उल्लेखनीय पहल की है, जिसमें आयुष्मान भारत—प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना (एबी-पीएमजेएवाई) है, जिसका उद्देश्य आबादी के आर्थिक रूप से

कमजोर वर्गों को स्वास्थ्य कवरेज प्रदान करना है (राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्राधिकरण, 2020)। वहीं गैर-संचारी रोग के बोझ को कम करने के लिए विभिन्न बीमारी निवारक उपायों के साथ ही स्वस्थ जीवनशैली को बढ़ावा देने और आवश्यक दवाओं की उपलब्धता और सामर्थ्य में सुधार करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

रोग विशेष योजनाओं में जहाँ जनसंचार का भरपूर उपयोग किया जा रहा है, वहीं स्वास्थ्य नीतियों में जनसंचार की भूमिका एवं प्रयोग को प्रमुखता से नहीं उठाया गया है। शायद इसका कारण यह है कि प्रमोशनल चिकित्सा के तत्त्व के तौर पर संचार को रखा गया है या पॉलिसी निर्माण में अधिकारियों की भूमिका अधिक होती है, जिनका फोकस संरचना निर्माण एवं उसे सुचारु रूप से लागू करने पर होती है। हालाँकि पिछले वर्षों में प्रशासनिक व्यवस्था में भी कई प्रयोग हुए हैं और अब प्रशासनिक भागीदारी की भी बात हो रही है। इसका परिणाम अब हर विभाग के पब्लिक आउटरीच में भी दिखाई दे रहा है। पब्लिक गवर्नेंस में जनसंचार को भले ही अब तक प्रभावी हिस्सा नहीं माना गया हो, लेकिन इसकी महत्ता को अब रेखांकित किया जा रहा है (चक्रबर्ती व अन्य, 2016)। 2017 स्वास्थ्य नीति के तहत सूचना प्रबंधन और प्रसार को विशेष स्थान दिया जाना इस बात का स्पष्ट संकेत है। जनसंचार पर यथोचित महत्त्व नहीं दिया जाना, हेल्थ सिस्टम पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा है। वर्तमान में आवश्यकता है कि इस स्थिति से बाहर आया जाए। लोगों में अब स्वास्थ्य के प्रति नजरिया बदला है, वहीं सरकार भी जनस्वास्थ्य और जनकल्याण को लेकर चिंतित है, लेकिन इसकी सफलता लोगों की भागीदारी पर निर्भर है। भागीदारी बढ़ाने के लिए जरूरी है कि जनसंचार के सभी उपकरणों को बखूबी उपयोग किया जाए। सरकार का फोकस उपचार की जगह हेल्थ वेलनेस है, जो बगैर सूचना के संभव नहीं है। इसके लिए जनसंचार माध्यमों का इस्तेमाल जन सामान्य को एक विवेकपूर्ण निर्णय लेने में सहायता प्रदान करेगा। जो हेल्थ वेलनेस में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा। क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करना, स्वास्थ्य देखभाल के बुनियादी ढाँचे में सुधार, रोग निवारक उपायों की उपलब्धता और स्वास्थ्य के लिए मानव संसाधनों में निवेश कर भारत एक स्वस्थ और समृद्ध राष्ट्र की दृष्टि प्राप्त करने की दिशा में अपनी यात्रा जारी रख सकता है।

संदर्भ

अंबेकर, एस.एम., काजी, एस.जेड., गैधने, ए., & पाटिल, एम. (2021). स्टेप टुवर्ड्स यूनिवर्सल हेल्थ कवरेज थ्रू हेल्थ एंड वेलनेस सेंटर अंडर आयुष्मान भारत प्रोग्राम डिलीवरिंग कॉम्प्रिहेंसिव प्राइमरी हेल्थ केयर इन बांद्रा डिस्टिक. जर्नल ऑफ फार्मास्युटिकल रिसर्च इंटरनेशनल, 34–38. https://doi.org/10.9734/jpri/2021/v33i34a31820 से 19 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

एमओएचएफडब्ल्यू नेशनल हेल्थ पॉलिसी 1983. (1983). परिवार कल्याण विभाग, भारत सरकार. नई दिल्ली. https://www.nhp.gov.in/sites/default/files/pdf/nhp_1983.pdf से 13 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

कोडाली, पी.बी., हेनसे, एस., कुपर्टी, एस., कल्पना, गंगाधर., हलोई, बी. (2020). हाऊ इंडियन रिसपोंडेड टू द आरोग्य सेतु एप?. इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक हेल्थ 64 (6) : पेज-228-230, | DOI : 10.4103/ijph.IJPH_499_20

कल्डेरॉन, जे. एल., एंड बेलट्रन, आर. ए. (2004). पिटफॉल्स ऑफ हेल्थ कम्युनिकेशनः हेल्थकेयर पॉलिसी, इंस्टीट्यूशन, स्ट्रक्चर & प्रोसेस. मेडजेनमेड. संयुक्त राष्ट्र अमेरीका. 6(1), 9. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC1140704/ से 13 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

चक्रबर्ती, बी., & चांद, पी. (2016). पब्लिक पॉलिसीः कॉन्सेप्ट, थ्योरी एंड प्रैक्टिस (7वाँ संस्करण). नई दिल्ली : सेज पब्लिकेशंस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड.

चड्ढ़ा, एम. (1963). चड्ढ़ा कमेटी रिपोर्ट. स्वास्थ्य मंत्रालय, भारत सरकार. नई दिल्ली. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/chada%20committe%20report%204.pdf से 19 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

जंगलवाला, एन. (1967) रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन इंटीग्रेशन ऑफ हेल्थ सर्विसेज. डायरेक्टरेट जनरल ऑफ द हेल्थ सर्विसेज. नई दिल्ली. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Jungalwal%20Committee%20Report.pdf से 19 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

दूबे, एस., वासा, जे. & जैदी, एस. (2021). डू हेल्थ पॉलिसी एड्रेस द अवेबिलिटी, एक्सेसिबिलिटी, एंड क्वालिटी ऑफ ह्यूमन रिसोर्स फॉर हेल्थ? एनालिसिस ओवर थ्री डीकेट्स ऑफ नेशनल हेल्थ पॉलिसी ऑफ इंडिया. हम रिसोर हेल्थ 19, 139. https://doi.org/10.1186/s12960-021-00681-1 से 7 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ एंड फैमिली वेलफेयर. नई दिल्ली. (एन.डी.). http://www.nihfw.org/ReportsOfNCC.html से 7 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

नेशनल हेल्थ प्रोफाइल 2021 (2022). सेंट्रल ब्यूरो ऑफ हेल्थ इंटेलिजेंस. नई दिल्ली. http://www.indiaenvironmentportal.org.in/files/file/national%20health%20profile%20india%202021.pdf से 7 जून, 2023 को पुन:प्राप्त.

नॉन कम्युनिकेबल डिजिट कंट्री प्रोफाइल (2018). विश्व स्वास्थ्य संगठन. स्विट्जरलैंड. https://www.who.int/publications/i/item/9789241514620 से 14 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

बनर्जी, डी. (1983). नेशनल हेल्थ पॉलिसी एंड इट्स इम्प्लीमेंटेशन. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. मुंबई. 18(4), 105–108. https://www.jstor.org/stable/4371773 से 14 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

बजाज, जे. (1986). बजाज कमेटी रिपोर्ट. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय. नई दिल्ली. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Bajaj%20Committee%20report.pdf से 19 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

बाजपई, एन., & वाधवा, एम. (2020) इंडियाज नेशनल डिजिटल हेल्थ मिशन. Www.econstor.eu. https://www.econstor.eu/esstatistics/10419/249825?year=2023&month=5 से 22 जून, 2023 को पुन:प्राप्त.

बाजपई, वी. (2018). नेशनल हेल्थ पॉलिसी, 2017: रिवीलिंग पब्लिक

हेल्थ चीसेनेरी. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. मुंबई. 53(28).

भोरे, जे. (1946ए). हेल्थ सर्वे एंड डेवलपमेंट कमेटी रिपोर्ट, भारत सरकार, नई दिल्ली. Vol-III. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Bhore%20Committee%20Report-%203.pdf से 21 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

भोरे, जे. (1946बी). रिपोर्ट ऑफ द हेल्थ सर्वे एंड डेवलपमेंट कमेटी, भारत सरकार. नई दिल्ली. Vol-I. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/bhore%20Committee%20Report%20VOL-1%20.pdf से 19 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

भोरे, जे. (1946सी). रिपोर्ट ऑफ द हेल्थ सर्वे एंड डेवलपमेंट कमेटी रिपोर्ट, भारत सरकार. नई दिल्ली. Vol. II. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Bhore%20Committee%20Report%20-%20Vol%20II.pdf से 21 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

मुदालियर, ए. (1962). रिपोर्ट ऑफ द हेल्थ सर्वे एंड प्लानिंग कमेटी. स्वास्थ्य मंत्रालय, भारत सरकार. नई दिल्ली. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Mudalier%20%20Vol.pdf से 15 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

मुखर्जी. (1968ए). मुखर्जी कमेटी रिपोर्ट. स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन मंत्रालय, भारत सरकार. नई दिल्ली. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Mukerjee%20Committee%20Report.pdf से 15 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

मुखर्जी. (1968बी). मुखर्जी कमेटी रिपोर्ट (पार्ट-II). स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन मंत्रालय, भारत सरकार. नई दिल्ली. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Mukerji%20Committee%20Report%20%20-%20Part%20II.pdf से 15 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

वेरियस हेल्थ कमेटी. (2013) इंडियन एसोसिएशन ऑफ प्रिवेंटिव एंड सोशल मेडिसिन, नई दिल्ली.

श्रीवास्तव, जे. (1975. श्रीवास्तव कमेटी. इंडियन काउंसिल ऑफ सोशल रिसर्च. नई दिल्ली. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Srivastava%20Committee%20Report.pdf से 7 जून, 2023 को पुन:प्राप्त.

सिंह, के. (1973). करतार सिंह कमेटी रिपोर्ट. स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन विभाग, भारत सरकार. नई दिल्ली. http://www.nihfw.org/Doc/Reports/Kartar%20Singh%20Committee%20Report.pdf से 26 मई, 2023 को पुन:प्राप्त.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 50-56, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

भारत की आज़ादी का अमृत महोत्सव

ग्रामीण विकास में सोशल मीडिया की उपयोगिता : एक अध्ययन

साधिका कुमारी[1] और डॉ. गजेंद्र सिंह अवास्या[2]

सारांश

भारत का विकास असल मायने में गाँवों के विकास से पूर्ण होता है। इसलिए शहरों के साथ-साथ गाँवों का विकास भी जरूरी है। गाँवों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए जरूरी है कि सरकार की ग्रामीण जनता तक सीधी पहुँच हो। मीडिया ने शुरू से ही जनता से सरकार और सरकार से जनता के बीच दोतरफा संचार स्थापित करने का काम किया है। इंटरनेट के बढ़ते प्रयोग और सोशल मीडिया की लोकप्रियता ने ग्रामीण क्षेत्रों में दोतरफा संचार को बल प्रदान किया है। ग्रामीणों के बीच व्हाट्सएप और फेसबुक लोकप्रिय सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म हैं। ग्रामीण इन मंचों पर देश-दुनिया में हो रहे बदलावों एवं घटनाओं की जानकारी हासिल करते हैं। साथ ही सरकार के फैसलों से भी अवगत होते हैं। दूसरी ओर, सरकार सोशल मीडिया के जरिये विकास योजनाओं एवं उनके क्रियान्वयन से संबंधित जानकारी नागरिकों को उपलब्ध कराती है। कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएँ, सड़क, जल, परिवहन आदि योजनाओं से संबंधित सूचनाएँ सोशल मीडिया पर उपलब्ध हैं। साथ ही महिला अधिकार, छुआछूत, साफ-सफाई जैसे गंभीर मुद्दों के प्रति लोगों को जागरूक करने के लिए भी सोशल मीडिया को उपयोगी साधन के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। क्या सोशल मीडिया की ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती पहुँच ग्रामीण विकास में सहायक है? प्रस्तुत शोध में इस विषय पर प्रकाश डाला गया है। शोध को वर्णनात्मक शोध पद्धति के माध्यम से पूरा किया गया है।

संकेत शब्द : ग्रामीण विकास, ई-गवर्नेंस, इंटरनेट, सोशल मीडिया, ग्रामीण समाज

प्रस्तावना

भारत ने शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में मूलभूत सुविधाओं, बुनियादी ढाँचे, सार्वजनिक स्वास्थ्य देखभाल और संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में काफी प्रगति की है। भारत के विकास के क्रम में मीडिया का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है, क्योंकि मीडिया न केवल लोगों का मनोरंजन करता है, बल्कि नागरिकों को शिक्षित और जागरूक करने का कार्य भी करता है। संचार क्रांति के बाद इंटरनेट के प्रचलन ने इसे और बल प्रदान किया है। शहर के साथ दूरदराज के ग्रामीण इलाकों में इंटरनेट की पहुँच ने एक नए मीडिया को जन्म दिया, जो सोशल मीडिया के रूप में लोकप्रिय माध्यम बन चुका है। संचार तकनीक के विस्तार ने ग्रामीण विकास को प्रभावित किया है? ग्रामीण क्षेत्रों में संचार की इस नई तकनीक ने रेडियो, टेलीविजन और समाचार पत्रों की तुलना में ग्रामीणों पर ज्यादा प्रभाव डाला है। अब ग्रामीण सोशल मीडिया के जरिये देश-दुनिया की घटनाओं से पल-पल रूबरू हो रहे हैं, उन पर अपनी राय व्यक्त कर रहे हैं और सुझाव भी दे रहे हैं। यही वजह है कि ग्रामीण विकास के लिए चाहे बाजार ढूँढ़ना हो, सरकार की योजनाओं की जानकारी हासिल करनी हो, अधिकारों एवं सुविधाओं को जानना हो, किसी मुद्दे पर एक राय बनाना हो—इन सबके लिए सोशल मीडिया उपयोगी साबित हो रहा है। ज्यादातर ग्रामीण आबादी वाले देश भारत को विकसित राष्ट्र बनाने के लिए जरूरी है कि गाँवों का विकास किया जाए। इसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों में नागरिकों को मूलभूत सुविधाएँ उपलब्ध करवाने के साथ ही ढाँचागत विकास बेहद जरूरी है। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए सरकार मीडिया का उपयोग करती है। सरकार अब ई-गवर्नेंस के माध्यम से जनता से सीधे संपर्क बना रही है। सोशल मीडिया भी इसके एक साधन के रूप में उपयोग किया जा रहा है।

भारत में इंटरनेट की पहुँच एवं सोशल मीडिया

भारत में 75.9 करोड़ इंटरनेट उपयोगकर्ता हैं, जिनमें 39.9 करोड़ ग्रामीण हैं। इंटरनेट के उपयोग की मुख्य वजह डिजिटल मनोरंजन, डिजिटल संचार और सोशल मीडिया है (इंटरनेट इन इंडिया रिपोर्ट 2022)। वर्ष 2015 में भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या केवल 9 प्रतिशत थी। वहीं वर्ष 2018 में बढ़कर यह संख्या 25 प्रतिशत हो गई (मिश्रा, 2019)। वर्ष 2019 के बाद ग्रामीण भारत में सक्रिय इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या में 45 फीसदी की वृद्धि हुई है (नीलसन, मई 2022)। इंटरनेट का उपयोग करने वाले ग्रामीणों में लगभग 40 फीसदी सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, जिनमें से ज्यादातर लोग वीडियो देखने के लिए सोशल नेटवर्किंग प्लेटफॉर्म का उपयोग करते हैं (झा, 2022)। इससे यह साफ है कि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में सोशल मीडिया उपयोगकर्ताओं की संख्या में लगातार वृद्धि दर्ज की जा रही है।

वर्तमान समय में विश्व में 407 करोड़ से अधिक लोग सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, जो दुनिया की लगभग 50 प्रतिशत आबादी के बराबर हैं (डिक्शन, 2023)। सोशल मीडिया का प्रभाव शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, रोजगार, सरकारी सेवा या समाजसेवा आदि सभी क्षेत्रों में है। केंद्र और राज्य सरकार द्वारा क्रियान्वित सभी प्रकार की विकास योजनाओं की जानकारी सोशल मीडिया के माध्यम से जनता तक पहुँचाई जा रही है। ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को भी शहरी क्षेत्र के समकक्ष सुविधाओं, अवसरों, अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में सोशल मीडिया के माध्यम से पता चलता है। सोशल मीडिया ने ग्रामीणों के जीवन के सभी क्षेत्रों जैसे आजीविका, स्वास्थ्य सेवा, परंपराओं, सामाजिक अभियानों आदि को प्रभावित किया है। दरअसल, सोशल मीडिया एक ऐसा प्लेटफॉर्म है जो लोगों को आपस में जोड़ता है और उन्हें विभिन्न सूचनाओं, ज्ञान, समाचार, मनोरंजन, सरकारी सेवाओं और विकासात्मक कार्यों के बारे में बताता है। इस आभासी नेटवर्क के माध्यम से विचारों और सूचनाओं को साझा करने की सुविधा मिलती है। फेसबुक, इंस्टाग्राम, ट्विटर, वाट्सएप और यूट्यूब जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म उपलब्ध हैं, जहाँ

[1]शोधार्थी, विज्ञापन एवं जनसंपर्क विभाग, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल, ईमेल : kumarisinghsadhika45@gmail.com
[2]सहायक आचार्य, विज्ञापन एवं जनसंपर्क विभाग, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल, ईमेल : picasso.gajendra@gmail.com

उपयोगकर्ताओं को सामग्री साझा करने, ऑनलाइन बातचीत करने और समुदायों का निर्माण करने की अनुमति होती है।

ग्रामीण विकास में सोशल मीडिया की भूमिका

विकास एकरेखीय प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक बहुआयामी अभ्यास है। ग्रामीण विकास का अर्थ नागरिकों का आर्थिक सुधार एवं सामाजिक विकास से है। ग्रामीण विकास में जनता की बढ़ी हुई भागीदारी, योजनाओं का विकेंद्रीकरण, भूमि सुधारों को बेहतर ढंग से लागू करना और ऋण की आसान उपलब्धता कराकर नागरिकों के जीवन को बेहतर बनाने का लक्ष्य होता है। पहले ग्रामीण विकास के लिए मुख्य जोर कृषि, उद्योग, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य और संबंधित क्षेत्रों पर दिया जाता था। लेकिन त्वरित विकास तभी संभव है जब सरकारी प्रयासों के साथ जमीनी स्तर पर लोगों की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष भागीदारी हो (ग्रामीण विकास, 2015)। भारत जैसे विविध भाषा, जाति-जनजाति वाले देश में शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, स्वच्छता, मूलभूत सुविधाओं आदि के विस्तार में मीडिया प्रासंगिक स्थान पाता है। पहले रेडियो, टेलीविजन और समाचार पत्रों ने लोगों को शिक्षित और जागरूक करने का कार्य किया। वर्तमान भारत नई संचार क्रांति या डिजिटल क्रांति के दौर से गुजर रहा है।

भारत की विशाल ग्रामीण जनता विकास के किसी भी क्षेत्र के लिए एक बड़ा बाजार साबित हो सकती है। हालाँकि ज्यादातर ग्रामीण आबादी आज भी अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। ऐसे में नई संचार तकनीक (सोशल मीडिया) ने उन्हें एक ऐसा प्लेटफॉर्म उपलब्ध कराया है, जहाँ वे देश-दुनिया के लोगों के साथ सीधे संपर्क बना सकते हैं, बाजार ढूँढ़ सकते हैं, कृषि उत्पादों का प्रचार-प्रसार कर सकते हैं एवं सीधे ग्राहकों को अपने उत्पाद बेच भी सकते हैं। इस तरह कृषकों के लिए सोशल मीडिया वरदान साबित हो सकता है। वहीं, ग्रामीण अपनी माँगों को सरकार तक पहुँचाने के लिए किसी भी अन्य माध्मय से पहले सोशल मीडिया का उपयोग कर रहे हैं, ताकि सरकार और संबंधित प्रशासन उस पर त्वरित एक्शन लें। भारत में सोशल मीडिया की लोकप्रियता का अंदाजा इन आँकड़ों से लगाया जा सकता है कि वर्तमान में यहाँ लगभग 75 करोड़ 54 लाख उपयोगकर्ता हैं, जो चीन के बाद दूसरे स्थान पर हैं (रुबी, 2023)।

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों ने भारतीय ग्रामीणों के संचार प्रणाली में बदलाव किए हैं। फेसबुक भारत के कई ग्रामीण क्षेत्रों के लिए वरदान साबित हुआ है। 'द इकॉनोमिक्स टाइम्स' में 10 फरवरी, 2012 को छपी एक रिपोर्ट के अनुसार महाराष्ट्र के साँगली जिले के किसान स्थानीय बाजार में हल्दी की कीमतों में गिरावट से बेहद परेशान थे, तब एक किसान ने फेसबुक की मदद ली। इस पर देशभर के अन्य हल्दी किसानों से तत्कालीन स्थिति एवं कीमत पर चर्चा की, जिससे किसानों को हल्दी की सही कीमत के बारे में पता चला। इसके बाद साँगली के 25 हजार किसानों ने स्थानीय निलामी में भाग नहीं लेने का फैसला किया। इससे पहले गाँव के सरपंच कुछ किसानों से चर्चा के बाद अंतिम निर्णय लेता था, जिसे सभी किसानों को मानना पड़ता था। फेसबुक और ट्विटर जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म इस अवधारणा का एक विस्तार हैं।

साहित्य समीक्षा

ग्रामीण विकास के लिए डिजिटल मीडिया के विशेष मायने हैं। 'डिजिटल मीडिया और ग्रामीण विकास' शोध आलेख में इस विषय पर गहन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों को विकसित करने के लिए सूचना संचार तकनीक के प्रयोग की जरूरत तेजी से बढ़ रही है। गाँवों को शहरों से जोड़ने के लिए जितनी जरूरत सड़कों की है, उतनी ही जरूरी गाँवों के लिए तकनीक का विकास भी है। वर्तमान में भारत के सभी गाँव मोबाइल नेटवर्क से जुड़ चुके हैं। ऐसे में वैश्विक स्तर पर सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने के लिए नवाचारों की पहुँच को सुदूर क्षेत्रों तक सुनिश्चित करने की जरूरत बतलाई गई है। बाजार का स्वरूप बदल रहा है और यह वर्चुअल मीडिया पर शिफ्ट हो रहा है, लेकिन यहाँ किसानों की उपस्थिति न के बराबर है, इसलिए ग्रामीण अंचलों की उपस्थिति बढ़ाने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण व्यवस्था करने की जरूरत है। किसानों को डिजिटल मीडिया से जोड़कर ग्रामीण अंचलों को सामाजिक और आर्थिक रूप से संपन्न बनाया जा सकता है (कुमार, 2015)।

शोध आलेख 'ए रिसर्च ऑन द इफेक्ट ऑफ सोशल मीडिया इन द डेवलपमेंट ऑफ रूरल सोसाइटी : ए रिव्यू' में ग्रामीण भारत में सोशल मीडिया के प्रभाव का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। शोध पत्र के अनुसार, इंटरनेट आज आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक जीवन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। वहीं सोशल मीडिया ने ग्रामीण जीवन के सभी क्षेत्रों जैसे आजीविका, स्वास्थ्य सेवा, परंपरा, सामाजिक अभियान आदि को प्रभावित किया है। ग्रामीण भारत के विकास के लिए जहाँ एक ओर ऑनलाइन सार्वजनिक शिकायत मंच की आवश्यकता है, ताकि ग्रामीण अपनी शिकायतें दर्ज करा सकें। वहीं दूसरी ओर, ऑनलाइन कार्यक्रमों के माध्यम से फसल बेचने की प्रक्रिया आसान हो गई है, जिसके परिणामस्वरूप बिचौलियों को हटा दिया गया है। फेसबुक, ट्विटर जैसी सेवाएँ व्यापक पहुँच प्रदान करती हैं (रामपाल, 2019)। 'सामाजिक विकास में सोशल मीडिया की भूमिका' शोध आलेख में सोशल मीडिया की जरूरत समाज के सभी पहलुओं पर बताई गई है। क्षेत्रीय विकास, सामाजिक विकास एवं भारत के सर्वांगीण विकास के लिए सोशल मीडिया की जरूरत है। शिक्षा, विज्ञान, राजनीति, उद्योग, व्यापार आदि में सोशल मीडिया का उपयोग हो रहा है (कुशवाहा & गांधी, 2018)।

भारत में प्रचुर मात्रा में प्राकृतिक संसाधन ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध हैं। इसके संरक्षण और पोषण के लिए ग्रामीणों को जागरूक करने की आवश्यकता पर हमेशा बल दिया जाता रहा है। सोशल मीडिया ने शहर के साथ-साथ गाँवों में भी पहले सभी संचार माध्यमों से ज्यादा प्रभावी उपस्थिति दर्ज कराई है। ऐसे में क्या इस माध्यम का उपयोग ग्रामीणों को पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य से जागरूक करने के लिए प्रभावी माध्यम के रूप में उपयोग किया जा सकता है? शोध आलेख 'कंजर्वेशन एंड सस्टेनेंस ऑफ नेचुरल रिसोर्सेज; क्रिएटिंग अवेयरनेस थ्रू सोशल मीडिया अमंगस्ट रूरल पॉपुलेशन इन ग्रेटर नोएडा' में ग्रामीणों को जागरूक करने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण उपकरण सोशल मीडिया को बताया गया है। दिल्ली के पास ग्रेटर नोएडा के ग्रामीण इलाकों में किए गए इस शोध परिणाम में पाया गया कि सोशल मीडिया पर्यावरणीय मुद्दों के बारे में लोगों को जागरूक करने में प्रभावी भूमिका निभा सकता है। इसलिए सोशल मीडिया के माध्यम से ग्रामीण आबादी के लिए बेहतर जागरूकता कार्यक्रम विकसित किए जा सकते हैं (गिरधर & श्रीवास्तव, 2023)। 'रूरल इंडिया : द नेक्स्ट फ्रंटियर फॉर सोशल मीडिया नेटवर्क्स' के अनुसार, सोशल मीडिया ने

निसंदेह ग्रमीणों के जीवन को प्रभावित किया है। कृषि उत्पादों के विस्तार में इसने अहम भूमिका निभाई है। हालाँकि ग्रामीण राजनीति पर सोशल मीडिया का प्रभाव काफी कम पड़ा है (राय & साहिला, 2013)।

शोध उद्देश्य

गाँवों में पूर्ण विकास के लिए जरूरी है कि संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी तक ग्रामीणों की पहुँच आसान हो। सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी एवं लिए गए फैसलों की सूचना उन्हें तत्काल मिल सके। साथ ही ग्रामीण भी अपनी बात सरकार के सामने सीधे तौर पर रख सकें। इस तरह देखा जाए तो सोशल मीडिया ग्रामीणों तक सूचना पहुँचाने एवं क्षेत्र में जागरूकता लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। शोध का मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है :

- ग्रामीणों में सोशल मीडिया के प्रति जागरूकता को जानना।
- ग्रामीण विकास में सोशल मीडिया के उपयोग का पता लगाना।

शोध प्रविधि

शोध का विषय ग्रामीण विकास में सोशल मीडिया की उपयोगिता को जानना है, इसलिए शोध को वर्णनात्मक शोध अभिकल्प के द्वारा पूरा किया गया है। शोध में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों तरह के आँकड़ों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक आँकड़ों की प्राप्ति के लिए उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के तहत चयनित उत्तरदाताओं को सर्वेक्षण में शामिल किया गया है, जबकि द्वितीयक आँकड़ों के लिए शोध से संबंधित महत्त्वपूर्ण वेबसाइटों से प्राप्त डाटा का विश्लेषण किया गया है। सर्वेक्षण के लिए शोध क्षेत्र के रूप में बिहार की राजधानी पटना के आसपास के गाँवों का चयन किया गया, जहाँ शोध उद्देश्यों को ध्यान में रखकर सोशल मीडिया पर सक्रिय 200 उत्तरदाताओं का चयन किया गया। इन प्रतिभागियों के बीच सोशल मीडिया का उपयोग कर शोध प्रश्नावली वितरित की गई। उत्तरदाताओं को सर्वेक्षण में शामिल प्रश्नों का उत्तर गूगल फॉर्म के माध्यम से देना था।

विश्लेषण एवं विवेचना

सर्वेक्षण क्षेत्र में उत्तरदाताओं से जनसांख्यिकी प्रश्न एवं शोध से संबंधित प्रश्न पूछे गए। उत्तरदाताओं से प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण किया गया है। शोध अध्ययन में शामिल उत्तरदाताओं की उम्र 18 से 40 वर्ष के बीच है। कुल 200 उत्तरदाताओं में से पुरुष 68.9 प्रतिशत और महिला 31.1 प्रतिशत थे। उत्तरदाताओं की शिक्षा स्तर की गणना करने पर पता चलता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे ज्यादा 55.2 प्रतिशत इंटरमीडियट एवं 31 प्रतिशत मैट्रिक तक लोगों ने पढ़ाई की है। इसके बाद स्नातक एवं स्नातकोत्तर तक पढ़ाई करने वाले लोगों की संख्या है। उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में सोशल मीडिया पर सक्रिय ज्यादातर 85.2 प्रतिशत लोग मध्यम वर्गीय या निम्न मध्यम वर्गीय परिवारों से संबंध रखते हैं, इसके बाद निम्न वर्ग के उत्तरदाताओं की संख्या है।

प्रश्नावली से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण एवं निष्कर्ष

आँकड़ों को प्रतिशत में प्रदर्शित किया गया है, ताकि सर्वेक्षण से प्राप्त परिणाम को शोध क्षेत्र की संपूर्ण ग्रामीण आबादी को दर्शाया जा सके।

प्रश्न : आप सोशल मीडिया के किस प्लेटफॉर्म को ज्यादा पसंद करते हैं? (कुल उत्तरदाता=200)

सारणी-1

विकल्प	फेसबुक	वाट्सएप	इंस्टाग्राम	यूट्यूब	ट्विटर	अन्य सोशल मीडिया
हमेशा	26.8	35.8	3.5	25.1	0.3	0.1
अक्सर	43.3	40.1	12.5	20.1	0.8	2.5
कभी-कभी	18.8	12.4	15.9	33.6	2	11.1
शायद ही कभी	5.7	8.8	23.7	15.3	9	35.4
कभी नहीं	5.4	2.9	44.4	5.9	87.9	50.9

व्याख्या : ग्रामीण क्षेत्रों में सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के रूप में वाट्सएप ज्यादा पसंद किया जाता है। सबसे ज्यादा 75.9% उत्तरदाताओं ने वाट्सएप को अपना पसंदीदा सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म बताया। इसके बाद फेसबुक चलाने वालों की संख्या 70.1% है। यूट्यूब भी ग्रामीण इलाकों में काफी लोकप्रिय है, यूट्यूब को पसंद करने वाले ग्रामीणों की आबादी 45.2 प्रतिशत है। ट्विटर को पंसद करने वाले ग्रामीणों की संख्या अन्य किसी भी सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म से कम है, केवल 1.1% लोग ही हमेशा और अक्सर और 2% लोग कभी-कभी ट्विटर चलाते हैं। सोशल मीडिया के अन्य प्लेटफॉर्म भी ग्रामीण क्षेत्रों में काफी कम लोकप्रिय है, केवल 2.6% लोग हमेशा या अक्सर अन्य सोशल मीडिया (टेलीग्राम, लिंक्डइन, टकाटक, स्नैपचैट आदि) प्लेटफॉर्म का पसंद करते हैं।

प्रश्न : ग्रामीणों द्वारा आपस में संवाद के लिए सोशल मीडिया के किस प्लेटफॉर्म का उपयोग ज्यादा किया जाता है? (कुल उत्तरदाताओं= 200)

सारणी-2

विकल्प	फेसबुक	वाट्सएप	इंस्टाग्राम	यूट्यूब	ट्विटर	अन्य सोशल मीडिया
हमेशा	20.6	41	5	5.4	0.9	0.2
अक्सर	49.6	35.8	2.8	3.9	3.1	2.6
कभी-कभी	12.2	16.6	12.9	15.4	8.5	9.1
शायद ही कभी	12.6	3.8	16.8	13.2	10.9	15.6
कभी नहीं	5.0	2.8	62.5	62.1	76.6	72.5

व्याख्या : ग्रामीणों के बीच संपर्क माध्यम के रूप में भी सोशल मीडिया का उपयोग किया जाता है। 70.2 प्रतिशत ग्रामीणों द्वारा संवाद के लिए फेसबुक उपयोग किया जाता है। केवल 12.6 प्रतिशत ग्रामीणों का मानना है कि वे फेसबुक का कम से कम उपयोग करते हैं। ग्रामीणों के बीच सोशल मीडिया का सबसे लोकप्रिय प्लेटफॉर्म वाट्सएप है। ग्रामीण आपस में संवाद करने के लिए सबसे ज्यादा वाट्सएप का प्रयोग करते हैं। ज्यादातर 76.8 प्रतिशत ग्रामीण वाट्सएप के माध्यम से हमेशा/अक्सर आपसी संवाद करना पसंद करते हैं। यूट्यूब के माध्यम से संवाद स्थापित करने वाले ग्रामीणों की आबादी केवल 9.3 प्रतिशत है। वहीं, इंस्टाग्राम, ट्विटर के साथ ही सोशल मीडिया के अन्य प्लेटफॉर्मों का ग्रामीण क्षेत्रों में संवाद

के लिए उपयोग नहीं किया जाता या बहुत ही कम उपयोग किया जाता है। शोध परिणाम से ज्ञात होता है कि सोशल मीडिया ग्रामीणों के बीच संपर्क बनाए रखने का महत्त्वपूर्ण साधन है, इससे वे अपने परिवार, मित्र, समुदाय, सरकार, संस्थाओं आदि से संपर्क में रहते हैं।

प्रश्न : ग्रामीण क्षेत्रों में सोशल मीडिया के उपयोग से क्या फायदे हैं? (कुल उत्तरदाता =200)

सारणी-3

विकल्प	प्रतिशत
सूचना का प्रवाह बढ़ा	20.6
ग्राम पंचायत के कार्यों में तेजी आई	13.3
संवाद करना आसान हुआ	17
पारदर्शिता बढ़ी	6.7
उपयुक्त सभी	36
कोई फर्क नहीं पड़ा	6.4
कुल	**100.0**

व्याख्या : वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों में सोशल मीडिया के उपयोगकर्ता लगातार बढ़ रहे हैं। इसकी कई वजहें हो सकती हैं। ग्रामीणों का मानना है कि सोशल मीडिया के उपयोग के कई फायदे हैं, जिनमें प्रमुख रूप से सूचना का प्रवाह बढ़ना है। अब ग्रामीण सोशल नेटवर्किंग समूह के माध्यम से किसी भी घटना की त्वरित जानकारी हासिल कर पाते हैं, वहीं अपने आसपास घटित हो रही घटनाओं की जानकारी भी वे दूसरे लोगों या समूह तक तुरंत पहुँचा रहे हैं। पंचायत के विभिन्न कार्यों के लिए सोशल मीडिया का उपयोग बढ़ा है। ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित विकास परियोजनाओं में पारदर्शिता लाने के उद्देश्य से सरकार या स्थानीय जनप्रतिनिधियों द्वारा सोशल मीडिया पर परियोजनाओं से जुड़ी सभी तरह की सूचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं। सोशल मीडिया का ग्रामीण सामाज पर भी प्रभाव देखा जा रहा है। ग्रामीण आपस में संवाद करने के लिए अब सोशल मीडिया का उपयोग कर रहे हैं। कुल मिलाकर 36% ग्रामीण आबादी यह मानती है कि एक ओर सोशल मीडिया ने सूचना के प्रवाह में गति लाने के साथ-साथ आपसी संवाद को आसान बनाया है, तो दूसरी ओर ग्राम पंचायतों के कार्यों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ने के साथ पारदर्शिता भी बढ़ी है।

प्रश्न : ग्राम पंचायत के कार्यों की जानकारी सबसे पहले किस माध्यम से प्राप्त होती है ? (उत्तरदाताओं की कुल संख्या=200)

सारणी-4

विकल्प	प्रतिशत
पंचायत प्रतिनिधि द्वारा	14.2
टेलीविजन	6.2
रेडियो	2.6
समाचार पत्र	12.6
सोशल मीडिया	62.3
समाचार वेबसाइट	.9
अन्य माध्यम	1.2

व्याख्या : ग्राम पंचायतों में विकास कार्य, जागरूकता कार्यक्रम, शैक्षिक कार्यक्रम आदि संचालित किए जाते हैं। नई तकनीकी युग में सोशल मीडिया की वजह से अब नागरिकों तक सभी तरह की गतिविधियों की सूचनाओं का पहुँचना आसान हो गया है। 62.3 प्रतिशत ग्रामीणों का मानना है कि सोशल मीडिया से उन्हें सभी तरह की गतिविधियों की जानकारी हासिल होती है।

प्रश्न : क्या ग्रामीण क्षेत्रों के विकास कार्यों को पूरा करने में सोशल मीडिया उपयोगी साबित हो रहा है? (कुल उत्तरदाता=200)

सारणी-5

विकल्प	प्रतिशत
हमेशा	25
अक्सर	30.6
कभी-कभी	25.2
शायद ही कभी	12.4
कभी नहीं	6.8
कुल	**100.0**

व्याख्या : सर्वेक्षण में प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि ज्यादातर 55.6% ग्रामीण मानते हैं कि विकास कार्यों के लिए सोशल मीडिया बहुत उपयोगी है। विकास कार्यों की जानकारी सोशल मीडिया के जरिये हमेशा या अक्सर लोगों तक पहुँचती है। 37.6 ग्रामीण यह मानते हैं कि कभी-कभी या शायद ही कभी सोशल मीडिया के जरिये विकास कार्यों जानकारी ग्रामीणों तक पहुँचाई जाती है। स्पष्ट हैं कि नई संचार तकनीक यानी सोशल मीडिया ने ग्रामीण क्षेत्रों के विकास कार्यों को भी प्रभावित किया है। अब गाँवों में हो रहे सभी विकास गतिविधियों की सूचना ग्रामीणों तक पहुँचती है और इसका श्रेय ग्रामीण सोशल मीडिया को देते हैं।

प्रश्न : ग्रामीणों को जागरूक करने के लिए क्या सोशल मीडिया प्रभावी माध्यम है? (कुल उत्तरदाता =200)

सारणी-6

विकल्प	प्रतिशत
हमेशा	39.4
अक्सर	41.6
कभी-कभी	9.2
शायद ही कभी	7.4
कभी नहीं	2.4
कुल	**100.0**

व्याख्या : गाँवों में शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, महिला एवं बाल विकास, छुआछूत, बाल विवाह आदि ऐसे मुद्दे हैं, जिनके लिए अक्सर जागरूकता अभियान चलाए जाते हैं, क्योंकि सोशल मीडिया एक ऐसा प्लेटफॉर्म है, जिसके माध्यम से लोगों को एक-दूसरे से जोड़ने, संवाद करने, त्वरित सूचना पहुँचाने का काम किया जा सकता है। इसलिए यह किसी भी अन्य मीडिया की तुलना में ग्रामीणों को जागरूक करने का सबसे अच्छा माध्यम बनकर उभरा है। सर्वेक्षण में शामिल ज्यादातर 81%

उत्तरदाताओं ने कहा कि सोशल मीडिया का उपयोग ग्रामीणों को जागरूक करने के लिए किया जाता है।

प्रश्न : ग्रामीणों क्षेत्रों के लिए संचालित सरकार की विकास योजनाओं की जानकारी किस माध्यम से प्राप्त करते हैं? (कुल उत्तरदाता=200)

सारणी-7

विकल्प	प्रतिशत
समाचार पत्र	12.4
रेडियो	3.2
टेलीविजन	12.6
इंटरनेट	7.0
सोशल मीडिया	56.4
अन्य माध्यम	8.4

व्याख्या : संचार एवं सूचना क्रांति के युग में सोशल मीडिया उपयोगकर्ता ग्रामीण क्षेत्रों के लोग भी हैं। ऐसे में ज्यादातर ग्रामीण अब विकास योजनाओं की जानकारी सोशल मीडिया से प्राप्त करना पसंद करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों की 56.4 प्रतिशत आबादी विकास योजनाओं की जानकारी प्राप्त करने के लिए सोशल मीडिया पर निर्भर है। वहीं 43.6 प्रतिशत ग्रामीणों द्वारा टेलीविजन, समाचार पत्र, वेब पोर्टल, रेडियो या अन्य माध्यम का उपयोग करते हैं।

प्रश्न : सोशल मीडिया केंद्र सरकार की विकास योजनाओं की जानकारी ग्रामीण जनता तक पहुँचाने में सक्षम है? (कुल उत्तरदाता= 200)

सारणी-8

केंद्र सरकार की योजनाएँ	हाँ (प्रतिशत)	नहीं (प्रतिशत)	कह नहीं सकते (प्रतिशत)
प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना	80.4	15.8	3.8
ग्रामीण शौचालय योजना	65	24.8	10.2
दीनदयाल अंत्योदय योजना	25.6	50.4	24
प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना	51.9	25.4	22.7
प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना	59.6	25.2	15.2
मनरेगा	49.4	33.4	17.2
अन्य योजनाएँ	22.4	56.2	21.4

व्याख्या : सोशल मीडिया न केवल सूचनाओं के आदान-प्रदान को गति प्रदान करता है, बल्कि विभिन्न तरह की जानकारी प्राप्त करने का भी सशक्त माध्यम बन चुका है। ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के लिए केंद्र सरकार द्वारा कई तरह की योजनाएँ संचालित की जा रही है। वर्तमान में, इनमें से ज्यादातर योजनाओं की जानकारी आम नागरिकों को सोशल मीडिया के माध्यम से प्राप्त होती है। ज्यादातर 80 प्रतिशत ग्रामीणों का कहना है कि उन्हें प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना की जानकारी सोशल मीडिया से प्राप्त हुई। 65 प्रतिशत का कहना है कि ग्रामीण शौचालय योजना से संबंधित जानकारियाँ उन्हें सोशल मीडिया के माध्यम से प्राप्त हुई। सोशल मीडिया से प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना की जानकारी प्राप्त करने वाले ग्रामीणों की संख्या 59.6 प्रतिशत है। 49.4 प्रतिशत ग्रामीणों का कहना है कि उन्हें मनरेगा से संबंधित जानकारी सोशल मीडिया से प्राप्त होती है। 51.9% ग्रामीणों ने प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना से संबंधित जानकारी सोशल मीडिया से प्राप्त की, हालाँकि अन्य योजनाओं जैसे, पीएम स्वामित्व योजना, मजदूर कार्ड योजना, दीनदयाल अंत्योदय योजना, सामाजिक सुरक्षा पेंशन इत्यादि की जानकारी सोशल मीडिया से प्राप्त करने वालों की संख्या बहुत कम है।

प्रश्न : राज्य सरकार की ग्रामीण विकास योजनाओं की जानकारी नागरिकों तक पहुँचाने में क्या सोशल मीडिया प्रभावी भूमिका निभा रहा है? (कुल उत्तरदाता=200)

सारणी-9

बिहार सरकार की योजनाएँ	हाँ (प्रतिशत)	नहीं (प्रतिशत)	कह नहीं सकते (प्रतिशत)
मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना	51.2	30.2	18.6
राज्य फसल सहायता योजना	68.6	20.8	11.6
बिहार कृषि इनपुट अनुदान ऑनलाइन	60.4	24.6	15
कृषि वानिकी योजना	15.4	39.8	44.8
मुख्यमंत्री ग्रामीण पेयजल निश्चय योजना	45.9	22.6	31.5
कुशल युवा कार्यक्रम योजना	38.9	31.2	29.9
बिहार राज्य सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना	40.2	31.4	28.4
अन्य योजनाएँ	13.8	20.6	65.6

व्याख्या : राज्य सरकारें भी ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए विभिन्न योजनाएँ संचालित करती हैं। मीडिया इन योजनाओं की जानकारी ग्रामीणों तक पहुँचाने का कार्य करता है। सर्वेक्षण से पता चलता है कि सोशल मीडिया राज्य सरकार की योजनाओं को ग्रामीणों तक पहुँचाने में कारगर साबित हो रहा है। बिहार सरकार द्वारा संचालित योजनाओं की जानकारी भी सोशल मीडिया द्वारा बखूबी लोगों तक पहुँच रही है। 68.6% ग्रामीणों ने कहा कि उन्हें राज्य फसल सहायता योजना की जानकारी सोशल मीडिया से प्राप्त होती है। 60.4 प्रतिशत ग्रामीणों ने बिहार कृषि इनपुट अनुदान ऑनलाइन योजना (फसलों के नुकसान की भरपाई के लिए), 51.2 प्रतिशत ने मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना, 45.9 प्रतिशत ने मुख्यमंत्री ग्रामीण पेयजल निश्चय योजना, 38.9 प्रतिशत ने कुशल युवा कार्यक्रम योजना, 40.2 प्रतिशन ने बिहार राज्य सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना की जानकारी सोशल मीडिया से प्राप्त की है। वहीं ई-कल्याण बिहार मुख्यमंत्री योजना, मुख्यमंत्री अत्यंत पिछड़ा वर्ग मेधावृत्ति योजना, मुख्यमंत्री बालक-बालिका प्रोत्साहन योजना, बिहार मुख्यमंत्री पारिवारिक लाभ योजना, बिहार मुख्यमंत्री ग्राम पंचायत परिवहन योजना, मुख्यमंत्री कन्या उत्थान

योजना, मुख्यमंत्री उद्यमी योजना, बाढ़ राहत सहायता योजना, बिहार बेरोजगारी भत्ता, मुख्यमंत्री वृद्धजन पेंशन योजना, लक्ष्मीबाई सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना (विधवा महिलाओं के लिए), जल जीवन हरियाली योजना, मुख्यमंत्री बालक-बालिका प्रोत्साहन योजना, बिहार मुख्यमंत्री पारिवारिक योजना, मुख्यमंत्री ग्राम पंचायत परिवहन योजना समेत अन्य कई योजनाओं की जानकारी सोशल मीडिया से प्राप्त करने वाले ग्रामीणों की आबादी केवल 13.8 प्रतिशत है।

प्रश्न : ग्रामीण क्षेत्रों में सोशल मीडिया (फेसबुक, वाट्सएप) उपयोगकर्ताओं की संख्या में लगातार इजाफा हो रहा है, ग्रामीण उपयोगकर्ताओं की संख्या बढ़ने से गाँव की विकास गतिविधियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है? (कुल उत्तरदाता=200)

सारणी-10

विकास गतिविधियाँ	पूर्ण सहमत	सहमत	तटस्थ	अस-हमत	पूर्ण असहमत
कृषि से संबंधित कार्य	24.8	50.2	11	6.4	7.6
उद्यमिता विकास कार्यक्रम	15.1	30.9	28.7	8.6	16.7
आधारभूत संरचनाओं का निर्माण	15.5	40.4	35	3.8	5.3
सामाजिक विकास (शिक्षा, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, महिला एवं बाल विकास, युवा कल्याण)	25.1	50.3	14.7	2.6	7.3
अन्य गतिविधियाँ	19.2	28.4	40.8	9.1	2.5

व्याख्या : संचार गतिविधियाँ हमेशा से विकास कार्यों को प्रभावित करती रही हैं। ज्यादातर ग्रामीणों का मानना है ग्राम पंचायत स्तर पर चलाए जा रहे विकास कार्यों में सोशल मीडिया की वजह तेजी आई है। 75 प्रतिशत ग्रामीण इस बात से पूर्ण सहमत/सहमत हैं कि कृषि से संबंधित कार्यों में सोशल मीडिया की वजह से तेजी आई है। 46 प्रतिशत उत्तरदाता इससे पूर्ण सहमत/सहमत हैं कि सोशल मीडिया के कारण उद्यमिता विकास को बढ़ावा मिला है। 55.9 प्रतिशत उत्तरदाता इसके पक्ष में हैं कि सोशल मीडिया की वजह से आधारभूत संरचनाओं के निर्माण को बल मिला है। सबसे ज्यादा 75.4 प्रतिशत ग्रामीण आबादी यह मानती है कि सोशल मीडिया का सबसे ज्यादा प्रभाव सामाजिक विकास (शिक्षा, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, महिला एवं बाल विकास, युवा कल्याण) पर पड़ा है। सोशल मीडिया की वजह से लोग जागरूक और शिक्षित हो रहे हैं, जिससे सामाजिक विकास को बल मिला रहा है। अन्य गतिविधियों जैसे पर्यावरण/परिस्थितिकी ऊर्जा, सूक्ष्म एवं लघु उद्योग, कौशल विकास इत्यादि में सोशल मीडिया की वजह से सकारात्मक परिवर्तन के मुद्दे पर ज्यादातर उत्तरदाताओं ने तटस्थ रहना पसंद किया। हालाँकि 47.6 प्रतिशत ग्रामीण आबादी ने अन्य गतिविधियों पर सोशल मीडिया के सकारात्मक प्रभाव को लेकर अपनी पूर्ण सहमति/सहमति प्रदान की।

शोध निष्कर्ष

भारत सरकार डिजिटल इंडिया को प्रोत्साहन दे रही है, जिसके परिणामस्वरूप केंद्र एवं राज्य भी वर्चुअल माध्यम पर ई-शासन के रूप में कार्य कर रहे हैं। वर्तमान में, सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जा रही सभी सेवाएँ इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। इससे सार्वजनिक सेवाओं की गुणवत्ता में भी सुधार हुआ है। इधर सरकार जनता से सीधे संपर्क स्थापित करने के लिए सोशल मीडिया का उपयोग कर रही है। भारत की सघन आबादी के लिए सोशल मीडिया वरदान साबित हो रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के लिए सुशासन, सामाजिक सुरक्षा, आधारभूत संरचना, स्वच्छ और हरित वातावरण, जल प्रबंधन, स्वास्थ्य सेवाएँ, रोजगार, भेदभाव मुक्त समाज आदि की जरूरत है। सोशल मीडिया के उपयोग से सतत विकास के लक्ष्यों को पूरा करने में सहयोग मिला है। ग्रामीण क्षेत्रों में सरकार अपनी पहुँच बढ़ाने के लिए सोशल मीडिया के जरिये दोतरफा संचार स्थापित कर रही है। पंचायती राज मंत्रालय भी सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफॉर्मों पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। मंत्रालय द्वारा यूट्यूब चैनल (@MinistryOfPanchaytiRaj), ट्विटर (@mopr_goi) एवं फेसबुक अकांउट (@MinistryOfPanchaytiRaj) संचालित किया जा रहा है। पंचायती राज मंत्रालय के सोशल मीडिया अकाउंट पर प्रकाशित ट्वीट, वीडियो और पोस्ट की संख्या लाखों में है (सिंह, अप्रैल 2023)। सरकार अपनी योजनाओं एवं सूचनाओं को जनता तक पहुँचाने के लिए सोशल मीडिया का उपयोग कर रही है, तो दूसरी ओर जनता भी सरकार से संवाद स्थापित करने के लिए मीडिया के सबसे बेहतर विकल्प के रूप में सोशल मीडिया का उपयोग कर रही है। ग्रामीण सोशल मीडिया का उपयोग कर वैश्विक स्तर की घटनाओं की जानकारी त्वरित प्राप्त करते हैं। ज्यादातर ग्रामीण आबादी सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के रूप में वाट्सएप को पसंद करती है। सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए ग्रामीणों द्वारा वाट्सएप का उपयोग किया जाता है। हालाँकि फेसबुक की लोकप्रियता भी ग्रामीण क्षेत्रों में कम नहीं है। वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफॉर्म के रूप में यूट्यूब को भी ग्रामीणों द्वारा पसंद किया जाता है। भारत में कई ऐसी घटनाएँ देखी गई जब सोशल मीडिया ने जनमत जुटाने का काम किया है। हालाँकि ग्रामीण क्षेत्रों में सोशल मीडिया का उपयोग अभी इस स्तर पर नहीं किया जा रहा है, फिर भी ज्यादातर ग्रामीण केंद्र एवं राज्य सरकार की योजनाओं की जानकारी भी सोशल मीडिया से ही प्राप्त कर रहे हैं। ग्रामीणों का यह भी मानना है कि सोशल मीडिया की पहुँच ने विकास कार्यों को प्रभावित किया है। अब पहले से ज्यादा त्वरित गति से विकास कार्यों को पूरा किया जा रहा है। अंततः यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में मीडिया ने हमेशा से पूरक के रूप में कार्य किया है। वर्तमान में सोशल मीडिया इसे और बल तो प्रदान कर ही रहा है, साथ ही ग्रामीणों को सशक्त बनाने का कार्य भी कर रहा है।

संदर्भ

इंटरनेट इन इंडिया रिपोर्ट. (2022). इंटरनेट एंड मोबाइल एसोसिएशन ऑफ इंडिया और कांतार. https://www.iamai.in/sites/default/files/research/Internet%20in%20India%202022_Print%20version.pdf से पुन:प्राप्त.

कुमार, डी. एस. (2015). डिजिटल मीडिया और ग्रामीण विकास. ग्लोबल जर्नल फॉर रिसर्च एनालिसिस, 281-282.

कुशवाहा, आर., & गांधी, डी.एस. (2018). सामाजिक विकास में सोशल मीडिया की भूमिका : एक अध्ययन. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ हिंदी रिसर्च, 20-23.

ग्रामीण विकास. (2015, 12 22). माई गोव डॉट इन : https://www.mygov.in/hi/group/ग्रामीण-विकास/ से पुनःप्राप्त

गिरधर, डी., & श्रीवास्तव, एस. (2023). कंजर्वेशन एंड सस्टेनेंस ऑफ नेचुरल रिसोर्सेज; क्रिएटिंग अवेयरनेस थ्रू सोशल मीडिया अमंगस्ट रूरल पॉपुलेशन इन ग्रेटर नोएडा. मैक्रोमोलेकुलर सिंपोजिया, (पृ. 2100354).

झा, ए. (2022, मई 24). नजरिया : सोशल मीडिया के शिकंजे में हमारे गाँव. आउटलुक : https://www.outlookhindi.com/view/opinion-our-villages-in-the-grip-of-social-media-67488 से पुनःप्राप्त

डिक्शन, ए. (2023, फरवरी 13). नंबर ऑफ सोशल मीडिया यूजर वर्ल्डवाइड फ्रॉम 2017 टू 2027. स्टेटिस्टा : https://www.statista.com/statistics/278414/number-of-worldwide-social-network-users/ से पुनःप्राप्त

नीलसन. (मई 2022). नीलसंस भारत 2.0 स्टडी रिविल्स ए 45% ग्रोथ इन एक्टिव इंटरनेट यूजर इन रूरल इंडिया सिंस 2019. ऑनलाइन : https://www.nielsen.com/news-center/2022/nielsens-bharat-2-0-study-reveals-a-45-growth-in-active-internet-users-in-rural-india-since-2019/ से पुनःप्राप्त

मिश्रा, सी. (2019, सितंबर 14). सोशल मीडिया ग्रामीणों को बना रही बीमार. गाँव कनेक्शन : https://www.gaonconnection.com/desh/every-six-people-social-media-problem-which-causes-stress-surrounds-other-problems-kgmu-study--46237 से पुनःप्राप्त

मुख्यमंत्री अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अति पिछड़ा वर्ग/महिला/युवा उद्यमी योजना. उद्योग विभाग, बिहार सरकार : https://udyami.bihar.gov.in/ से पुनःप्राप्त

रामपाल. (2019). ए रिसर्च ऑन द इफेक्ट ऑफ सोशल मीडिया इन द डेवलपमेंट ऑफ रूरल सोसाइटी : ए रिव्यू. जर्नल ऑफ एडवांस एंड स्कॉलरली रिसर्च इन एलाइड एजुकेशन, 1066-1071.

राय, गी. ए., & साहिला, ज. (2013). रूरल इंडिया : द नेक्स्ट फ्रंटियर फॉर सोशल मीडिया नेटवर्क्स. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंजीनियरिंग रिसर्च एंड टेक्नोलॉजी, https://www.ijert.org/rural-india-the-next-frontier-for-social-media-networks. से पुनःप्राप्त

रुबी, डी. (2023, मार्च 23). सोशल मीडिया यूजर्स इन द वर्ल्ड-2023 डेमोग्राफिक्स. डिमांड सेज : https://www.demandsage.com/social-media-users/ से पुनःप्राप्त

सिंह, जी. (अप्रैल 2023). पंचायती राज संस्थाओं का सशक्तीकरण. कुरुक्षेत्र, 9.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 57-62, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

‘वर्चुअल-विमर्श’ में चीन की ‘फाइव फिंगर रणनीति’ : एक नीति-विश्लेषण

डॉ. जयप्रकाश सिंह[1] और संजीव कुमार[2]

सारांश

चीन की भू-विस्तारवादी रणनीतियों पर परंपरागत मीडिया में नाममात्र का विमर्श हुआ है। इसका एक बड़ा कारण पड़ोसी होने के बावजूद चीनी समाज-संस्कृति और भाषा के बारे में मीडिया की सामान्य समझ तो है ही, चीन को प्रेरित करने वाले दर्शन और रणनीति के प्रति अनभिज्ञता भी है। हाँ, वर्चुअल मीडिया के विकास के बाद चीन के रणनीतिक आकलन की स्थिति सुधर अवश्य रही है। इसका एक बड़ा कारण वर्चुअल माध्यमों में ‘टाइम’ और ‘स्पेस’ के अवरोधों के कम होने के साथ विषय-विशेषज्ञों की अधिक मांग भी है। किसी भी घटनाक्रम की सामान्य जानकारी अब सोशल मीडिया में उपस्थित ‘गैर-पत्रकारीय’ कारकों से भी मिल जाती है और रणनीतिक विषयों से संबंधित सूचनाओं के अधिक प्रवाह के कारण सामान्य लोगों की रणनीतिक और कूटनीतिक समझ भी बढ़ी है। ऐसे में विशेषज्ञों और रणनीतिकारों की ‘वर्चुअल स्पेस’ में माँग और प्रकाशित होने की संभावनाएँ अधिक हो गई हैं। 1962 के युद्ध के पश्चात् लगभग आधी सदी तक इस बारे में विमर्श और शोध पर कुछ खास प्रगति देखने को नहीं मिली। रणनीतिक आकलन का कार्य भी बहुत गंभीरता और व्यवस्थित तरीके से मीडिया-जगत् में नहीं किया गया। 2017 के डोकलाम विवाद और हालिया गलवान विवाद के बाद भारतीय परिप्रेक्ष्य और हितों को ध्यान में रखते हुए एक ‘वर्चुअल-विमर्श’ ने आकार लिया है। यह ‘वर्चुअल-विमर्श’ अधिक तथ्यपरक, रणनीति-केंद्रित, वृहद और व्यवस्थित है। प्रस्तुत शोध आलेख ‘वर्चुअल-विमर्श’ में चीन की ‘फाइव फिंगर रणनीति’ की मूलभूत स्थापनाओं और प्रवृत्तियों को किस तरह रेखांकित किया जा रहा है, उसके आकलन का एक प्रयास है।

संकेत शब्द : वर्चुअल-विमर्श, फाइव फिंगर रणनीति, डोकलाम-विवाद

प्रस्तावना

डोकलाम संघर्ष के बाद निर्वासित तिब्बत सरकार के प्रधानमंत्री (सिक्योंग) लोबजंग सांगे ने इस घटना को ‘फाइव फिंगर नीति’ के साथ जोड़ते हुए भारत को सतर्क रहने की सलाह दी थी। उन्होंने कहा था कि लद्दाख पहली फिंगर है और आने वाले समय में चीन सभी पाँच फिंगर की ओर अधिक आक्रामकता से बढ़ेगा (सांगे, 2022)। तब काँग्रेस संसदीय दल के नेता और नेता प्रतिपक्ष अधीर रंजन चौधरी ने अपने आलेख में चीन की ‘फाइव-फिंगर रणनीति’ का उल्लेख किया था (चौधरी, 2020)। परंपरागत रूप से चीन, तिब्बत को हथेली और लद्दाख, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, नेपाल और भूटान को पाँच अँगुलियों के रूप में देखता रहा है। फाइव फिंगर में से नेपाल और भूटान वर्तमान में विदेशी स्वतंत्र राष्ट्र हैं, जबकि फाइव फिंगर में से तीन क्षेत्र लद्दाख, सिक्किम और अरुणाचल भारत के राज्य हैं। भारत की परंपरागत मीडिया में चीन की इस रणनीति, इसके स्वरूप के बारे में बहुत कम चर्चा हुई है, लेकिन अब विविध विशेषज्ञों द्वारा वर्चुअल स्पेस में इसकी चर्चा में प्रारंभ हुई है। डोकलाम विवाद ने इस पर फिर पक्की मोहर लगा दी है कि चीनी नेतृत्व और चीनी जनमानस न तो इस फाइव फिंगर नीति को भूला है और न ही इससे पीछे हटा है, बल्कि शी जिनपिंग के सत्तासीन होने के बाद चीन के सीमा विवाद आक्रामक रूप से बढ़े हैं। माओ की नीतियों को उसी रूप में आगे ले जाने का काम किसी और चीनी नेता ने इतना नहीं किया, जितना शी जिनपिंग ने। और यह भी कि शी जिनपिंग, माओ की नीतियों के तगड़े उपासक हैं।

लद्दाख का दृश्य देखें तो पाकिस्तान के साथ चीन के महत्त्वाकांक्षी प्रोजेक्ट सी-पेक और ‘वन बेल्ट वन रोड’ के आलोक में लद्दाख क्षेत्र की संवेदनशीलता और इस पर चीन-पाकिस्तान के गठजोड़ की उपस्थिति भारत के लिए अत्यधिक चुनौतीपूर्ण है। लद्दाख की भू-रणनीतिक महत्ता और इस क्षेत्र को लेकर चीन के इरादे उसी दिन जाहिर हो गए थे, जब भारत द्वारा धारा 370 हटाने के पश्चात् चीन ऐसा पहला मुल्क था, जिसने लद्दाख की यूनियन टेरिटरी के विधायी स्टेटस को सबसे पहले रद्द करने वाला बयान दिया था। हाल के समय में चीन द्वारा इस क्षेत्र की सीमा में बड़े पैमाने पर आधारभूत संरचनाओं का विकास किया गया एवं सीमा के नजदीक नए गाँव बनाकर वहाँ अपने संदिग्ध लोगों को बसाने का प्रयास किया गया है। एक तरफ लद्दाखी सीमा क्षेत्र में चीन द्वारा रेडियो और टीवी नेटवर्क का विस्तार कर अपनी सूचनाओं का प्रसार भारतीय क्षेत्र में करने के प्रोजेक्ट पर काम किया जा रहा है, तो वहीं दूसरी तरफ इस क्षेत्र से निकलने वाले काशगर-ल्हासा रोड का बचा हुआ हिस्सा निर्माण करने में भी चीन विवाद में कोई मौका नहीं छोड़ता। 2020 में गलवान घाटी के खूनी संघर्ष के बाद लद्दाख को लेकर चीनी इरादों पर कोई शक की गुंजाइश बाकी नहीं रह गई है।

दूसरे क्षेत्र सिक्किम के भारतीय भू-भाग होने की आधिकारिक मान्यता को लेकर 2003 तक चीन का रुख अड़ियल रहा और 2003 में प्रधानमंत्री वाजपेयी की चीन यात्रा के बाद चीन ने सिक्किम को भारतीय भू-भाग की मान्यता दी। 1967 में नाथु-ला और चो-ला में आमना-सामना, 1975 में सिक्किम की जनता द्वारा भारतीय पक्ष में जनमत संग्रह को गैरकानूनी मानना और 2003 तक इसको भारतीय भू-भाग की मान्यता न देना तथा हालिया डोकलाम सीमा पर दोनों सेनाओं का आमना-सामना सिक्किम को लेकर चीन की आक्रामक और विस्तारवादी नीति को स्पष्ट करता है। तीसरे भारतीय क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश (पूर्व में नेफा) में भी चीनी महत्त्वाकांक्षा सिक्किम और लद्दाख वाली ही है। तवांग पर चीनी दावा और विवाद कभी खत्म नहीं हुआ। इस प्रदेश पर चीन की गिद्ध दृष्टि का मुख्य कारण यह है कि यह प्रदेश उत्तर-पूर्व भारत का सबसे बड़ा राज्य है

[1]सहायक आचार्य, कश्मीर अध्ययन केंद्र, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, ईमेल : jpsh.pol@gmail.com
[2]शोधार्थी, कश्मीर अध्ययन केंद्र, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, ईमेल : sangeet.raavi@gmail.com

एवं इसकी तीन देशों के साथ सीमा भी लगती है। अरुणाचल उत्तर और उत्तर-पश्चिम में तिब्बत के साथ, पश्चिम में भूटान और पूर्व में म्याँमार के साथ सीमा साझा करता है। सुरक्षा की दृष्टि से अरुणाचल को संपूर्ण उत्तर-पूर्व का सुरक्षा कवच माना जाता है। वास्तव में भारत-चीन सीमा विवाद की जड़ में चीन की इस विस्तारवादी रणनीति का होना एक बड़ा कारक है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध आलेख में भारतीय हितों और परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए 'वर्चुअल स्पेस' में बिखरे 'फाइव फिंगर संबंधी रणनीति' के विमर्श को आकार देने वाली विषयवस्तु को रेखांकित करने और उनको विश्लेषित करने की कोशिश की गई है। इस कार्य हेतु शोध-आलेख में विषयगत-विश्लेषण (Thematic-analysis) पद्धति का प्रयोग किया गया है। इस आलेख में फाइव फिंगर रणनीति के मूलभूत तत्त्वों, उसके संभावित प्रक्षेपण और इस नीति के संदर्भ में भारत के संभावित विकल्पों की भी चर्चा की गई है। अतः इसमें नीति -विश्लेषण पद्धति का भी सहारा लिया गया है।

फाइव फिंगर रणनीति : वैश्विक अशांति का कारण

सुरक्षा विशेषज्ञ प्रो. ब्रह्म चेलानी अपने चीन विषयक आलेखों में फाइव फिंगर रणनीति के भू-राजनीतिक परिणामों, अपनाए जाने वाले रणकौशल और इसके प्रभावों पर लगातार विश्लेषण प्रस्तुत करते रहते हैं। प्रोजेक्ट सिंडीकेट में 'चाइनाज फाइव फिंगर पंच' शीर्षक वाले आलेख में वे चीन द्वारा उपयोग में लाई जा रही रणनीति का विस्तार से वर्णन करते हैं। कोविड-19 की पृष्ठभूमि के आलोक में वे चीन की इस रणनीति और खासकर शी-जिनपिंग की दूसरा माओ बनने की महत्त्वाकांक्षा को चिह्नित करते हैं। चेलानी के अनुसार शी ने हर रणनीति को वहीं से पकड़ा है, जहाँ से माओ ने छोड़ा था। अमेरिकी सुरक्षा सलाहकार शी को स्टालिन के पदचिह्नों पर चलता देखते हैं तो वहीं कोरियन मूल के क्वोन प्योंग, शी को शिट्लर (Xitler) नाम देते हैं। पर असल में शी सिर्फ दूसरे माओ हैं। चाइनीज कम्युनिस्ट पार्टी ने शी के विचारों पर एक पूरा अध्याय अपने संविधान में शामिल किया है। साथ ही संवैधानिक संशोधन करके उन्हें तीसरी बार राष्ट्रपति बनाया गया है और 'लोगों का नेता' (Renmin Lingxiu)' नाम दिया है, जो पूर्व में सिर्फ माओ के लिए प्रयोग होता था। शी अपने आक्रामक रुख से खुद माओ से ही प्रतियोगिता में हैं, जिसने अपने समय में तिब्बत पर कब्जा किया। माओ तिब्बत को चीन का दाहिना हाथ और लद्दाख, सिक्किम, अरुणाचल सहित नेपाल और भूटान को इसकी पाँचों अँगुलिया मानते थे। माओ द्वारा तिब्बत पर आधिपत्य जमाना दूसरे विश्वयुद्ध के बाद की सबसे बड़ी भू-राजनीतिक घटना थी। माओ के बाद अब बाकी बचती अँगुलियों को छीनने का जिम्मा शी ने ले लिया है और यह स्पष्ट दिखता है। जून 2020 में लद्दाख में शी की शह पर योजनापूर्वक घुसपैठ की गई, जिससे एक बड़ा खूनी संघर्ष हुआ। इसके समानांतर शी द्वारा हजारों चीनी सैनिकों की तैनाती लद्दाख, सिक्किम और अरुणाचल सीमा पर की गई। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी इस फ्रंट के साथ ही बाकी बचती दो अँगुलियों भूटान और नेपाल को भूल नहीं गई है, बल्कि वहाँ भी चीनी प्रयास लगातार जारी हैं। जैसे ही गलवान पर कुछ शांति हुई चीन ने भूटान के एक बड़े भू-भाग (सक्तांग) पर दावा ठोक दिया, जिसका रास्ता सिर्फ भारतीय क्षेत्र अरुणाचल से होकर जाता है और भूटान-भारत-तिब्बत त्रिकोण स्थित गलवान में 2017 में कब्जा करने का प्रयास भी हुआ। पाँचवीं अंगुली पर चीन एक साथ तीन तरीकों से काम कर रहा है। एक विभिन्न सहायता फंड द्वारा, दूसरा नेपाली कम्युनिस्ट पार्टी को समर्थन द्वारा और तीसरा सीधा भू-कब्जे की रणनीति द्वारा। हालिया नेपाली कृषि विभाग की रिपोर्ट के मुताबिक चीन ने अपने बड़े रोड प्रोजेक्ट का दायरा नेपाल के उत्तरी क्षेत्र के अंदर तक बढ़ा दिया है और नेपाल की नदियों की स्थिति बदल दी है। दूसरे शब्दों में चीन की विस्तारवादी फाइव फिंगर रणनीति दुनिया की सबसे लंबी चलने वाली निरंकुश एकतंत्र व्यवस्था को कायम रखने का प्रयास है। जब तक ताकत चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और विशेषकर शी के हाथ में रहेगी, चीन का कोई भी पड़ोसी सुरक्षित नहीं होगा (चेलानी, 2020)।

सुरक्षा विशेषज्ञ और चीन विषयों के एक अन्य विशेषज्ञ अभिजीत भट्टाचार्य के 'द एशियन एज' में छपे आलेख में फाइव फिंगर रणनीति का उल्लेख चीन के लिए इन क्षेत्रों पर कब्जा करने के एक मुश्किल रास्ते के रूप में मिलता है। भट्टाचार्य के मत में चीन का इन क्षेत्रों से कोई सांस्कृतिक संबंध स्थापित नहीं होता है, क्योंकि यह क्षेत्र हिमालय में है, जिसका सीधा संबंध हिंदू, बौद्ध, जैन और सिख मत से है, न कि चीनी संस्कृति से। चीनी संस्कृति का मूल हवांग-हो और यंत्से-थान नदियों से है, जो सुदूर स्थित हैं। यहाँ तक कि हिमालय का नाम भी संस्कृत में है। आगे वे रोचक रूप में इन सारे क्षेत्रों की भौगौलिक दूरी पर आँकड़ा देते हुए सिद्ध करते हैं कि इन क्षेत्रों की दूरी नई दिल्ली से बीजिंग की तुलना में आधी या तीसरा हिस्सा है। इनमें लद्दाख को देखें तो रोचक यह है कि लद्दाख की नई दिल्ली से दूरी 1258 किलोमीटर है, वहीं बीजिंग से इसकी दूरी 3490 किलोमीटर है। आगे भट्टाचार्य यह मत व्यक्त करते हैं कि अगर आज की स्थिति में इन फाइव फिंगर की स्थिति को देखें तो लद्दाख आज भी भारत का हिस्सा है, सिक्किम अपने को भारत में विलय कर चुका है, नेपाल विश्व परिदृश्य से एक आजाद देश है, भूटान के थिंपु में चीनी दूतावास की संभावना अभी भी नगण्य है और अरुणाचल भारत का एक पूर्ण राज्य है। ऐसे में सीधे इन क्षेत्रों पर अधिकार चीन के लिए एक दूर की कौड़ी है। ऐसे में चीन परोक्ष तरीकों का सहारा लेगा, जिनमें विकास फंड, आर्थिक विकास, ढाँचागत विकास सहायता, संपर्क मार्ग और कॉरीडोर इत्यादि लुभावने शब्द प्रमुख हैं। इन शब्दों के माध्यम से ही चीन इन क्षेत्रों में अपने मनसूबों को आगे बढ़ाएगा (भट्टाचार्य, 2017)।

उत्तर प्रदेश के पूर्व सूचना आयुक्त हैदर अब्बास के 'यूरेशियन टाइम्स' में प्रकाशित आलेख में फाइव फिंगर रणनीति से बने स्टेट को माओ के सपनों का स्टेट कहा गया है और सीमा के निकट चीन द्वारा किए जा रहे विभिन्न ढाँचागत निर्माणों का विस्तृत हवाला देते हुए यह बताया गया है कि चीन माओ के सपनों का राज्य बनने की तरफ बढ़ रहा है, जिसे माओ ने फाइव फिंगर ऑफ तिब्बत कहा था। लेख के शीर्षक में ही फाइव फिंगर रणनीति को भारत और इसकी सेना के लिए एक बड़ी चुनौती के रूप में दर्शाना भी इस लेख की एक विशेषता है। इस आलेख की रोचक बात यह है कि लेखक ने पहले चीन द्वारा सीमा पर की जा रही कुटिल कार्यवाहियों को विस्तृत रूप में वर्णित किया है और अंत में इन सब कार्यवाहियों को 'माओ के सपनों का स्टेट' की तरफ कदम बढ़ाने के रूप में देखा है। इसमें चीन की चिर-परिचित छल-प्रपंच नीति का उदाहरण इस रूप में आया है कि एक तरफ गलवान विवाद के संदर्भ में चीन भारत के साथ शांति वार्ता

में लगा था और इसके समानांतर ही वह पूर्वी सेक्टर में सीमा के करीब अवैध निर्माण को भी जारी रखे हुए था। इसमें यह तथ्य भी विस्तृत रूप में लिखा गया है कि सीमा के निकट छोटे-छोटे मकान इत्यादि बनाकर चीन वहाँ अपने नागरिकों (छद्म रूप में सैनिकों) को बसाएगा, जिससे भविष्य में विवाद की स्थिति में आबादी की बसावट के आधार पर चीनी दावे को और मजबूत किया जा सके (अब्बास, 2020)।

फाइव फिंगर रणनीति : दुष्प्रचार है केंद्रीय हथियार

भारत की जाइंट इंटेलिजेंस कमेटी के चेयरमैन और उप-सुरक्षा सलाहकार के रूप में कार्य कर चुके एस.डी. प्रधान ने 'द टाइम्स आफ इंडिया' में एक विस्तृत एवं रणनीतिक सामग्री से भरपूर आलेख लिखा है। आलेख के शीर्षक में ही फाइव फिंगर रणनीति का संदर्भ चीन की विस्तारवादी नीति से जोड़कर दिया गया है, जो गंभीर पाठकों को आकर्षित करता है। लेख के बीच में उन्होंने चीन की विस्तारवादी नीति की जड़ में दो सिद्धांतों को देखा है। एक माओ द्वारा दिया गया सिद्धांत फाइव फिंगर ऑफ तिब्बत और दूसरा सेना की केंद्रीय भूमिका युक्त विशिष्ट कम्युनिष्ट सिद्धांत। इसमें वे कम्युनिष्ट विशिष्ट सिद्धांत पर रोशनी डालते हुए बताते हैं कि माओवाद सेना की केंद्रीय भूमिका के साथ एक क्रांतिकारी सिद्धांत का प्रतिनिधित्व करता है। इसका सिद्धांत सैनिक विद्रोह, लोक-लामबंदी और रणनीतिक साझेदारी के जरिये राज्य शक्ति पर अधिकार करना है और साथ ही यह सिद्धांत बड़े पैमाने पर प्रोपेगंडा और दुष्प्रचार की भी अनुशंसा करता है। इसमें आखिरी लक्ष्य प्राप्ति की राह में छोटे-छोटे कदम बढ़ाए जाते हैं, पर अंतिम लक्ष्य अपरिवर्तित रहता है (इस सिद्धांत से वर्तमान में चीनी सेना द्वारा सीमा पर किए जा रहे प्रच्छन्न ऑपरेशन छोटे कदम हैं और अंतिम लक्ष्य फाइव फिंगर है)। आगे वे अन्य विद्वानों की तरह ही शी के दूसरा माओ बनने या उसकी नीतियों का शत-प्रतिशत अनुसरण करने को रेखांकित करते हैं। प्रधान इस आलेख में एक अति महत्त्वपूर्ण तथ्य का वर्णन करते हैं कि शी के नेतृत्व में चीन की 13 विभिन्न एजेंसियों को मिलाकर 2012 में एक कमेटी का गठन किया गया था, जिसका मुख्य लक्ष्य था इसके भूमि संबंधी दावों के बारे में बड़े स्तर पर नकली सबूत गढ़ना और प्रकाशित करना। इसकी अनुशंसा पर चीन ने अपने नए बायो-मीट्रिक पासपोर्ट में भारत-तिब्बत-चीन सीमा के क्षेत्रों और दक्षिण चीन सागर के क्षेत्रों को अपना दिखाया है (प्रधान, 2021)।

इस विषय पर गलवान विवाद के तुरंत बाद 'द हिंदू' में सुहासिनी हैदर का विस्तृत और तथ्यों से भरपूर आलेख मिलता है। लेख की शुरुआत में ही गलवान विवाद की जड़ में चीन की फाइव फिंगर रणनीति को देखा गया है और इसके साथ ही आलेख भारत-चीन सीमा विवाद के इतिहास और इसके तथ्यों को विस्तार से वर्णित करने वाला है। आलेख में उस समय पीकिंग में भारतीय विदेश सेवा के अधिकारी रहे त्रिलोकी नाथ कौल के संस्मरणों को एक आधिकारिक तथ्य के रूप में दिया गया है, जो इस रणनीति के ऐतिहासिक संदर्भ की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण तथ्य साबित होता है। इसके साथ ही 1962 के युद्ध से पहले भारत द्वारा चीन को रोकने के लिए अपनाई गई त्रि-आयामी रणनीति को विस्तार से बताया गया है। जैसे कि नेफा के मुद्दों को देखने के लिए विशेष तौर पर 'इंडियन फ्रंटियर ऍडमिनिस्ट्रेटिव सर्विस' का गठन और उस समय नेपाल और भूटान के साथ की गई संधियाँ प्रमुख हैं।

डोकलाम विवाद : नया संदर्भ बिंदु

वर्चुअल-विमर्श में इस विषय पर भारतीय जनसाधारण को जागरूक करने में भारतीय पूर्व सैन्य अधिकारियों ने बखूबी कार्य किया है। हालाँकि इनमें से ज्यदातार आलेख इत्यादि डोकलम विवाद के बाद के ही मिलते हैं। ब्रिगेडियर अनिल गुप्ता ने अपने एक आलेख में चीन की इस रणनीति का जिक्र तो किया ही है, पर इस आलेख के माध्यम से वे शी जिनपिंग की एक और नीति 'चाइना ड्रीम' और द ग्रेट चाइना नेशन' पर भी विस्तार से लिखते हैं। वास्तव में माओ द्वारा दी गई अवधारणा 'लंबी छलाँग' की तरह ही शी द्वारा एक नई अवधारणा चीनी जनमानस में रोपी गई है, जिसे वे चाइना ड्रीम के नाम से जानते हैं। बकौल शी यह ग्रेट चीनी नेशन को फिर से उसी रूप में खड़ा करने का प्रयास है, जिसमें उन इलाकों को वापस प्राप्त करना भी शामिल है, जो इतिहास में साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा छीन लिए गए थे। शी इसे चीनी राष्ट्र के लिए आधुनिक इतिहास का महानतम स्वप्न कहते हैं (गुप्ता, 2021)। इस विषय पर मेजर जनरल वी.के. मधोक द्वारा भारत के प्रधानमंत्री, रक्षा मंत्री, सेना प्रमुखों, चीफ आफ डिफेंस स्टाफ और अन्य संबंधितों को एक लंबा पत्र लिखा गया, जो बाद में 'मिशन विक्टरी इंडिया प्लेटफॉर्म' पर प्रकाशित हुआ है। इसमें जनरल कटोच तिब्बत को केंद्र में रखकर विस्तार में भारत सरकार को तिब्बत के संबंध में स्पष्ट नीति बनाने का आग्रह करते हैं। उनके मत में पिछले 69 साल में चीन द्वारा किए गए सारे प्रयास फाइव फिंगर सेना सिद्धांत (डाक्ट्रिन) को समर्थन करने वाले ही साबित हुए हैं और यह सफलतापूर्वक लागू भी किया जा रहा है। आगे वे बताते हैं कि भारत को यह तय करना होगा कि तिब्बत भारत के लिए एक ट्रंपकार्ड है या एक बोझ। भारत ने आजादी के बाद खुद ही प्लेट में सजाकर तिब्बत चीन को सौंप दिया था, क्योंकि ब्रिटेन के जाने के बाद विरासत में तिब्बत पर मिले अधिकार के बारे में जब 1948 में चीनी प्रतिनिधि ने प्रधानमंत्री नेहरू को इसके बारे में दरियाफ्त किया तो उनका जवाब न में था। आज भी भारत की नीति तिब्बत को लेकर भ्रम का शिकार है। एक तरफ भारत ने दलाई लामा को अतिथि के नाते शरण भी दी है, पर उनकी राजनीतिक गतिविधियों को रोक रखा है, वहीं तिब्बत को चीन का भू-भाग होने की मान्यता भी दे रखी है और साथ ही उनकी निर्वासित तिब्बती सरकार (Tibetan Government in Exile) को भी भारत में गतिविधियाँ करने की इजाजत है। आगे वे चेताते हैं कि जब हम कहते हैं कि तिब्बत चीन का भू-भाग है तो हम कभी चीन को यह नहीं कहते कि वह तिब्बत की सीमा निर्धारित करे। आज तिब्बत चीन का एक तगड़ा मिलिट्री बेस बन चुका है, जहाँ तीन लाख सैनिक तैनात हैं। साथ ही 17 राडार स्टेशन, 14 सैन्य हवाई अड्डे और 8 मिसाइल बेस हैं, जिनसे न केवल सारे भारतीय उत्तर-पूर्व राज्यों को खतरा है, बल्कि इनकी जद में भारत के अधिकतर बड़े शहर आ जाते हैं। आज ल्हासा ही नहीं, बल्कि संपूर्ण तिब्बत में चीन द्वारा जनसांख्यकीय बदलाव कर दिया गया है और अब यह कुछ ही समय की बात रह गई है कि तिब्बत को नया चीनी नाम दे दिया जाए और तिब्बत का विश्व मानचित्र से विलोप ही हो जाए। इसलिए भारत को तुरंत तिब्बत के संदर्भ में एक स्पष्ट नीति बनाने की जरूरत है, क्योंकि फाइव फिंगर रणनीति का आधार तिब्बत है और भारत को बजाय रक्षात्मक रुख के आक्रामक रुख से तिब्बत को एक ट्रंप कार्ड की तरह प्रयोग करना चाहिए (मधोक, 2023)।

लेफ्टिनेंट जनरल भोपिंदर सिंह अपने आलेख में फाइव फिंगर रणनीति

के उल्लेख के साथ ही इसके हवाले से तिब्बत, चीन, भारत और अमेरिका के बीच इस विषय पर चल रही कशमकश और नित्य हो रहे निर्णयगत बदलावों के बारे में जागरूक करते हैं। उनके मत में चीन की दमनकारी नीतियों के वावजूद 'फ्री तिब्बत मूवमेंट' न केवल आज तक जीवित है, बल्कि दिन-ब-दिन मजबूत भी हो रहा है। भारत के संदर्भ में वे यह भी ध्यान दिलाते हैं कि भारत को इस विषय पर नजर बनाए रखनी होगी कि दलाई लामा की हो रही प्रौढ़ अवस्था इसमें एक गंभीर प्रश्न बनेगी, क्योंकि चीन ने अपने प्रभाव से पंचेन लामा की नियुक्ति की है। वैसे ही वह मौजूदा दलाई लामा के बाद अगले दलाई लामा की नियुक्ति भी अपने प्रभाव से करने का प्रयास करेगा। इस तथ्य पर भी ध्यान देना चाहिए कि अमेरिका ने हालिया समय में बाकायदा एक कानून पास कर दिया है कि अगर भविष्य में चीन इस तरह का कोई प्रयास करेगा तो उस पर विभिन्न प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं (सिंह, 2021)। वास्तव में अगर देखा जाए तो आरंभ से ही भारतीय जनमानस और खासकर सैन्य जगत् न केवल तिब्बती समाज के प्रति एक सहानुभूति रखता आया है, बल्कि इसके भू-सामरिक और भू-राजनीतिक महत्त्व को भी आमूलचूल समझता है। यही कारण है कि भारत में फाइव फिंगर रणनीति पर विमर्श तिब्बत के इर्द-गिर्द ज्यादा घूमता है। चूँकि फाइव फिंगर रणनीति के केंद्र में ही तिब्बत है, इसलिए विमर्श में तिब्बत का केंद्र में होना स्वाभाविक भी है।

फाइव फिंगर और 'ओवर लैंडिंग' युद्ध-नीति

लेफ्टिनेंट जनरल और वर्तमान में एरोस्पेस विभाग में प्रोफेसर पी.आर. शंकर इस विषय में न केवल भारतीय प्लेटफॉर्म पर लिखते हैं, बल्कि वे इस विषय को लेकर बड़े अंतरराष्ट्रीय मीडिया में भी अधिकारपूर्वक लिखते हैं। उनके द्वारा 'ताइपे टाइम्स' में अक्सर चीन के विस्तारवादी मनसूबों पर लिखा जाता है, जो कि भारतीय परिप्रेक्ष्य से चीनी हाइब्रिड वारफेयर की काट के तौर पर देखा जाना चाहिए, क्योंकि रणनीतिक दृष्टि से दुश्मन का दुश्मन अपना दोस्त कहा जाता है। 'फ्रॉम वन चाइना टू ग्रेटर चाइना' नामक आलेख में वे फाइव फिंगर रणनीति को चीनी भू-विस्तारवादी डिजाइन के हवाले से देखते हुए बताते हैं कि पड़ोसी राष्ट्रों यथा ताइवान, जापान और भारत के हिस्सों पर चीनी दावा ऐतिहासिक रूप से एक फ्राड है। इसमें वे एक रोचक तथ्य का हवाला देते हैं कि चीन की महान् दीवार बाहरी तौर पर चीन की सीमा थी, जिसे बाहरी हमलावरों से सुरक्षा के लिए बनाया गया था। ताइवान इस दीवार से बाहर का इलाका था तो फिर आज ताइवान वन चाइना का हिस्सा कैसे हो सकता है। यहाँ तक कि 1970 तक विश्व के तमाम बड़े राष्ट्र रिपब्लिक ऑफ चाइना (ROC- चीनी ताइपे) से ही व्यवहार रखते थे न कि पीपल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना (PRC- Mainland China) से। वन चाइना का क्लेम 1979 में अमेरिका द्वारा चीन को मान्यता देने के बाद ही अस्तित्व में आया है, जिसका कोई ऐतिहासिक वजूद नहीं है। इसी तरह 2003 में भारत-चीन के मध्य समझौता हुआ तो उस समय अरुणाचल प्रदेश पहले से भारत का एक राज्य था। समझौते के वक्त इस पर कोई विवाद नहीं हुआ, पर हस्ताक्षर करने के बाद चीन ने इसे दक्षिणी तिब्बत (South Tibet) कहना शुरू कर दिया। इसके पहले साउथ तिब्बत की अवधारणा का कहीं जिक्र नहीं है। और इस अवधारणा को बल देने के लिए अब इसका फर्जी इतिहास बताया जा रहा है और फर्जी चीनी नाम दिए जा रहे हैं। भारतीय संदर्भ में आगे वे चेताते हैं कि वन चाइना अवधारणा को कभी स्वीकार नहीं करना चाहिए, क्योंकि इसका सीधा मतलब है चीन की वृहत्तर भू-विस्तारवादी योजना को स्वीकार कर लेना (शंकर, 2022)।

एक अन्य आलेख में जनरल शंकर चीन की फाइव फिंगर रणनीति का जिक्र करते हुए इसे प्राप्त करने हेतु चीन द्वारा अपनाई जाने वाली रणनीतियों में एक अन्य महत्त्वपूर्ण कुटिल रणनीति 'ओवरलैंडिंग' रणनीति का जिक्र करते हैं। इस रणनीति में लगातार भू-भागों पर क्लेम करते जाना और उन भू-भागों पर लगातार घुसपैठ का क्रम जारी रखना शामिल है। इस रणनीति के तहत चीन ने अपना मुख्य लक्ष्य पूर्वी प्रभाग (Eastern Front) पर बनाए रखा और लगातार इस फ्रंट पर घुसपैठ और विवाद की कारवाई को जारी रखा है। पूर्वी प्रभाग चीन इसलिए गतिशील रखता है, क्योंकि इस क्षेत्र में ओवरलैंडिंग रणनीति के तहत उसकी रणनीति के चार क्षेत्र—सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, नेपाल और भूटान—एक साथ लक्षित होते हैं। इस इरादे की अभिव्यक्ति चीन द्वारा लगातार की जाती रही है। 1962 का युद्ध ज्यादातर इसी क्षेत्र के केमेन्ग सेक्टर और लोहित घाटी में लड़ा गया था। उसके बाद 1967 का नाथु-ला घटना सिक्किम में हुआ, और फिर अरुणाचल पर दक्षिण तिब्बत कहकर अधिकार जताना। 2017 का डोकलाम विवाद भी इसी क्षेत्र में रहा। और तो और, 2020 के गलवान विवाद के समय भी उत्तरी सिक्किम के नाकू-ला क्षेत्र में लगातार गुसपैठ के यत्न किए गए। इस सारे घटनाक्रम के समानांतर चीन द्वारा नेपाल के भू-भाग में घुसपैठ और भूटान के क्षेत्र पर दावा भी किया गया। स्पष्ट है कि चीन की इस रणनीति से केवल इन प्रदेशों को ही नहीं, बल्कि सारे भारतीय उत्तर-पूर्व राज्यों में अस्थिरता का खतरा है (शंकर, 2022)।

लेफ्टिनेंट जनरल हरवंत सिंह अपने आलेख में फाइव फिंगर रणनीति का वर्णन करते हुए भारतीय परिप्रेक्ष्य में नेपाल में फोकस करने का विचार देते हैं। उनके मत में फाइव फिंगर के भारतीय भू-भागों लद्दाख, सिक्किम और अरुणाचल को बिना सीधे युद्ध के हड़पना चीन के लिए संभव नहीं और लाख प्रयास करने के बावजूद भूटान चीन के जाल में फँसने को तैयार नहीं है। इसलिए चीन के पास सिर्फ नेपाल बचता है। यहाँ से वह अपनी रणनीति के ऑपरेशन को चला सकता है और उसने इसका प्रयास बहुत पहले से शुरू भी कर दिया है। नेपाल में ढाँचागत निर्माण प्रोजेक्टों, चेक डिप्लोमेसी, नेपाल-तिब्बत के बीच संपर्क मार्ग के निर्माण इत्यादि द्वारा वह काफी हद तक नेपाली सरकार और नेपाली लोगों के सेंटिमेंट को जीतने में सफल रहा है। ऐसी भी रिपोर्टें आईं कि भारतीय सरहद के साथ लगते क्षेत्रों में भारत विरुद्ध प्रदर्शन आयोजित करने के लिए नेपाली लोगों को चीन द्वारा ढाई करोड़ नेपाली मुद्रा बाँटी गई। आगे वे सुझाव देते हैं कि भारतीय और नेपाली लोगों के बीच बहुत प्रगाढ़ ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और धार्मिक संबंध रहे हैं, जिससे भारत आसानी से आज भी नेपाल में अपना स्थान कहीं मजबूत बना सकता है, ताकि चीन को वहाँ ऑपरेशनल बेस बनाने से रोका जा सके (सिंह, 2020)।

'द ग्रेट गेम' की पृष्ठभूमि

कर्नल डॉ. एन.के. छिब्बर अपने शोध आलेख में फाइव फिंगर रणनीति को इतिहास से लेकर वर्तमान तक खँगालते हैं। ऐतिहासिक अवधारणा 'ग्रेट गेम' को परिप्रेक्ष्य में लेते हुए बताते हैं कि कैसे ग्रेट गेम के रूप में ब्रिटिश और रूस के राजनीतिक समीकरणों में एक बफर जोन की कल्पना

विकसित की गई, जिसका केंद्र तिब्बत, भारत, अफगानिस्तान से लगता त्रिकोणीय क्षेत्र बना। रशिया और ब्रिटेन के बीच सीमा को लेकर बहुत सारी संधियाँ हुईं, पर बीच में अचानक से चीन आ गया। इसके बाद ब्रिटेन, रशिया और चीन के बीच तिब्बत की सीमा को लेकर चीन मैकमोहन लाइन को शुरुआत में मान गया, पर हस्ताक्षर करने के वक्त मुकर गया। भारतीय सीमा को लेकर चीन के इरादे इससे भी जाहिर होते हैं कि PRC बनने के बाद चीन ने बर्मा के साथ मैकमोहन लाइन की सीमा को स्वीकार कर लिया, पर भारत के साथ उसी मैकमोहन लाइन को स्वीकार करने से मुकर गया, क्योंकि अगर उस समय यह स्वीकार हो जाता तो भविष्य में फाइव फिंगर क्षेत्र पर चीन दावा नहीं कर सकता था। आगे वे यह भी जोड़ते हैं कि बेशक 1962 के युद्ध ने भारतीय राजनीतिक नीति नियंताओं और सैन्य नेतृत्व के मन में एक गहरा घाव छोड़ा है, पर हमें इसके बाद की उन घटनाओं का वर्णन करने में नहीं झिझकना चाहिए, जिनमें कई बार भारतीय सैनिकों ने चीनी सैनिकों को बुरी तरह परास्त किया। इनमें चो-ला और स्मुदरोंग घाटी की घटनाएँ प्रमुख हैं, जिनमें भारतीय सैनिकों ने 300 चीनी सैनिक मार गिराए और चीन को घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया था (छिब्बर, 2020)।

जनरल ध्रुव कटोच अपने आलेख में इस रणनीति के तहत चीन द्वारा शुरुआत में किए गए प्रयास और वर्तमान में किए जा रहे कुटिल प्रयासों को रेखांकित करते हैं। उनके मत में माओ ने जिस फाइव फिंगर रणनीति को लक्ष्य किया था, उसका हाथ वह पहले प्रयास में ही 1950 में तिब्बत के रूप में ले गया था। इसके बाद तत्कालीन भारतीय राजनीतिक नेतृत्व की ढिलाई और उदासीनता की वजह से अक्साई चीन के रूप में पहली फिंगर का बड़ा भू-भाग ले गया। इसके बाद भी उसने 1963 में इस फिंगर का रणनीतिक रूप से अति महत्त्वपूर्ण भू-भाग सक्षाम घाटी के रूप में पाकिस्तान से ले लिया और आज चीन रणनीतिक दृष्टि से अति महत्त्वपूर्ण क्षेत्र गिलगित-बल्टिस्तान में भारत की तुलना में बढ़त पर है। आगे वे इस रणनीति के हवाले से चीन द्वारा लद्दाख, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, नेपाल एवं भूटान में किए जा रहे कुटिल प्रयासों के बारे में आगाह करते हैं कि इन सारे घटनाक्रमों को एकांगी रूप में न देखकर चीन की इस दीर्घकालिक रणनीतिक के रूप में देखना चाहिए कि उसका इरादा संपूर्ण हिमालय क्षेत्र पर अधिकार का है (कटोच, 2020)।

अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य देखें तो चीन की इस रणनीति का उल्लेख अंतरराष्ट्रीय मीडिया में भी हालिया समय में आना शुरू हुआ है। उदाहरण के तौर पर लॉरेन जैक्सन 'द डिप्लोमैट' में चीन की इस रणनीति का जिक्र सेंटर फॉर चाइना एनालिसिस के अध्यक्ष जयदेव रानाडे के हवाले से करते हैं, जिसमें माओ के तियानमेन चौक के उस भाषण को रेखांकित किया गया है, जिसमें माओ ने इस रणनीति का उल्लेख किया था (जैक्सन, 2019)। इसी तरह सरीना थेयस के आलेख में भी इस रणनीति का वर्णन उन्होंने किया है, पर इसमें एक नई बढ़त यह है कि उन्होंने अपने इस आलेख में तिब्बत और उसकी फाइव फिंगर का नक्शा भी दिया है (थेयस, 2018)। यह जानना भी महत्त्वपूर्ण है कि मास्को स्थित रशिअन थिंक टैंक 'रशिअन इंटरनेशनल अफेयर्स काउंसिल' के ग्लोबल रिव्यु ब्लॉग में भी इस विषय पर एक विस्तृत आलेख मिलता है, जिसमें इस रणनीति का जिक्र तिब्बती सरकार के प्रधान लोबसंग सांगे के हवाले से किया गया है। इस आलेख में न केवल इस रणनीति का जिक्र है, बल्कि वर्तमान में भारत-चीन के मध्य चल रहे संपूर्ण विवाद और चीन द्वारा किए जा रहे प्रयासों पर भी विस्तृत रूप में जानकारी दी गई है (ओस्टनर, 2020)।

निष्कर्ष

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में यह स्पष्ट होता है कि 'फाइव फिंगर आफ तिब्बत' के रूप में संपूर्ण हिमालयी क्षेत्र के लिए न केवल चीन की एक कुटिल रणनीति विद्यमान है, बल्कि चीन द्वारा इसे प्राप्त करने हेतु पीआरसी बनने के बाद से ही लगातार प्रत्यक्ष-परोक्ष प्रयास किए जा रहे हैं। शी-जिनपिंग के सत्तासीन होते ही इन प्रयासों में अपूर्व तेजी आई है। दूसरी तरफ भारतीय परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखकर पिछले कुछ वर्षों में एक 'वर्चुअल-विमर्श' ने आकार लिया है। इस विमर्श में गहराई से उतरकर देखने पर यह स्पष्ट होता है कि चीन की यह रणनीति वैश्विक अशांति का कारण बनी हुई है और इसी रणनीति के कारण चीन अपने पड़ोसियों से निरंतर संघर्षरत है। चीन की यह रणनीति सिर्फ दोहरे मापदंड, तथ्यों के विरोधाभासों और वाक-प्रपंच पर आश्रित है। डोकलाम घटनाक्रम 2017 के बाद इस विषय में शुरुआती विमर्श को गति मिली है। हालाँकि अभी इस विषय का संदर्भ सिर्फ शुरुआती वर्णन और चीन द्वारा भारतीय सीमा पर किए जा रहे कुत्सित प्रयासों को आपस में जोड़कर देखने तक ही शुरू हुआ है, पर इसके गहराई से विश्लेषण और चीनी परिप्रेक्ष्य में इस विषय पर चीन के अंदरूनी क्रियाकलापों पर विस्तृत शोध की जरूरत भविष्य में एक बड़ा विषय होगा।

संदर्भ

अब्बास, एच. (09 दिसंबर, 2020). व्हाई चाइनाज बेलिग्रंट 'फाइव फिंगर स्ट्रेटेजी' इज अ 'हरकुलीन चैलेंज फॉर इंडिया एंड इट्स आर्मी?, द यूरेशियन टाइम्स, https://eurasiantimes.com/why-chinas-belligerent-five-finger-strategy-is-a-herculean-challenge-for-india-its-army/ से 15/03/2023 को पुनःप्राप्त.

ओस्ट्नर, आर. (16 जुलाई, 2020). इंडो-चाइनीज कनफ्लिक्ट एंड यूरेशियन हार्टलैंड, ग्लोबल रिवियु, https://russiancouncil.ru/en/blogs/ralf-ostner/indochinese-conflict-and-the-eurasian-heartland/ से 21/03/2023 को पुनःप्राप्त.

कटोच, डी. सी. (15 जुलाई, 2020). फाइव फिंगर्स एंड पाल्म, इंडिया फाउंडेशन, https://chintan.indiafoundation.in/articles/five-fingers-and-the-palm/ से 20/03/2023 को पुनःप्राप्त.

गुप्ता, ए. (28 जनवरी, 2021). फाइव फिंगर्स ड्रीम्स ऑफ माओ जेदोंग, इंडियन डिफेंस रिवियु, http://www.indiandefencereview.com/news/five-fingers-dream-of-mao-zedong/ से 08/03/2023 को पुनःप्राप्त.

चेलानी, बी. (22 जुलाई, 2020). चाइनाज फाइव फिंगर पंच, द स्ट्रेटेजिस्ट, https://www.aspistrategist.org.au/chinas-five-finger-punch/ से 15/03/2023 को पुनःप्राप्त.

चौधरी, ए.आर. (17 जून, 2020). चायनीज इन्ट्रूजन इन लद्दाख हैज क्रिएटेड अ चैलेंज दैट मस्ट बी मेट, द इंडियन एक्सप्रेस, इंडियन एक्सप्रेस, https://indianexpress.com/article/opinion/columns/resolve-and-prudence-india-china-border-

dispute-galwan-valley-ladakh-6462309/ 21/02/2023 को पुनःप्राप्त.

छिब्बर, एन.के. (24 नवंबर, 2020). ड्रेगंस लदाख फॉक्स पास, डिफेंस रिसर्च एंड स्टडी, https://dras.in/dragons-ladakh-faux-pas-2020/ से 20/03/2023 को पुनःप्राप्त.

जैक्सन, एल. (21 मार्च, 2019). चाइना इज विनिंग द वार फॉर नेपाली बुद्धिज्म, द डिप्लोमैट, https://thediplomat.com/2019/03/china-is-winning-the-war-for-nepali-buddhism/ से 26/03/2023 को पुनःप्राप्त.

थेयस, एस. (25 जनवरी, 2018). रनिंग हॉट एंड कोल्ड : भूटान-इंडिया-चाइना रिलेशन, एलएसई, https://blogs.lse.ac.uk/southasia/2018/01/25/running-hot-and-cold-bhutan-india-china-relations-doklam/ से 19/03/2023 को पुनःप्राप्त.

प्रधान, एस.डी. (24 अक्तूबर, 2021). चाइनीज ओवरआल ओब्जेक्टिव ऑफ एक्सपेंशन : ओकुपेशन ऑफ फाइव फिंगर्स, द टाइम्स ऑफ इंडिया, https://timesofindia.indiatimes.com/blogs/ChanakyaCode/chinese-overall-objective-of-expansion-occupation-of-five-fingers/ से 08/03/2023 को पुनःप्राप्त.

भट्टाचार्य, ए. (27 जून, 2017). चाइनाज भूटान पुश टू फुलफिल माओज ओल्ड ड्रीम्स, द एशियन एज, https://www.asianage.com/opinion/oped/270617/chinas-bhutan-push-to-fulfill-maos-old-dream.html से 15/03/2023 को पुनःप्राप्त.

मधोक, वी.के. (19 जनवरी, 2023). तिब्बत-चाइनाज मिलिटरी बेस, मिशन विक्टरी इंडिया, https://missionvictoryindia.com/tibet-chinas-military-base/ से 09/03/2023 को पुनःप्राप्त.

शंकर, पी.आर. (10 नवंबर, 2022). फ्रोम वन चाइना टू ग्रेटर चाइना, ताइपे टाइम्स, https://www.taipeitimes.com/News/editorials/archives/2022/11/10/2003788618 से 10/03/2023 को पुनःप्राप्त.

शंकर, पी.आर. (19 नवंबर, 2022). डीस्टेबलाइजिंग द नॉर्थ-ईस्ट ऑन चाइनाज रडार, द संडे गार्डियन, https://sundayguardianlive.com/opinion/destabilising-northeast-chinese-radar से 10/03/2023 को पुनःप्राप्त.

सांगे, एल. (9 जून, 2020). प्राइम मिनिस्टर ऑफ तिबेतन गवर्नमेंट इन एक्जाइल इन अन एक्सक्लूसिव इंटरव्यू विद जर्नलिस्ट राहुल कँवल ऑफ इंडिया टुडे, https://www.indiatoday.in/india/story/border-incursions-tensions-will-continue-till-tibet-issue-resolved-pm-tibetan-govt-in-exile-1687302-2020-06-09 से 20/02/ 2023 को पुनःप्राप्त.

सिंह, बी. (12 अगस्त, 2021). द दलाई लामा क्वेश्चन, डेक्कन हेराल्ड, https://www.deccanherald.com/opinion/main-article/the-dalai-lama-question-1019105.html से 04/03/2023 को पुनःप्राप्त.

सिंह, एच. (21 सितंबर, 2020). इंडिया मस्ट मूव इन टू कट चाइनाज इनफ्लुएंस इन नेपाल, द सिटिजन, https://www.thecitizen.in/index.php/en/NewsDetail/index/4/19393/India-Must-Move-In-to-Cut-Chinas-Influence-in-Nepal-- से 28/03/2023 को पुनःप्राप्त.

हैदर, एस. (18 जून, 2020). हिस्ट्री, द स्टैंड ऑफ, एंड पॉलिसी वर्थ री-रीडिंग, द हिंदू, https://www.thehindu.com/opinion/lead/history-the-stand-off-and-policy-worth-rereading/article31854822.ece से 16/03/2023 को पुनःप्राप्त.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 63-68, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

भारत की आजादी का अमृत महोत्सव

अराजकता, आतंकवाद और मीडिया : 1990 के दशक में कश्मीर से प्रकाशित समाचार पत्रों का अध्ययन

जय भवानी सिंह[1]

सारांश

प्रस्तुत शोधपत्र 1990 के उथल-पुथल भरे दशक के दौरान कश्मीर में आतंकवाद, मीडिया और 'अराजक' सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य के बीच चलने वाली एक जटिल परस्पर अंतरक्रिया पर प्रकाश डालता है। अभिलेखीय सामग्री, समाचार रिपोर्टों, प्रमुख मीडियाकर्मियों व राजनीतिक नेताओं के साथ साक्षात्कार के व्यापक विश्लेषण पर आधारित यह अध्ययन कश्मीर में आतंकवाद, हिंसात्मक संघर्ष व अलगाववाद को आकार देने व प्रतिबिंबित करने में स्थानीय पत्रकारिता की भूमिका को स्पष्ट करने का प्रयास करता है। इस बात की भी पड़ताल करने का प्रयास किया गया है कि स्थानीय मीडिया व इससे जुड़े पत्रकारों ने आतंकवाद व हिंसात्मक संघर्ष के कारण उत्पन्न होने वाली उन चुनौतियों और नैतिक दुविधाओं के बीच कैसे एक संघर्षमय क्षेत्र से रिपोर्टिंग की। इसके अतिरिक्त यह शोधपत्र 1990 के दशक में कश्मीर में जनमत और राजनैतिक व सामाजिक आख्यानों के सृजन में स्थानीय मीडिया की भूमिका को भी अंकित करने का प्रयास करता है। कश्मीर में 1990 से चल रहे आतंक व संघर्ष के आसपास के व्यापक विमर्श पर मीडिया कवरेज के प्रभाव की भी यह जाँच करता है। शोधपत्र कश्मीर के इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण कालावधि के दौरान मीडिया प्रतिनिधित्व की गतिशीलता पर प्रकाश डालते हुए पत्रकारिता और हिंसात्मक संघर्ष के बीच के जटिल संबंधों पर अंतर्दृष्टि डालने का प्रयास है। कश्मीर में सशस्त्र उग्रवाद व आतंकवाद ने मीडिया के आख्यानों में भारत विरोधी, अलगाववादी व कट्टरपंथी आख्यान को, जो 1990 से पहले हाशिये के आख्यान माने जाते थे, कश्मीर की राजनीति की मुख्यधारा का आख्यान बना दिया। मीडिया के आख्यानों में कट्टरपंथ व अलगाववादी झुकाव का प्रतिबिंबित होना कई कारणों से हुआ, जिनमें आतंकवादियों द्वारा मीडिया के विरुद्ध बल प्रयोग एक प्रमुख कारण था। इसके अतिरिक्त कई अखबार स्वेच्छा से अलगाववादी आंदोलन को वैचारिक समर्थन देने की योजना से अपने आख्यानों में अलगाववादी झुकाव लाए। कश्मीर में उस वक्त राज्य व प्रशासन व्यवस्था का भी करीब-करीब अराजक हो जाना मीडिया के अलगाववादी व कट्टरपंथी आख्यानों को रोकने में अक्षम रहा।

संकेत शब्द : कश्मीर, आतंकवाद, अलगाववादी मीडिया, सशस्त्र संघर्ष, कट्टरपंथी आख्यान

प्रस्तावना

भारत की कश्मीर घाटी एक लंबे समय से पाकिस्तान प्रायोजित हिंसा और आतंक का शिकार रही है। चूँकि मीडिया की जड़ें समाज में हैं और वह समाज में ही काम करता है, किसी रिक्तता में नहीं, इसलिए समाज में चलने वाले विमर्शों व आख्यानों का प्रभाव जैसे समाज की अन्य संस्थाओं पर पड़ता है, वैसे ही मीडिया पर भी पड़ता है। आख्यानों के सृजन में मीडिया की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। 1990 का दशक कश्मीर घाटी में सशस्त्र संघर्ष, विद्रोह, राजनीतिक अशांति और हिंसा के उथल-पुथल भरे दौर से चिह्नित था। उस दशक में क्षेत्रीय भू-राजनीति, जातीय-राष्ट्रवाद और धार्मिक उग्रवाद सहित कई ताकतों ने मिलकर एक जटिल और अस्थिर वातावरण निर्मित किया। उस उथल-पुथल के बीच, मीडिया, विशेष रूप से स्थानीय समाचार पत्रों ने सार्वजनिक विमर्श को आकार देने, सूचना के प्रसार और जनमत को प्रभावित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रस्तुत शोधपत्र तत्कालीन कश्मीर में अराजकता, आतंकवाद और मीडिया के बीच सहजीवी संबंधों की आलोचनात्मक समीक्षा करता है। शोधपत्र का उद्देश्य कश्मीर में 1990 के दशक में फैले हिंसात्मक संघर्ष के स्थानीय मीडिया पर पड़ने वाले प्रभाव की समीक्षा करना भी है। साथ ही इस प्रश्न का उत्तर भी तलाशना है कि स्थानीय मीडिया की इस वातावरण के बनने में क्या भूमिका रही है? 1990 के दशक में कश्मीर में उग्रवाद और आतंकवादी घटनाओं में अप्रत्याशित वृद्धि हुई, जिससे नागरिक व्यवस्था में काफी गिरावट आई। स्थानीय समाचार पत्र उस नाटक के गवाह और प्रतिभागी दोनों बन गए, क्योंकि वे घटनाओं को रिपोर्ट करते थे, विभिन्न हितधारकों को संदेश देते थे और विद्रोह से संबंधित घटनाओं की कवरेज से उत्पन्न नैतिक और व्यावहारिक चुनौतियों से जूझते थे। प्रस्तुत अध्ययन कश्मीर में आतंकवाद के दौरान मीडिया प्रतिनिधित्व की जटिल गतिशीलता को समझने का प्रयास करता है और साथ ही उस भूमिका पर भी प्रकाश डालता है, जो समाचार पत्रों ने प्रचलित अराजकता और आतंकवाद को बढ़ाने या कम करने में निभाई।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोधपत्र 1980 व 1990 के दशक में कश्मीर घाटी से प्रकाशित अखबारों का अभिलेखीय शोध करके उस दौर के स्थानीय मीडिया आख्यानों को समझने का प्रयास है। अभिलेखीय शोध के लिए उस दौर के उर्दू व अँग्रेजी में प्रकाशित अखबारों का अध्ययन किया गया है। उर्दू भाषा से पाँच अखबार यानी 'आफताब', 'श्रीनगर टाइम्स', 'अल-सफा', 'चट्टान' व 'वादी की आवाज' को शोध के लिए लिया गया। इन अखबारों के शोध व समाचार विश्लेषण की काल अवधि 01 अगस्त, 1989 से 10 जुलाई, 1993 तक की ली गई। ऐसा इसलिए किया गया, क्योंकि विशेषज्ञों द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार उस दौर में कश्मीर घाटी में सर्वाधिक पढ़े जाने वाले अखबार उर्दू भाषा में थे। सर्वाधिक पढ़े जाने वाले उर्दू अखबार 'आफताब', 'श्रीनगर टाइम्स' और 'अल-सफा' थे। इन प्रमुख अखबारों के इलावा 'चट्टान' व 'वादी की आवाज' भी खासी मात्रा में

[1]शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू. ईमेल: jaibhawani94@gmail.com

पढ़े जाते थे। उर्दू अखबारों के अलावा उस दौर के आख्यानों को समझने के लिए दो अँग्रेजी अखबारों का भी अभिलेखीय विश्लेषण किया गया, यानी 'कश्मीर टाइम्स' व 'ग्रेटर कश्मीर'। 1980 के दशक में और 1990 के शुरुआती वर्षों में अँग्रेजी भाषा में कश्मीर घाटी में सबसे अधिक पढ़ा जाने वाला अखबार 'कश्मीर टाइम्स' था, जिसके मालिक-संपादक जम्मू के रहने वाले वेद भसीन थे। 'ग्रेटर कश्मीर' एक साप्ताहिक पत्रिका के रूप में श्रीनगर से फयाज अहमद कालू द्वारा शुरू किया गया था, जो 1993 में दैनिक अखबार के रूप में परिवर्तित हो गया। बाद के वर्षों में इसने कश्मीर घाटी में प्रसार के मामले में 'कश्मीर टाइम्स' को पीछे छोड़ दिया। शोध के लिए इन दोनों अँग्रेजी अखबारों की काल अवधि 01 अगस्त, 1993 से 10 मार्च, 1998 तक ली गई। इन सभी उर्दू व अँग्रेजी अखबारों की उपर्युक्त कालावधियों में छपी प्रतियों का अध्ययन कश्मीर विश्वविद्यालय की इकबाल लाइब्रेरी के अभिलेखागार सेक्शन में किया गया। साथ ही उस समय की प्रमुख राजनीतिक, सामाजिक व मीडिया हस्तियों का साक्षात्कार किया गया, जिन्होंने उस दौर में प्रमुख भूमिका निभाई। इसके अतिरिक्त उस समय के मीडिया और राजनीति की अंतरक्रिया पर सरकारी व गैर-सरकारी दस्तावेजों का भी अध्ययन किया गया है। जैसे प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया की कश्मीर में आतंक की स्थिति पर रिपोर्ट, इत्यादि। इसके इलावा कई अन्य प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का भी अध्ययन किया गया है।

कश्मीर में आतंकवाद, अलगाववाद व हिंसात्मक संघर्ष का परिदृश्य

कश्मीर घाटी में सशस्त्र उग्रवाद और आतंकवाद की शुरुआती घटनाएँ 1988 के मध्य में शुरू हुईं, जिनमें श्रीनगर में सेंट्रल टेलीग्राफ कार्यालय और टीवी स्टेशन पर हुए विस्फोटों ने शहर में दहशत और आतंक का माहौल पैदा कर दिया। 15 अगस्त, 1988 को स्वतंत्रता दिवस के दिन कश्मीर में पूर्ण बंद रहा। सितंबर 1988 में जम्मू और कश्मीर पुलिस के डी.आई. जी. को निशाना बनाया गया और श्रीनगर में उनके आवास पर एक बम विस्फोट हुआ, हालाँकि वे हमले में बच गए। 1989 में आतंकवादियों ने मकबूल भट की मृत्यु तिथि के दिन कश्मीर में पूर्ण बंद करवाया। स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस पर भी पूर्ण बंद करवाया गया (पुरी, 2012)। आतंकवादियों द्वारा पहली हत्या श्रीनगर में नेशनल कॉन्फ्रेंस के ब्लॉक अध्यक्ष मोहम्मद यूसुफ हलवाई की 21 अगस्त, 1989 को की गई। 14 सितंबर, 1989 को कश्मीर के एक वरिष्ठ भाजपा नेता टीका लाल टपलू को आतंकवादियों ने मार डाला। वह घाटी में सशस्त्र उग्रवाद के उस दौर में किसी कश्मीरी पंडित की पहली हत्या थी (जोशी, 2019)। 1989 के अंत तक कश्मीर घाटी में हिंसक उग्रवाद काफी बढ़ गया, जिससे सामान्य आर्थिक और सामाजिक जीवन में अशांति फैल गई। विद्रोही और आतंकवादी समूह कश्मीर में ऐसा वातावरण बनाने की कोशिश कर रहे थे, जो भारतीय संप्रभुता के हर प्रतीक या संकेत को चुनौती दे सके। उस हिंसा के कारण कश्मीर में आर्थिक व्यवधान, पर्यटकों में डर, सामान्य कठिनाई और कश्मीर के भविष्य के बारे में अनिश्चितता पैदा हो गई। घाटी में हर जगह अराजकता और भ्रम व्याप्त था। भारत सरकार व जम्मू और कश्मीर सरकार से जुड़ी हर चीज पर आतंकी समूहों ने हमले करने प्रारंभ किए।

आतंक के साये में स्थानीय मीडिया

आतंक व हिंसा की उस चपेट में कश्मीर का स्थानीय मीडिया भी आ गया। 1988 में कश्मीर घाटी में सबसे अधिक पढ़े जाने वाले अँग्रेजी अखबार 'कश्मीर टाइम्स' से जुड़े वरिष्ठ पत्रकार युसूफ जमील ने एक निजी साक्षात्कार में शोधकर्ता को बताया के उनको श्रीनगर में जम्मू और कश्मीर लिबरेशन फ्रंट (जेकेएलएफ) के आतंकियों द्वारा धमकाया गया और आदेश दिया गया कि जेकेएलएफ की गतिविधियों को अखबार में सबसे अधिक कवरेज दी जाए (जमील, 2021)। कश्मीर के लगभग सभी अखबारों को ऐसा ही आदेश दिया गया। एक साक्षात्कार में जम्मू-कश्मीर सरकार के सूचना विभाग के पूर्व निदेशक सईद मलिक ने शोधकर्ता को बताया कि एक अन्य घटना में श्रीनगर टाइम्स के संपादक सोफी गुलाम मोहम्मद को एक खत भेजा गया। खत के लिफाफे के अंदर एक 'बुलेट' थी। यह एक चेतावनी थी कि आने वाले समय में आतंकवादियों को मीडिया से क्या अपेक्षा थी (मलिक, 2021)। स्थानीय मीडिया से आतंकी संगठन यह अपेक्षा रखते थे कि मीडिया 'तहरीक-ए-आजादी' ('आजादी' का आंदोलन) के साथ खड़ा हो। बहुत से अखबार, जो इस तहरीक के साथ पूर्णतया सहमत नहीं थे, उन्हें बाध्य किया गया कि वे तहरीक का समर्थन करें। 1980 के दशक में स्थानीय अखबारों के नौजवान रिपोर्टर 'रेडियो कश्मीर' के बुलेटिन से खबरें लेते थे। उस समय 'रेडियो कश्मीर' का समाचार वाचक भी धीरे-धीरे खबरें पढता था, क्योंकि उसे मालूम रहता था कि उसकी खबरें कुछ रिपोर्टर लिख रहे हैं। कश्मीर विश्वविद्यालय के मीडिया एजुकेशन एंड रिसर्च सेंटर के प्राध्यापक व पूर्व में 'अल-जजीरा' से जुड़े रहे रशीद मकबूल के अनुसार 1990 में कश्मीर में बंदूक की आमद के बाद यह सब बदल गया। अब कश्मीर में बंदूक ने खबरें डिक्टेट करवानी शुरू कर दीं (मकबूल, 2021)।

नवंबर, 1989 से अप्रैल, 1990 तक कश्मीर की स्थिति बद से बदतर हो गई। फरवरी 1990 में जेकेएलएफ के आतंकियों ने कश्मीर में दूरदर्शन के निदेशक लस्सा कौल की गोली मारकर हत्या कर दी। उसी तर्ज पर पी.एन. हाँडु, जो जम्मू-कश्मीर सरकार के सूचना विभाग में सहायक निदेशक थे, की भी गोली मारकर हत्या कर दी गई (जोशी, 2019)। फलस्वरूप अधिकांश राष्ट्रीय प्रेस, यूएनआई, पीटीआई और दूरदर्शन के प्रतिनिधियों को सुरक्षा कारणों से घाटी छोड़नी पड़ी और उन सभी ने जम्मू में अपने-अपने कार्यालय खोल दिए। कश्मीर में राष्ट्रीय अखबारों के और जम्मू स्थित समाचार पत्रों के संवाददाता ज्यादातर कश्मीरी पंडित थे, इसलिए जब कश्मीर में उग्रवाद के कारण उनका जबरन विस्थापन हुआ, तो इन समाचार पत्रों के संवाददाता भी कश्मीर से बाहर जम्मू चले गए। इस कारण कश्मीर में एक तरह की रिक्तता पैदा हो गई। राष्ट्रीय समाचार पत्रों में कनिष्ठ पदों पर काम करने वाले कश्मीरी मुस्लिम कर्मचारियों ने इस रिक्तता को पूरा किया (भट, 2018)।

कश्मीर में काम करने वाले पत्रकारों पर आतंकवादी समूहों द्वारा जानबूझकर रणनीतिक हमले किए गए। पत्रकारों को आतंकवादी समूहों के फरमान का पालन करने से इनकार करने पर गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी गई। राष्ट्रीय प्रेस के लिए काम करने वाले पत्रकारों के सामूहिक रूप से कश्मीर छोड़ जाने के बाद, पाकिस्तान और आतंकवादी समूहों ने घाटी में अपने कट्टरपंथी प्रचार माध्यमों से मीडिया की रिक्तता को भरने की कोशिश की। मीडिया की इस रिक्तता को आतंकवादियों के जवाबी मीडिया, स्थानीय प्रेस का विमर्श, प्रेस विज्ञप्तियाँ, पोस्टर, कैसेट और अफवाहों के साथ-साथ पाकिस्तान और पाकिस्तान के कब्जे वाले

जम्मू-कश्मीर के रेडियो और टेलीविजन द्वारा भरा गया (प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया, 1991)। स्थानीय प्रेस के एक बड़े वर्ग ने भी इस प्रचार को अंजाम देने में आतंकवादियों का सहयोग किया। इस जानकारी का आधार आफताब, श्रीनगर टाइम्स, वादी की आवाज, चट्टान, ग्रेटर कश्मीर व कश्मीर टाइम्स की 1990 की खबरों का विश्लेषण है।

जब स्थानीय मीडिया के एक वर्ग के पत्रकारों ने अलगाववादी विमर्श को प्रचारित करने में आनाकानी की, तो उन पर आतंकियों द्वारा हमले किए गए। अक्टूबर, 1990 में 'श्रीनगर टाइम्स' के परिसर में एक बम विस्फोट के परिणामस्वरूप 'आफताब', 'खिदमत', 'कौमी आवाज' और 'माद्रे कश्मीर' सहित कई समाचार पत्र कुछ समय के लिए बंद हो गए (जोशी, 2019)। वह बम विस्फोट मीडिया के लिए एक चेतावनी थी। 'अजान' जैसे अन्य समाचार पत्रों को राजनीतिक और वैचारिक कारणों से बंद करवा दिया गया। जब घाटी में उग्रवाद भड़क उठा तो इसका नेतृत्व जेकेएलएफ ने किया, जिसका जमात-ए-इस्लामी से वैचारिक और राजनीतिक मतभेद था। जेकेएलएफ स्वतंत्र कश्मीर का समर्थक था, जबकि जमात पाकिस्तान के साथ विलय की पक्षधर थी। जमात कश्मीर में राजनीति और उग्रवाद की प्रकृति को पूर्णतया इस्लामी बनाना चाहता था। जमात 'अजान' के माध्यम से जेकेएलएफ की आलोचना करती थी। जमात का मानना था कि आजादी के लिए आंदोलन इस्लामी सिद्धांतों से भटक सकता है, यदि जेकेएलएफ से पूर्ण वैचारिक दिवालियापन वाले युवा इसका नेतृत्व करेंगे (गिलानी, 2012)। इस प्रकार, जेकेएलएफ ने 'अजान' को या तो अपने रास्ते सुधारने या बंद करने के लिए मजबूर किया। अजान ने दूसरा विकल्प चुना।

1991 में 'अल-सफा' के संपादक मोहम्मद शबान वकील की उनके कार्यालय में दो आतंकवादियों ने हत्या कर दी (जोशी, 2019)। 'अल-सफा' को उग्रवादियों से सहानुभूति रखने वाला समाचार पत्र माना जाता था। पुलिस ने आपत्तिजनक लेखन के लिए टाडा के तहत इसके खिलाफ छह मामले दर्ज किए थे। सरकार ने अखबार को कई महीनों तक विज्ञापन देने से मना भी कर दिया था। उग्रवादियों से सहानुभूति रखने के बावजूद मोहम्मद शबान 'वकील' ने कुछ उग्रवादी समूहों द्वारा 'आजादी' के नाम पर चलाए जा रहे धन उगाही के धंधे का विरोध करते हुए उग्रवादियों की कुछ कार्रवाइयों की आलोचना भी की थी। उन्होंने अपने संपादकीय में आतंकियों के इस फरमान की भी निंदा की कि मुस्लिम महिलाओं को पर्दा पहनना चाहिए। कश्मीर में बार-बार बंद और हड़ताल के आह्वान का भी विरोध किया। 'कश्मीर डिस्पेच' के मुख्य संपादक के अनुसार शबान की मृत्यु ने घाटी स्थित प्रेस को स्तब्ध और परेशान कर दिया। वे कश्मीर में आतंकवाद के दौरान मारे जाने वाले समाचार पत्र के पहले व्यक्ति बन गए। उनकी पहचान भारत व सरकार के पक्ष वाले पत्रकार के रूप में नहीं थी, बल्कि इसके एकदम विपरीत थी (बुखारी, 2021)।

आधिकारिक इलेक्ट्रॉनिक मीडिया यानी रेडियो कश्मीर और दूरदर्शन के कर्मचारी अक्सर कश्मीर में आतंकवादियों के लिए आसान लक्ष्य बन जाते थे। उनकी हत्या इसलिए की जाती थी, क्योंकि वे आतंकवाद की निंदा कर रहे थे और भारत सरकार के उद्देश्यों को बढ़ावा दे रहे थे। लस्सा कौल की हत्या का जिक्र पहले किया जा चुका है। 'रोजाना आफताब' ने पाकिस्तान स्थित आतंकवादी समूह हिज्बुल मुजाहिदीन की ओर से एक विज्ञप्ति प्रकाशित की, जिसमें रेडियो कश्मीर और दूरदर्शन श्रीनगर के कर्मचारियों को 28 सितंबर, 1990 से सामूहिक हड़ताल पर जाने और 'तहरीक-ए-आजादी' में शामिल होने के लिए कहा गया।

अलगाववादी विमर्श में स्थानीय मीडिया की भूमिका

कश्मीर घाटी में स्थानीय समाचार पत्रों की रिपोर्टिंग शैली इस क्षेत्र में आतंकवादी समूहों के उदय का एक महत्त्वपूर्ण कारक थी। बहुत से अखबारों ने तहरीक का स्वेच्छा से समर्थन भी किया। उदाहरण के लिए, साप्ताहिक 'चट्टान' और साप्ताहिक 'वादी की आवाज' में आतंकवादी नेताओं द्वारा लिखे गए स्तंभ नियमित रूप से प्रकाशित होते थे, जिससे घाटी में आतंकवादियों के आख्यानों का प्रसार बढ़ गया। 'वादी की

THE DAILY AFTAB SRINAGAR 2 SUNDAY JANUARY 7,1990

आफताब, 7 जनवरी 1990 के अंक में प्रकाशित स्पष्टीकरण और माफीनामे

आवाज' व 'चट्टान' के संपादकीयों के विश्लेषण से यह बात पूरी तरह स्पष्ट होती है। अधिकतर स्थानीय समाचार पत्रों ने अपने दूसरे और अंतिम पृष्ठों को 'स्पष्टीकरण' पृष्ठों के तौर पर छापना शुरू किया। उदाहरण के लिए 'आफताब' अखबार का 7 जनवरी, 1990 का प्रकाशन यहाँ प्रस्तुत है, जिसमें लोग विज्ञापनों में स्पष्टीकरण देकर आतंकवादी संगठनों से कह रहे हैं कि वे मुख्यधारा के राजनैतिक दल व अन्य सरकारी संगठन छोड़ रहे हैं या उनका ऐसा राजनैतिक दलों से कोई संबंध नहीं है।

इन पृष्ठों में मुख्यधारा वाले राजनैतिक दलों से जुड़े हुए, राष्ट्रीय दलों से जुड़े हुए और सरकारी तंत्र से जुड़े हुए व्यक्तियों द्वारा घोषणाओं या स्पष्टीकरण छपते थे, जिनमें यह स्पष्टीकरण दिया जाता था कि वह व्यक्ति भारत के पक्ष वाले किसी भी संगठन अथवा संस्थान से नहीं जुड़ा है। 'आफताब' की खबरों के विश्लेषण से यह बात पूरी तरह स्पष्ट होती है। सरकारी संस्थान व संगठनों या मुख्यधारा के राजनीतिक दलों के लिए काम करने वाले लोगों के बीच आतंक का विश्लेषण आफताब के दूसरे पृष्ठ के अवलोकन के माध्यम से किया जा सकता है।

लोग आतंकवादियों और उग्रवादी समूहों के सामने 'दोषी नहीं' होने का अनुरोध कर रहे थे। इससे उग्रवादी और आतंकवादी समूहों को एक प्रकार से वैधता मिल रही थी। इससे आतंकी यह भी साबित कर रहे थे कि वे कश्मीर में राज्य और केंद्र सरकार से ऊपर एक शक्ति हैं। कश्मीर के स्थानीय समाचार पत्रों ने नियमित रूप से इस तरह की घोषणाओं और स्पष्टीकरणों को प्रकाशित करके एक अवैध शक्ति को वैधता प्रदान करने में मदद की। चट्टान ने मकबूल भट के जीवन पर विशेषांक निकाले और साथ ही जेकेएलएफ के इतिहास और विकास पर भी एक शृंखला प्रकाशित की। इसी प्रकार के प्रयोग कई अन्य उर्दू अखबारों ने कश्मीर में शुरू किए। आतंकियों की गिरफ्तारियों की खबरों को इस प्रकार प्रकाशित किया जाता था, ताकि वे नायक सिद्ध हो सकें। उदाहरणतया, जब 1990 में शब्बीर शाह और नईम खान को गिरफ्तार किया गया, तो कौमी आवाज ने ऐसे खबर प्रकाशित की कि उसका राजनीतिक कद और प्रचार और बढ़ गया। 'आफताब' और 'श्रीनगर टाइम्स' जैसे पुराने समाचार पत्रों के अलावा 'चट्टान', 'उकाब' और 'वादी की आवाज' जैसे अपेक्षाकृत छोटे समाचार पत्रों ने हिंसात्मक संघर्ष के वातावरण के कारण अच्छी बिक्री करनी शुरू कर दी (बुखारी, 2021)।

कश्मीर में आतंकवादियों ने पूरे मीडिया को इस बात के लिए उपयोग करने का प्रयास किया कि समाज में उनके लिए सम्मानजनक बातें हों। वैसे भी आतंकवाद के लिए प्रचार एक ऑक्सीजन था। नई दिल्ली और जम्मू से प्रकाशित होने वाले अखबार सरकार के दृष्टिकोण से घटनाओं की स्वतंत्र रूप से रिपोर्टिंग करते थे और आतंकवादियों के कृत्यों की निंदा भी करते थे। इस प्रकार की रिपोर्टिंग के विरोध में अपना विमर्श खड़ा करने के लिए आतंकवादियों के पास स्थानीय प्रेस से अपनी अधिक कवरेज कराने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। कश्मीर के अखबार पहले से ही आतंकवादियों के फरमान के अनुसार काम कर रहे थे। पूर्व में 'श्रीनगर टाइम्स' के साथ जुड़े रहे वरिष्ठ पत्रकार फारूक डार के अनुसार स्थानीय अखबारों के संपादकों से अखबार संपादित करने का अधिकार भी एक प्रकार से छीन लिया गया था। उग्रवाद ने उनकी भूमिका को कॉपी-पेस्ट तक सीमित कर दिया था (डार, 2021)।

स्थानीय मीडिया का आख्यान

कश्मीर प्रेस के भारत विरोधी और आतंक समर्थक विमर्श की समीक्षा करने के लिए 'ग्रेटर कश्मीर' द्वारा प्रकाशित कुछ उन बड़ी घटनाओं की कवरेज का विश्लेषण किया गया, जिनका कश्मीर की राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ा। 'ग्रेटर कश्मीर' 1993 के बाद कश्मीर घाटी में सबसे अधिक पढ़ा जाने वाला अँग्रेजी अखबार बन चुका था। 'ग्रेटर कश्मीर' की रिपोर्टिंग स्टाइल के विश्लेषण से कश्मीर के स्थानीय प्रेस में भारतीय सुरक्षा बलों के खिलाफ पूर्वग्रह का पता चलता है, जो उन्हें खलनायक और हत्यारों के

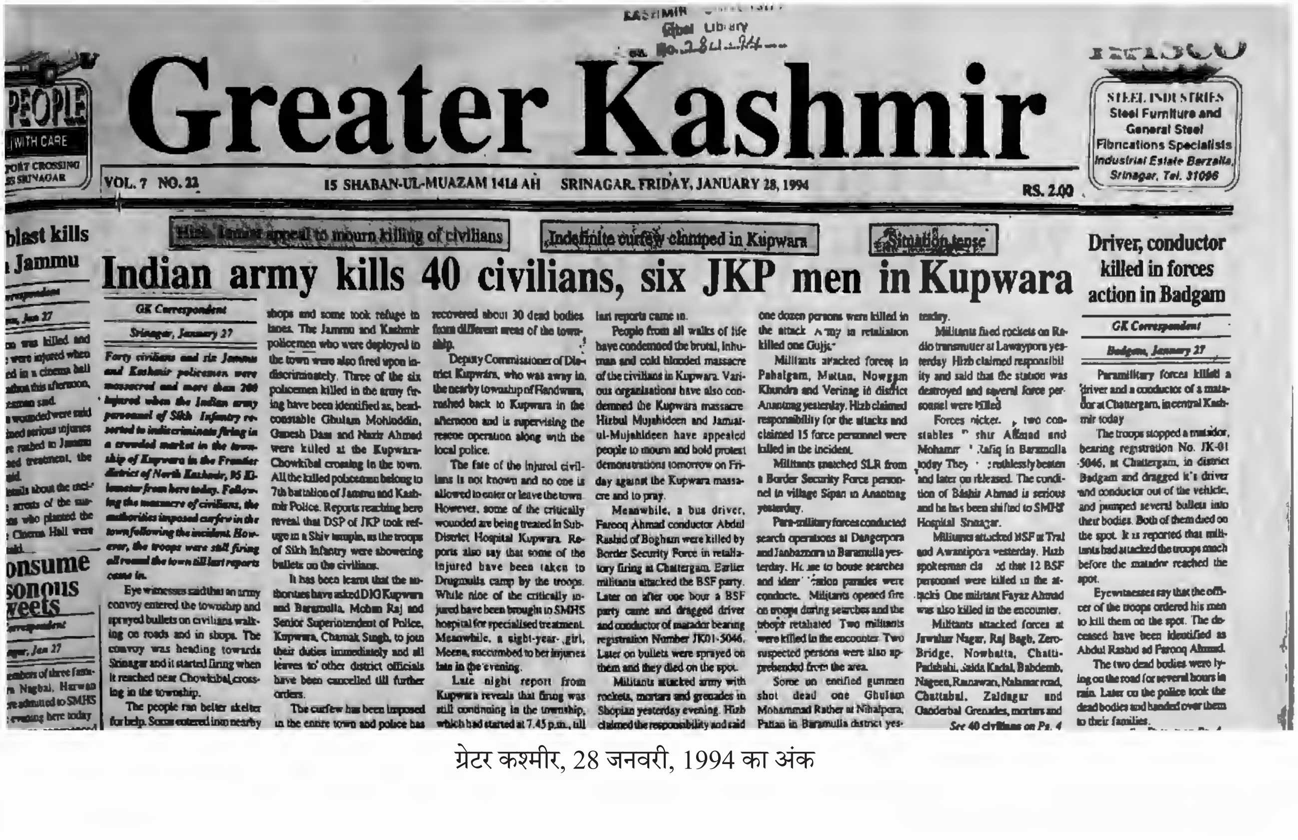

Greater Kashmir

VOL. 7 NO. 23 15 SHABAN-UL-MUAZAM 1414 AH SRINAGAR, FRIDAY, JANUARY 28, 1994 RS. 2.00

Steel Industries Steel Furniture and General Steel Fabrications Specialists Industrial Estate Barzalla, Srinagar, Tel. 31096

Indefinite curfew clamped in Kupwara

Situation tense

Indian army kills 40 civilians, six JKP men in Kupwara

GK Correspondent

Srinagar, January 27

Forty civilians and six Jammu and Kashmir policemen were massacred and more than 200 injured when the Indian army personnel of Sikh Infantry resorted to indiscriminate firing in a crowded market in the township of Kupwara in the Frontier district of North Kashmir, 95 kilometer from here today. Following the massacre of civilians, the authorities imposed curfew in the town following the incident. However, the troops were still firing all round the town till last reports came in.

Eye witnesses said that an army convoy entered the township and sprayed bullets on civilians walking on roads and in shops. The convoy was heading towards Srinagar and it started firing when it reached near Chowkibal crossing in the township.

The people ran helter skelter for help. Some entered into nearby shops and some took refuge in lanes. The Jammu and Kashmir policemen who were deployed in the town were also fired upon indiscriminately. Three of the six policemen killed in the army firing have been identified as, head-constable Ghulam Mohiuddin, Ganesh Dass and Nazir Ahmad were killed at the Kupwara-Chowkibal crossing in the town. All the killed policemen belong to 7th battalion of Jammu and Kashmir Police. Reports reaching here reveal that DSP of JKP took refuge in a Shiv temple, as the troops of Sikh Infantry were showering bullets on the civilians.

It has been learnt that the authorities have asked DIG Kupwara and Baramulla, Mohan Raj and Senior Superintendent of Police, Kupwara, Chamak Singh, to join their duties immediately and all leaves to other district officials have been cancelled till further orders.

The curfew has been imposed in the entire town and police has recovered about 30 dead bodies from different areas of the township.

Deputy Commissioner of District Kupwara, who was away in the nearby township of Handwara, rushed back to Kupwara in the afternoon and is supervising the rescue operation along with the local police.

The fate of the injured civilians is not known and no one is allowed to enter or leave the town. However, some of the critically wounded are being treated in Sub-District Hospital Kupwara. Reports also say that some of the injured have been taken to Drugmulla camp by the troops. While nine of the critically injured have been brought to SMHS hospital for specialised treatment. Meanwhile, a eight-year- girl, Meena, succumbed to her injuries late in the evening.

Late night report from Kupwara reveals that firing was still continuing in the township, which had started at 7.45 p.m., till last reports came in.

People from all walks of life have condemned the brutal, inhuman and cold blooded massacre of the civilians in Kupwara. Various organisations have also condemned the Kupwara massacre. Hizbul Mujahideen and Jamiat-ul-Mujahideen have appealed people to mourn and hold protest demonstrations tomorrow on Friday against the Kupwara massacre and to pray.

Meanwhile, a bus driver, Farooq Ahmad conductor Abdul Rashid of Bogham were killed by Border Security Force in retaliatory firing at Chattergam. Earlier militants attacked the BSF party. Later on after one hour a BSF party came and dragged driver and conductor of matador bearing registration Number JK01-5046. Later on bullets were sprayed on them and they died on the spot.

Militants attacked army with rockets, mortars and grenades in Shopian yesterday evening. Hizb claimed the responsibility and said one dozen persons were killed in the attack. Army in retaliation killed one Gujjar.

Militants attacked forces in Pahalgam, Muttan, Nowgam Khundru and Verinag in district Anantnag yesterday. Hizb claimed responsibility for the attacks and claimed 15 force personnel were killed in the incident.

Militants snatched SLR from a Border Security Force personnel in village Sipan in Anantnag yesterday.

Para-military forces conducted search operations at Dangerpora and Janbazpora in Baramulla yesterday. House to house searches and identification parades were conducted. Militants opened fire on troops during searches and the troops retaliated. Two militants were killed in the encounter. Two suspected persons were also apprehended from the area.

Some unidentified gunmen shot dead one Ghulam Mohammad Rather at Nihalpora, Pattan in Baramulla district yesterday.

Militants fired rockets on Radio transmitter at Lawaypora yesterday. Hizb claimed responsibility and said that the station was destroyed and several force personnel were killed.

Forces picked up two constables Bashir Ahmad and Mohammad Rafiq in Baramulla today. They were ruthlessly beaten and later on released. The condition of Bashir Ahmad is serious and he has been shifted to SMHS Hospital Srinagar.

Militants attacked BSF at Tral and Awantipora yesterday. Hizb spokesman claimed that 12 BSF personnel were killed in the attacks. One militant Fayaz Ahmad was also killed in the encounter.

Militants attacked forces at Jawahar Nagar, Raj Bagh, Zero-Bridge, Nowhatta, Chatti-Padshahi, Saida Kadal, Babdemb, Nageen, Rainawari, Nalamar road, Chattabal, Zaldagar and Ganderbal Grenades, mortars and

See 40 civilians on Pg. 4

Driver, conductor killed in forces action in Badgam

GK Correspondent

Badgam, January 27

Paramilitary forces killed a driver and a conductor of a matador at Chattergam, in central Kashmir today

The troops stopped a matador, bearing registration No. JK-01-5046, at Chattergam, in district Badgam and dragged it's driver and conductor out of the vehicle, and pumped several bullets into their bodies. Both of them died on the spot. It is reported that militants had attacked the troops much before the matador reached the spot.

Eyewitnesses say that the officer of the troops ordered his men to kill them on the spot. The deceased have been identified as Abdul Rashid ad Farooq Ahmad.

The two dead bodies were lying on the road for several hours in rain. Later on the police took the dead bodies and handed over them to their families.

ग्रेटर कश्मीर, 28 जनवरी, 1994 का अंक

रूप में चित्रित करता है। 28 जनवरी, 1994 को प्रकाशित अपनी मुख्य रिपोर्ट में ग्रेटर कश्मीर द्वारा भारतीय सेना पर कुपवाड़ा में 40 नागरिकों की हत्या का सीधा आरोप लगाया गया।

28 जनवरी, 1994 से 27 फरवरी, 1994 तक प्रकाशित ग्रेटर कश्मीर की खबरों के अध्ययन से स्पष्ट है कि इस घटना के संबंध में भारतीय सेना और भारत सरकार के प्रति अत्यधिक आलोचनात्मक स्वभाव के 17 संपादकीय प्रकाशित किए गए। इस घटना के बारे में अखबार की किसी भी रिपोर्ट में सेना के पक्ष या सेना के स्पष्टीकरण का कोई उल्लेख नहीं है। सेना ने हिंसा के बाद एक प्रेस कॉन्फ्रेंस की थी, जिसमें उसने 'नरसंहार' के आरोपों को खारिज किया था और अपना पक्ष सामने रखा था। ग्रेटर कश्मीर ने अपनी रिपोर्टिंग में सेना द्वारा जारी बयान का कोई उल्लेख नहीं किया। उस बयान में सेना द्वारा कहा गया था कि आतंकवादियों ने कुपवाड़ा शहर के भीड़भाड़ वाले इलाके में सेना के काफिले पर गोलीबारी की। गोलीबारी के बाद वे तितर-बितर हो गए और एक स्थानीय मस्जिद में छिप गए। जवाब में सेना ने जवाबी कार्रवाई की, जिसके परिणामस्वरूप कुछ नागरिक मारे गए। हालाँकि सेना ने दावा किया कि नागरिकों की मृत्यु संख्या 40 से बहुत कम थी, लेकिन 'ग्रेटर कश्मीर' में प्रकाशित समाचार में यह तथ्य पूरी तरह गायब था।

दूसरी ओर, जब आतंकवादियों ने बड़ी संख्या में कश्मीरी पंडितों की हत्या की, तो उन हत्याओं की रिपोर्टिंग में आतंकवादी समूहों को 'ग्रेटर कश्मीर' ने बरी कर दिया। 1998 में, हिज्बुल मुजाहिदीन के आतंकियों ने वंधामा में (वर्तमान गांदरबल जिले में) 23 कश्मीरी पंडितों को मार डाला। उस अमानवीय और वीभत्स नरसंहार की दुनियाभर में निंदा की गई। लेकिन कश्मीर घाटी से प्रकाशित समाचार पत्रों ने उस खबर को उस तरह से नहीं लिखा, जिस तरह से वे सुरक्षाबलों के आतंकवाद विरोधी अभियानों में अंधाधुंध गोलीबारी के कारण आम लोगों की हत्या या आतंकियों की हत्या के बारे में लिखते थे। वंधामा नरसंहार पर रिपोर्ट लिखते समय लिखा गया कि अज्ञात बंदूकधारियों ने कश्मीरी पंडितों की हत्या की। हिजबुल मुजाहिदीन की संलिप्तता के बारे में लिखा गया कि पुलिस उन पर इल्जाम लगा रही है, जबकि भारतीय सेना के बारे में 'ग्रेटर कश्मीर' अपनी तरफ से सीधा लिखता था कि भारतीय सेना ने नागरिकों की हत्या की।

बाद की रिपोर्टों में तो यहाँ तक लिखा गया कि यह सरकार की सुरक्षा

Greater Kashmir

TUESDAY JANUARY 27 1998

Police blames *Hizbul Mujahideen*

23 Kashmiri Pandits gunned down in cold blood at Wandhama

ग्रेटर कश्मीर के 27 जनवरी, 1998 के अंक में प्रकाशित खबर

एजेंसियों का कृत्य है। कहीं भी आतंकियों द्वारा फैलाई गई हिंसा की आलोचना नहीं की गई। रिपोर्टिंग के इस पैटर्न में आतंकवाद से निपटने वाले भारतीय सुरक्षा बलों को घाटी में होने वाली हर हिंसक घटना के पीछे एकमात्र कारण के रूप में पहचाना जाता था, जबकि स्थानीय अखबारों की कलम आतंकवादी समूहों द्वारा की जा रही हिंसा के बारे में चुप रहती थी। समाचार पत्र में मृत या जीवित उग्रवादियों/आतंकवादियों की बड़ी छवियों को चित्रित किया गया था। 'ग्रेटर कश्मीर' द्वारा मारे गए आतंकवादियों की छवि के शीर्षक में 'शहीद' शब्द का प्रयोग इन आतंकवादियों की एक सम्मानजनक सार्वजनिक छवि बनाता था, क्योंकि आतंकवादी संगठनों द्वारा हमेशा उनके राजनीतिक उद्देश्यों और संघर्ष की प्रशंसा करने के लिए शहादत की छवि का उपयोग किया जाता रहा है। ऐसा नहीं था कि स्वेच्छा से सभी अखबारों ने अलगाव के पक्ष वाली शब्दावली का प्रयोग शुरू किया। इस शब्दावली के लिए बहुत से अखबारों को आतंकियों द्वारा बाध्य भी किया गया। अखबार इस दुविधा में थे कि क्या शब्दावली प्रयोग में लाएँ? आतंकी संगठन उग्रवादियों के लिए 'मुजाहिद' शब्द का प्रयोग करवाना चाहते थे, जो एक जाँबाज इस्लामी योद्धा का द्योतक था। वहीं सरकार की अपेक्षा थी कि अखबार उग्रवादियों के लिए 'दहशतगर्द' अर्थात् 'आतंकी' शब्द का प्रयोग करें। इस दुविधा में न फँसने के लिए बहुत से अखबारों ने आतंकियों के लिए 'जंगजू' शब्द का भी प्रयोग किया।

कुछ संपादकों का कहना है कि ऐसी सरकार विरोधी नीति अखबारों की इसलिए भी बनी थी, क्योंकि एक स्थिति ऐसी आ गई, जिसमें स्थानीय मीडिया और सरकार के बीच अविश्वास का वातावरण बन गया था। स्थानीय प्रशासन ने अपने प्रेस सम्मेलनों में स्थानीय मीडिया को बुलाना भी बंद-सा कर दिया था, किंतु इसके परिणाम उलटे ही निकले। 'आफताब' से जुड़े एक वरिष्ठ पत्रकार के अनुसार स्थानीय मीडिया के पास आधिकारिक जानकारियों का अभाव होने लगा और वे केवल अलगाववादियों के विमर्श को ही प्रकाशित करते रहे (मीर, 2021)।

निष्कर्ष

मीडिया जनमत को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। 1988 के बाद कश्मीर के स्थानीय प्रेस ने घाटी में बदलते लोकाचार को प्रतिबिंबित किया, जिसमें कुछ समाचार पत्र आतंकवादी समूहों के इच्छुक मुखपत्र बन गए। हालाँकि, सभी समाचार पत्र आतंकवादियों के 'मुखपत्र' बनने के लिए तैयार नहीं थे। बहुत से अखबारों को मुखपत्र बनने के लिए बाध्य किया गया। कश्मीर की स्थानीय प्रेस के एक बड़े वर्ग ने आतंकवादियों को नायक के रूप में प्रदर्शित किया। मीडिया के इस वर्ग ने अपनी कवरेज और प्रस्तुति के माध्यम से आतंकवादियों को 'शेर' या रोमांटिक बना दिया। रिपोर्टिंग और संपादन को पत्रकारिता में सबसे महत्त्वपूर्ण गतिविधि माना जाता है, परंतु कश्मीर में उग्रवाद के कारण दोनों में गंभीर बदलाव आए। पत्रकारिता उस समाज को दर्शाती है, जिसमें वह स्थित है और नई और उभरती शक्ति संरचनाओं के साथ जुड़ाव विकसित करने के लिए नई शैलियों, शब्दकोशों, भाषा और तंत्र को अपनाकर नए परिवर्तनों को अपनाती है। बार-बार बम विस्फोट, मुठभेड़, ग्रेनेड हमले, आँसू गैस, लाठीचार्ज और गोलीबारी की घटनाएँ नए कश्मीर की मीडिया के लिए सामान्य बात बन गईं। राजनीतिक विमर्श भी बदल गया। साथ ही

अलगाव, कट्टरपंथ व आतंक की सीमांत या परिधीय राजनीतिक राय नई मुख्यधारा बन गई। प्रेस ने उग्रवाद द्वारा बनाए गए नए राजनीतिक वातावरण के अनुरूप एक नया प्रतिमान बनाया। पहले, राजनीतिक समाचारों ने समाचार पत्र के अधिकांश स्थान पर कब्जा कर लिया था, जिसमें केवल दौरे, बयान, उद्घाटन आदि शामिल थे। पत्रकार उन स्थानों पर जाते थे जहाँ मंत्री जाते थे। विद्रोह के आगमन के साथ, राजनीतिक नेता या मंत्री निष्क्रियता में चले गए थे और राजनीतिक नेताओं और राजनीतिक दलों की गतिविधियाँ और कम हो गई। जैसे-जैसे उग्रवाद से संबंधित समाचारों की लोकप्रियता बढ़ती गई, पत्रकारों ने उनसे समाचार प्राप्त करने के लिए आतंकवादी रैंकों के साथ अपने स्वयं के संपर्क बनाने शुरू कर दिए। आतंकवादी समूह कश्मीर घाटी पर भारत सरकार के नियंत्रण को वापस लेने के बारे में खुश थे, और सरकार जनता व समाज के लिए संपर्क से बाहर हो गई। प्रत्येक उग्रवादी समूह समाचार पत्र में अपनी खबरों के लिए अधिक हिस्सेदारी की माँग करता था, जिसके कारण अक्सर पत्रकारों पर हमले होते थे। इस समस्या के समाधानस्वरूप समाचार पत्रों ने उग्रवाद से संबंधित समाचारों की समग्र हिस्सेदारी बढ़ाई और जमीनी स्तर पर उनकी ताकत के आधार पर आतंकवादी समूहों को जगह आवंटित की। जम्मू और कश्मीर में मीडिया 1950 के दशक से पेशेवर और नैतिक पत्रकारिता की कमी से त्रस्त है। सरकार ने विद्रोह के दौरान स्थानीय समाचार पत्रों की रिपोर्टिंग को 'राष्ट्र-विरोधी' गतिविधि के रूप में देखा। लेकिन यह विश्लेषण करना महत्त्वपूर्ण है कि क्या मीडिया ने व्यावसायिकता की संस्कृति विकसित की है और क्या सरकार ने इसे चौथा स्तंभ बनने के लिए प्रोत्साहित या हतोत्साहित किया? मीडिया को 'राष्ट्रवाद' के बजाय 'नैतिक' पत्रकारिता के चश्मे से देखा जाना चाहिए, जैसा कि राज्य ने किया था। विद्रोह की अवधि के दौरान कश्मीर घाटी स्थित मीडिया और आतंकवादी समूह अनैच्छिक रूप से एक असमान और उग्र संबंध में चले गए, जिसे केवल कुछ पत्रकारों ने चुनौती देने की हिम्मत की। आतंकवादी अपनी गतिविधियों के लिए कश्मीर के व्यापारी वर्ग से पैसे वसूलते थे, जो आतंकवादी समूहों की संख्या बढ़ने के साथ जबरन वसूली बन गई। इससे कश्मीर में उग्रवाद और विद्रोह के नाम पर अराजकता फैल गई। कश्मीर के कुछ मीडिया घराने भी इसके दायरे में आ गए। जब कुछ लोगों ने इस अराजकता की आलोचना की तो उन पर नवगठित आतंकवादी समूहों द्वारा हमले किए गए।

लस्सा कौल और पी.एन. हाँडू की हत्या ने भय और पीड़ा पैदा कर दी थी, लेकिन उन्हें आधिकारिक व सरकारी कार्यकर्ताओं के रूप में देखा गया, जिनकी हत्या, हालांकि जघन्य, राज्य शक्ति से लड़ने वाले आतंकवादियों द्वारा प्रतिशोध का प्रतीक थी। शबान की हत्या के लिए कोई तर्कसंगतता और औचित्य संभव नहीं था। यह दर्शाता है कि स्थानीय समाचार पत्र भी आतंकवादियों की ओर से गोलीबारी की रेखा में थे, यदि वे उनकी लाइन का पालन करने से इनकार करते हैं। विद्रोह और उग्रवाद के माहौल में पत्रकारों के लिए स्वतंत्र रूप से लिखना और घाटी में रहना संभव नहीं था। कश्मीर में मीडिया ऐसे परिदृश्य में फँस गया, जिसमें यदि उसने आतंकवादियों का समर्थन नहीं किया तो वे मारते थे और यदि उसने आतंकवादियों का समर्थन किया तो सरकार की ओर से उन्हें शर्मसार किया जाता था। अंकुरित होने और टूटने वाले उग्रवादी संगठनों के बीच प्रतिद्वंद्विता ने भी एक खतरा पैदा कर दिया, क्योंकि कोई एक स्वामी नहीं था, बल्कि खुश करने के लिए कई थे। कई बार पत्रकार सरकार के खिलाफ और आतंकवादियों के पक्ष में लिखते थे, क्योंकि एक तर्कसंगत लागत-लाभ विश्लेषण था कि आतंकवादियों के क्रोध की तुलना में सरकार के क्रोध को सहन करना कहीं अधिक आसान है। इस प्रकार, रिपोर्टिंग करते समय कई मामलों में संतुलन बनाए रखा गया। हालाँकि वह संतुलन वस्तुनिष्ठ नहीं, बल्कि व्यक्तिपरक था। कश्मीर में विद्रोह के दौरान प्रसारित होने वाले किसी भी समाचार पत्र का एक सरल और सादा सर्वेक्षण यह धारणा बनाता है कि उन समाचार पत्रों में अधिकतर समाचार आतंकवादियों के बारे में थे। इसकी एक व्याख्या यह है कि उस समय कोई अन्य 'समाचार' नहीं था। चुनावी राजनीति, मुख्यधारा के राजनीतिक दलों के लिए दिन-प्रतिदिन काम करना बंद हो गया था। चूँकि विद्रोह की तीव्रता ने कश्मीर घाटी में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय प्रेस का ध्यान आकर्षित किया, इसलिए इस प्रेस ने कश्मीर के पत्रकारों से आतंकवाद से संबंधित गतिविधियों के बारे में अधिक से अधिक समाचारों की माँग की। 1990 के दशक की शुरुआत में उग्रवाद के बारे में खबरें नया लाभ कमाने वाला व्यवसाय बन गईं, जिससे पत्रकारों को अधिक से अधिक आतंकवादी गतिविधियों को कवर करने के लिए मजबूर होना पड़ा।

संदर्भ

गिलानी, एस.ए.एस. (2012). *वुलर किनारे*. श्रीनगर : मिल्लत पब्लिकेशंस.

जमील, वाय. (2021). श्रीनगर टाइम्स के साथ जुड़े रहे वरिष्ठ पत्रकार. शोधकर्ता के साथ श्रीनगर में निजी साक्षात्कार. 9 अगस्त, 2021

जोशी, एम. (2019). *द लॉस्ट रिबेल्यन : कश्मीर इन द नाइनटीज*. नई दिल्ली : पेंगुइन इंडिया.

डार, एफ. (2021). श्रीनगर टाइम्स के साथ जुड़े रहे वरिष्ठ पत्रकार. शोधकर्ता के साथ दिनांक 30, जून 2021 को श्रीनगर में निजी साक्षात्कार.

पुरी, बी. (2012). *कश्मीर : इंसरजेंसी एंड आफ्टर*. नई दिल्ली : ओरिएंट ब्लैकस्वान.

प्रेस काउंसिल ऑफ. (1991). *क्राइसिस एंड क्रेडिबिलिटी*. नई दिल्ली : लांसर इंटरनेशनल.

बुखारी, बी. (2021). संपादक, कश्मीर डिस्पैच. दिनांक 17 जुलाई, 2021 को श्रीनगर में शोधकर्ता के साथ निजी साक्षात्कार.

भट, आर. (2018). *रेडियो कश्मीर : इन टाइम्स ऑफ वार एंड पीस*. नई दिल्ली : स्टेलर पब्लिकेशन.

मकबूल, आर. (2021). अल जजीरा से जुड़े रहे वरिष्ठ पत्रकार. श्रीनगर में दिनांक 19 जुलाई, 2021 को शोधकर्ता के साथ निजी साक्षात्कार.

मलिक, एस. (2021). जम्मू-कश्मीर सरकार के पूर्व सूचना निदेशक. शोधकर्ता के साथ दिनांक 4 अगस्त, 2021 को श्रीनगर में निजी साक्षात्कार.

मीर, एफ. (2021). वरिष्ठ पत्रकार. दिनांक 16 जुलाई, 2021 को श्रीनगर में शोधकर्ता के साथ निजी साक्षात्कार.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 69-74, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल मापनी का निर्माण एवं प्रमापीकरण

प्रो. मनोज कुमार सक्सेना[1] और डॉ. मनमोहन गुप्ता[2]

सारांश

सोशल मीडिया संचार का एक इंटरनेट आधारित रूप है। यह प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ताओं को बातचीत करने, जानकारी साझा करने और वेब सामग्री बनाने की अनुमति देते हैं। इसके कई रूप हैं, जिनमें ब्लॉग, माइक्रो-ब्लॉग, सोशल नेटवर्किंग साइटें, फोटो-वीडियो-शेयरिंग के अलावा और भी बहुत कुछ शामिल हैं। दुनियाभर में अरबों लोग जानकारी साझा करने और संपर्क बनाने के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं। व्यक्तिगत स्तर पर सोशल मीडिया लोगों को मित्रों और परिवार के साथ संवाद करने, नई चीजें सीखने, अपनी रुचियों को विकसित करने और मनोरंजन की अनुमति देता है। पेशेवर स्तर पर लोग किसी विशेष क्षेत्र में अपने ज्ञान को व्यापक बनाने के लिए इसका उपयोग कर सकते हैं और अपने उद्योग में अन्य पेशेवरों के साथ जुड़कर अपना पेशेवर नेटवर्क बना सकते हैं। कंपनी के स्तर पर सोशल मीडिया दर्शकों के साथ बातचीत करने, ग्राहकों की प्रतिक्रिया प्राप्त करने और ब्रांड को विकसित करने की अनुमति देता है। इसकी ताकत का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि वह किसी भी समाज की दशा में सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही प्रकार के परिवर्तन ला सकता है। यह उपयोगकर्ता पर निर्भर है कि वह सोशल मीडिया का उपयोग किस प्रकार कर रहा है। यदि कुछ जानने और सीखने के उद्देश्य से इसका उपयोग किया जाए, तो एक उच्च और आदर्श जीवन की कल्पना की जा सकती है, लेकिन वहीं अगर केवल मनोरंजन और टाइम पास करने के लिए इसका प्रयोग किया जाए तो हम अपने कीमती समय को गँवा बैठेंगे और कुछ भी नहीं सीख पाएँगे। सोशल मीडिया का अत्यधिक प्रयोग लोगों के स्वास्थ्य को भी प्रभावित कर रहा है और साथ ही इसका प्रभाव मानसिक स्वास्थ्य पर भी पड़ रहा है, जो व्यक्ति के चिंतन कौशल को भी प्रभावित कर रहा है। समाज में शिक्षक को सम्मानित व्यक्ति माना जाता है। अतः शोधकर्ताओं द्वारा शिक्षकों पर सोशल मीडिया के अत्यधिक प्रयोग से पड़ने वाले प्रभावों को उनके चिंतन कौशल के परिप्रेक्ष्य में जाँचने का प्रयास किया गया है। इस जाँच के लिए सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल मापनी का निर्माण एवं प्रमापीकरण किया गया है।

संकेत शब्द : सोशल मीडिया, चिंतन कौशल मापनी, इंटरनेट, शिक्षक

प्रस्तावना

दुनिया की बीती हुई शताब्दियाँ किसी-न-किसी खास वजह से याद की जाती हैं। इसी तरह 21वीं शताब्दी अन्य कारणों के साथ-साथ इंटरनेट, वेबसाइट, सोशल मीडिया के प्रयोग के लिए भी याद की जाएगी। बीसवीं शताब्दी के अंत में बहुत मजबूती से इसकी नींव रखी गई थी। सोशल मीडिया के बढ़ते विस्तार के साथ ही मीडिया की शक्ति कुछ हद तक आम जनता के हाथ में आ गई है। सामाजिक संप्रेषण के नए-नए माध्यम सामने आ रहे हैं। यदि यह कहा जाए कि सोशल मीडिया का उपयोग करना हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा बन गया है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। सोशल मीडिया का यह आभासी संसार हमारे जीवन के कई पहलुओं को तय कर रहा है। बहुत सीमा तक यह हमें नियंत्रित भी करने लगा है।

सोशल मीडिया अब कई लोगों के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। वास्तव में, आठ से सत्रह वर्ष की आयु के आधे बच्चे फेसबुक, इंस्टाग्राम आदि सोशल नेटवर्किंग प्रोफाइल रखते हैं। यह संचार का एक उत्तम साधन है। सोशल मीडिया वर्तमान में किसी भी मंच का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। सोशल मीडिया हमारे दैनिक जीवन में एक प्रमुख भूमिका निभाता है। जब इसके द्वारा कोई भी विचार साझा किया जाता है तो यह लोगों पर व्यापक प्रभाव डालता है। अपने प्रियजनों के संपर्क में रहना हमारे जीवन की सबसे खूबसूरत चीज है और इस काम को सकारात्मक रूप से करने में सोशल मीडिया ने अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। यह न केवल आपके प्रियजनों को जोड़ रहा है, बल्कि यह लोगों को विस्तृत जानकारी भी प्रदान करता है। सोशल मीडिया लोगों को उन तरीकों से बातचीत करने की अनुमति देता है, जिसकी हम कभी कल्पना भी नहीं कर सकते थे। कंप्यूटर या मोबाइल फोन, यहाँ तक कि ईमेल पर एक साधारण संदेश के माध्यम से किसी के जीवन के बारे में जानना काफी आसान है। सोशल मीडिया न केवल किसी के व्यक्तिगत जीवन, बल्कि व्यावसायिक जीवन के लिए भी संचार को सक्षम बनाता है। ई-कॉमर्स ऑनलाइन खरीदारी का सबसे बड़ा मंच बन गया है, जो न केवल खरीदारों को खरीदारी करने में, बल्कि विक्रेताओं को व्यापार करने में भी मदद करता है। कुछ लोगों के व्यवसाय ऑनलाइन विज्ञापनों या मीडिया वेबसाइटों के कारण विकसित हुए हैं। अब लोग शायद ही समाचार पत्रों के माध्यम से जानकारी लेते हैं या विज्ञापनों के लिए समाचार पत्रों को देखते हैं। इसके बजाय, सभी विज्ञापन सोशल मीडिया जैसे ट्विटर या फेसबुक पर ऑनलाइन पोस्ट किए जाते हैं, जिन्हें अधिक लोगों द्वारा देखा जाता है। जैसे-जैसे तकनीक तेजी से बढ़ रही है और सब कुछ ऑनलाइन हो गया है वैसे-वैसे तेजी से बढ़ती तकनीक हर चीज को इंटरनेट पर उपलब्ध करा रही है। लोगों ने ऑफलाइन मार्केटिंग के बजाय डिजिटल मार्केटिंग को अपनाना शुरू कर दिया है और सोशल मीडिया ऑनलाइन व्यापार को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। सोशल मीडिया ने लोगों के जीवन को आसान बना दिया है और लोगों के जीवन का अभिन्न अंग बन गया है।

शिक्षक और विद्यार्थी सोशल मीडिया वेबसाइटों के सबसे प्रभावशाली उपयोगकर्ता हो सकते हैं। वे विज्ञान और गणित की

[1]अध्यक्ष एवं अधिष्ठाता (शिक्षा), हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश, ईमेल : drmanojksaxena@hpcu.ac.in
[2]प्रोफेसर (शिक्षा विभाग), रास बिहारी बोस सुभारती विश्वविद्यालय, देहरादून, उत्तराखण्ड, ईमेल: manmohangupta88@gmail.com

अवधारणाओं को बेहतर तरीके से समझाने के लिए शैक्षिक सामग्री का पता लगाने, मल्टीमीडिया प्रस्तुतियों, 3डी एनिमेशन आदि बनाने के लिए इसका उपयोग कर सकते हैं। वे सार्थक पोस्ट बना और लिख सकते हैं, जो लोगों को उदारतापूर्वक सोचने और कार्य करने में सक्षम बनाती है। शिक्षक रचनात्मकता, खाली समय और प्रौद्योगिकी का उपयोग करके छात्रों, समाज, देश और दुनिया के विकास में एक बड़ा सकारात्मक योगदान दे सकते हैं। लेकिन दुनिया में बदलाव लाना चुनौतीपूर्ण और कठिन है, जहाँ ज्यादातर चीजें मार्केटिंग और विज्ञापन के लिए हैं। हाँ, अगर ध्यान प्रक्रिया पर है तो करना आसान है।

लगभग सभी शिक्षक पहले से ही छात्रों को शिक्षित करके और कॉलेजों, स्कूलों और विश्वविद्यालयों में काम करके देश की मदद कर रहे हैं। अभी भी बहुत सारे लोग हैं जो शिक्षक बनना चाहते हैं और योगदान देना चाहते हैं, लेकिन नौकरियों के अवसर कम हैं। फिर भी तकनीक की मदद से वे न केवल एक शिक्षक बन सकते हैं, बल्कि एक शिक्षक के रूप में अच्छी आय और वित्तीय स्थिरता अर्जित कर सकते हैं। प्रौद्योगिकी शिक्षा को सकारात्मक और नकारात्मक रूप से प्रभावित कर रही है। शिक्षा में प्रौद्योगिकी के विभिन्न उपयोग हैं। यह स्मार्ट क्लास, ऑनलाइन टेस्ट/परीक्षा, ऑनलाइन रिसर्च, असाइनमेंट आदि हो सकते हैं। लगभग हर छात्र आज विभिन्न चीजों के लिए मोबाइल फोन और इंटरनेट का उपयोग करता है। यह गेम, सोशल मीडिया, चैटिंग और वीडियो साइट हो सकती है, जबकि कई का उपयोग सीखने के लिए किया जाता है। इन डिजिटल रुझानों में शिक्षकों के लिए यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि वे अपने तकनीकी कौशल को बेहतर तरीके से अपडेट करें, ताकि छात्रों को सही दिशा में ले जा सकें। छात्रों को पता है कि कैसे सर्च करना है, कैसे देखना है और इंटरनेट पर चीजें कैसे करनी हैं, लेकिन वे नहीं जानते कि गूगल पर क्या सर्च करना है, यूट्यूब पर क्या देखना है, सोशल मीडिया का उपयोग कैसे करना है, उनके करियर और जीवन के लिए क्या महत्त्वपूर्ण और नकारात्मक है। उन्हें नहीं पता कि क्या नकली है, क्या असली है। वे तो बस सोशल मिडिया का प्रयोग अपने अनुसार कर रहे हैं। सोशल मीडिया का प्रभाव व्यक्ति के जीवन पर सीधे तौर पर असरदार साबित हो रहा है।

सोशल मीडिया और चिंतन कौशल

आज लोगों का रहन-सहन, कामकाज, खुशियों के पल, निराशा, मौजमस्ती, यहाँ तक कि सुख-दुःख को भी सोशल मीडिया पर अपने मित्रों तथा रिश्तेदारों के साथ साझा करने की प्रवृत्ति जीवन का हिस्सा बन गए हैं। सोशल मीडिया लोगों के बीच बातचीत के माध्यम को संदर्भित करता है, जिसमें वे आभासी समुदायों और नेटवर्क में सूचना और विचारों का निर्माण, साझा या आदान-प्रदान करते हैं। संचार और विपणन कार्यालय मुख्य फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम, लिंक्डइन और यूट्यूब का प्रबंधन करता है। चिंतन कौशल संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ हैं, जिनका उपयोग हम समस्याओं को हल करने, विभिन्न निर्णय लेने, प्रश्न पूछने, योजनाएँ बनाने, व्यवस्थित करने और जानकारी बनाने के लिए करते हैं।

वर्तमान में यदि गहराई से देखा जाए तो सोशल मीडिया वेबसाइटों से सबसे ज्यादा आकर्षित होने वाले लोग विद्यार्थी हैं। ऐसा इसलिए है, क्योंकि वे ऑनलाइन अधिक समय बिताते हैं, वे विभिन्न प्रकार की सामग्री साझा करते हैं और दूसरों की तुलना में चैटिंग और सामाजिक चीजें अधिक करते हैं। अधिकतर किशोर प्रतिदिन औसतन 8 घंटे सोशल मीडिया पर ऑनलाइन बिताते हैं। आधी से ज्यादा आबादी सोशल मीडिया की दीवानी है। हम लोग अपने मोबाइल पर यह देख सकते हैं। आज कल लोग सोशल मीडिया पर बड़ी संख्या में सक्रिय हैं। यह सोशल मीडिया कंपनियों के लिए बहुत फायदेमंद हैं और कुछ मामलों में ये 'यूजर' के लिए भी अच्छा है। व्हाट्सएप, फेसबुक, इंस्टाग्राम, गूगल+, ट्विटर, पिंटेरेस्ट और अब वेरो की बढ़ती कहानियाँ समान हैं। सोशल मीडिया का उद्देश्य सामाजिक विकास को बढ़ाना था। लेकिन समस्या तब पैदा होती है जब लोग अपने निजी विकास के बारे में भूल जाते हैं और अपने समय का वह हिस्सा सोशल मीडिया पर बिताते हैं।

एक और खतरनाक मुद्दा, जो माता-पिता अपने बच्चों के साथ रिपोर्ट कर रहे हैं, वह है साइबरबुलिंग। कोमल मन वाला एक युवा विद्यार्थी अक्सर सोशल मीडिया पर एक ऐसी भाषा के संपर्क में आता है, जो पूरी तरह से वयस्क है। इससे टकरावपूर्ण तर्क-वितर्क हो सकते हैं और इसका नतीजा अक्सर कम आत्मसम्मान और यहाँ तक कि अवसाद भी होता है। अब विद्यार्थियों के लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल व्यक्तित्व विकास और अधिगम के लिए होना चाहिए। हो सकता है कि कभी-कभी कुछ मजेदार हो, लेकिन हर दिन 8 घंटे अजीब तस्वीरें देखने में खर्च करना निश्चित रूप से एक विद्यार्थी के लिए उत्पादक नहीं है। विद्यार्थी विभिन्न प्रकार की शैक्षिक अवधारणाओं के साथ समुदायों और समूहों का निर्माण कर सकते हैं। जैसे जी.के. ग्रुप्स, आई.ए.एस. ग्रुप्स, स्टडी ग्रुप्स, सृजनात्मक ग्रुप्स, एंटी-साइबरबुलिंग ग्रुप्स आदि। समस्या यह है कि ये चीजें छात्रों के बजाय कंपनियों और व्यवसायों द्वारा की जाती हैं, लेकिन अगर छात्र ऐसे समूहों में भाग लेते हैं तो ये मददगार भी होंगे। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और वह इस संसार में सुख-सुविधा के चाहे कितने भी ताम-झाम जुटा ले, सभी प्रकार की संपन्नता प्राप्त कर ले, बावजूद इसके सामाजिक ताने-बाने के बिना वह संतुष्टि का भाव महसूस नहीं कर सकता है। मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही हम मित्र, परिवार, जाति-बिरादरी और कुलगोत्र आदि के द्वारा सामाजिक संबंधों का ताना-बाना बुनते रहे हैं।

विश्व स्तर पर, इंटरनेट, सोशल नेटवर्क और उनका उपयोग करने वालों की व्यापक विविधता हाल के वर्षों में उल्लेखनीय रूप से बढ़ी है (अजीजी एवं अन्य, 2019)। उपयोगकर्ता सामाजिक नेटवर्क के माध्यम से निजी, सामाजिक और शैक्षिक रिपोर्टों से संबंधित सामग्री, मन, दृष्टिकोण, आदर्शों और भावनाओं को भी बदल सकते हैं। वे ग्राहकों के व्यापक स्पेक्ट्रम (बॉयड एवं एलिसन, 2007) के बीच अंतरराष्ट्रीय बातचीत को भी सक्षम करते हैं। अकादमिक सेटिंग्स में सामाजिक नेटवर्क महत्त्वपूर्ण संचार और सामाजिक समर्थन का चैनल है। प्रशिक्षण के लिए कई सोशल नेटवर्किंग वेबसाइटें बनाई गई थीं (अक्कायर, 2017)। हालाँकि, सामाजिक नेटवर्क कॉलेज के विद्यार्थियों को डेटा और स्रोतों तक पहुँच का अधिकार बढ़ाकर, समूह बातचीत और बातचीत की सीमाओं को कम करके, स्व-निर्देशित सीखने को प्रोत्साहित करने, जुड़ाव और प्रेरणा को बढ़ाने और सक्रिय और सामाजिक सीखने में सहायता करके सीखने में मदद कर सकते हैं (हाइलैंड-वुड एवं अन्य, 2021)। सोशल मीडिया संरचनाओं में नई तकनीकों ने दुनियाभर में बातचीत के लिए माँग की स्थिति और अवसर पैदा किए हैं। सोशल मीडिया के अनुचित उपयोग के गहरे निजी और सामाजिक निहितार्थ भी हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त कई

सोशल नेटवर्किंग उपयोगकर्ता सोशल नेटवर्किंग की लत को बढ़ा सकते हैं (कपूर, एवं अन्य, 2018; पेंटिक, 2014) और सबसे बड़ी बात यह है कि सोशल मीडिया की लत से हमारा स्वास्थ्य भी प्रभावित हो रहा है। इससे न केवल शारीरिक, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है, जिसके विषय में काफी विशेषज्ञ पिछले काफी समय से चेतावनी देते आ रहे हैं।

जैन (2019) ने अपने शोध में बताया है कि महाविद्यालय स्तर के विद्यार्थियों पर सोशल मीडिया के प्रभाव के अध्ययन में इस बात का खुलासा हुआ है कि सोशल मीडिया का बहुत ज्यादा प्रयोग करने वाले लोग मानसिक रूप से बीमार हो रहे हैं। सोशल मीडिया का अधिक प्रयोग नींद में कमी या तनाव का कारण बन सकता है। जैन (2019) लगातार ऐसा रहने से अवसाद, याददाश्त में कमी, मानसिक क्षमता में कमी आना जैसी समस्याओं के होने की भी पूरी-पूरी संभावना रहती है। इसके अतिरिक्त विशेषज्ञों ने पेट की समस्या, सिरदर्द, आँख दर्द, जी मिचलाना, मांसपेशियों में तनाव जैसी समस्याओं के प्रति भी चेतावनी दी है। अतः शोधकर्ताओं द्वारा शिक्षकों पर सोशल मीडिया के अत्यधिक प्रयोग से पड़ने वाले प्रभावों को उनके चिंतन कौशल के परिप्रेक्ष्य में जाँचने का प्रयास किया। इस जाँच के लिए एक ऐसी मापनी की आवश्यकता थी, जिसके द्वारा शिक्षकों पर सोशल मीडिया के पड़ने वाले प्रभाव को उनके चिंतन कौशल के परिप्रेक्ष्य में जाँचा जा सके तथा जिसका प्रयोग इसके नकारात्मक प्रभाव समाप्त करने के लिए तथा समाज को जागरूक करने के लिए किया जा सके।

शोध उद्देश्य

अक्सर माना जाता है कि सोशल मीडिया केवल महत्त्वपूर्ण चिंतन कौशल को नुकसान पहुँचाता है, लेकिन सोशल मीडिया का जब सही इस्तेमाल किया जाता है तो किसी के चिंतन कौशल को मजबूत करने के लिए यह एक शक्तिशाली उपकरण हो सकता है। सोशल मीडिया पर उपलब्ध जानकारी और प्रतिस्पर्धात्मक हितों की संपत्ति के साथ ये प्लेटफॉर्म जानकारी की जाँच करने की क्षमता विकसित करने और अधिक अच्छी तरह से सूचित निर्णय लेने या समस्याओं के अधिक प्रभावी समाधान के लिए अतिरिक्त तथ्यों को स्रोत बनाने में एक संसाधन हो सकते हैं। सोशल मीडिया का चिंतन कौशल पर अच्छा व बुरा दोनों प्रकार का प्रभाव पड़ता है। इस सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल मापनी के निर्माण तथा प्रमापीकरण करने का उद्देश्य शिक्षकों पर सोशल मीडिया के पड़ने वाले प्रभाव को उनके चिंतन कौशल के परिप्रेक्ष्य में जाँचना है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्ययन के लिए शोध की वर्णनात्मक विधि का प्रयोग किया गया है। यह विधि मौजूदा घटना या मुद्दे, स्थितियों और संबंधों के सर्वेक्षण, वर्णन और जाँच से संबंधित है।

समष्टि

प्रस्तुत शोध परियोजना में जनसंख्या से तात्पर्य उन सभी मामलों से है, जिनकी जाँच की जा रही है या वे सभी लोग या वस्तुएँ, जिनकी विशेषता कोई व्यक्ति समझना चाहता है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले के सभी माध्यमिक स्कूलों में कार्यरत शिक्षक इस शोध कार्य में समष्टि हैं।

न्यादर्श एवं न्यादर्श प्रविधि

एक न्यादर्श एक बड़ी आबादी के व्यक्तियों का एक छोटा-सा न्यादर्श है। न्यादर्श का अर्थ उस समूह का चयन करना है, जिससे हम वास्तव में अपने शोध में आँकड़े एकत्र करेंगे। प्रतिचयन अनुसंधान में बहुत सहायता करता है। यह सबसे महत्त्वपूर्ण कारकों में से एक है, जो शोध/सर्वेक्षण के परिणाम की सटीकता को निर्धारित करता है। यदि न्यादर्श में कुछ भी गलत होता है तो यह सीधे अंतिम परिणाम में परिलक्षित होगा। ऐसी कई तकनीकें हैं, जो आवश्यकता और स्थिति के आधार पर न्यादर्श एकत्र करने में हमारी मदद करती हैं। वर्तमान शोध कार्य के लिए जिला सहारनपुर के सभी माध्यमिक स्कूलों में कार्यरत शिक्षकों में से कुल 200 शिक्षकों का स्तरीकृत यादृच्छिक न्यादर्श चयन तकनीक के द्वारा चयन किया गया।

शोध उपकरण

शोध उपकरण तैयार करने के लिए अनुसंधानकर्ताओं द्वारा सर्वप्रथम सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल से संबंधित कुल 55 पदों का निर्माण किया गया, जो निम्न चार आयामों पर आधारित थे:

1. अंतः संबंध
2. समय प्रबंधन
3. सीखने का कौशल
4. शारीरिक एवं मानसिक तनाव

इस सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल मापनी के लिए थर्स्टन की मापनी निर्माण तकनीक का उपयोग करने का निर्णय लिया गया।

थर्स्टन मापनी

थर्स्टन पैमाने को एक आयामी पैमाने के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसका उपयोग प्रतिवादी के व्यवहार, दृष्टिकोण या किसी विषय के प्रति भावना की जाँच करने के लिए किया जाता है। इस पैमाने में किसी विशेष मुद्दे या विषय के बारे में कथन होते हैं, जहाँ प्रत्येक कथन का एक संख्यात्मक मान होता है, जो विषय के प्रति उत्तरदाताओं के दृष्टिकोण को अनुकूल या प्रतिकूल दर्शाता है। उत्तरदाता उन कथनों को इंगित करते हैं, जिनसे वे सहमत हैं, और एक औसत की गणना की जाती है। सहमतियों या असहमतियों के औसत स्कोर की गणना विषय के प्रति उत्तरदाता के दृष्टिकोण के रूप में की जाती है। यह पैमाना रॉबर्ट थर्स्टन द्वारा समान दिखने वाले अंतराल स्तरों में अनुमानित माप के लिए विकसित किया गया था। थर्स्टन पैमाना लिकर्ट पैमाने के मूल सिद्धांतों पर बनाया गया है, लेकिन एक दृष्टिकोण पैमाने के निर्माण की यह विधि न केवल अंतिम दृष्टिकोण स्कोर का मूल्यांकन करते समय प्रत्येक कथन के मूल्य को ध्यान में रखती है, बल्कि तटस्थ वस्तुओं को भी पूरा करती है। गुटमैन स्केल और बोगार्डस सोशल डिस्टेंस स्केल भी यूनिडायमेंशनल स्केल के रूपांतर हैं, जहाँ तत्त्वों को पदानुक्रमित तरीके से क्रमबद्ध किया जा सकता है। थर्स्टन स्केल प्रश्न के संबंध में तीन पैमाने होते हैं, लेकिन सबसे अधिक इस्तेमाल की जाने वाली विधि समान दिखने वाले अंतराल हैं और इसलिए पैमाने को समान दिखने वाले अंतराल पैमाने भी कहा जाता है। इस सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल मापनी के लिए थर्स्टन की मापनी निर्माण तकनीक का उपयोग करने का निर्णय लिया गया।

इस प्रकार प्रारंभ में बनाए गए 55 प्रश्नों को एक टेस्ट बुकलेट के

रूप में रखा गया। थर्स्टन तकनीक के लिए पाँच-बिंदु पैमाने के आधार पर प्रतिक्रियाओं की पाँच श्रेणियाँ—पूर्णतः सहमत, सहमत, अनिर्णित, असहमत, पूर्णतः असहमत—के रूप में दी गई हैं। इन श्रेणियों को पुस्तिका के प्रथम पृष्ठ पर प्रस्तुत किया गया। पुस्तिका शिक्षकों को देने के बाद उन्हें बताया गया था कि इस पुस्तिका को किस प्रकार भरना है।

स्केल मान

शिक्षकों द्वारा दिए गए उत्तरों को प्रत्येक एकांश के लिए अलग-अलग पाँच श्रेणियों या पैमाने में प्रयुक्त प्रतिक्रियाओं में वर्गीकृत किया गया है, जो तालिका-1 में दिया गया है:

तालिका- 1

सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रश्नों के लिए मूल्यांकन प्रक्रिया

उत्तर श्रेणी	सकारात्मक प्रश्नों के लिए अंक	नकारात्मक प्रश्नों के लिए अंक
पूर्णतः सहमत	5	1
सहमत	4	2
अनिश्चित	3	3
असहमत	2	4
पूर्णतः असहमत	1	5

एकत्रित एकांशों को एक स्केल प्रारूप में व्यवस्थित किया गया और इसे उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले के 50 वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों पर प्रशासित किया गया। शिक्षा, मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के कुछ प्रतिष्ठित विद्वानों के साथ पैमाने के इस रूप पर भी सलाह ली गई थी। इस पूर्व परीक्षण के परिणामों और विशेषज्ञों के सुझावों के आधार पर सोशल मीडिया और चिंतन कौशल मापनी में 9 एकांशों को संशोधित किया गया और 16 एकांश मापनी के पहले प्रारूप से वाक्य विन्यास की दृष्टि से हटा दिए गए, क्योंकि इन प्रश्नों में अस्पष्टता थी। अतः अब पैमाने के इस रूप में 39 प्रश्न हैं।

पद विश्लेषण

पद विश्लेषण किसी भी मापनी के मानकीकरण की प्रक्रिया में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। किसी भी मापनी में पद विश्लेषण के आधार पर पदों का चयन किया जाता है। पदों का विश्लेषण करने के लिए आरंभ में सहारनपुर जिले के 150 माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों पर मापनी का प्रयोग किया गया। इस मापनी की प्रतिक्रियाओं को स्कोर किया गया और प्रत्येक व्यक्ति के कुल स्कोर की गणना की गई। स्कोर के अनुसार सोशल मीडिया और चिंतन कौशल मापनी के दो समूहों यानी उच्च समूह और निम्न समूह का गठन किया गया। विषय के उच्च समूह में 27 प्रतिशत शीर्ष अंक हैं और निम्न समूह में 27 प्रतिशत निचले अंक हैं। पद विश्लेषण प्रत्येक 39 पदों के लिए 'टी' टेस्ट के आधार पर किया गया। प्रत्येक पद की विभेदकारी शक्ति का पता लगाने के लिए प्रत्येक पद के औसत स्कोर के बीच अंतर के महत्त्व पर काम किया गया। स्केल के अंतिम मसौदे में केवल उन पदों का चयन किया गया, जो 0.01 सार्थकता स्तर पर अत्यधिक महत्त्वपूर्ण अंतर उत्पन्न करते थे। अतः इस प्रक्रिया में 09 पदों को अस्वीकृत कर दिया गया।

सारणी-2

टी-परीक्षण के आधार पर प्रश्नों का चयन

क्र. सं.	टी मान	सार्थकता स्तर	चयनित/अचयनित
1.	3.41	0.01	चयनित
2.	4.12	0.01	चयनित
3.	3.96	0.01	चयनित
4.	42.42	0.01	चयनित
5.	0.21	-	अचयनित
6.	0.69	-	अचयनित
7.	1.28	-	अचयनित
8.	5.12	0.01	चयनित
9.	1.11	-	अचयनित
10.	2.99	0.01	चयनित
11.	3.61	0.01	चयनित
12.	3.39	0.01	चयनित
13.	1.29	-	अचयनित
14.	2.97	0.01	चयनित
15.	4.12	0.01	चयनित
16.	3.61	0.01	चयनित
17.	3.12	0.01	चयनित
18.	1.32	-	अचयनित
19.	0.92	-	अचयनित
20.	4.22	0.01	चयनित
21.	4.61	0.01	चयनित
22.	3.92	0.01	चयनित
23.	3.78	0.01	चयनित
24.	4.92	0.01	चयनित
25.	5.27	0.01	चयनित
26.	3.99	0.01	चयनित
27.	4.89	0.01	चयनित
28.	5.21	0.01	चयनित
29.	3.01	0.01	चयनित
30.	1.31	-	अचयनित
31.	4.22	0.01	चयनित
32.	3.91	0.01	चयनित
33.	2.98	0.01	चयनित
34.	3.67	0.01	चयनित
35.	4.89	0.01	चयनित
36.	0.81	-	अचयनित
37.	3.87	0.01	चयनित
38.	4.27	0.01	चयनित
39.	3.12	0.01	चयनित

सारणी-3
सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल मापनी में आयामों के आधार पर प्रश्न

क्र. सं.	आयाम	कुल प्रश्न	प्रश्नों का क्रमांक
1.	अंत: संबंध	09	1-9
2.	समय प्रबंधन	08	10-17
3.	सीखने का कौशल	06	18-23
4.	शारीरिक एवं मानसिक तनाव	07	24-30
कुल		30	

विश्वसनीयता

विश्वसनीयता स्थिरता को संदर्भित करती है। यदि आप किसी उपकरण का उपयोग करते हैं या कई बार परीक्षण करते हैं, तो आपको एक ही परिणाम मिलना चाहिए। यदि डेटा (या उपकरण) अविश्वसनीय हैं, तो डेटा को घटना या मापी जाने वाली अवधारणा से असंबंधित माना जाता है। इसलिए इसका अर्थ है कि परिणामों को दोहराया नहीं जा सकता है। उदाहरण के लिए एक टूटा हुआ थर्मामीटर, जो एक ही वातावरण में समान परिस्थितियों में रखे जाने पर हर बार एक अलग माप देता है, विश्वसनीय नहीं है। वर्तमान शोध में पैमाने के विषम होने और पदों को तार्किक रूप से व्यवस्थित करने के कारण दोनों हिस्सों को समान नहीं किया जा सकता था। इसलिए परीक्षण-पुनःपरीक्षण विश्वसनीयता सबसे उपयुक्त पाई गई। पैमाने के लिए पैमाने का परीक्षण-पुनःपरीक्षण विश्वसनीयता अध्ययन 150 शिक्षकों के नमूने पर आयोजित किया गया था। परीक्षण का दूसरा प्रशासन एक महीने के बाद दिया गया था। दो अंकों के लिए सहसंबंध के प्रोडक्ट मोमेंट गुणांक की गणना की गई थी और दोनों परीक्षणों के बीच सहसंबंध का गुणांक 0.76 पाया गया था, जोकि 0.01 के सार्थकता स्तर पर सार्थक पाया गया है। अत: इस सोशल मीडिया व चिंतन कौशल मापनी को एक विश्वसनीय मापनी माना जा सकता है।

वैधता

किसी भी मापनी के लिए पद की वैधता की जाँच करना अत्यंत आवश्यक है। वैधता का सीधा सा मतलब है कि एक परीक्षण या उपकरण वह सटीक रूप से माप रहा है, जो यह मापने का दावा करता है। वर्तमान सोशल मीडिया व चिंतन कौशल मापनी की वैधता का निर्धारण करने हेतु यह मापनी तथा प्राप्त परिणामों की सूची कुल सात विषय विशेषज्ञों को प्रेषित की गई। सभी विषय विशेषज्ञ मापनी की वैधता पर एक मत थे तथा सभी ने मापनी की वैधता पर सकारात्मक प्रतिक्रिया दी तथा कहा कि यह मापनी सोशल मीडिया व चिंतन कौशल के मापन हेतु पूर्ण रूप से वैध है। अंत में इस मापनी में कुल 30 पद थे, जिनका प्राप्तांक कम-से-कम 30 तथा अधिकतम 150 हो सकता है।

निष्कर्ष

जैसे-जैसे महामारी के कारण सोशल मीडिया का उपयोग बढ़ रहा है, लोग मानसिक स्वास्थ्य पर इसके प्रभाव के बारे में चिंतित हैं। अधिकतर देखा गया है कि सोशल मीडिया का उपयोग कोविड-19 लॉकडाउन की शुरुआत के बाद से बढ़ गया है, जबकि कुछ लोगों का कहना है कि वे सोशल मीडिया पर दिन में दो घंटे से अधिक समय बिताते हैं। यह इस सामान्य स्वीकृति के बावजूद है कि सोशल मीडिया खराब मानसिक स्वास्थ्य के लक्षणों में योगदान दे रहा है। लोगों का यह भी कहना है कि ऑनलाइन नए विचारों के संपर्क में आने से उन्हें लाभ हुआ है। सोशल मीडिया से पठन-पाठन के अनुभवों में एक नया मोड़ आया है। मीडिया के पढ़ाई के साधन विविध रूपों में उपलब्ध कराता है, जिसे विद्यार्थी अधिक से अधिक समय व्यतीत कर रहे हैं। वे अध्ययन कम करते हैं तथा चैटिंग करना, मित्र बनाना आदि कार्य अधिक करते हैं। वे अपने ज्ञान में तो वृद्धि कर रहे हैं परंतु साइबर अपराधों में लिप्त होते जा रहे हैं। यह मापनी सोशल मीडिया एवं चिंतन कौशल मापनी है। यह वर्तमान समय में सोशल मीडिया के चिंतन कौशल पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने में सहायक सिद्ध होगी। वर्तमान समय में सोशल मीडिया के उपयोग की अधिकता हो गई है। इस कारण सोशल मीडिया का मनुष्य पर नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों तरह का प्रभाव होता है। यह मनुष्य पर निर्भर करता है कि वह किस स्तर पर सोशल मीडिया का उपयोग करता है क्योंकि डाटा की गोपनीयता एवं सुरक्षा की कमी चुनौतियां बनी हुई हैं। शैक्षणिक संस्थानों में विद्यार्थियों के सोशल मीडिया चिंतन कौशल का आकलन करने में इस मापनी का उपयोग किया जा सकता है। सोशल मीडिया चिंतन कौशल मापनी का निर्माण और मानकीकरण डिजिटल साक्षरता को भी प्रस्तुत करता है। इसके साथ-साथ यह मापनी मनुष्य को जागरूक करने में भी सहायक सिद्ध होती है।

संदर्भ

अक्कायर, जी. (2017). 'व्हाई डू फैकल्टी मेम्बर्स यूज ऑर नॉट यूज सोशल नेटवर्किंग साइट्स फॉर एजूकेशन?, 71, 378 – 385 https://www.researchgate.net /publication/ 313582084_ Why_do_faculty_ members_use_or_not_use_social_ networking_sites_for_education से पुन:प्राप्त.

अजीजी, एस. एम., सोरौश, ए., और खाटोनी, ए. (2019). द रिलेशनशिप बिटवीन सोशल नेटवर्किंग एडिक्शन एंड अकादमिक परफॉरमेंस इन ईरानियन स्टूडेंट्स ऑफ मेडिकल साइंसेज: ए क्रॉस-सेक्शनल स्टडी, 7 (1), 28. https://www.researchgate.net/ publication/332857267_The_relationship_between_ social_networking_addiction_and_academic_ performance_in_Iranian_students_of_medical_ sciences_A_cross-sectional_study से पुन:प्राप्त.

कपूर, के. के., तमिलमणि, के., राणा, एन. पी., पाटिल, पी., द्विवेदी, वाई. के., & नेरूर, एस. (2018). एडवांस इन सोशल मीडिया रिसर्च: पास्ट, प्रेजेंट एंड फ्यूचर, सूचना प्रणाली फ्रंटियर्स, 20(3), 531 https://link.springer.com /article/10.1007/s10796-017-9810-y से पुन:प्राप्त.

जैन, ए. (2019). महाविद्यालय स्तर के विद्यार्थियों पर सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन, मॉडर्न

मैनेजमेंट, अप्लाईड साईंस. वॉल्यूम 01, नं. 04, अक्टूबर-दिसंबर, 2019, पृष्ठ. 47-50

पेंटिक, आई. (2014). ऑनलाइन सोशल नेटवर्किंग एंड मेंटल हेल्थ. साइबरसाइकोलोजी, बेहवियर एंड सोशल नेटवर्किंग. 17 (10), 652. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/ PMC4183915 /#:~:text=Recently%2C%20however%2C%20some%20researchers%20have,on%20mental%20health%20remain%20unanswered से पुन:प्राप्त.

बॉयड, डी. एम., और एलिसन, एन. बी. (2007). सोशल नेटवर्क साइट्स : डेफिनिशन, हिस्ट्री, एंड स्कॉलरशिप, जर्नल ऑफ कंप्यूटर-मेडीए_टेड कम्युनिकेशन, 13(1), 1 अक्टूबर, 210 – 230 https://doi.org/10.1111/ j.1083-6101.2007.00393.x से पुन:प्राप्त.

हाइलैंड-वुड, बी.,गार्डनर, जे., लीस्क, जे.,और एकर, यू. के. एच. (2021). टुवर्ड इफेक्टिव गवर्नमेंट कम्युनिकेशन स्ट्रेटेजीज इन द एरा ऑफ कोविड-19. ह्युमनिटीज एंड सोशल साइंसेज कम्युनिकेशंस, 8(1), 1 https://doi.org/10.1057/s41599-020-00701-w से पुन:प्राप्त.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 75-79, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

भारत की आजादी का अमृत महोत्सव

सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं द्वारा संचार के लिए डिजिटल उपकरणों का उपयोग : उत्तर प्रदेश के चुनिंदा गाँवों का अध्ययन

अमन दुबे[1] और डॉ. सर्वेश दत्त त्रिपाठी[2]

सारांश

भारत में स्वास्थ्य सेवाओं के लिए सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की भूमिका बहुत अहम है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं के लिए लाभार्थियों का सबसे पहला संपर्क आशा, एएनएम और आँगनवाड़ी कार्यकर्ता से होता है। इन स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं पर अनेकों जिम्मेदारियाँ होती हैं; जैसे कि माँ और बच्चे की देखभाल करना, दवा वितरण, घर-घर जाकर लाभार्थियों से मिलना और उन्हें स्वास्थ्य संबंधी जानकारी देना और आवश्यकता पड़ने पर समुदाय-आधारित समूह बनाकर लाभार्थियों को शिक्षित करना। भारत सरकार जन-जन तक स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान करने के लिए कई स्वास्थ्य कार्यक्रमों को चला रही है; जैसे कि आयुष्मान भारत योजना, प्रधानमंत्री स्वास्थ्य सुरक्षा योजना, प्रधानमंत्री सुरक्षित मातृत्व अभियान, शिशु सुरक्षा कार्यक्रम, राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम, सार्वभौमिक टीकाकरण कार्यक्रम, राष्ट्रीय परिवार नियोजन कार्यक्रम, आदि। इन स्वास्थ्य कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए बड़े पैमाने पर कार्यबल की आवश्यकता होती है। इन कार्यक्रमों के मूल में सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता (सीएचडब्ल्यू) महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रस्तुत अन्वेषणात्मक शोध एक व्यापक शोध प्रश्न और एक शोध उद्देश्य पर केंद्रित है, जो इस बिंदु के इर्द-गिर्द घूमता है कि सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता अपने स्वास्थ्य लाभार्थियों के साथ कैसे संवाद करते हैं। अध्ययन का उद्देश्य स्वास्थ्य लाभार्थियों द्वारा संचार के लिए डिजिटल उपकरणों के इस्तेमाल का पता लगाना है। शोधकर्ताओं ने इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए ईएम रोजर्स (1962) द्वारा डिफ्यूजन ऑफ इनोवेशन (डीओआई) के सैद्धांतिक ढाँचे का उपयोग किया है। ग्रामीण उत्तर प्रदेश के चुनिंदा गाँवों से प्राथमिक डेटा एकत्र करने के लिए, शोधकर्ताओं ने एक गुणात्मक शोध पद्धति का उपयोग किया और आशा, एएनएम और आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के साथ अर्ध-संरचित साक्षात्कार आयोजित किए। इस अध्ययन के परिणाम डिजिटल उपकरण-आधारित संचार को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कार्यक्रमों और नीतियों के विकास का मार्गदर्शन कर सकते हैं। यह ग्रामीण क्षेत्रों में संचार के लिए डिजिटल उपकरणों की क्षमता और सीमाओं में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकता है।

संकेत शब्द : सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता, आशा, एएनएम, आँगनवाड़ी कार्यकर्ता, डिजिटल संचार, स्वास्थ्य लाभार्थी

प्रस्तावना

भारत में नब्बे के दशक से ही डिजिटलीकरण की शुरुआत हो गए थी। वर्ष 2006 में भारत सरकार ने राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना पर काम करना प्रारंभ किया। इन योजनाओं की रफ्तार धीमी होने के कारण डिजिटलीकरण का विकास बहुत कम हुआ। ई-गवर्नेंस को बढ़ावा देने और भारत को डिजिटल रूप से सशक्त बनाने के उद्देश्य से 1 जुलाई, 2015 को भारत सरकार ने डिजिटल इंडिया मिशन की शुरुआत की (डिजिटल इंडिया, 2023)। सभी नागरिकों को सार्वभौमिक स्वास्थ्य कवरेज प्रदान करने और भारत को आत्मनिर्भर बनाने के उद्देश्य से 15 अगस्त, 2020 को भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 'राष्ट्रीय डिजिटल स्वास्थ्य मिशन' (एनडीएचएम) की घोषणा की। एनडीएचएम को भारत की 2017 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति (एनएचपी) के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया है (राष्ट्रीय डिजिटल स्वास्थ्य मिशन/मेक इन इंडिया, एन.डी.)। इन पहलों के साथ, भारत अपनी डिजिटल परिवर्तन यात्रा में उल्लेखनीय प्रगति कर रहा है, सरकार प्रौद्योगिकी को सभी नागरिकों के लिए सुलभ और समावेशी बनाने की दिशा में काम कर रही है। पिछले कुछ वर्षों में हुए डिजिटलीकरण की क्रांति के बाद स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता के लिए मोबाइल फोन के उपयोग में बढ़ोतरी हुई है। मोबाइल हेल्थ (एमहेल्थ) ने उच्च गुणवत्ता वाली स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान करने के नए रास्ते खोल दिए हैं। तकनीकी प्रगति और स्मार्टफोन की व्यापक उपलब्धता ने दूरस्थ क्षेत्रों तक स्वास्थ्य सेवाओं को पहुँचाना संभव बना दिया है, जिससे स्वास्थ्य सेवा पहले से कहीं अधिक सुलभ हो गई है (वार्ड एट आल, 2021)। ई-स्वास्थ्य सेवाओं और मोबाइल एप्लिकेशन आधारित सेवाओं ने संचार और पारदर्शिता में सुधार किया है, जिससे स्वास्थ्य सेवा अधिक सस्ती और रोगियों के लिए सुलभ हो गई है (कांडपाल एवं अन्य, 2022)।

भारत सरकार हर व्यक्ति को स्वास्थ्य सेवाओं से जोड़ने के लिए कई स्वास्थ्य कार्यक्रम चला रही है; जैसे कि आयुष्मान भारत योजना, प्रधानमंत्री स्वास्थ्य सुरक्षा योजना, प्रधानमंत्री सुरक्षित मातृत्व अभियान, जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम, जननी सुरक्षा योजना, शिशु सुरक्षा कार्यक्रम, राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम, राष्ट्रीय किशोर स्वास्थ्य कार्यक्रम, राष्ट्रीय परिवार नियोजन कार्यक्रम, सार्वभौमिक टीकाकरण कार्यक्रम, मिशन इंद्रधनुष, आदि (स्वास्थ्य देखभाल योजनाएँ, एनडी)। इन स्वास्थ्य कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से क्रियान्वित करने के लिए बड़ी संख्या में प्रशिक्षित चिकित्सा पेशेवरों की आवश्यकता होती है। हालाँकि, भारत को इन कार्यक्रमों का समर्थन करने के लिए योग्य चिकित्साकर्मियों की कमी का सामना करना पड़ता है।

इस समस्या के समाधान हेतु सरकार ने ग्रामीण स्तर पर आशा, एएनएम और आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को नियुक्त किया है (ब्लैंचर्ड एट आल, 2019)। ये सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता (सीएचडब्ल्यू) भारत ही नहीं, बल्कि अन्य देशों में भी वंचित आबादी को स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने में

[1]शोध छात्र, युनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मास कम्युनिकेशन, गुरु गोबिंद सिंह इंद्रप्रस्थ विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, ईमेल : amandubeyrs@gmail.com
[2]सहायक आचार्य, युनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मास कम्युनिकेशन, गुरु गोबिंद सिंह इंद्रप्रस्थ विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, ईमेल : sarveshdt@gmail.com

महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आशा, एएनएम (सहायक नर्स मिडवाइफ) और आँगनवाड़ी की टीम अग्रिम पंक्ति के स्वास्थ्य कार्यकर्ता हैं, जो जमीनी स्तर पर स्वास्थ्य सेवा प्रदान कर एक मजबूत और स्वस्थ भारत के निर्माण में योगदान करते हैं (अब्रू एट आल, 2021)। सीएचडब्ल्यू माँ और बच्चे की देखभाल के विभिन्न पहलुओं में शामिल हैं, जैसे कि नवजात की देखभाल, गर्भवती एवं धात्री महिलाओं की देखभाल, बच्चों की डिलीवरी, टीकाकरण, दवा का वितरण, खाद्य सामग्री का वितरण, लाभार्थियों के घर का दौरा करना, समुदाय-आधारित समूह बनाना और स्वास्थ्य संबंधी जानकारी फैलाना। यही नहीं, इन स्वास्थ्यकर्मियों ने नवजात मृत्यु दर को कम करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है (ब्लैंचर्ड एट आल, 2019)।

पिछले कुछ वर्षों में, स्वास्थ्य विभाग में मोबाइल एप्लिकेशन, वेबसाइट, मोबाइल फोन, टैबलेट और कंप्यूटर जैसे डिजिटल उपकरणों का इस्तेमाल बढ़ा है। उत्तर प्रदेश सरकार ने आशा और आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को स्मार्टफोन और एएनएम को टैबलेट मुहैया करवाया है। इन डिजिटल उपकरणों के माध्यम से स्वास्थ्यकर्मी सरकार को लाभार्थियों से जुड़ी स्वास्थ्य जानकारियाँ ऑनलाइन साझा करते हैं। इलेक्ट्रॉनिक स्वास्थ्य रिकॉर्ड और टेलीमेडिसिन जैसी सुविधाएँ डिजिटल उपकरणों के माध्यम से मुहैया करवाई जा रही हैं (राष्ट्रीय डिजिटल स्वास्थ्य मिशन/मेक इन इंडिया, एनडी)। ये उपकरण सीमित संसाधनों वाले क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा की पहुँच को बेहतर बनाने में विशेष रूप से सहायक साबित हो रहे हैं (अब्रू एट आल, 2021)। हालाँकि, सीएचडब्ल्यू का समर्थन करने में इन डिजिटल उपकरणों की प्रभावशीलता पर अभी भी शोध किया जा रहा है, क्योंकि कई चुनौतियाँ देखभाल प्रदान करने की उनकी क्षमता में बाधा बन सकती हैं। इन डिजिटल उपकरण की सहायता से किस प्रकार लाभार्थियों से प्रभावी रूप से संचार किया जा सकता है यह भी शोध का विषय है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत अन्वेषणात्मक शोध एक व्यापक शोध प्रश्न और एक शोध उद्देश्य पर केंद्रित है, जो इस बिंदु के इर्द-गिर्द घूमता है कि सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता अपने स्वास्थ्य लाभार्थियों के साथ कैसे संवाद करते हैं। अध्ययन का उद्देश्य स्वास्थ्य लाभार्थियों द्वारा संचार के लिए डिजिटल उपकरणों के इस्तेमाल का पता लगाना है। शोधकर्ता ने इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए ईएम रोजर्स (1962) द्वारा डिफ्यूजन ऑफ इनोवेशन (डीओआई) के सैद्धांतिक ढाँचे का उपयोग किया है। ग्रामीण उत्तर प्रदेश के चुनिंदा गाँवों से प्राथमिक डेटा एकत्र करने के लिए, शोधकर्ता ने एक गुणात्मक शोध पद्धति का उपयोग किया और आशा, एएनएम और आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के साथ अर्ध-संरचित साक्षात्कार आयोजित किए। शोधकर्ता ने वर्ष 2023 के फरवरी और मार्च महीने में साक्षात्कार आयोजित किए। ये साक्षात्कार हिंदी और उस क्षेत्र की स्थानीय भाषा के मिश्रण का उपयोग करके किए गए। उत्तरदाताओं ने ऑडियो रिकॉर्ड किए जाने से पहले अपनी लिखित सूचित सहमति दी। बाद में, रिकॉर्ड की गई फाइलों को हिंदी, भोजपुरी, अवधी और ब्रजभाषा से अँग्रेजी में प्रतिलिपित किया गया, जिसका सॉफ्टवेयर की सहायता से विश्लेषण कर निष्कर्ष तक पहुँचा गया।

प्रतिचयन

प्रस्तुत अन्वेषणात्मक अध्ययन उत्तर प्रदेश के तीन जिलों अलीगढ़, भदोही और गोरखपुर के चुनिंदा गाँवों पर केंद्रित है। उत्तर प्रदेश में कुल 18 प्रशासनिक मंडल हैं, प्रत्येक मंडलों में कई जिले हैं। शोधकर्ता ने उत्तर प्रदेश को इन 18 मंडलों में विभाजित करने के लिए बहु-स्तरीय प्रतिचयन पद्धति का उपयोग किया। इन 18 मंडलो में से गोरखपुर, मिर्जापुर और अलीगढ़ मंडलों का चयन फिशबाउल ड्रा संभाव्यता नमूनाकरण पद्धति का उपयोग करके किया गया। गोरखपुर मंडल में चार जिले हैं (गोरखपुर, कुशीनगर, महाराजगंज, देवरिया), मिर्जापुर मंडल में तीन (मिर्जापुर, भदोही (संत रविदास नगर), सोनभद्र) और अलीगढ़ मंडल में चार (अलीगढ़, हाथरस, कासगंज, एटा)। फिशबाउल ड्रा संभाव्यता नमूनाकरण पद्धति का उपयोग करके प्रत्येक डिवीजन से एक जिले का चयन किया गया, और प्रत्येक जिले के एक ब्लॉक से एक गाँव को सरल यादृच्छिक संभाव्यता नमूनाकरण का उपयोग कर चुना गया। शोधकर्ता ने गोरखपुर, भदोही और अलीगढ़ जिलों में स्थित शेरगढ़, मुसी और सपेरा भानपुर नामक गाँवों में अर्ध-संरचित साक्षात्कार किए। प्रत्येक जिले से 3 सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं (आशा, एएनएम और आँगनवाड़ी कार्यकर्ता) के साथ गहन साक्षात्कार आयोजित किए गए। कुल स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की संख्या 9 रही।

डेटा विश्लेषण

गुणात्मक डेटा विश्लेषण प्रक्रिया में विषयगत विश्लेषण करने के लिए NVivo सॉफ़्टवेयर संस्करण 14 का उपयोग किया गया। यह क्लार्क और ब्रौन (2013) द्वारा उल्लिखित विषयगत विश्लेषण के लिए स्थापित छह-चरण दृष्टिकोण का पालन करके किया गया। डेटा से परिचित होने के लिए पहले चरण में डेटा में खुद को विसर्जित करना शामिल था। अगला, आवर्ती पैटर्न और विषयों की पहचान करने के लिए डेटा को व्यवस्थित रूप से कोडित किया गया। डेटा की सटीकता और प्रासंगिकता सुनिश्चित करने के लिए उनकी समीक्षा की गई। विषयों को अंतिम रूप देने के बाद, उन्हें स्पष्ट और संक्षिप्त रूप से परिभाषित और नाम दिया गया। अंत में, परिणामों को संकलित कर एक व्यापक लेख में प्रस्तुत किया गया, जो विश्लेषण के निष्कर्षों को सटीक रूप से दर्शाता है। विषयों की पहचान एक आगमनात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से की गई थी, जिसने नए विषयों को उभरने की अनुमति दी थी, जो शुरू में प्रत्याशित नहीं थे।

परिणाम

प्रस्तुत शोध इस बात पर केंद्रित रहा कि सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में अपने लाभार्थियों के साथ कैसे संवाद करते हैं। क्या वे अपने लाभार्थियों से संवाद करने के लिए अपने डिजिटल उपकरणों का उपयोग करते हैं? या वे प्रौद्योगिकी आधारित संचार की जगह पारस्परिक संचार या समूह आधारित संचार करना पसंद करते हैं? अध्ययन की खोज को दो भागों में बाँट कर चर्चा की गई है। एक हिस्सा इस बारे में बताता है कि स्वास्थ्य कार्यकर्ता डिजिटल उपकरणों का उपयोग करने में कुशल और सहज महसूस करते हैं या नहीं, वहीं दूसरा बिना डिजिटल उपकरणों के साथ होने वाली चर्चाओं पर केंद्रित है। अध्ययन

में पाया गया कि सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की आयु और शिक्षा का स्तर उनके डिजिटल उपकरणों के उपयोग से जुड़ा हुआ है। स्वास्थ्य कार्यकर्ता जो अधिक शिक्षित और कम उम्र के हैं, वे डिजिटल उपकरणों के साथ अधिक सहज महसूस करते हैं। वे अपने स्मार्टफोन या टैबलेट पर मोबाइल एप्लिकेशन और वेबसाइटों का आसानी से उपयोग कर पाते हैं। वे मैसेजिंग एप्लिकेशन व्हाट्सएप से जुड़े हुए हैं, जहाँ वे अपने सहयोगियों और कभी-कभी अपने लाभार्थियों के साथ जानकारी साझा करते हैं। वहीं दूसरी ओर, अधिक आयु और कम शिक्षित स्वास्थ्यकर्मियों के पास स्मार्टफोन या टैबलेट का उपयोग करने के लिए डिजिटल कौशलता की कमी है। वे मोबाइल एप्लिकेशन और वेबसाइटों का उपयोग करने के लिए दूसरों पर निर्भर हैं। उनके लिए, व्हाट्सएप के माध्यम से संवाद करना जटिल है, और वे फोन कॉल या वीडियो कॉनफ्रेंसिंग के बजाय अपने लाभार्थियों से व्यक्तिगत रूप से मिलना पसंद करते हैं।

मोबाइल एप्लिकेशन के माध्यम से लाभार्थियों से संवाद

स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं से साक्षात्कार के दौरान शोधकर्ता ने पूछा कि क्या आप अपने लाभार्थियों के साथ संवाद करने के लिए किसी मोबाइल एप्लिकेशन का उपयोग करते हैं। अधिकतर स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं ने बताया कि वे मैसेजिंग एप्लिकेशन व्हाट्सएप का उपयोग करते हैं, लेकिन लाभार्थियों के साथ इसकी उपयोगिता कम है। वही दूसरी ओर वे अपने सहकर्मियों या अधिकारियों से संपर्क करने के लिए व्हाट्सएप का अधिक इस्तेमाल करते हैं। उनका मानना है कि व्हाट्सएप ग्रुप संचार और सूचना साझा करने के लिए एक बेहतरीन मंच हैं। वे मानते हैं की समस्या की जड़ लाभार्थियों की ओर से है, क्योंकि उनमें स्मार्टफोन उपयोग करने का कौशल कम होता है। स्वास्थ्यकर्मी बताते हैं कि उनके अधिकतर लाभार्थी महिलाएँ होती हैं, इन महिलाओं के पास स्मार्टफोन नहीं होता है और वे इसके इस्तेमाल के लिए किसी और पर निर्भर होती हैं। अधिकतर लाभार्थी ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं से जुड़ने के लिए कीपैड फोन का उपयोग करते हैं। स्मार्टफोन की तुलना में कीपैड फोन का ज्यादा होने के पीछे कई कारण हैं। सबसे पहला कारण है स्मार्टफोन न खरीद पाने की क्षमता। ग्रामीण इलाकों में कम आय होने की वजह से लोग स्मार्टफोन या टेबलेट खरीद पाने में असमर्थ होते हैं। दूसरा कारण उनकी उम्र और शिक्षा का स्तर है। ग्रामीण इलाकों में अधिकांश महिला आबादी कम शिक्षित या अनपढ़ है। इसकी वजह से उनमें डिजिटल उपकरणों को चलाने के लिए आवश्यक कौशलता की कमी होती है। तीसरी वजह उनकी घरेलू जिम्मेदारियाँ हैं। महिला लाभार्थियों के पास भारी मात्रा में घरेलू काम होते हैं। जैसे कि परिवार की देखभाल करना, खेती-बाड़ी करना और कुछ महिलाओं पर तो पशुपालन की भी जिम्मेदारियाँ होती हैं। अत्यधिक काम और पूरे दिन की व्यस्तता के कारण उन्हें स्मार्टफोन इस्तेमाल करने का समय नहीं मिल पाता है।

ऑडियो-वीडियो आधारित संचार

जब स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं से पूछा गया कि वे अपने लाभार्थियों के साथ पारस्परिक या समूह संचार के दौरान अपने डिजिटल उपकरणों का उपयोग कैसे करते हैं, तो उन्होंने यूट्यूब वीडियो की ओर इशारा किया। कुछ ने कहा कि वे यूट्यूब वीडियो का उपयोग लाभार्थियों को बीमारियों के निवारक उपायों और खतरनाक प्रभावों के बारे में शिक्षित करने के लिए करते हैं। उनमें से कुछ ने कहा कि वे अपने लाभार्थियों को स्मार्टफोन या टैबलेट पर तस्वीरें दिखाते हैं; इससे उन्हें लाभार्थियों को स्वस्थ व्यवहार अपनाने और किसी भी गलत सूचना के बारे में सूचित करने में मदद मिलती है। ग्रामीण उत्तर प्रदेश में ऐसे भी क्षेत्र हैं जहाँ स्वास्थ्यकर्मियों को इंटरनेट की समस्या का सामना करना पड़ता है। यह समस्या उनके काम को नहीं रोक पाती है, क्योंकि जब भी उन्हें उचित इंटरनेट कनेक्टिविटी मिलती है, वे वीडियो डाउनलोड कर लेते हैं और बाद में इसे पारस्परिक या समूह संचार के दौरान लाभार्थियों को दिखाते हैं। स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का साक्षात्कार करते समय, शोधकर्ता ने ऑडियो-आधारित संचार के उपयोग की भी पड़ताल की। उसमें शोधकर्ता ने यह पाया कि स्वास्थ्य कार्यकर्ता स्वास्थ्य संबंधी जानकारी वाला ऑडियो पारस्परिक या समूह संचार के दौरान चलाते हैं और इसे कहानी के रूप में मौखिक रूप से समझाते हैं। यह तरीका पूरी बातचीत को अधिक आकर्षक बना देता है।

पारस्परिक संचार का महत्त्व

शोधकर्ता ने ग्रामीण परिवेश में पारस्परिक संचार की एक आवश्यक भूमिका पाई। गाँवों में यह आम बात है कि लाभार्थी दवा लेने या टीका लगवाने से मना कर देते हैं। यहाँ पारस्परिक संचार का महत्त्व बढ़ जाता है। सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता उन गाँवों के निवासी होते हैं जहाँ वे काम करते हैं, और लोग उन्हें अच्छी तरह से जानते हैं। वे नियमित रूप से घर-घर जा कर लाभार्थियों से मिलते हैं, जिससे उन्हें अपने लाभार्थियों से जुड़ने और अच्छे संबंध बनाने में मदद मिलती है। स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के पारस्परिक संबंध उन्हें लाभार्थियों को दवा लेने या टीका लगवाने के लिए प्रेरित करते हैं। स्वास्थ्यकर्मियों ने शोधकर्ता को अनेक घटनाओं के बारे में बताया कि वे पारस्परिक संचार के माध्यम से प्रतिकूल परिस्थितियों से कैसे निपटती हैं। स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं में से एक ने अपने अनुभव को साझा करते हुए बताया कि जब कोई लाभार्थी पोलियो ड्रॉप या आयरन या फाइलेरिया की गोलियाँ लेने से मना कर देता है तो वे लाभार्थियों को दवा लेने के लिए कैसे मनाती हैं। उन्होंने बताया कि कभी-कभी वे स्वयं दवा का सेवन करती हैं और इसे लेते समय वह एक वीडियो बना लेती हैं या एक तस्वीर लेती हैं। इस तस्वीर या वीडियो को वह अपने लाभार्थियों को दिखा कर यह साबित करती हैं कि इसके सेवन का कोई दुष्प्रभाव नहीं है। वे इस प्रकिया को अन्य लाभार्थियों के साथ भी करती हैं। गाँव के लाभार्थियों द्वारा दवा का सेवन करते हुए तस्वीर या वीडियो बना लेती हैं, जिसे अन्य लाभार्थियों को दिखती हैं। इससे समुदाय में विश्वास बनाए रखने में मदद मिलती है।

समूहों में स्वास्थ्य संबंधी जानकारी का संचार

सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के लिए गाँव में एक समूह बनाना और अपने लाभार्थियों के साथ स्वास्थ्य संबंधी जानकारी साझा करना आम बात है। एक समूह बनाने के लिए स्वास्थ्यकर्मियों को 8 से 10 लाभार्थियों की आवश्यकता होती है। उन्हें इकट्ठा करने में पारस्परिक संबंधों और संचार की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। आशा और सहायिका

कार्यकर्ता (ये एएनएम और आँगनवाड़ी कार्यकर्ता के सहायक के रूप में काम करती हैं) घर-घर जाकर अपने लाभार्थियों से व्यक्तिगत रूप से मिलती हैं और उन्हें स्वास्थ्य शिविर में आने के लिए मनाती हैं। इन शिविरों का आयोजन पंचायत भवन, आँगनवाड़ी केंद्र, प्राथमिक विद्यालय, गाँव के मंदिर या फिर चौपाल (गाँव का एक आम मिलन स्थल) में होता है।

इस समूह-आधारित संचार में पोस्टर और बैनर की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं ने साझा किया कि वे स्वास्थ्य शिविरों में संवाद करते समय पोस्टर और बैनर का उपयोग करते हैं। वे मौखिक तौर पर कहानी की मदद से पोस्टर या बैनर में छपे चित्रों और लिखित भाग की व्याख्या करते हैं। वे ऐसा इसलिए करते हैं, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकतर लाभार्थी कम पढ़े-लिखे या निरक्षर होते हैं। स्वास्थ्य कार्यकर्ता गाँव के प्रमुख सार्वजनिक स्थानों, जैसे पंचायत भवन, आँगनवाड़ी केंद्र, मंदिरों, स्कूलों और चौपाल पर भी पोस्टर चिपकाते या बैनर लटकाते हैं। यह लाभार्थियों के व्यवहार को प्रभावित करने और उन्हें परिवार नियोजन, स्वच्छता बनाए रखने और अपने परिवार की देखभाल के बारे में शिक्षित करने में मदद करता है। आशा कार्यकर्ताओं में से एक ने साझा किया कि उन्होंने गाँवों में मंदिरों, स्कूलों और चौपाल जैसे महत्त्वपूर्ण स्थानों पर पोस्टर चिपकाए हैं। ऐसा उन्होंने ग्रामीणों को यह सूचित करने के लिए किया है कि वे गाँव में फाइलेरिया की दवा बाँट रही हैं। स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं ने शोधकर्ता को चित्र पुस्तिका के बारे में भी बताया, जिसका उपयोग वे बीमारियों और स्वस्थ खाद्य पदार्थों से संबंधित चित्रों को दिखाने के लिए करती हैं। इन चित्रों में वे खाद्य पदार्थ होते हैं, जिनका सेवन करने से लाभार्थी खुद को स्वस्थ रख सकते हैं। इस चित्र पुस्तिका के माध्यम से स्वास्थ्य कार्यकर्ता विभिन्न रोगों के उन्नत चरणों के बारे में लाभार्थियों को जागरूक करने का प्रयास करते हैं। इससे उन्हें लाभार्थियों को स्वस्थ व्यवहार अपनाने के लिए मनाने और बीमारी के शुरुआती लक्षणों का पता लगाने में मदद मिलती है। वे इस चित्र पुस्तिका का पारस्परिक और समूह संचार दोनों में ही उपयोग करती हैं।

अध्ययन में यह भी पाया गया कि एएनएम कार्यकर्ता आशा और आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की तुलना में अधिक योग्य और शिक्षित हैं। वे लाभार्थियों को सामान्य बीमारियों के लिए दवा देती हैं, माँ और बच्चे का टीकाकरण करती हैं और बच्चे की डिलीवरी भी करवाती हैं। वे समूहों में लाभार्थियों को शिक्षित करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, जहाँ वे चित्र पुस्तिका, पोस्टर और बैनर का उपयोग करती हैं। वे पोस्टर और बैनर के माध्यम से लाभार्थियों को बताती हैं कि कैसे हाथों को ठीक ढंग से धोना चाहिए और कैसे अपने घरों में स्वच्छता बनाए रखनी चाहिए। वे यह भी सुझाव देती हैं कि माताएँ अपने बच्चों को खिलाने और अपने नवजात शिशुओं को छूने से पहले अपने हाथों को अच्छे से धोएँ।

शोधकर्ता ने पाया कि लाभार्थियों से जुड़ने और उनसे संबंध बनाने में स्थानीय गीत और नृत्य की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। एक आँगनवाड़ी कार्यकर्ता ने बताया कि वे संचार को अधिक प्रभावी बनाने के लिए समूहों में स्थानीय गीतों और नृत्यों का उपयोग करती हैं। संचार की भाषा पारस्परिक और समूह संचार दोनों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के लिए क्षेत्रीय बोलियों में बातचीत बहुत जरूरी है, क्योंकि इससे उन्हें समुदायों के बीच संबंध और विश्वास बनाने में मदद मिलती है। अध्ययन में पाया गया कि स्वास्थ्य कार्यकर्ता आमतौर पर अपने लाभार्थियों के साथ उस क्षेत्र की स्थानीय बोलियों में संवाद करते हैं, जिससे उनके लिए लाभार्थियों को समझाने में आसानी होती है।

निष्कर्ष

अध्ययन का उद्देश्य यह पता लगाना था कि सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में अपने लाभार्थियों के साथ कैसे संवाद करते हैं? क्या वे संचार के लिए डिजिटल उपकरणों का इस्तेमाल कर रहे हैं या फिर इसमें किसी प्रकार की बाधा आ रही है? इस अध्ययन से यह पता चला कि वे स्वास्थ्यकर्मी, जिनकी उम्र अधिक या शिक्षा का स्तर कम है, वे डिजिटल उपकरणों का इस्तेमाल कर पाने में असमर्थ हैं। वे अपने परिवार के सदस्यों या फिर अपने सहकर्मियों पर रोजमर्रा के कामों के लिए निर्भर हैं। इनके लिए, व्हाट्सएप के माध्यम से संवाद कर पाना जटिल है, और वे फोन कॉल या वीडियो कॉनफ्रेंसिंग के बजाय अपने लाभार्थियों से व्यक्तिगत रूप से मिलना ज्यादा पसंद करती हैं। कुछ स्वास्थ्यकर्मियों को अपने ऑनलाइन कार्यों को करवाने के लिए हर बार इंटरनेट कैफे वाले को 100 से 200 रुपये देने पड़ते हैं। कम आय होने की वजह से इन स्वास्थ्यकर्मियों को आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उन्हें सरकार द्वारा दी जाने वाली ट्रेनिंग से कोई खास लाभ नहीं मिल पा रहा है। इन स्वास्थ्यकर्मियों को ध्यान में रखकर ट्रेनिंग के स्वरूप को तैयार करने की आवश्यकता है। डिजिटल उपकरणों द्वारा संचार न हो पाने की दूसरी वजह लाभार्थियों के पास स्मार्टफोन या टेबलेट का न होना है। स्वास्थ्यकर्मियों ने बताया कि उनकी ज्यादातर लाभार्थी महिलाएँ होती हैं। इन महिलाओं के पास डिजिटल उपकरण नहीं होता है और वे इसके इस्तेमाल के लिए अपने पति या परिवार के अन्य सदस्यों पर निर्भर होती हैं। अधिकतर लाभार्थियों का स्वास्थ्यकर्मियों से संपर्क या तो पारस्परिक संवाद से होता है या फिर कीपैड फोन द्वारा किए गए फोन कॉल से होता है।

ग्रामीण उत्तर प्रदेश में स्वास्थ्यकर्मियों को इंटरनेट कनेक्शन की समस्या का सामना करना पड़ता है। स्वास्थ्यकर्मियों ने इस समस्या से निजात पाने के तरीके खोज लिए हैं। जब वे एक जगह से दूसरी जगह जाते हैं और उन्हें वहाँ उचित इंटरनेट कनेक्टिविटी मिलती है, वे स्वास्थ्य से जुड़े वीडियो या तस्वीरों को डाउनलोड कर लेते हैं और बाद में इसे पारस्परिक या समूह आधारित संवाद के दौरान लाभार्थियों को दिखाते हैं। इस तरीके से स्वास्थ्यकर्मियों को तकनीकी चुनौतियों से लड़ने में मदद मिल रही है। ग्रामीण परिवेश में लाभार्थियों द्वारा दवा का सेवन करने से इनकार करना आम बात है। ऐसी समस्याएँ स्वास्थ्य कर्मचारियों के लिए चुनौतीपूर्ण स्थिति पैदा करती हैं। ऐसे में स्वास्थ्यकर्मियों ने अनोखे उपाय ढूँढ़ लिए हैं। एक स्वास्थ्यकर्मी ने बताया कि कभी-कभी उन्हें स्वयं दवा का सेवन करके दिखाना पड़ता है, ऐसे में वे अपना वीडियो बना लेती हैं या तस्वीर लेती हैं जिसे वे लाभार्थियों को दिखाकर उनमें विश्वास पैदा करती हैं। क्षेत्रीय स्तर पर स्थानीय भाषा का महत्त्व बहुत अधिक होता है। ऐसे में स्वास्थ्यकर्मियों द्वारा स्थानीय गीतों और नृत्य के माध्यम से स्वास्थ्य से जुड़ी जानकारियाँ साझा करने का तरीका संचार को अधिक प्रभावी बना रहा है। प्रस्तुत अध्ययन ने पारस्परिक और समूह आधारित संचार में तकनीकी के अलग-अलग प्रयोग को उजागर किया है। इन अनोखे तरीकों को देश के अन्य

हिस्सों में काम करने वाले सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं द्वारा अपना कर संचार को और भी बेहतर बनाया जा सकता है। देश के अन्य हिस्सों में भी इसी तरह के शोध की आवश्यकता है। इससे अन्य क्षेत्रों में हो रहे संवाद के तरीकों के बारे में पता चलेगा, जिससे राष्ट्रीय स्तर पर एक समग्र तस्वीर प्राप्त करने में मदद मिलेगी। इस डिजिटल युग में निरंतर हो रहे परिवर्तन के साथ सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को कंधे से कंधा मिलाकर चलने में नए शोध मददगार साबित होंगे। ग्रामीण परिवेश में तकनीकी आधारित संचार के भविष्य की क्षमताओं को समझने के लिए भी निरंतर शोध की आवश्यकता है।

संदर्भ

अब्रू, एफ. डी. एल. आदि. (2021). द यूज एंड इंपैक्ट ऑफ एमहेल्थ बाय कम्युनिटी हेल्थ वर्कर्स इन डेवलपिंग एंड लीस्ट डेवलप्ड कंट्रीज : अ सिस्टेमेटिक रिव्यु. रिसर्च ऑन बायोमेडिकल इंजीनियरिंग, 37(3), 563-582. https://doi.org/10.1007/s42600-021-00154-3 से पुन:प्राप्त.

एनएचए. (2023). आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन, https://ndhm.gov.in/ से पुनःप्राप्त.

क्लार्क, वी. & ब्रौन, वी. (2016). थीमेटिक एनालिसिस. द जर्नल ऑफ पॉजिटिव साइकोलॉजी, 12(3), 297-298. https://doi.org/10.1080/17439760.2016.1262613

क्लार्क, वी. & ब्रौन, वी. (2013). टीचिंग थीमेटिक एनालिसिस : ओवरकमिंग चैलेंजेज एंड डेवलपिंग स्ट्रेटेजीज फॉर एफेक्टिव लर्निंग. द साइकोलोजिस्ट, 26(2). http://eprints.uwe.ac.uk/21155/

डिजिटल इंडिया. (2023). परिचय, डिजिटल इंडिया. https://digitalindia.gov.in/introduction/से पुन:प्राप्त.

नेशनल डिजिटल हेल्थ मिशन. (2023). इंट्रोडक्शन. https://www.makeinindia.com/national-digital-health-mission से पुन:प्राप्त.

पी.आई.बी. (2019). हेल्थकेयर स्कीम्स. https://pib.gov.in/pressreleaseshare.aspx?prid=1576128 से पुनःप्राप्त.

कांडपाल, के., दत्ता, पी., और शशिकला, पी. (2022). अंडरस्टैंडिंग द ट्रेंड्स इन हेल्थ कम्युनिकेशन: मोबाइल हेल्थ एप्लीकेशंस एंड एक्रेटिड सोशल हेल्थ एक्टिविस्ट्स (आशा). जर्नल ऑफ एडवांस रिसर्च इन साइंस एंड सोशल साइंस, 5(1), 119. https://doi.org/10.46523/jarssc.05.01.09

ब्रायमैन, ए. (2014). सोशल रिसर्च मेथड्स, चौथा संस्करण. ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस.

ब्लैंचर्ड, ए.के., प्रोस्ट, ए., & हौवेलिंग, टी.ए.जे. (2019). इफेक्ट्स ऑफ कम्युनिटी हेल्थ वर्कर इंटरवेंशंस ऑन सोसिओइकॉनोमिक इनइक्वटीज इन मैटरनल एंड न्यूबोर्न हेल्थ इन लॉ-इनकम एंड मिडिल इनकम कंट्रीज : अ मिक्स्ड-मेथड्स सिस्टेमेटिक रिव्यु. बीएमजे ग्लोबल हेल्थ, 4(3), ई001308. https://doi.org/10.1136/bmjgh-2018-001308

राग्नेडा, एम. & ग्लाडकोवा, ए. (2020). डिजिटल इनइक्वलिटीज इन द ग्लोबल साउथ. स्प्रिंगर इंटरनेशनल पब्लिशिंग. https://doi.org/10.1007/978-3-030-32706-4

रूरल हेल्थ स्टेटिस्टिक्स. (2020-21). रूरल हेल्थ स्टेटिस्टिक्स-2020-21, मिनिस्ट्री ऑफ हेल्थ एंड फॅमिली वेलफेयर. https://main.mohfw.gov.in/newshighlights-90 से पुन:प्राप्त.

वर्डेजोटो, एन., बागलकोट, एन., अकबर, एस. जेड., शर्मा, एस., मैकिंटोश, एन., हैरिंगटन, डी.एम., और ग्रिफिथ्स, पी.एल. (2021). सामुदायिक स्वास्थ्य में रखरखाव का अदृश्य कार्य : कर्नाटक, दक्षिण भारत में फ्रंटलाइन स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का समर्थन करने के लिए डिजिटल स्वास्थ्य के लिए चुनौतियां और अवसर. कंप्यूटर समर्थित सहकारी कार्य.https://www.microsoft.com/en-us/research/publication/the-invisible-work-of-maintenance-in-community-health-challenges-and-opportunities-for-digital-health-to-support-frontline-health-workers-in-karnataka-south-india/ से पुन:प्राप्त.

वार्ड, वी. आदि. (2021). इम्प्लीमेंटिंग हेल्थ कम्युनिकेशन टूल्स एट सकेल: मोबाइल ऑडियो मेसेजिंग एंड पेपर-बेस्ड जॉब एड्स फॉर फ्रंटलाइन वर्कर्स प्रोवाइडिंग कम्युनिटी हेल्थ एजुकेशन टू मदर्स इन बिहार, इंडिया. बीएमजे ग्लोबल हेल्थ, 6(5). https://doi.org/10.1136/bmjgh-2021-005538

विमर, आर. डी. (2015). मास मीडिया रिसर्च : एन इंट्रोडक्शन. केनेज लर्निंग इंडिया प्राइवेट लिमिटेड.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 80-87, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

वेब सीरीज के संदर्भ में दर्शकों की व्यापकता और प्राथमिकताएँ : एक अध्ययन

डॉ. पवन सिंह मलिक[1], कुमार मौसम[2] और शिवानी पटेल[3]

सारांश

वेब सीरीज और ऑनलाइन स्ट्रीमिंग कंटेंट युवाओं के मनोरंजन का लोकप्रिय माध्यम बन रहा है। वेब सीरीज टेलीविजन की जगह ले रही है और भारत में निर्मित ऑनलाइन स्ट्रीमिंग और वेब सीरीज सामग्री में तेजी देखी गई है। अमेजन, नेटफ्लिक्स, सोनी लिव, हॉटस्टार और इरोज नाउ जैसी कई बड़ी कंपनियों ने क्षेत्रीय मनोरंजक कंटेंट के विकास के लिए भारी निवेश किया है। इसकी वजह से वेब सीरीज को पिछले कुछ सालों में भारत में अप्रत्याशित लोकप्रियता हासिल हुई है। ऐसा इसलिए भी हो रहा है, क्योंकि वे दर्शकों को मनोरंजन के उस स्तर तक ले जा रहे हैं, जहाँ टेलीविजन उन्हें नहीं ले जा पाता। वेब सीरीज को दर्शक ऑनलाइन स्ट्रीम कर अपनी सुविधानुसार कहीं से भी और कभी भी देख सकते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र वेब सीरीज के प्रति युवाओं की धारणाएँ तथा वेब सीरीज की चयन प्रक्रिया में उनके सामाजिक तथा शैक्षणिक प्रभाव का विश्लेषण करता है। शोधकर्ता ने वेब सीरीज और ऑनलाइन स्ट्रीमिंग कंटेंट को लेकर युवाओं की धारणा की भी पड़ताल की है। वेब सीरीज में दिलचस्पी रखने वाले भोपाल शहर के युवाओं को उद्देश्यपरक निदर्शन प्रणाली द्वारा शोध में शामिल किया गया है। प्रश्नावली का प्रयोग कर उत्तरदाताओं से प्राप्त जानकारी का एसपीएसएस सॉफ्टवेयर द्वारा विश्लेषण किया गया है। विश्लेषण द्वारा प्राप्त निष्कर्ष इस बात की पुष्टि करते हैं कि स्त्री और पुरुषों की वेब सीरीज देखने की चयन प्रक्रिया और विधा की प्राथमिकता में महत्त्वपूर्ण विभिन्नताएँ हैं। इस पर इनकी सामाजिक और शैक्षणिक योग्यता का बखूबी प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा वेब सीरीज के कंटेंट को लेकर आंशिक सेंसरशिप की माँग की भी पड़ताल की गई है। प्रस्तुत शोध में युवाओं की वेब सीरीज के प्रति बढ़ती दिलचस्पी और इसके लिए खर्च किए जाने वाले समय और आवृत्ति का भी अध्ययन किया गया है।

संकेत शब्द : ओटीटी प्लेटफार्म, वेब सीरीज, इंटरनेट, युवा, ऑनलाइन स्ट्रीमिंग, अमेजन, नेटफ्लिक्स, सोनी लिव, हॉटस्टार, इरोज नाउ

प्रस्तावना

वेब सीरीज को आमतौर पर इंटरनेट पर स्ट्रीम किए जाने वाले वीडियो कंटेंट के रूप में परिभाषित किया जाता है। यह नए युग में एक प्रमुख मनोरंजन स्रोत बन गया है, जो दर्शकों को मनोरंजन की नई और अद्भुत दुनिया का आनंद देता है। वेब सीरीज की विशेषता यह है कि इसकी अवधि साधारणतया कम होती है और इसकी कहानी कई सारे 'ट्विस्ट एंड टर्न' के साथ आगे बढ़ती है। इसके अलावा वेब सीरीज का कार्यान्वयन इंटरनेट पर ही होता है, जो दर्शकों को स्वतंत्रता और व्यक्तिगतीकरण की अधिक संभावनाएँ प्रदान करता है। इंटरनेट की वजह से दुनियाभर के टेलीविजन उद्योग में भी एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। वेब सीरीज और स्ट्रीमिंग कंटेंट का समाज पर विशेष रूप से युवाओं के बीच महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ रहा है। पिछले कुछ वर्षों में ऑनलाइन मनोरंजन उद्योग ने भारत में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की है। यह भारतीय दर्शकों की बदलती जीवनशैली, उपभोग की जाने वाली सामग्री के प्रकार में बदलाव और विभिन्न ऑनलाइन स्ट्रीमिंग प्लेटफॉर्म के कारण संभव हुई है।

वेब सीरीज का प्रमुख उद्देश्य टीवी और सिनेमा की ही तरह मनोरंजन के साथ-साथ सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक मुद्दों पर जागरूकता लाना है। इसके माध्यम से निर्माताओं और निर्देशकों को बेबाकी से अपने कलाकारों की कलाधर्मिता, रचनाकारों की रचनात्मकता और सृजनशीलता को प्रदर्शित करने का अवसर मिलता है। वेब सीरीज का एक बड़ा लाभ यह है कि यह अद्यतन समाचार और वर्तमान मुद्दों पर दर्शकों की रुचि और माँग के अनुरूप कंटेंट का निर्माण करने में सक्षम है। वेब सीरीज पर विस्तार से चर्चा करें तो इसने आज की भाग-दौड़ वाली जीवन पद्धति में मनोरंजन के क्षेत्र में अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया है। जैसा कि एक अध्ययन में (सिंह, 2020) बताया गया है कि वेब सीरीज को इंटरनेट के प्रयोग में वृद्धि ने बड़ी तेजी से पॉपुलर किया है और लोगों की पहुँच में ला खड़ा किया है। वेब सीरीज ने न केवल वाणिज्यिक रूप से बल्कि विभिन्न कलाकारों को मंच प्रदान करके साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव डाला है (वाघ, 2022)। भारतीय मनोरंजन क्षेत्र में नेटफ्लिक्स, अमेजन प्राइम, एमएक्स प्लेयर, टीवीएफ और कई अन्य वेब और ऐप-आधारित ऑनलाइन वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफॉर्म तेज इंटरनेट कनेक्शन की वजह और अधिक लोकप्रिय हो गया है। यहाँ तक कि यूट्यूब, लोकप्रिय वीडियो-स्ट्रीमिंग नेटवर्क के स्वामित्व में सर्च इंजन गूगल की सहायता द्वारा एक बड़े दर्शक वर्ग तक पहुँच रहा है। डिजिटल कंटेंट क्रिएटरों के लिए ऑनलाइन कंटेंट स्ट्रीमिंग पर लाभदायक संभावना होने की वजह से इसकी लोकप्रियता में वृद्धि हुई है, जिसके परिणामस्वरूप आज अधिक से अधिक सामग्री इंटरनेट पर अपलोड की जा रही है।

साहित्य समीक्षा

शोध मीडिया ऑडियंस, इंटरप्रिटेटर और उपयोगकर्ता, दर्शकों से नीति-निर्माताओं की मान्यताओं का विरोध करने की बात करता है, क्योंकि ये मीडिया को एक कमजोर, अवनति और होमोजेनिक दर्शकों पर प्रभाव मानते हैं। दुनियाभर में विशेष रूप से औद्योगिक देशों में लोग नियमित रूप से मीडिया के विभिन्न रूपों, प्लेटफार्मों पर बहुत अधिक समय बिताते हैं। यह समय उनके काम-काज के घंटों या स्कूल या फेस टू फेस संचार में खर्च किए गए समय से अधिक होता है (लिंग्विसटोन एस, 2005)। गिल्स (2011) ने, वेब सीरीज के लिए कैसे दर्शकों को गढ़ा जाए,

[1]एसोसिएट प्रोफेसर, जे.सी. बोस विज्ञान एवं तकनीकी विश्वविद्यालय, फरीदाबाद, हरियाणा, ईमेल : mann.malik82@gmail.com
[2]पीएचडी शोधार्थी, महात्मा गांधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, बिहार, ईमेल : kumarmausam392@gmail.com
[3]मीडिया छात्र, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल, ईमेल : sibulshivani@gmail.com

कैसे उनके लिए मार्केट तैयार किया जाए और उनका प्रसार कैसे किया जाए, इस पर विस्तार से दृष्टि डाली है। यह शोध पत्र वेब सीरीज देखने के लिए दर्शकों को आकर्षित करने के लिए व्यावहारिक रणनीति प्रदान करता है और दर्शकों की रुचि के अनुरूप कार्यक्रम बनाने के लिए प्रेरित करता है। यह धारणा है कि ऑनलाइन वीडियो शौकिया वीडियो के बराबर है, जो लोगों के मनोरंजन हेतु अभी तक अपर्याप्त साबित हुआ है। हालाँकि अंतरंगता की भावना और व्यक्तिगत संबोधन को पारंपरिक टेलीविजन की विशेषता कहा जाता है। जो वास्तव में 'द नॉस्टैल्जिया क्रिटिक' और 'द एंग्री वीडियो गेम नर्ड' जैसी वेब शोज की लोकप्रियता के महत्त्वपूर्ण पहलू हैं। इनमें से दोनों बड़े पैमाने पर मीडिया के उपभोग के साथ दर्शकों के सामान्य बचपन के अनुभवों का उल्लेख करने के विषाद कारक पर आधारित है (मजेक, 2012)।

दीपक गोयल, एस. अल्का और कामथ रविंद्र (2018) के अनुसार पिछले एक दशक में इंटरनेट हमारे जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया है। शोध पत्र 'इंटरनेट एडिक्शन की व्यापकता और भारतीय किशोरों में मनोचिकित्सा के साथ इसके जुड़ाव पर भारत के अध्ययन के विशेष संदर्भ' में भारतीय कॉलेज की आबादी में इंटरनेट की लत की व्यापकता का अध्ययन करता है। इसे तीन अलग-अलग श्रेणी में रखा गया है—युवा मूल मानदंडों का उपयोग करने वाले समूह : मध्यम लत के रूप में 74.5% उपयोगकर्ता, संभवतः लत वाले समूह 24.8% उपयोगकर्ता और 0.7% पूर्णतः लत वाले समूह के रूप में। उभरते हुए इस युग में युवा लोग इंटरनेट से अधिक परिचित हो चुके हैं और ऑनलाइन गतिविधि का उपयोग सामाजिक संपर्क के लिए करते हैं। 'भारतीय युवाओं पर ऑनलाइन वेबसीरीज स्ट्रीमिंग और वेब सीरीज के विभिन्न मुद्दों के विश्लेषण के विशेष संदर्भ में' शीर्षक शोध नेटफ्लिक्स, अमेजन प्राइम, यूट्यूब, ऑल्ट बालाजी, इरोस, हॉटस्टार आदि ऑनलाइन प्लेटफॉर्मों पर चलने वाली वेब सीरीज के शो के प्रभावों की जाँच करता है और बताता है कि उनका भारतीय युवाओं पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। विनोद एस. कोराबी (2019) के अनुसार वेब सीरीज युवाओं को मानसिक रूप से और शारीरिक रूप से प्रभावित करती है।

कुछ साल पहले तक जहाँ मनोरंजन के लिए अधिकतर लोग टेलीविजन पर निर्भर थे, इसके ठीक उलट आज लोगों के ओटीटी प्लेटफॉर्म पर शिफ्ट होने के रुझान को बखूबी देखा जा सकता है। इस बदलाव में काफी हद तक समाज के मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग के युवाओं का दबदबा है। यह बदलाव ओटीटी प्लेटफार्मों के लिए स्वर्णिम भविष्य या फिर कहें तो पारंपरिक टेलीविजन प्रणाली की धीमी गति से मृत्यु को दर्शाता है (रोहित जेकब जोश, 2020)। बोस्टन कंसल्टिंग ग्रुप (बीसीजी) की रिपोर्ट इस बात की पुष्टि करती है कि महामारी की स्थिति के दौरान ओटीटी प्लेटफार्म के सब्सक्राइबरों की संख्या में 60% की वृद्धि हुई है। कोविड-19 में अर्ध-शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में शहरी क्षेत्रों में इसने मनोरंजन माध्यम के रूप में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस महामारी के दौरान बाहर जाने के डर के कारण ओटीटी ने लोकप्रियता हासिल की। वीडियो स्ट्रीमिंग कंपनियों से मिलने वाले अच्छे कंप्लायंस इंजीनियरिंग जर्नल के हस्तक्षेप के कारण अधिकतर फिल्म निर्माता खुश हैं। इसकी एक और विशेषता यह है कि एक परिवार में यह प्लेटफार्म सभी सदस्यों के लिए समय और पैसा बचाने के लिए पर्याप्त है (अंबुमालर, 2021)।

शोध उद्देश्य

- वेब सीरीज के प्रति युवाओं के दृष्टिकोण का अध्ययन।
- युवा दर्शकों के बीच वेब सीरीज के चयन पर प्रभाव डालने वाले कारकों का अध्ययन।
- युवा दर्शकों के बीच वेब सीरीज देखने की अवधि और आवृत्ति का अध्ययन।

परिकल्पना

- व्यक्तियों में उनके पेशे और योग्यता के आधार पर वेब सीरीज देखने की अवधि के औसत स्कोर में महत्त्वपूर्ण अंतर है।
- स्त्री और पुरुष के वेब सीरीज चयन के आधार में महत्त्वपूर्ण अंतर होता है।

सैद्धांतिक ढाँचा :

उपयोग और संतुष्टीकरण का सिद्धांत : उपयोग और संतुष्टीकरण सिद्धांत (Uses and Gratifications Theory) मीडिया का उपयोग करने और संतुष्टि प्राप्त करने के व्यक्तियों के दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करता है। यह एक संचार सिद्धांत है, जो व्यक्तियों के मीडिया उपयोग के पीछे भूमिकाओं, मोटिवेशन और संतुष्टि की प्रक्रिया को समझने का प्रयास करता है। इस सिद्धांत के अनुसार लोग मीडिया का उपयोग विभिन्न प्रकार से मोटिवेशन और आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए करते हैं और इस प्रक्रिया से संतुष्टि प्राप्त करते हैं। व्यक्तियों को निर्णय लेने और मीडिया सामग्री को चुनने की स्वतंत्रता होती है और वे अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मीडिया का उपयोग करते हैं (काट्ज & गुरेविच, 1974)। एलिजाबेथ न्यूबर्ग के अनुसार, "उपयोग और संतुष्टि का सिद्धांत मीडिया उपयोग के रूप में यह मान्यता रखता है कि लोग मीडिया का उपयोग अपनी आवश्यकताओं और मोटिवेशन को पूरा करने के लिए करते हैं और यह उन्हें आंतरिक और बाहरी संतुष्टि प्रदान करता है। इस सिद्धांत के अनुसार लोगों का मीडिया उपयोग उनकी स्वतंत्रता, निर्णय क्षमता और मनोवैज्ञानिक प्रकृति को प्रतिबिंबित करता है।"

चित्र : 1

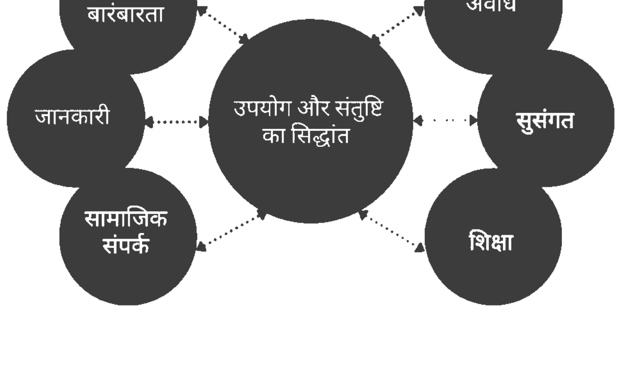

प्रस्तुत शोध में इस सिद्धांत के प्रयोग से यह अध्ययन किया गया है कि विभिन्न पेशों में काम करने वाले, विभिन्न योग्यताओं व आयु वर्ग के व्यक्तियों की वेब सीरीज देखने के पीछे अलग-अलग आवश्यकताएँ और प्राथमिकताएँ होती हैं। इसके अलावा व्यक्तियों के वेब सीरीज चयन के कारकों तथा उनके संतुष्टीकरण की विशेषताओं का अध्ययन किया गया है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध में मात्रात्मक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है। मात्रात्मक शोध एक अध्ययन प्रवृत्ति है, जिसमें उन गुणात्मक पहलुओं की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है, जो विषय को मापनीय रूप से या संख्यात्मक रूप से निर्धारित करते हैं। यह शोध विधि विज्ञान और सामाजिक विज्ञान क्षेत्रों में आम रूप से प्रयोग की जाती है, लेकिन इसे अन्य क्षेत्रों में भी उपयोग किया जा सकता है।

मात्रात्मक शोध : मात्रात्मक शोध का मुख्य उद्देश्य संख्यात्मक आँकड़े और तकनीकी मापन का उपयोग करके पूर्वानुमान, प्रभाव का मूल्यांकन और संबंध विश्लेषण करना होता है। इसका उपयोग विभिन्न शोध प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने, विश्लेषण करने और समीक्षा करने में किया जाता है।

शोध अभिकल्प : प्रस्तुत शोध के लिए विवरणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है। विवरणात्मक शोध संरचना विधि का उपयोग ज्यादातर सामाजिक विज्ञान के शोध में किया जाता है, जो शोध के दौरान शोधार्थी को चरों में बिना फेरबदल के वास्तविक स्थिति के अनुरूप आँकड़े प्राप्त करने में मददगार होती है। विवरणात्मक अभिकल्प के द्वारा घटनाओं अथवा तथ्यों को उसी रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जैसे वे वास्तव में होते हैं। विवरणात्मक शोध प्रक्रिया में संकलित और उपयुक्त आँकड़े, तथ्य और जानकारी का विवरण और विश्लेषण किया जाता है। इस प्रक्रिया में संकलित आँकड़े और जानकारी को समझने, विश्लेषण करने और प्रस्तुत करने के लिए विभिन्न तकनीकों और टूल का उपयोग किया गया है।

प्रस्तुत शोध में शोध प्रविधि के रूप में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। शोध के संदर्भ में सर्वेक्षण एक महत्त्वपूर्ण विधि है, जिसका उपयोग विशेषज्ञों द्वारा जानकारी एकत्र करने व विभिन्न पहलुओं का मूल्यांकन करने के लिए किया जाता है।

शोध उपकरण : प्रस्तुत शोध में शोध उपकरण के रूप में प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। एक प्रश्नावली के माध्यम से लोगों के वेब सीरीज के प्रति उनके विचार, चयन का आधार तथा अन्य महत्त्वपूर्ण बातों की जानकारी व्यवस्थित रूप से इकट्ठा की गई है। प्रश्नावली एक सर्वेक्षण तकनीक है, जिसमें विभिन्न प्रश्नों का समूह तैयार किया जाता है और इसे संबंधित जनसंख्या के सदस्यों में वितरित किया जाता है। प्रश्नावली उपयोगकर्ताओं से विभिन्न जानकारियाँ, धारणाओं, प्राथमिकताओं और अनुभवों को मापने के लिए सवाल पूछने का माध्यम होती है।

निदर्श प्रतिचयन : शोधकर्ता ने प्रस्तुत शोध समस्या के न्यादर्श चुनाव हेतु उद्देश्यपूर्ण न्यादर्श या सविचार प्रतिचयन विधि का चयन किया है, जिसमें अध्ययनकर्ता संपूर्ण जनसंख्या में से अपने उद्देश्यों के अनुसार अध्ययन इकाइयों का चयन करता है। गिल्फोर्ड के अनुसार, ''उद्देश्यपूर्ण प्रतिदर्श एक स्वेच्छानुसार चयन किया गया प्रतिदर्श होता है। ऐसा प्रतिदर्श संपूर्ण समष्टि का पूर्णरूपेण प्रतिनिधित्व करता है।'' आँकड़े उद्देश्यपरक निदर्शन पद्धति अपनाते हुए प्रश्नावली के द्वारा संकलित किए गए हैं। इसके लिए वेब सीरीज और ओटीटी में दिलचस्पी रखने वाले ऐसे 100 उत्तरदाताओं की पहचान की गई, जिनकी उम्र 15-30 वर्ष के बीच है। आँकड़ों के नमूने भोपाल शहर से एकत्रित किए गए हैं।

आँकड़ों का विश्लेषण : अध्ययन में सर्वे से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण हेतु कोडबुक की सहायता से 'सामाजिक विज्ञान के लिए सांख्यिकीय पैकेज' (एसपीएसएस एप्लीकेशन) का प्रयोग किया गया है। सामाजिक विज्ञान के लिए सांख्यिकीय पैकेज (एसपीएसएस) एक सॉफ्टवेयर प्रोग्राम है, जिसका प्रयोग शोधकर्ताओं द्वारा संख्यात्मक आँकड़ों के मात्रात्मक विश्लेषण के लिए किया जाता है। इस सॉफ्टवेयर की सहायता से खासतौर से सामाजिक विज्ञान के शोध के आँकड़ों की विश्लेषणात्मक प्रस्तुति, प्रबंधन और सामान्य सांख्यिकीय विश्लेषण (टी-टेस्ट, अनोवा, सहसंबंध (correlation), प्रतिगमन (Regression) जैसे अति महत्त्वपूर्ण टेस्ट द्वारा आँकड़ों का परीक्षण भी) किया जाता है।

परीक्षण विधि

अनोवा (ANOVA) : अनोवा विधि एक आँकड़ा विश्लेषण तकनीक है, जिसका उपयोग विभिन्न संख्यात्मक चरणों, गणनाओं या समूहों के बीच बारंबारिकता का मूल्यांकन करने के लिए किया जाता है। अनोवा वह सांख्यिकीय परीक्षण है जिसका उपयोग तीन या अधिक समूहों के माध्यमों की तुलना करने के लिए किया जाता है, ताकि उनके बीच कोई सांख्यिकीय अंतर है या नहीं, इसे निर्धारित किया जा सके। इससे यह भी पता लगता है कि क्या विभिन्न समूहों के बीच माध्यमों में आपसी महत्त्वपूर्ण अंतर होता है या केवल सांख्यिकीय युक्तियों के कारण होने की संभावना है। यदि सांख्यिकीय अंतर माप्यांक है, तो अनोवा टेस्ट यह भी बता सकता है कि यह किस समूह या माध्यम परिणाम में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है।

चित्र : 2

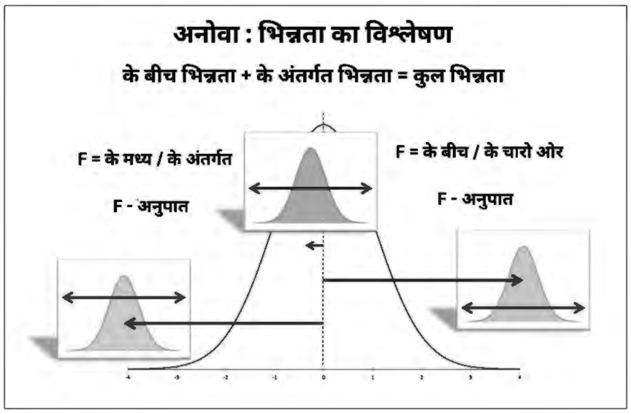

शोध में अनोवा का प्रयोग करने का मुख्य उद्देश्य यह निर्धारित करना है कि क्या विभिन्न समूहों के बीच में सांख्यिक अंतर वास्तविक है या केवल सांख्यिक साधारणता से होने की संभावना है। शोध की पहली परिकल्पना 'व्यक्तियों में उनके पेशे और योग्यता के आधार पर वेब सीरीज देखने की अवधि के औसत मान में महत्त्वपूर्ण अंतर है', जिसके परीक्षण के लिए अनोवा टेस्ट का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण

सारणी-3

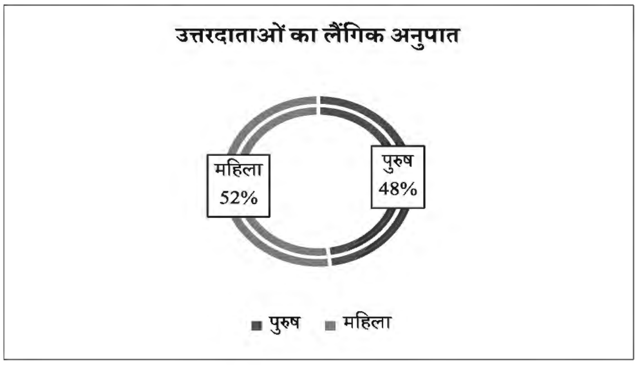

सर्वेक्षण से प्राप्त आँकड़ों के आधार के अनुसार, प्रस्तुत शोध हेतु शामिल सदस्यों का लैंगिक अनुपात 4:3 है। आँकड़ों के संकलन के लिए भोपाल शहर से 100 उत्तरदाताओं को चिह्नित कर उनसे आँकड़े एकत्रित किए गए, जिनमें 52% महिला उत्तरदाता और 48% पुरुष उत्तरदाताओं ने सहभाग कर अपनी राय साझा की।

सारणी-4

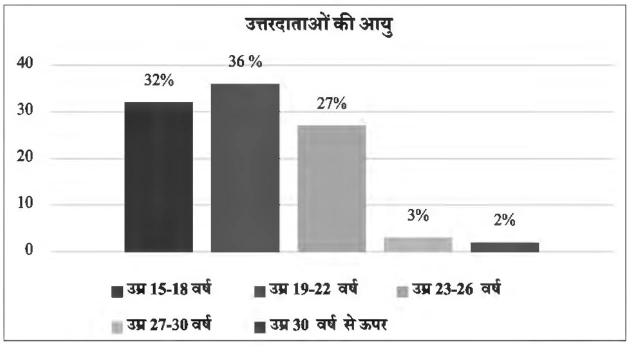

संबंधित शोध के लिए चयनित उत्तरदाताओं के आयु की बात करें तो 36% उत्तरदाता 19-22 वर्ष की आयु वर्ग के बीच हैं, तो वहीं 32% उत्तरदाताओं की आयु 15-18 वर्ष के बीच है, जबकि 27% उत्तरदाता 23-26 वर्ष तथा केवल 3% और 2% उत्तरदाता क्रमशः 27-30 वर्ष तथा 30 वर्ष से ऊपर के हैं। अर्थात् शोध में शामिल बहुमत सदस्यों की आयु 19-22 वर्ष के बीच है।

सारणी-5

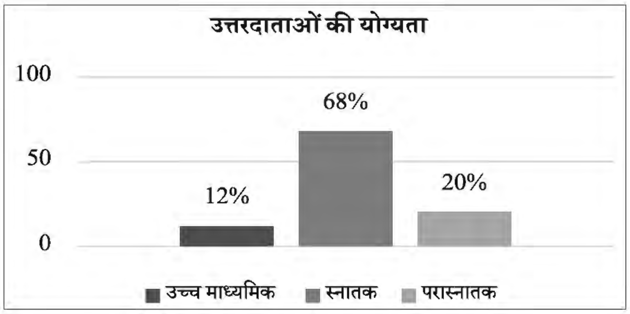

लोगों के व्यक्तिगत विचार में उनके सामाजिक माहौल का प्रभाव पड़ता है। अतः शोध में आँकड़ों की विविधता के लिए तीन शैक्षिक योग्यता वाले लोगों को शामिल किया गया है, जिसमें शोध को ससमय पूर्ण करने हेतु अपनी महत्त्वपूर्ण राय साझा करने वाले उत्तरदाताओं में बहुमत उत्तरदाता 68% स्नातक स्तर के हैं। वहीं 20% परास्नातक और 12% उच्च माध्यमिक या हाई स्कूल स्तर के हैं। अर्थात् अधिक से अधिक लोग स्नातक स्तर की योग्यता वाले हैं।

सारणी-6

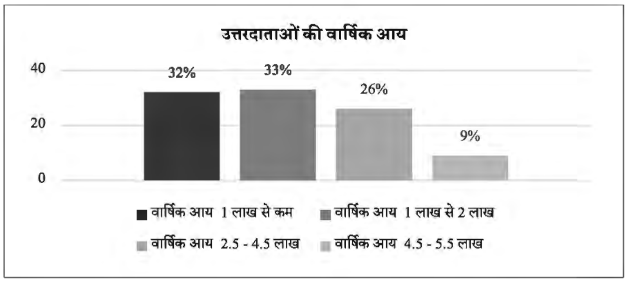

इसी क्रम में सदस्यों के वार्षिक आय पर महत्त्वपूर्ण आँकड़े इकट्ठा किए गए, जिसमें कुल 100 उत्तरदाताओं में से सबसे ज्यादा 33% उत्तरदाताओं की वार्षिक आय 1-2 लाख के बीच है, तो वहीं 32% की वार्षिक आय 1 लाख से कम है। 26 % उत्तरदाता ढाई से साढ़े चार लाख रुपये के बीच है, जबकि केवल 9% लोग ऐसे हैं जिनकी वार्षिक आय 4.5 से 5.5 लाख रुपये है। अर्थात् शोध में शामिल अधिकतम सदस्य 1 लाख से 2 लाख वार्षिक आय अर्जित करने वाले हैं।

सारणी-7

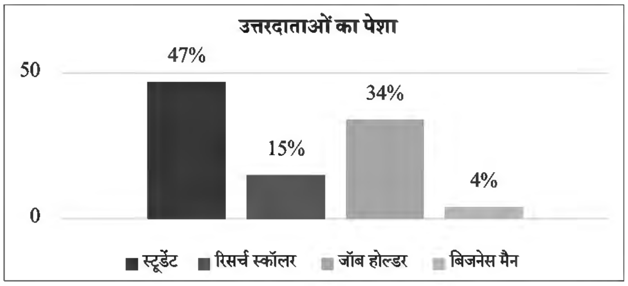

शोध में आँकड़ों की विविधता के लिए अलग-अलग पेशे से संबंधित लोगों की राय को शामिल किया गया है। स्टूडेंट, रिसर्च स्कॉलर, जॉब होल्डर तथा बिजनेस से संबंधित लोगों को शामिल किया गया है। आँकड़ों के अनुसार सबसे ज्यादा 47% उत्तरदाता छात्र हैं, 34 % नौकरीपेशा हैं और 15% उत्तरदाता शोध कार्य करते हैं। केवल 4% लोग ऐसे हैं, जो पेशे से बिजनेस से संबंध रखते हैं। अतः सारणी 7 के अनुसार शोध में छात्रों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है।

सारणी-8

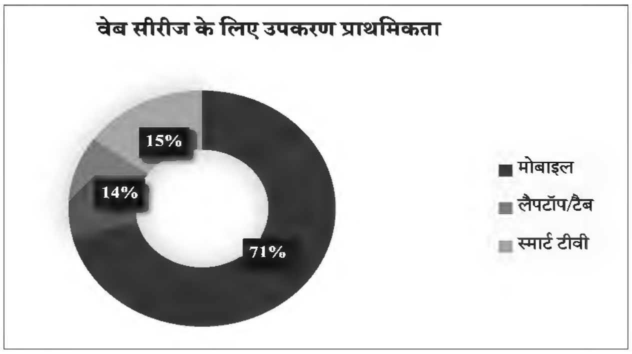

आगे इसी क्रम में लोगों से वेब सीरीज देखने के लिए उपकरण की प्राथमिकता की बात की गई। आँकड़ों के अनुसार सबसे अधिक 71% उत्तरदाता ओटीटी प्लेटफॉर्म पर वेब सीरीज देखने के लिए मोबाइल फोन का इस्तेमाल करते हैं। 15% उत्तरदाता स्मार्ट टीवी पर और 14% लैपटॉप

और टैब पर देखते हैं। अतः अधिक से अधिक जनसंख्या वेब सीरीज देखने के लिए मोबाइल फोन पर निर्भर करती है या यों कहें कि ज्यादातर लोग मोबाइल को प्राथमिकता देते हैं।

सारणी-9

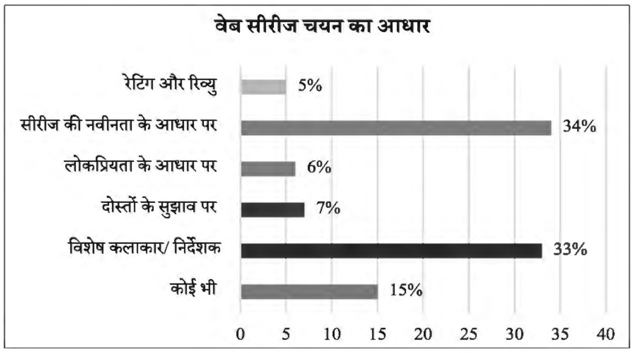

वेब सीरीज के चयन के कारकों पर आधारित इस प्रश्न के प्रतिउत्तर में 34% उत्तरदाता किसी भी सीरीज की नवीनता के आधार पर मनोरंजन के लिए सीरीज का चयन करते हैं, तो वहीं 33% उत्तरदाता किसी खास कलाकार या निर्देशक की वजह से सीरीज का चयन करते हैं।

सारणी-10

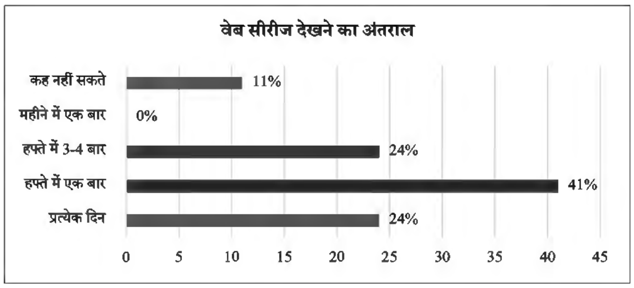

वेब सीरीज देखने के अंतराल के संदर्भ में कुल 41% उत्तरदाताओं ने कहा कि वे हफ्ते में एक बार और 24% उत्तरदाताओं ने कहा प्रतिदिन और हफ्ते में तीन-चार बार वेब सीरीज देखते हैं। वहीं11% उत्तरदाताओं ने कहा कि वे इस बारे में स्पष्ट रूप से अपनी प्रतिक्रिया देने में असमर्थ हैं। अतः बहुमत के आधार पर यह कहा जा सकता है कि लोग हफ्ते में एक बार वेब सीरीज देखते हैं।

सारणी-11

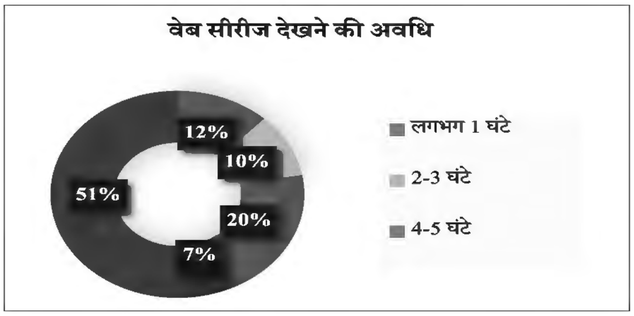

जब लोगों से यह पूछा गया है कि वे वेब सीरीज एक दिन में लगभग कितने समय तक देखते हैं, तो इस प्रश्न का जवाब देते हुए सबसे ज्यादा 51 %उत्तरदाताओं का कहना है कि जब तक किसी फिल्म/सीरीज के सारे एपिसोड न खत्म जाएँ, तब तक वे वेब सीरीज देखते रहते हैं। वहीं 20% उत्तरदाता प्रतिदिन 4-5 घंटे वेब सीरीज देखते हैं। 12% उत्तरदाताओं के अनुसार वे प्रतिदिन कम-से-कम एक घंटे वेब सीरीज देखते ही हैं। वहीं 7% लोग ऐसे हैं, जो एक दिन में 5 घंटे से भी अधिक समय तक वेब सीरीज देखते हैं। अतः इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि लगभग आधी जनसंख्या वेब सीरीज तब तक देखती है, जब तक वह पूरी न हो जाए।

सारणी-12

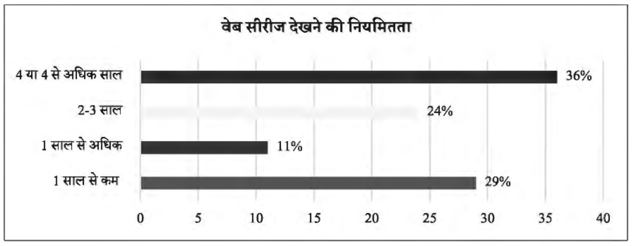

आगे लोगों से वेब सीरीज देखने की नियमितता पर बात की गई। आँकड़ों के अनुसार इस प्रश्न का जवाब देते हुए सबसे ज्यादा 36% उत्तरदाता पिछले 4 साल या उससे अधिक समय से वेब सीरीज देख रहे हैं, वहीं 29% उत्तरदाता पिछले एक साल से भी कम समय से वेब सीरीज देख रहे हैं तो वहीं 24% उत्तरदाता पिछले 2-3 साल से मनोरंजन के लिए वेब सीरीज देख रहे हैं। अतः बहुमत 4 या उससे अधिक सालों से वेब सीरीज से परिचित है और वेब सीरीज देख रहा है।

सारणी-13

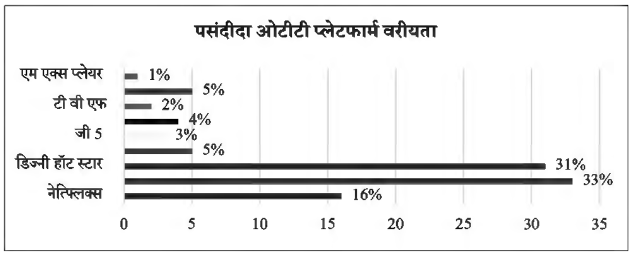

यह पूछे जाने पर कि वेब सीरीज देखने के लिए आपके फोन में कौन-सा प्लेटफार्म/ऐप है तो सारणी 13 के अनुसार सबसे ज्यादा 33% उत्तरदाताओं ने अमेजॉन प्राइम का चयन किया 31% उत्तरदाताओं ने डिज्नी प्लस हॉटस्टार और 16% उत्तरदाता नेटफ्लिक्स को वेब सीरीज देखने के लिए वरीयता देते हैं। इसके अलावा 5% उत्तरदाता क्रमशः सोनी लिव तथा आल्ट बालाजी, 4% उत्तरदाता वूट सेलेक्ट, 3% उत्तरदाता जी5 और 2% टी वी एफ तथा 1% उत्तरदाता एम एक्स प्लेयर का उपयोग करते हैं। अतः लोगों में डिज्नी हॉटस्टार तथा अमेजॉन प्राइम और नेटफ्लिक्स अधिक प्रचलित हैं।

सारणी-14

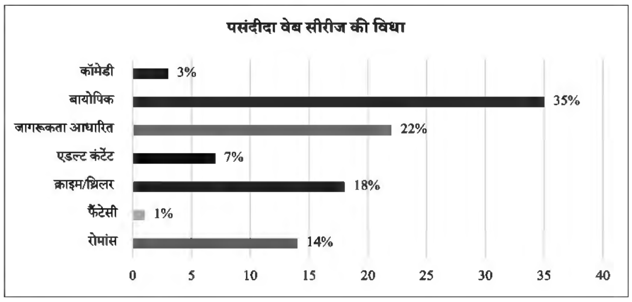

जब उत्तरदाताओं से यह यह पूछा गया कि वे किस तरह की वेब सीरीज देखना पसंद करते हैं, तो सबसे ज्यादा 35% उत्तरदाताओं ने कहा कि उन्हें बायोपिक देखना पसंद हैं। 22% उत्तरदाता जागरूकता आधारित कंटेंट देखना पसंद करते हैं। 18% उत्तरदाताओं को क्राइम थ्रिलर देखना

पसंद है तो 14% उत्तरदाताओं की पहली पसंद रोमांटिक कंटेंट है। वहीं कॉमेडी और फैंटेसी तथा एडल्ट कंटेंट को वरीयता देने वाले क्रमशः 3%, 1% तथा 7% उत्तरदाता हैं। कुल मिलकर जागरूकता और बायोपिक देखने वालों की बहुलता अधिक है।

सारणी-15

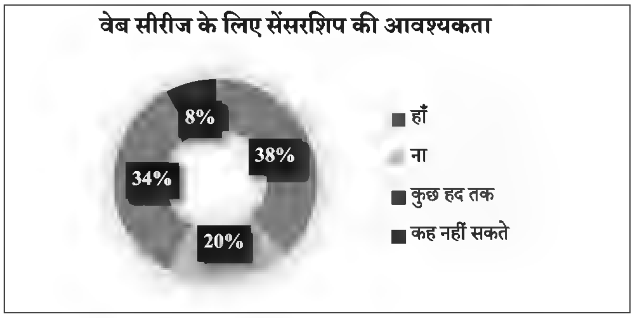

आगे इसी क्रम में लोगों से यह पूछा गया कि क्या वेब सीरीज को सेंसरशिप की आवश्यकता है, तो इस प्रश्न के जवाब में 34% उत्तरदाताओं ने जवाब दिया कि ओटीटी प्लेटफॉर्म पर कुछ हद तक सेंसरशिप की जरूरत है तो वहीं 38% उत्तरदाताओं की मानें तो ओटीटी प्लेटफॉर्म पर सेंसरशिप होना चाहिए। दूसरी तरफ 20% उत्तरदाता इस बात से इनकार करते हैं कि वेब आधारित कार्यक्रमों पर सेंसरशिप होना चाहिए। कुल मिलकर सेंसरशिप को लेकर उत्तरदाताओं की राय का काफी मिली-जुली है।

सारणी-16

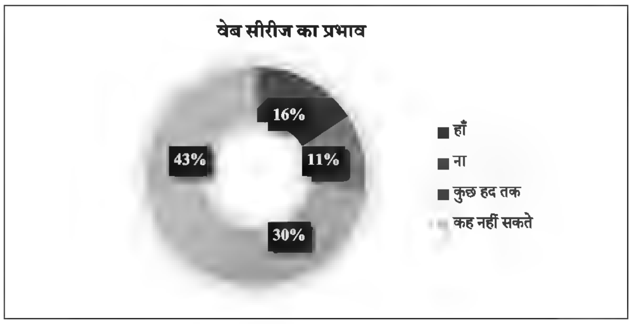

लोगों से जब यह पूछा गया कि क्या उन पर वेब सीरीज का प्रभाव पड़ता है, तो इस प्रश्न के जवाब में 30% उत्तरदाताओं को लगता है कि वेब सीरीज में दिखाए गए दृश्य, कहानी या किरदार उनके व्यक्तित्व को कुछ हद तक प्रभावित करते हैं। 16% उत्तरदाताओं को लगता है कि वेब सीरीज में दिखाए गए कहानी या किरदार का उनके व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है। वहीं दूसरी तरफ 11% उत्तरदाताओं का मानना है कि वेब सीरीज में दिखाए दृश्य, कहानी या किरदार उनके व्यक्तित्व पर किसी तरह का प्रभाव नहीं डालते हैं और सबसे ज्यादा 43% उत्तरदाता इस प्रश्न पर तटस्थ हैं, यानी अपनी प्रतिक्रिया स्पष्ट रूप से दे पाने में असमर्थ हैं।

सारणी-17

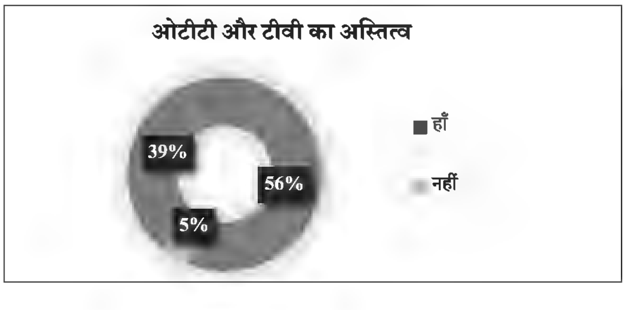

ओटीटी से टीवी के खतरे के संदर्भ में लोगों ने कहा कि ओटीटी प्लेटफॉर्म से टीवी के अस्तित्व को खतरा है। ऐसे लोगों की संख्या 56% है। वहीं दूसरी तरफ 39% उत्तरदाताओं को लगता है कि ओटीटी प्लेटफॉर्म से टीवी के अस्तित्व को कुछ हद तक खतरा है। इस संदर्भ में केवल 5% लोगों का मानना है कि टीवी को ओटीटी से खतरा नहीं है। अतः आधी से अधिक जनसंख्या यह मानती है कि ओटीटी से भविष्य में टीवी को खतरा है।

सारणी-18

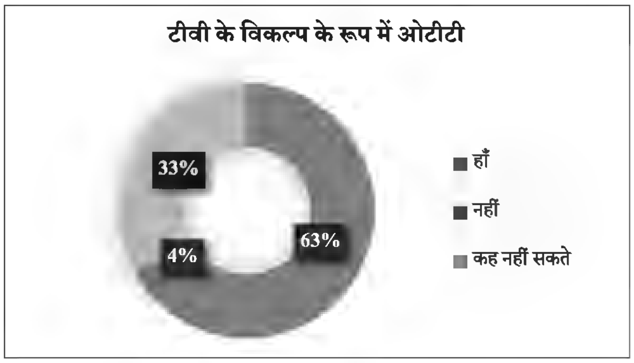

अंत में सबसे आखिरी सवाल लोगों से यह किया गया कि क्या उन्हें यह लगता है कि ओटीटी टीवी के विकल्प के रूप में उभरा है। इस प्रश्न के जवाब में सबसे ज्यादा 63% उत्तरदाता मानते हैं कि ओटीटी प्लेटफॉर्म टीवी का एक विकल्प बनकर उभरा है, तो वहीं 33% उत्तरदाता इस प्रश्न पर खुलकर अपनी कोई राय नहीं बना पाते हैं, अर्थात् वे 'कह नहीं सकते' विकल्प का चयन करते हैं। बहुमत के अनुसार अधिक से अधिक लोग यह मानते हैं कि टीवी के एक विकल्प के रूप में ओटीटी तेजी से प्रचलित हो रहा है।

परिकल्पना परीक्षण

H1 : व्यक्तियों में उनके पेशे और योग्यता के आधार पर वेब सीरीज देखने की अवधि के औसत मान में महत्त्वपूर्ण अंतर है।

अनोवा					
पद					
	वर्गों का योग	डी एफ	मीन स्क्वायर	एफ	सिग्नी-फिकेंट मान
समूहों के बीच	12.668	4	3.167		
समूहों के अंदर	82.242	95	.866	3.658	.008
कुल	94.910	99			

0.008 > 0.005

शून्य परिकल्पना : स्वीकार

परीक्षण के परिणाम बता रहे हैं कि व्यक्तियों के पेशे के आधार पर वेब सीरीज देखने की अवधि के औसत मान में महत्त्वपूर्ण भिन्नता नहीं है। इसका अर्थ है कि व्यक्तियों के पेशे का असर वेब सीरीज देखने की

अवधि पर नहीं होता है और सभी पेशे के लोगों की औसत अवधि समान हो सकती है।

अनोवा					
योग्यता					
	वर्गों का योग	डी एफ	मीन स्क्वायर	एफ	सिग्नी-फिकेंट मान
समूहों के बीच	7.926	4	1.981		
समूहों के अंदर	55.114	95	.580	3.416	.012
कुल	63.040	99			

0.012 > 0.005

शून्य परिकल्पना : स्वीकार

परीक्षण के परिणाम के अनुसार व्यक्तियों की योग्यता के आधार पर वेब सीरीज देखने की अवधि के औसत मान में महत्त्वपूर्ण भिन्नता नहीं है। इसका अर्थ है कि व्यक्तियों के योग्यता का असर भी वेब सीरीज देखने की अवधि पर नहीं होता है और सभी पेशे के लोगों की औसत अवधि समान हो सकती है।

H2 : स्त्री और पुरुष के वेब सीरिज चयन के आधार में महत्त्वपूर्ण अंतर होता है।

रैंक				
	लिंग	बारंबारता	औसत रैंक	रैंक का योग
चयन का आधार	पुरुष	60	42.37	2542.00
	महिला	40	62.70	2508.00
	कुल	100		

परीक्षण आँकड़े	
चयन का आधार	
मैन व्हिटनी यू	712.000
विल्कोक्सोन डब्लू	2542.000
जेड	-3.578
(टू टेल्ड) मान	.000

.000 < 0.05

शून्य परिकल्पना : अस्वीकार

परीक्षण के परिणाम यह बताते हैं कि स्त्री और पुरुष के बीच वेब सीरीज चयन के आधार पर महत्त्वपूर्ण भिन्नता होती है। इसका अर्थ है कि स्त्री और पुरुष अलग-अलग प्रकार की वेब सीरीज को पसंद कर सकते हैं या उन्हें अलग-अलग मार्ग प्रदर्शन पसंद हो सकता है। निम्नलिखित सारणी में वे आधार दर्शाए गए हैं, जो स्त्री और पुरुष के वेब सीरीज के चयन में होने वाली भिन्नता को प्रस्तुत करते हैं।

सारणी :- 19

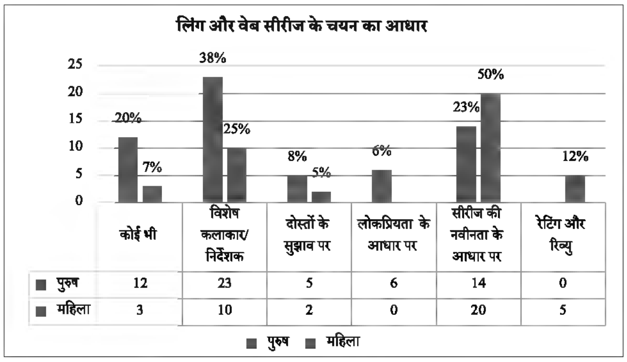

उपर्युक्त सारणी ग्राफ की सहायता से इस बात को बखूबी दर्शाती है कि उत्तरदाताओं की लैंगिक भिन्नता का प्रभाव उनके वेब सीरीज के चयन के आधार पर भी देखने को मिलता है। यह इस शोध की एक परिकल्पना भी है और शोध में प्राप्त आँकड़े इस बात की पुष्टि भी करते हैं। अर्थात् दूसरे शब्दों में कहें तो शोधार्थी की यह परिकल्पना सही साबित हुई है। इस शोध में शामिल जनसंख्या का वह समूह, जो वेब सीरीज देखने के लिए किसी भी सीरीज का चयन कर लेता है, जिसके लिए किसी विशेष आधार की प्राथमिकता नहीं होती है, ऐसे समूह में महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों की जनसंख्या लगभग तिगुनी है। अतः यह कहा जा सकता है कि महिलाएँ वेब सीरीज के चयन को लेकर ज्यादा चूजी है।

जनसंख्या का वह हिस्सा, जो वेब सीरीज देखने के लिए विशेष कलाकार या निर्देशक को प्राथमिकता देता है, उसका अनुपात 25:38 है। अर्थात् महिलाओं की तुलना में पुरुषों की संख्या थोड़ी ज्यादा है। अतः यह कहा जा सकता है कि महिलाओं के लिए किसी विशेष या खास कलाकार या निर्देशक का होना उतना मायने नहीं रखता, जितना कि पुरुषों के लिए। इसके अलावा जनसंख्या का वह हिस्सा, जो दोस्तों के कहने या सुझाव पर वेब सीरीज का चयन करता है, उसमें पुरुषों की जनसंख्या महिलाओं की जनसंख्या से लगभग दुगुनी है।

प्रस्तुत शोध में शामिल जनसंख्या का वह समूह, जो वेब सीरीज देखने के लिए वेब सीरीज की लोकप्रियता को आधार मानकर सीरीज का चयन कर लेता है, उसमें जहाँ पुरुषों की जनसंख्या 6% है तो वहीं महिलाएँ नगण्य हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि महिलाओं पर वेब सीरीज की लोकप्रियता का प्रभाव नहीं पड़ता है। जनसंख्या का वह हिस्सा, जो नवीनता के आधार पर वेब सीरीज का चयन करता है, उसमें महिलाओं की जनसंख्या पुरुषों की जनसंख्या से दोगुनी से थोड़ी ज्यादा है। अतः इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि किसी भी सीरीज की नवीनता का फैक्टर महिलाओं पर पुरुषों की अपेक्षा ज्यादा प्रभावी होता है। प्रस्तुत शोध में शामिल जनसंख्या का वह हिस्सा, जो वेब सीरीज देखने के लिए उसके रिव्यु या रेटिंग के आधार को प्राथमिकता देता है, उसकी जनसंख्या का अनुपात 05:00 है। अर्थात् किसी भी सीरीज की रेटिंग या रिव्यु का प्रभाव पुरुषों पर नगण्य होता है और महिलाओं पर प्रभावी होता है।

शोध परिणाम

आँकड़ों से पता चलता है कि वेब सीरीज देखने वाले लोगों की

संख्या तेजी से बढ़ रही है। इसका मतलब है कि वेब सीरीजों की माँग और प्रभाव बढ़ रहा है। वेब सीरीज देखने की अवधि बहुमत में तब तक है जब तक वेब सीरीज खत्म नहीं हो जाती है। आँकड़े स्पष्ट रूप से दिखाते हैं कि वेब सीरीज देखने के लिए अमेजॉन प्राइम, डिज्नी+हॉटस्टार और नेटफ्लिक्स जैसे प्लेटफॉर्मों की प्राथमिकता है। ये प्लेटफॉर्म अधिक प्रचलित हैं और इसलिए उपयोगकर्ताओं के पसंदीदा हैं। आँकड़ों से पता चलता है कि बायोपिक, जागरूकता आधारित कंटेंट, क्राइम थ्रिलर और रोमांटिक कंटेंट वेब सीरीज देखने के लिए प्रमुख पसंदीदा विधाएँ हैं। ये प्राथमिकताएँ वेब सीरीज की विभिन्न शैलियों और विषयों की प्रशंसा करती हैं। आँकड़े बताते हैं कि लोगों के बीच सेंसरशिप की माँग काफी उच्च है। यह मुख्य रूप से वेब सीरीजों में नई और विविध कहानियों, बोली जाने वाली भाषाओं और आपत्तिजनक सामग्री के प्रदर्शन की माँग से संबंधित हो सकता है। स्त्री और पुरुष के बीच वेब सीरीज चयन के आधार पर महत्त्वपूर्ण विभिन्नता होती है। इस परिकल्पना का परीक्षण किया गया है, जिसके अनुसार स्त्री और पुरुष अलग-अलग प्रकार की वेब सीरीज को पसंद कर सकते हैं या उन्हें अलग-अलग जोनर के कंटेंट पसंद हो सकते हैं। प्रस्तुत शोध स्पष्ट करता है कि व्यक्ति के पेशे और योग्यता के आधार पर वेब सीरीज देखने की अवधि में महत्त्वपूर्ण अंतर होता है। इससे यह ज्ञात होता है कि व्यक्ति के जीवन अनुभव और शिक्षा उनके वेब सीरीज देखने की प्रवृत्ति पर प्रभाव डालते हैं।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध स्पष्ट करता है कि युवा दर्शकों के बीच वेब सीरीज की प्रतिष्ठा और प्रभाव अधिक होता है। वे इसे मनोरंजन के साथ-साथ विचारों और सामाजिक मुद्दों के संकर्षण का एक माध्यम मानते हैं। आधारभूत डेटा के आधार पर यह साबित होता है कि वेब सीरीजों की माँग में एक सुदृढ़ वृद्धि देखी जा रही है। इस वृद्धि का कारण है लोगों की प्राथमिकता और आवेश का बदलाव, जो उन्हें वेब सीरीजों को पसंद करने के लिए प्रेरित कर रहा है। युवा दर्शकों के वेब सीरीज चयन पर कारकों का महत्त्वपूर्ण प्रभाव होता है। वे कहानी, कला, अभिनय और सामाजिक मुद्दों के अलावा अपनी पहचान और रुचि के आधार पर चुनाव करते हैं। युवा अमेजॉन प्राइम, डिज्नी+ हॉटस्टार और नेटफ्लिक्स जैसे प्रमुख वेब सीरीज प्लेटफॉर्म इस माँग को पूरा करने के लिए प्रमुख स्थान पर हैं। इन प्लेटफॉर्मों ने सामान्य टेलीविजन और फिल्म उद्योग को चुनौती दी है और वेब सीरीजों को मनोरंजन का नया माध्यम बना दिया है। इस शोध के अनुसार उत्तरदाता शिक्षित और अवधारणाशील हैं, जिससे प्रकट होता है कि वेब सीरीजों का उपयोग वर्तमान में शिक्षित लोगों द्वारा किया जा रहा है। इसके अलावा, यह शोध यह भी प्रकट करता है कि व्यक्ति के पेशे और योग्यता के आधार पर वेब सीरीज देखने की अवधि में महत्त्वपूर्ण अंतर होता है। इससे यह ज्ञात होता है कि व्यक्ति के अनुभव, शिक्षा और जीवन अनुभव उनके वेब सीरीज देखने की प्रवृत्ति पर प्रभाव डालते हैं। इन संकेतों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वेब सीरीज उत्तरदाताओं के बीच एक प्रमुख मनोरंजन स्रोत है और नवीनता, मनोहारी कहानियाँ और मनोरंजन की प्राथमिकता का होना इसके महत्त्वपूर्ण कारण हैं। जागरूकता आधारित कंटेंट, बायोपिक, क्राइम थ्रिलर और रोमांटिक कंटेंट लोगों की प्रमुख पसंद हैं, जिन्हें लोग बड़ी संख्या में देखना पसंद कर रहे हैं। इसके साथ ही, सामग्री की सेंसरशिप की माँग भी बढ़ रही है।

संदर्भ

काट्ज, ई. ब्लुम्लर. जे.जी., & गुरेविच, एम. (1974). यूजज एंड ग्रेटीफिकेशंस रिसर्च. द पब्लिक ओपिनियन क्वार्टरली, 37(4), 509-523

कोरावी, वी.एस. (2019). एनालिसिस ऑफ वेरियस इफेक्ट ऑफ वेब सीरीज स्ट्रीमिंग ऑनलाइन ऑन इंटरनेट ऑन इंडियन यूथ, इंटरनेशनल जर्नल फॉर रिसर्च अंडर लिटरल एक्सेस फोरम. https://www.scribd.com/document/517665196/ANALYSIS-OF-VARIOUS-EFFECTS-OF-WEB-SERIE#से पुन:प्राप्त.

जैक, ड्यूक. (2021). द राइज ऑफ ओवर द टॉप कंटेंट : इंप्लीकेशन फॉर टेलीविजन एडवरटाइजिंग इन अ डायरेक्ट-टू-कंज्यूमर वर्ल्ड. https://www.tcs.com/content/dam/global-tcs/en/pdfs/insights/whitepapers/Over-d-Top-Content.pdf से पुन:प्राप्त.

धीमान, बी. & मलिक, पी.एस. (2021). साइकोलॉजिकल इंपैक्ट ऑफ वेब सीरीज एंड स्ट्रीमिंग कंटेंट : अ स्टडी ऑन इंडियन यूथ, ग्लोबल मीडिया जर्नल, https://www.globalmediajournal.com/open-access/psychosocial-impact-of-web-series-and-streaming-content-a-study-on-indian-youth.php?aid=90530 से पुन:प्राप्त.

मजेक, डी. (2012). वेब टेलीविजन, वेब सीरीज एंड वेबकास्टिंग : केस स्टडीज इन द आर्गेनाइजेशन एंड डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ टेलीविजन-स्टाइल कंटेंट प्रोड्यूज्ड ऑनलाइन. स्टॉकहोम : स्टॉकहोम्स यूनिवर्सिटी. https://www.studocu.com/in/document/university-of-delhi/continental-philosophy/webcasting-webseries-movies-web-television/19656500 से पुन:प्राप्त.

लू, डी. एंड ज्हेंग, एस. (2015). अ स्टडी ऑन चायनीज वेब सीरीज डेवलपमेंट : बैकग्राउंड प्रोब्लम्स एंड रेकमेंडेशंस (इलेक्ट्रॉनिक वर्जन). जर्नल ऑफ फुयांग वोकेशनल एंड टेक्निकल कॉलेज, 26(1), 9-16. http://www.cnki.com.cn/Article/CJFDTotal-FYZJ201501002.htm से पुन:प्राप्त.

वाघ, वी. डब्ल्यू. आदि. (2022). अ स्टडी ऑफ इंपैक्ट ऑफ वेब सीरीज एंड स्ट्रीमिंग कंटेंट ऑन यूथ ऑफ इंडिया, जर्नल ऑफ पॉजिटिव स्कूल साइकोलॉजी. https://journalppw.com/index.php/jpsp/article/view/1312 से पुनःप्राप्त.

सिंह, आदित्य (2020). वेब सीरीज और उनका प्रभाव : एक अध्ययन. जनसामान्य प्रबंधन पत्रिका, 15(2), 124-135.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 88-94, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

'द केरल स्टोरी' फिल्म का समाज पर प्रभाव : एक अध्ययन

डॉ. आदित्य कुमार मिश्रा[1]

सारांश

भारत एक लोकतांत्रिक देश है। यहाँ प्रत्येक नागरिक को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है। नागरिक किसी भी धर्म, त्योहार और पूजा पद्धति को स्वीकार करने के लिए स्वतंत्र हैं। यहाँ विभिन्न भाषा-भाषी, धर्म-जातियों, क्षेत्रों और विभिन्न प्रकार के खान-पान के लोग आपस में मिल-जुलकर रहते हैं। यानी अनेकता में एकता भारत की पहचान है। समय-समय पर देश के समक्ष चुनौतियाँ भी आती हैं, जिनका सामना जनता और सरकारें आपस में मिलकर करती हैं। इन चुनौतियों में आतंकवाद लंबे समय से एक बड़ी चुनौती के रूप में विद्यमान है। इन दिनों 'लव-जिहाद' नाम की एक जटिल समस्या भी चर्चा में है, जिससे आतंकवाद के बढ़ने की आशंका है। आजकल मीडिया में 'लव जिहाद' की खबरें लगातार प्रकाशित और प्रसारित की जा रही हैं, जिसकी चर्चा सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर भी खूब हो रही है। सिनेमा की दुनिया भी इससे अछूती नहीं है। 5 मई, 2023 को 'द केरल स्टोरी' नाम की एक हिंदी फिल्म रिलीज हुई है, जिसमें गैर-मुस्लिम धर्म की युवतियों को मुस्लिम युवती और युवकों द्वारा आपसी साँठ-गाँठ से आतंकी नेटवर्क के संरक्षण में छलपूर्वक इस्लाम स्वीकार कराते दिखाया गया है। प्रस्तुत शोध में जनमानस पर 'द केरल स्टोरी' फिल्म के प्रभाव को जानने का प्रयास किया गया है।

संकेत शब्द : लव जिहाद, आतंकवाद, हिंदी सिनेमा, द केरल स्टोरी, मतांतरण

प्रस्तावना

21वीं सदी का भारत सूचना एवं संचार टेक्नॉलॉजी से युक्त है। दुनिया की सबसे बड़ी आबादी, युवा ऊर्जा, सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक समरसता, गौरवशाली इतिहास, एकता और अखंडता से युक्त 'विकासशील भारत' आज तेजी से 'विकसित भारत' बनने की ओर अग्रसर है, लेकिन तेजी से आगे बढ़ते देश के समक्ष चुनौतियाँ भी कम नहीं हैं। वर्ष 1947 में भारत को मिली आजादी की कीमत लाखों भारतीयों ने अपनी कुर्बानी देकर चुकाई। इतना ही नहीं धर्म के नाम पर देश के दो टुकड़े भी हुए। इतनी कुर्बानियों और बँटवारे के बावजूद देश में कुछ लोग सबक सीखने के लिए तैयार नहीं हैं। देश के कुछ असामाजिक तत्त्वों और बाहरी ताकतों के कारण भारत आज भी धार्मिक कट्टरता और आतंकवाद से जूझ रहा है। समाचार पत्र-पत्रिकाओं, रेडियो, टीवी और डिजिटल माध्यमों में कहीं धर्म के आधार पर हिंसा, कहीं छलपूर्वक धर्म परिवर्तन की घटनाएँ और दहशतगर्दों के बहकावे में आकर आतंक की दुनिया में कदम रख रहे युवाओं की खबरें दिखाई जाती हैं। मीडिया में लगातार ऐसी खबरों की प्रस्तुति और राजनीतिज्ञों द्वारा बयानबाजी लव जिहाद की घटनाओं को लगातार चर्चा में बनाए रखती हैं। मीडिया रिपोर्ट्स के मुताबिक 'लव जिहाद' की समस्या भारत ही नहीं अन्य देशों में भी है। 76वें कान फिल्म फेस्टिवल में ट्यूनीशिया में घटित लव जिहाद की एक घटना के आधार पर 'फोर डाटर्स' नाम की एक डॉक्यूमेंट्री फिल्म का प्रदर्शन किया गया। इस फिल्म का निर्माण ट्यूनीशिया की एक महिला फिल्मकार बेन हनिया द्वारा किया गया।

भारत में भी लव जिहाद और आतंकवाद पर आधारित एक हिंदी फिल्म 'द केरल स्टोरी' चर्चा में है। यह फिल्म एक मुस्लिम युवती की मदद से कुछ मुस्लिम युवकों द्वारा गैर-मुस्लिम युवतियों से प्रेम करने, शारीरिक-मानसिक शोषण करने और छलपूर्वक उनका धर्म परिवर्तन कराकर उन्हें आतंक की राह में ले जाने पर केंद्रित है। इस फिल्म को लेकर जितनी चर्चा मीडिया में है, उतनी ही सक्रियता राजनीतिक गलियारों में भी देखी जा रही है। पश्चिम बंगाल में इस फिल्म के प्रदर्शन पर प्रतिबंध लगाया गया। मामला सुप्रीम कोर्ट में पहुँचने पर फिल्म से प्रतिबंध हटाने का निर्देश मिला। वहीं तमिलनाडु में भी फिल्म के प्रदर्शन पर 'रोक जैसे हालात' की शिकायत सुप्रीम कोर्ट में पहुँची। जिस पर तमिलनाडु सरकार ने अदालत में सफाई दी और सरकार द्वारा फिल्म पर रोक लगाने से इनकार किया गया। वहीं उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश आदि राज्यों में इस फिल्म को 'टैक्स फ्री' कर दिया गया। मीडिया रिपोर्टों के अनुसार 5 मई, 2023 को रिलीज हुई यह फिल्म चौथे हफ्ते में 200 करोड़ रुपये का कलेक्शन कर चुकी है। कमाई के आधार पर जाहिर है कि यह फिल्म आम जनता के बीच काफी देखी जा रही है और इसके ओटीटी प्लेटफार्म पर भी आने की खबरें आ रही हैं। इस प्रकार लव जिहाद और आतंकवाद जैसे विषय पर बनी यह फिल्म समाज की सोच पर 'विशेष प्रभाव' डाल सकती है। ऐसे में इस फिल्म का समाज पर क्या प्रभाव है, यह अध्ययन एवं शोध का विषय है। इस विषय पर जानकारी के लिए विभिन्न मीडिया रिपोर्टों का अध्ययन किया गया है। फिल्म का समाज पर प्रभाव जानने के लिए 103 व्यक्तियों से एक प्रश्नावली के माध्यम से राय ली गई।

शोध समस्या

भारत में सभी नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और समानता का अधिकार मिला हुआ है। कुछ लोग कभी-कभी 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' का दुरूपयोग करके सामाजिक सौहार्द खराब करने और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए संकट पैदा करने का काम करते हैं। कुछ लोग देवी-देवता और धर्म-जाति के आधार पर ऊँच-नीच का भाव पैदा करके छलपूर्वक धर्म परिवर्तन कराने की घटनाओं को भी अंजाम देते हैं। इन दिनों एक

[1]अकादमिक एवं शैक्षणिक सहयोगी, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली, ईमेल: adityaiimc22@gmail.com

धर्म के युवाओं द्वारा दूसरे धर्म की युवतियों को प्यार के जाल में फँसाकर, उनका शारीरिक-मानसिक शोषण करने, छलपूर्वक धर्म परिवर्तन कराकर विवाह करने या विवाह करने के बाद धर्म परिवतन करने के लिए मजबूर करने जैसी घटनाएँ मीडिया द्वारा लगातार प्रस्तुत की जा रही हैं। इनमें से कुछ घटनाओं को 'लव जिहाद' का नाम दिया जा रहा है। इस तरह के विषय पर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर 'फोर डाटर्स' नाम की एक डॉक्यूमेंट्री फिल्म भी बन चुकी है, जबकि भारत में भी 'द केरल स्टोरी' नाम की फिल्म भी चर्चा में है। इस संदर्भ में कोई विशेष अध्ययन अब तक सामने नहीं आया है, मगर मीडिया रिपोर्टों में लगातार इस तरह की खबरों के आने और 'द केरल स्टोरी' फिल्म रिलीज होने के बाद आमजन के हितों से संबंधित होने व बहस का विषय बनने से इस विषय पर अध्ययन और शोध आवश्यक है।

शोध उद्देश्य

- लव जिहाद के संबंध में लोगों के विचार जानना।
- लव जिहाद और आतंकवाद के संबंध में 'द केरल स्टोरी' फिल्म के प्रभाव को समझना।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध में लव जिहाद और आतंकवाद के संबंध में 'द केरल स्टोरी' फिल्म के बारे में आमजन की राय जानने के लिए 10 प्रश्नों से युक्त एक प्रश्नावली के जरिये कुल 103 लोगों की राय ली गई है। मीडिया में प्रस्तुत अलग-अलग धर्मों के युवक-युवतियों (मुस्लिम युवकों व हिंदू युवतियों) के विवादित प्रेम प्रसंगों वाली चयनित खबरों और 'द केरल स्टोरी' फिल्म की विषयवस्तु का अध्ययन करने के लिए अंतर्वस्तु विश्लेषण पद्धति का प्रयोग किया गया है।

लव जिहाद

'लव जिहाद' दो शब्दों 'लव' और 'जिहाद' से मिलकर बना है। 'लव' का मतलब प्यार होता है और 'जिहाद' का मतलब संघर्ष होता है। लेकिन लव और जिहाद शब्द एक साथ प्रयोग होने पर इसका व्यावहारिक अर्थ कुछ और ही देखने को मिल रहा है। "लव जिहाद का ये जिन्न केरल में एक हिंदू लड़की और एक मुस्लिम लड़के के प्रेम विवाह से पैदा हुआ है, जिसकी जाँच देश में आतंकवादी घटनाओं की पड़ताल करने वाली नेशनल इंवेस्टिगेशन एजेंसी यानी एनआईए को सौंपी गई।" (दुबे, 2017)। लव जिहाद का संकेत कर रही ख़बरों में प्रायः यही नजर आ रहा है कि कोई मुस्लिम युवा अपना धर्म छिपाकर गैर मुस्लिम लड़की से 'प्यार' करता है। उसके बाद वह गैर मुस्लिम लड़की से विवाह करने का प्रयास करता है। इस प्रक्रिया में अगर विवाह से पहले वह लड़की से धर्म परिवर्तन के लिए दबाव बनाता है और लड़की इनकार कर देती है तो वह उसके साथ हिंसक बरताव करता है। वहीं कुछ मामलों में ऐसे युवा गैर मुस्लिम लड़की से उसी के धर्म और रीति-रीवाज के अनुसार शादी करने के बाद अपनी असलियत पर आते हैं और गैर मुस्लिम लड़की को अपना धर्म परिवर्तन करने के लिए बाध्य करते हैं। कई मामलों में गैर मुस्लिम लड़कियों को हिंसा का शिकार होना पड़ता है। कुछ मामलों में गैर मुस्लिम लड़कियों की हत्या तक की खबर मीडिया में आ चुकी है।

मीडिया द्वारा प्रस्तुत 'लव जिहाद' की खबरों का विश्लेषण

महिला हिंसा के मामले में 'लव जिहाद' शब्द सामने आते ही आरोपी पुरुष के प्रति घृणा पैदा होना स्वाभाविक बात है। कुछ लोगों या समूहों में आरोपी व्यक्ति के धर्म के प्रति भी घृणा पैदा हो सकती है और इन लोगों द्वारा सोशल मीडिया व अन्य माध्यमों से उस धर्म विशेष के लोगों से दूसरे धर्म की लड़कियों को प्रेम न करने या दूरी बनाकर रहने के स्पष्ट या अस्पष्ट संदेश प्रचारित-प्रसारित किए जाते हैं। इस प्रकार के संदेश जिन लोगों के पास बार-बार पहुँचते हैं, उनमें अलग-अलग धर्मों के हर स्त्री-पुरुष के प्रेम को 'लव जिहाद' समझने और सतर्कता की भावना उभरने की संभावना रहती है। ऐसे लोग हर हिंदू महिला और मुस्लिम पुरुष के प्रेम को लव जिहाद के नजरिये से देखने के लिए प्रेरित हो सकते हैं, जबकि अलग-अलग धर्मों के लोगों के बीच स्वाभाविक प्रेम भी हो सकता है। यद्यपि प्रेम प्रसंग में हिंसा और हत्या की घटना समान जाति-धर्म की महिला-पुरुष के मामलों में भी हो सकती है।

खबर-1

वर्ष 2022 में दिल्ली में श्रद्धा नाम की एक लड़की की हत्या की खबर बहुत चर्चा में रही, जिसमें बताया गया कि—"दक्षिण दिल्ली पुलिस ने आफताब अमीन पूनावाला नाम के एक युवक को गिरफ्तार किया है, जिसने अपनी प्रेमिका श्रद्धा की पहले हत्या की, इसके बाद उसके शरीर के 35 टुकड़े किए और फिर दिल्ली में जगह-जगह फेंक दिये" (जागरण न्यूज, 2022)। 14 नवंबर, 2022 को 'दैनिक जागरण' की वेबसाइट पर आफताब द्वारा अपनी प्रेमिका की हत्या के कारण को इस तरह से प्रस्तुत किया गया था—"मिली जानकारी के मुताबिक, कुछ समय बाद जब युवती श्रद्धा ने शादी का दबाव बनाया तो युवक आफताब ने हत्या की पूरी साजिश रच डाली। श्रद्धा को शादी का झाँसा देकर दिल्ली लाया और यहाँ पर रहने लगा। इसके बाद मौका पाकर एक दिन श्रद्धा की हत्या की फिर उसके शव के कई टुकड़े कर दिए" (जागरण न्यूज, 2022)।

विश्लेषण : इस खबर में धर्म परिवर्तन जैसा कोई कृत्य सामने नहीं आता, इस कारण यहाँ 'लव जिहाद' जैसी स्थिति नहीं लग रही है, बल्कि आफताब द्वारा प्रेम के नाम पर श्रद्धा का शारीरिक शोषण और शादी की माँग रखने (हक माँगने) पर निर्मम हत्या करना, उसे एक कामांध और हत्यारा साबित करती है।

खबर- 2

11 सितंबर, 2022 को 'हिंदुस्तान' समाचार पत्र की वेबसाइट पर प्रस्तुत एक खबर को लव जिहाद के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वेबसाइट की खबर के अनुसार—"दिल्ली में लव जिहाद का एक मामला सामने आया है। यमुनापार में धर्म छिपाकर मुस्लिम युवक ने लड़की को प्रेमजाल में फँसाया। रेप के बाद अश्लील विडियो के जरिये ब्लैकमेल करता रहा, फिर शादी कर ली" (बलुनी, 2022)। महिला का कहना था कि आरोपी युवक ने शादी के बाद महिला को नमाज पढ़ने के लिए मजबूर किया। पीड़ित महिला के आरोप और संबंधित थाने में दर्ज शिकायत के आधार

पर प्रस्तुत खबर में आगे लिखा गया है—"शादी के बाद पीड़िता को उसके धर्म का पता चला तो उसने इस बात का विरोध किया। इस पर आरोपी ने उसकी पिटाई की। परिजन पीड़िता को अपने घर ले गए। पीड़िता के अनुसार, आरोपी उसे दोबारा अपने घर ले आया और उसे कमरे में बंद कर पीटने लगा। परेशान होकर उसने आखिरकार पुलिस से शिकायत की, जिसके बाद पुलिस ने मामला दर्ज कर आरोपी को गिरफ्तार कर लिया" (बलुनी, 2022)।

विश्लेषण: इस खबर में मुस्लिम युवक द्वारा अपना धर्म छिपाकर गैर मुस्लिम लड़की से शादी करने और लड़की को नमाज पढ़ने के लिए मजबूर करने की बात सामने आ रही है। एक पाठक के दृष्टिकोण से यह लव जिहाद का ही मामला नजर आ रहा है।

खबर- 3

24 मई, 2023 को 'दैनिक भास्कर' की वेबसाइट पर मुरादाबाद में मुस्लिम लड़के द्वारा अपना धर्म छिपाकर (हिंदू बनकर) हिंदू लड़की से प्यार करने की खबर प्रस्तुत की गई—"मुरादाबाद में लव जिहाद का मामला सामने आया है। यहाँ इमरान नाम के युवक ने सोशल मीडिया पर राहुल गुर्जर के नाम से फर्जी आईडी बनाकर हिंदू लड़की से दोस्ती कर ली। इसके बाद इस नाबालिग छात्रा को लेकर शहर के बुध बाजार एरिया में एक होटल में जा पहुँचा" (दैनिक भास्कर, 2023)। होटल स्टाफ ने कुछ शक होने पर पूछताछ की, मामला पुलिस तक पहुँच गया। इस वेबसाइट में आगे खबर है—"इमरान ने लड़की को अपना नाम राहुल गुर्जर ही बताया था। होटल पहुँचने पर जब आईडी देने की बारी आई तो उसने लड़की को नई कहानी सुना दी। बोला—मैंने इमरान नाम से एक फर्जी आईडी बनवा रखी है। ताकि होटल में पहचान उजागर नहीं हो। इसलिए मैं होटल में असली आईडी की जगह इमरान नाम की फर्जी आईडी दूँगा। लड़की ने भी उसकी इस बात पर विश्वास कर लिया था, जबकि वास्तव में इमरान की वह असली आईडी थी" (दैनिक भास्कर, 2023)।

विश्लेषण : इस खबर में मुस्लिम युवक ने अपना धर्म छिपाकर (हिंदू बनकर), धोखे से हिंदू युवती को प्रेमजाल में फँसाया। वह इस नाबालिक लड़की के साथ होटल भी गया। नाबालिक लड़की को होटल में ले जाकर उसकी मर्जी से संबंध बनाना भी दुष्कर्म की श्रेणी में आता है। अगर यह मामला सामने नहीं आता तो वह बलात्कार का आरोपी भी बन सकता था। हालाँकि वह अपने मकसद में कामयाब नहीं हो पाया, इसलिए इस घटना को लव जिहाद नहीं कहा जा सकता, मगर उसकी नीयत लव जिहाद की ही थी, इससे इनकार भी नहीं किया जा सकता।

शोध के लिए चयनित खबरों की सारणी और लव जिहाद से संबंध

खबर की क्र. संख्या	उपर्युक्त खबरें लव जिहाद की घटनाएँ हैं या नहीं?
1.	नहीं
2.	हाँ
3.	आंशिक रूप से

उपर्युक्त सारणी में दिए गए आँकड़े बताते हैं कि हिंदू-मुस्लिम या अलग-अलग धर्मों के युवक-युवतियों के कुछ 'प्रेम प्रंसग', जिनमें धोखाधड़ी, हिंसा या अन्य प्रकार का अपराध हुआ हो, लव जिहाद हो सकते हैं, लेकिन हर मामला लव जिहाद का नहीं होता।

'द केरल स्टोरी' फिल्म की कहानी

निर्देशक सुदीप्तो सेन की फिल्म 'द केरल स्टोरी' रिलीज होने के समय से ही काफी विवादों में रही। शुरूआत में इस फिल्म को 32,000 हजार युवतियों की कहानी बताकर प्रचारित किया गया, लेकिन तथ्यों के आधार पर आलोचना शुरू हुई तो यह प्रचारित किया गया है कि यह केरल राज्य की तीन युवतियों द्वारा कथित रूप से अपना धर्म त्यागकर मुस्लिम धर्म अपनाने की कहानी पर बनाई गई है। फिल्म में दिखाया गया है कि चार लड़कियाँ केरल के कासरगोड में एक नर्सिंग कॉलेज में दाखिला लेती हैं। इन चारों में एक का नाम शालिनी (अदा शर्मा), दूसरी गीतांजलि (सिद्धि इदनानी), तीसरी निमाह (योगिता बिहानी) और चौथी का नाम आसिफा है। ये चारों एक कमरे में रहने लगती हैं। कहानी को कभी वर्तमान में तो कभी बैक स्टोरी में ले जाकर दिखाया जाता है।

शुरुआती दृश्य में दिखाया जाता है शालिनी उन्नीकृष्णन जाँच अधिकारियों से घिरी है और उनके सवालों के जवाब में अपने साथ हुए धोखे, साजिश और आईएसआईएस ज्वाइन करने की भयावह कहानी को बयान करती है। चारों लड़कियों में से एक 'आसिफा' कट्टरवादी मुस्लिम है और अपनी तीनों दोस्तों को उनके घर-परिवार और धर्म से मोहभंग कराकर इस्लाम धर्म ग्रहण कराने के गुप्त एजेंडे पर काम करती है। इस काम में दो अन्य मुस्लिम युवक रमीज और अब्दुल उसका साथ देते हैं। अपने तीनों दोस्तों से ये इन दोनों युवकों का परिचय अपने चचेरे भाई के रूप में कराती है, जबकि ये दोनों इसके चचेरे भाई नहीं, बल्कि ऐसे मुस्लिम कट्टरपंथी हैं, जिनका कनेक्शन आतंकवादियों के नेटवर्क से है। तीनों लड़कियों को मौलवियों से विशेष तालीम दिलाई जाती है और इस्लाम की तरफ झुकाव करने के लिए उनका ब्रेनवॉश किया जाता है, उन्हें नशे की दवाइयाँ तक दी जाती हैं। इनमें अपने धर्म के प्रति मोहभंग और परिवार के प्रति नफरत की भावना को उभारा जाता है, साथ ही इनके मन में मुस्लिम धर्म के सर्वोच्च होने की बात डाली जाती है।

घटनाक्रम में रमीज शालिनी को झूठे प्यार के जाल में फँसा लेता है और शालिनी उसके प्यार को सच्चा मानकर अपनी सारी मर्यादा लाँघ जाती है। एक समय ऐसा आता है जब उसे पता चलता है कि वह रमीज के बच्चे की माँ बनने वाली है। रमीज उसके सामने ऐसी परिस्थिति पैदा कर देता है कि वह इस्लाम धर्म ग्रहण करने के लिए तैयार हो जाती है। इसके बावजूद रमीज उससे शादी नहीं करता, बल्कि उसे छोड़कर भाग जाता है। इसके बाद जिन 'मुस्लिम धर्मगुरुओं' के प्रभाव में यह सारी साजिश चल रही होती है उनके द्वारा इशाक नामक एक मुस्लिम युवक से शालिनी का निकाह करा दिया जाता है और वह इशाक के साथ हनीमून पर कोलंबो जाती है।

उधर अब्दुल गीतांजलि को प्रेमजाल में फँसाकर और नशे का आदी बनाकर उसकी गंदी तस्वीरें जुटा लेता है। अब्दुल उससे शादी करने और अपने साथ सीरिया चलने के लिए दबाव बनाता है। गीतांजलि द्वारा मना करने पर वह उसे धमकाता है और उसकी अश्लील तस्वीरें उसके मोबाइल पर भेजकर ब्लैकमेल करता है। गीतांजलि अब्दुल समेत आसिफा, रमीज आदि की साजिश को समझ जाती है और वापस अपने घर चली जाती

है। इसके बाद अब्दुल उसकी तस्वीरों को सोशल मीडिया पर वायरल कर देता है, जिससे सदमें में आकर गीतांजलि आत्महत्या कर लेती है।

कोलंबो में हनीमून पर गई शालिनी की मोबाइल कॉल के जरिये निमाह से बात होती है। वह निमाह से कहती है कि वह प्रेगनेंट थी, उसी हालत में रमीज उसे धोखा देकर इंडिया से बाहर चला गया तो उसकी शादी इशाक नाम के दूसरे व्यक्ति से हो गई। निमाह उसे बताती है कि ये सब आसिफा ने किया है। आसिफा, रमीज, अब्दुल और मुजीत (जिससे निमाह को प्यार हुआ था) ये सब मिले हुए हैं। रमीज कहीं नहीं गया है, वहीं पर है दूसरी लड़की के साथ। वह लड़कियों के धर्मांतरण के लिए धंधा चला रहा है। निमाह कहती है कि शालिनी तुमने ही मुझसे मुजीत से मिलने के लिए कहा था। मैं मिलने गई थी उससे। मगर मैंने शुरू में ही उसे मना कर दिया था कि मैं धर्मांतरण नहीं करूँगी। उसने मुलाकात के दौरान मेरे ग्लास में ड्रग मिला दिया और बेहोशी की हालत में मेरे साथ दुष्कर्म करता था। मुझे फँसा लिया गया था। रोज 18-20 या उससे भी ज्यादा लोगों द्वारा मेरे साथ दुष्कर्म होता था। मैं बड़ी मुश्किल से वहाँ से भागकर निकली। पुलिस ने मेरी एफआईआर तक नहीं लिखी। वह गीतांजलि की आत्महत्या की बात भी उसे बताती है। सब कुछ जानने के बाद भी शालिनी भारत लौटने और अपनी सलामती का प्रयास नहीं करती, बल्कि शालिनी पर आसिफा और मुस्लिम धर्मगुरुओं की बातों का इतना असर हो चुका होता है कि वह गीतांजलि और निमाह की बर्बादी का कारण इस्लाम धर्म को स्वीकार न करने की सजा समझती है। वह अपने पति इशाक को पूरी बात बताती है और कहती है कि निमाह ने अल्लाह को कभी नहीं माना था और गीतांजलि इस्लाम छोड़कर हिंदू बन गई, शायद उन दोनों को अपने पापों की सजा मिल गई।

हालाँकि कोलंबो से निकलते वक्त उसके मन में एक बार यह ख्याल आया कि जो हो रहा है वो सही नहीं हो रहा है। अल्लाह इतना बेरहम क्यों होगा? गीतांजलि और निमाह तो विवश थे, फिर उनके साथ ऐसा गलत क्यों हो रहा है? लेकिन अल्लाह के गुस्से के बारे में उसके मन में ऐसी डरावनी सोच पैदा की गई कि अंततः वह मान गई कि उसकी दोनों सहेलियों को उनके पापों की सजा मिली है। कोलंबो से शालिनी अपने पति इशाक के साथ सीरिया चली जाती है। आगे का सफर शालिनी के लिए भयानक साबित होता है। उसका पति उसके साथ बेरहमी से पेश आता है और उसका शारीरिक और मानसिक शोषण करता है। एक समय के बाद उसका पति साजिश के तहत उसे छोड़कर भाग जाता है। उसके बाद आईएसआईएस के आतंकी उसे उसके बच्ची समेत उठा ले जाते हैं, उसका पति भी इसमें शामिल रहता है। बच्ची को उससे छीनकर उसकी तरह अपने घरों को छोड़कर आतंकियों के चंगुल में आई अन्य युवतियों, जिन्हें सेक्स गुलाम की तरह रखा गया है, उनके साथ रख देते हैं और कई आतंकी बारी-बारी से इसके साथ दुष्कर्म करते हैं। बाद में वह आतंकियों के चंगुल से भाग निकलती है, लेकिन स्थानीय सुरक्षा अधिकारियों द्वारा गिरफ्तार कर ली जाती है। पूछताछ में पूरे घटनाक्रम को बताती है, जिसे फिल्म में बैक स्टोरी के रूप में दिखाया गया है। वह भारत आना चाहती है, लेकिन स्थानीय कानूनी बाध्यताओं के कारण उसे आने नही दिया जाता, बल्कि जेल में रखा जाता है। फिल्म के अंत में निमाह अपने माँ-बाप के साथ पुलिस में अपने और अन्य लड़कियों के साथ हुए इस खतरनाक घटना की शिकायत करती है, मगर उसकी शिकायत दर्ज नहीं होती, बल्कि पुलिस उससे सबूत माँगती है। “फिल्म इस दृश्य के साथ खत्म होती है, जहाँ आसिफा और बाकी तीन लड़कियाँ हॉस्टल के कमरे में साथ दिखती हैं। यह अंत संकेत देता है कि केरल में अब भी धर्म परिवर्तन जारी है और आईएस जैसे आतंकी संगठन साजिश में लगे हुए हैं” (नवभारत, 2023)।

लव जिहाद और आतंकवाद को लेकर ‘द केरल स्टोरी’ फिल्म के बारे में आमजन की राय

‘द केरल स्टोरी’ फिल्म ‘लव जिहाद’ और आतंकवाद पर केंद्रित है। लव जिहाद और आतंकवाद से जुड़ी खबरें इन दिनों मीडिया द्वारा जनता के बीच पहुँच रही हैं। सोशल मीडिया पर अलग-अलग धर्मों विशेषकर हिंदू युवती और मुस्लिम युवा के प्रेम प्रसंग से जुड़े विवादों में से अनेक को लव जिहाद से जोड़कर देखा जा रहा है। हालाँकि जब तक कानूनी प्रक्रिया द्वारा किसी मामले को लव जिहाद न करार दिया जाए, तब तक इसे लव जिहाद नहीं कहा जाना चाहिए। लेकिन जनता के बीच जिन परिस्थितियों और तरीकों से खबर प्रस्तुत की जा रही है, उसमें ऐसी खबरों में लव जिहाद का मामला होने से स्पष्ट रूप से इनकार भी नहीं किया जा सकता। ‘द केरल स्टोरी’ फिल्म लव जिहाद और आतंकवाद पर केंद्रित होने की वजह से चर्चा में हैं। लव जिहाद और आतंकवाद को लेकर ‘द केरल स्टोरी’ फिल्म का समाज पर प्रभाव जानने के लिए 10 प्रश्नों से युक्त एक प्रश्नावली के माध्यम से कुल 103 लोगों की राय ली गई है, जो इस प्रकार है :

प्रश्न-1: ‘लव जिहाद’ शब्द आपकी जानकारी में कैसे आया?

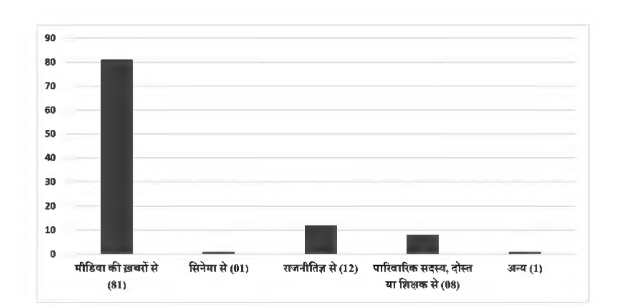

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 103 उत्तरदाताओं में से 81 उत्तरदाताओं ने बताया कि उन्हें मीडिया की खबरों से इसकी जानकारी मिली। 01 उत्तरदाता ने कहा कि उसे सिनेमा से इसकी जानकारी मिली। 12 उत्तरदाताओं ने राजनीतिज्ञों से, 8 उत्तरदाताओं ने पारिवारिक सदस्यों, दोस्तों या शिक्षकों से जबकि 01 उत्तरदाता ने अन्य स्रोत से जानकारी मिलने की बात कही।

प्रश्न-2 : ‘लव जिहाद’ से आप क्या समझते/समझती हैं?

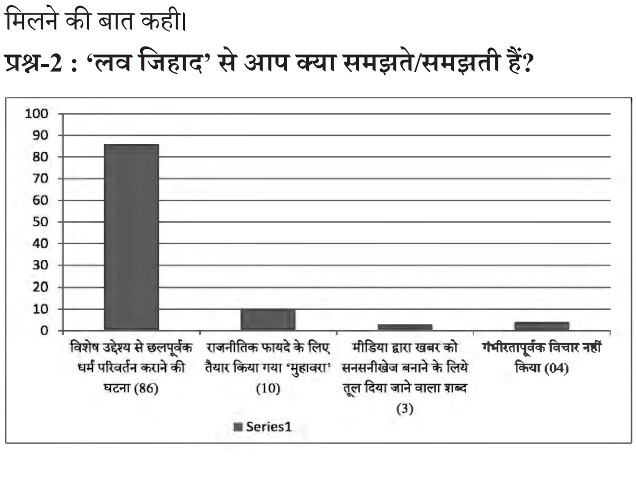

विश्लेषण : उपर्युक्त सवाल के जवाब में 103 उत्तरदाताओं में से 86 ने इसे 'विशेष उद्देश्य से छलपूर्वक धर्म परिवर्तन कराने की घटना' के रूप में समझने की बात कही। 10 उत्तरदाताओं ने 'इसे राजनीतिक फायदे के लिए तैयार किया गया मुहावरा' बताया। 03 उत्तरदाताओं ने 'मीडिया द्वारा खबर सनसनीखेज बनाने के लिए तूल दिया जाने वाला शब्द' कहा। 04 उत्तरदाताओं ने कहा कि उन्होंने इस पर गंभीरतापूर्वक विचार नहीं किया।

प्रश्न-3 : क्या मीडिया द्वारा प्रस्तुत 'लव जिहाद' की खबरों पर आपने कभी गंभीरता से विचार किया?

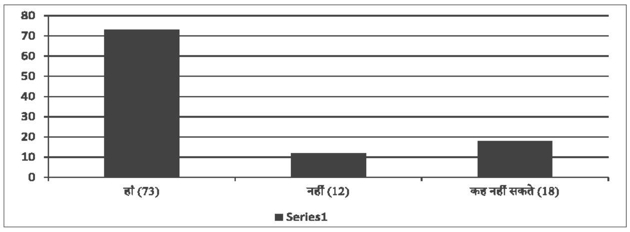

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 103 में से 73 उत्तरदाताओं ने हाँ में जवाब दिया। 12 उत्तरदाताओं ने नहीं में जवाब दिया, जबकि 18 उत्तरदाताओं ने कहा कि- 'कह नहीं सकते।

प्रश्न-4 : क्या 'लव जिहाद' की घटनाओं की वजह से आपको कभी संबंधित धर्म के पुरुषों/महिलाओं के प्रति अविश्वास उत्पन्न हुआ है?

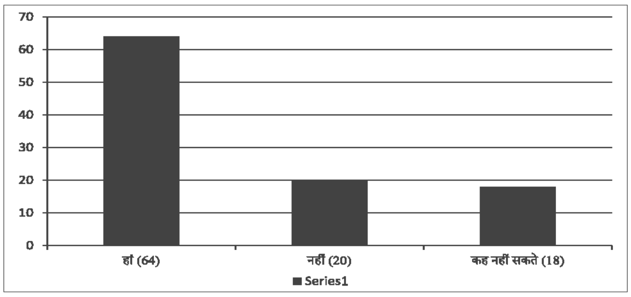

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 64 उत्तरदाताओं ने हाँ में जवाब दिया अर्थात् 'लव जिहाद' की घटनाओं की वजह से उन्हें कभी-न-कभी संबंधित धर्म के पुरुषों/महिलाओं के प्रति अविश्वास उत्पन्न हुआ। 20 उत्तरदाताओं ने कभी अविश्वास न होने और 18 उत्तरदाताओं ने इस संबंध में कुछ 'कह नहीं सकते' का जवाब दिया।

प्रश्न-5 : क्या 'लव जिहाद' के प्रति जागरूकता की आवश्यकता है?

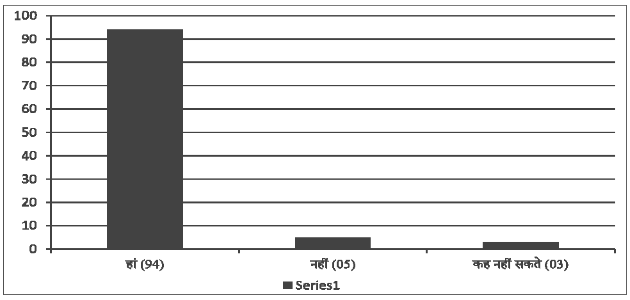

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 94 उत्तरदाताओं ने हाँ में जवाब देते हुए 'लव जिहाद' के प्रति जागरूकता की आवश्यकता होने की बात कही। 05 उत्तरदाताओं ने न में जवाब देते हुए ऐसी आवश्यकता से इनकार किया, जबकि 03 उत्तरदाताओं ने कह नहीं सकते का विकल्प चुना।

प्रश्न-6 : क्या 'द केरल स्टोरी' फिल्म में 'लव जिहाद' और 'आतंकवाद' से संबंधित दिखाई गई घटनाएँ विश्वास करने योग्य हैं?

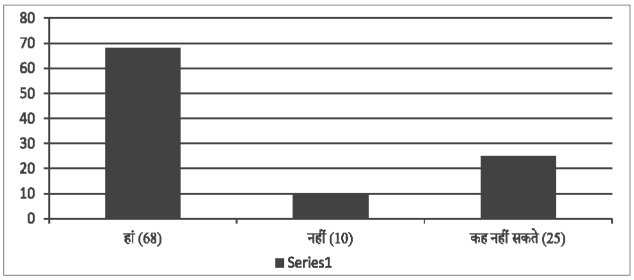

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 68 उत्तरदाताओं ने हाँ में जवाब देते हुए 'द केरल स्टोरी' फिल्म में 'लव जिहाद' और 'आतंकवाद' से संबंधित दिखाई गई घटनाओं को विश्वास करने योग्य बताया। 10 उत्तरदाताओं ने न में जवाब दिया, जबकि 25 उत्तरदाताओं ने 'कह नहीं सकते' का विकल्प चुना।

प्रश्न-7 : 'द केरल स्टोरी' फिल्म को किन्हीं राज्यों में बैन करने को आप किस रूप में देखते हैं?

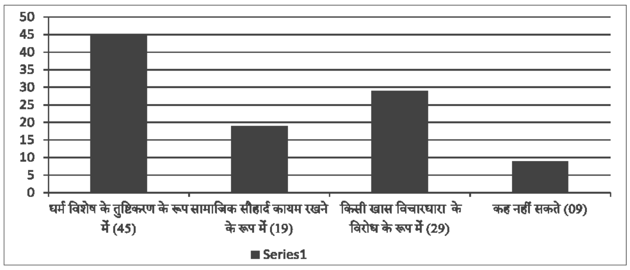

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 45 उत्तरदाताओं ने 'द केरल स्टोरी' फिल्म को किन्हीं राज्यों में बैन करने को धर्म विशेष के तुष्टीकरण के रूप में देखने की बात कही, जबकि 19 उत्तरदाताओं ने इसे सामाजिक सौहार्द कायम करने के रूप में माना। 29 उत्तरदाताओं ने इसे किसी खास विचारधारा के विरोध के रूप में स्वीकार किया, जबकि 09 उत्तरदाताओं ने 'कह नहीं सकते' का विकल्प चुना।

प्रश्न-8 : 'द केरल स्टोरी' फिल्म को किन्हीं राज्यों में टैक्स फ्री करने को आप किस रूप में देखते हैं?

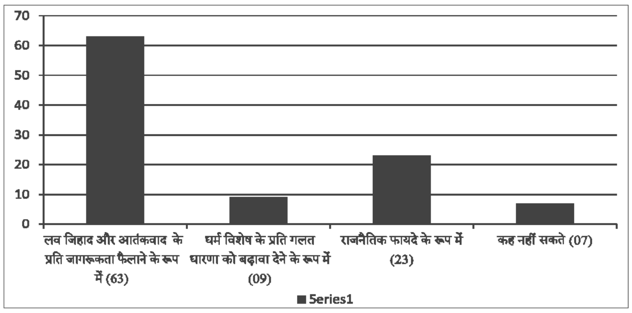

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 63 उत्तरदाताओं ने 'द केरल स्टोरी' फिल्म को किन्हीं राज्यों में टैक्स फ्री करने को 'लव जिहाद और आतंकवाद के प्रति जागरूकता फैलाने के रूप में' माना। 09 उत्तरदाताओं ने इसे 'धर्म विशेष के प्रति गलत धारणा को बढ़ावा देने के रूप में' माना। 23 उत्तरदाताओं ने इसे 'राजनैतिक फायदे के रूप में' माना, जबकि 07 उत्तरदाताओं ने 'कह नहीं सकते' का विकल्प चुना।

प्रश्न-9 : फिल्म में जिस प्रकार एक धर्म विशेष के अनुयायी द्वारा अपने ईश्वर को सर्वोच्च और दूसरे धर्म के ईश्वर के प्रति कमतरी का जिक्र किया गया है, अगर समाज में भी यह प्रचलन है तो उसके बारे में आप क्या सोचते/सोचती हैं?

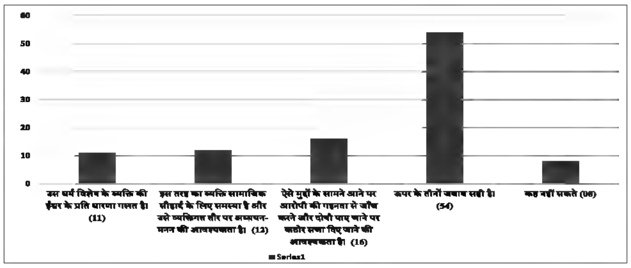

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 11 उत्तरदाताओं ने ईश्वर के संबंध में धार्मिक भेदभाव करने वाले व्यक्ति के बारे में कहा कि 'उस धर्म विशेष के व्यक्ति की ईश्वर के प्रति धारणा गलत है। 12 उत्तरदाताओं ने कहा कि इस तरह का व्यक्ति सामाजिक सौहार्द के लिए समस्या है और उसे व्यक्तिगत तौर पर अध्ययन-मनन की आवश्यकता है। 16 उत्तरदाताओं ने ऐसे मुद्दों के सामने आने पर आरोपी की गहनता से जाँच करने और दोषी पाए जाने पर कठोर सजा दिए जाने की आवश्यकता बताई। 54 उत्तरदाताओं ने उपर्युक्त तीनों ही जवाबों से सहमति जताई, जबकि 08 उत्तरदाताओं ने 'कह नहीं सकते' का विकल्प चुना।

प्रश्न-10 : क्या 'द केरल स्टोरी' फिल्म के कारण अलग-अलग धर्मों के युवक-युवतियों के स्वाभाविक प्रेम संबंधों पर कोई प्रभाव पड़ सकता है?

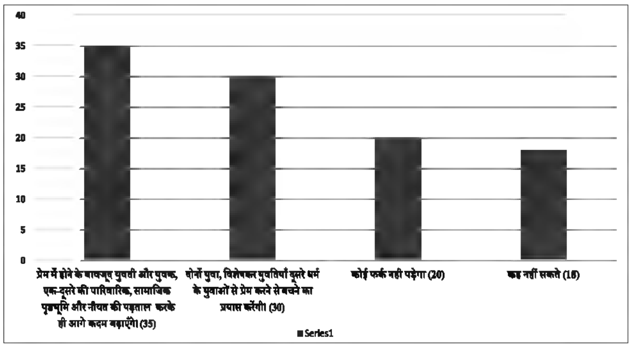

विश्लेषण : उपर्युक्त प्रश्न के जवाब में 35 उत्तरदाताओं ने कहा कि 'द केरल स्टोरी' फिल्म के प्रभाव के बारे में कहा कि 'प्रेम में होने के बावजूद युवती और युवक, एक-दूसरे की पारिवारिक, सामाजिक पृष्ठभूमि और नीयत की पड़ताल करके ही आगे कदम बढ़ाएँगे। 30 उत्तरदाताओं ने कहा कि युवा, विशेषकर युवतियाँ दूसरे धर्म के युवाओं से प्रेम करने से बचने का प्रयास करेंगी। 20 उत्तरदाताओं ने 'द केरल स्टोरी' फिल्म का अलग-अलग धर्मों के युवक-युवतियों के स्वाभाविक प्रेम संबंधों पर कोई फर्क न पड़ने की बात कही। वहीं 18 उत्तरदाताओं ने इस सवाल के जवाब में 'कह नहीं सकते' का जवाब दिया।

निष्कर्ष

5 मई, 2023 को रिलीज हुई 'द केरल स्टोरी' फिल्म के चर्चा में आने से पहले ही मीडिया में एक धर्म विशेष के युवाओं द्वारा अन्य धर्मों की (विशेषकर हिंदू) युवतियों के साथ प्रेम करने, हिंसा और कई मामलों में छलपूर्वक धर्म परिवर्तन कराने जैसी घटनाओं की प्रस्तुति की जाती रही है। इस शोध में 'द केरल स्टोरी' फिल्म के कंटेंट पर केंद्रित अध्ययन किया गया है। इसके अलावा अलग-अलग धर्मों के युवक-युवतियों के प्रेम और हिंसा से संबंधित खबरों का अवलोकन और विश्लेषण किया गया है, जिसमें पाया गया कि अलग-अलग धर्मों के युवक-युवतियों के 'कुछ प्रेम प्रंसग जिनमें बाद में धोखाधड़ी, हिंसा या अन्य प्रकार का अपराध हुआ हो, 'लव जिहाद' हो सकते हैं', लेकिन हर प्रेम प्रसंग और हिंसा का मामला 'लव जिहाद' का नहीं होता। इस शोध में यह निष्कर्ष निकलता है कि 'द केरल स्टोरी' फिल्म का समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। 'लव जिहाद' शब्द के बारे में अधिकतर लोगों को मीडिया की खबरों से जानकारी मिली है। अध्ययन में शामिल मात्र एक प्रतिशत लोगों को 'लव जिहाद' शब्द की जानकारी सिनेमा (द केरल स्टोरी) के जरिये मिली है, अर्थात् लोग 'द केरल स्टोरी' के आने के पहले से लव जिहाद के बारे में जानते थे। शोध में यह तथ्य सामने आया कि समाज के लगभग 86 प्रतिशत लोग लव जिहाद को 'विशेष उद्देश्य से छलपूर्वक धर्म परिवर्तन कराने की घटना' के रूप में समझते हैं। मात्र 10 प्रतिशत लोग इसे 'इसे राजनीतिक फायदे के लिए तैयार किया गया मुहावरा मानते हैं। समाज के 64 प्रतिशत लोगों का मानना है कि 'लव जिहाद' की घटनाओं की वजह से उन्हें कभी-न-कभी संबंधित धर्म के पुरुषों के प्रति अविश्वास जरूर उत्पन्न हुआ। इस अध्ययन में यह बात सामने आई है कि 94 प्रतिशत लोग लव जिहाद के प्रति जागरूकता की आवश्यकता महसूस करते हैं। 'द केरल स्टोरी' फिल्म के कंटेंट की समीक्षा करने पर यह बात सामने आती है कि यह फिल्म लव जिहाद के प्रति सामाज को जागरूक करती है। 'द केरल स्टोरी' के कंटेंट के आधार पर 68 प्रतिशत लोगों का मानना है कि इसमें 'लव जिहाद' और 'आतंकवाद' से संबंधित दिखाई गई घटनाएँ विश्वास करने योग्य हैं।

अध्ययन में राजनीतिक दृष्टिकोण से यह पाया गया कि अधिकतर लोग फिल्म को बैन किए जाने से असहमत हैं। 45 प्रतिशत लोगों ने 'द केरल स्टोरी' फिल्म को बैन करने को धर्म विशेष के तुष्टीकरण के रूप में माना, जबकि 29 प्रतिशत लोग इसे किसी खास विचारधारा के विरोध के रूप में देखते हैं। वहीं समाज के अधिकतर लोग फिल्म के टैक्स फ्री किए जाने के समर्थन में दिखे। 63 प्रतिशत लोग इसे 'लव जिहाद और आतंकवाद के प्रति जागरूकता फैलाने के रूप में देखते हैं। कम ही लोग टैक्स फ्री किए जाने के पीछे राजनैतिक वजह मानते हैं। अलग-अलग धर्मों के युवक-युवतियों के प्रेम-प्रसंगों के मामलों में जागरूकता को लेकर 93 प्रतिशत लोग इस फिल्म से सहमत नजर आते हैं। समाज के अधिकतर लोग अलग-अलग धर्मों के युवा-युवतियों के प्रेम प्रसंगों में आगे बढ़ने के लिए एक-दूसरे की पारिवारिक-सामाजिक पृष्ठभूमि और नीयत परखने पर जोर देते हैं, जबकि इन्हीं में से कुछ लोग दूसरे धर्म के युवक से प्रेम करने से बचने की बात करते हैं। हालाँकि करीब 40 प्रतिशत लोग अलग-अलग धर्मों के युवा-युवतियों के प्रेम और विवाह को लेकर बेफिक्र हैं या इस विषय पर सोचते ही नहीं है। इस प्रकार इस शोध से यह बात सामने आती है कि 'द केरल स्टोरी' फिल्म 'लव जिहाद' को रोकने और आतंकवाद के कनेक्शन को कम करने में मददगार है।

संदर्भ

जागरण न्यूज. (2022, Nov 14). : आफताब ने की प्रेमिका श्रद्धा की हत्या : शरीर के 35 टुकड़े कर दिल्ली में जगह-जगह फेंका, 6 माह बाद खुलासा. https://www.jagran.com/delhi/new-delhi-city-ncr-mumbai-girl-shraddha-murder-disclose-delhi-police-solved-month-old-case-and-arrested-one-aftab-for-killing-his-girl-shraddha-23202931.html से पुन:प्राप्त.

दुबे, ए.के. (2017, अगस्त 18). आखिर क्या होता है ये 'लव जिहाद', जानिए आसान भाषा में. Retrieved from https://www.aajtak.in/india/story/simple-word-definition-of-love-jihad-459095-2017-08-18

दैनिक भास्कर. (2023). लव जिहाद...इमरान ने राहुल बनकर की हिंदू छात्रा से दोस्ती: मुरादाबाद में छात्रा को लेकर होटल पहुँचा; अलग धर्मों की आईडी देख होटल ने नहीं दिया रूम. https://www.bhaskar.com/local/uttar-pradesh/moradabad/news/hotel-arrived-in-moradabad-with-a-student-hindu-organizations-caught-the-police-131321043.html?_branch_match_id=1190730384283593343&utm_campaign=131321043&utm_medium=sharing&_branch_referrer=H4sIAAAAAAAAA8soKSkottLXT0nMzMvM1k3Sy8zT98srKAuJTE42rkoCAH8FRkUfAAAA से पुन:प्राप्त.

नवभारत. (2023). द केरल स्टोरी : क्या सच है ‘द केरल स्टोरी’ की कहानी?. https://navbharattimes.indiatimes.com/navbharatgold/breaking-news-in-hindi/is-the-story-of-film-the-kerala-story-true/story/100054060.cms से पुन:प्राप्त.

बलुनी, एस. (2022, Sep 11). दिल्ली में लव जिहाद? धर्म छिपाकर प्यार के जाल में फँसाया, रेप कर शादी की; युवती ने सुनाई आपबीती. https://www.livehindustan.com/ncr/story-love-jihad-in-delhi-muslim-youth-rape-then-married-hindu-girl-by-hiding-identity-lawyer-7064521.html से पुन:प्राप्त.

संचार माध्यम | खंड 35(2) : 95-101, जुलाई-दिसंबर 2023
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

भारत की आजादी का अमृत महोत्सव

अस्पृश्यता निवारण और बाबासाहब डॉ. बी.आर अंबेडकर : 'मूकनायक' और 'बहिष्कृत भारत' के संदर्भ में एक अध्ययन

प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार[1]

शोध सारांश

भारतीय सनातन चिंतन परंपरा की अनुभूत मान्यता है कि चराचर सृष्टि का निर्माण एक ही तत्त्व से हुआ है और हर प्राणी में उसी एक तत्त्व का वास है। सभी मनुष्य समान हैं, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य में वही ईश्वरीय तत्त्व समान रूप से व्याप्त है। इस सत्य को भारतीय ऋषियों, मुनियों, गुरुओं, संतगणों तथा समाज सुधारकों ने अपने अनुभव एवं आचरण के आधार पर पुष्ट किया है। जब-जब इस श्रेष्ठ चिंतन के आधार पर हमारी सामाजिक व्यवस्थाएँ तथा दैनंदिन आचरण बना रहा, तब-तब भारत एकात्म, समृद्ध और अजेय राष्ट्र रहा; परंतु जब भी इस श्रेष्ठ जीवन दर्शन का देशवासियों के व्यवहार में क्षरण हुआ, तभी समाज का पतन हुआ, जाति के आधार पर ऊँच-नीच की भावना बढ़ी तथा अस्पृश्यता जैसी अमानवीय कुप्रथा का निर्माण हुआ। ऐसी कुप्रथाओं के कारण समाज कमजोर होकर राष्ट्र पराधीन हुआ, जिसका दुष्परिणाम हमने कई शताब्दियों तक भोगा। अस्पृश्यता और जातिभेद के कारण बाबासाहब अंबेडकर जैसे प्रकांड विद्वान् और महापुरुष को अपने जीवन में अनेक अमानवीय संत्रास झेलने पड़े। अपने समय में वे भारत के सबसे शिक्षित व्यक्ति थे, इसलिए चाहते तो विदेश में जाकर बस सकते थे और वहाँ उन्हें आसानी से सम्मानजनक नौकरी और सुविधाएँ मिल जातीं, परंतु उन्होंने ऐसा न कर भारत में ही रहना स्वीकार किया और हिंदू समाज के उस वर्ग में स्वाभिमान का भाव जागरण करने में अपना पूरा जीवन लगा दिया, जो सदियों से जातिभेद और अस्पृश्यता जैसी कुप्रथाओं के कारण स्वाभिमानशून्य हो गया था। समाज जागरण के लिए उन्होंने पत्रकारिता का सहारा लिया। अपने जीवन काल में उन्होंने पाँच समाचार पत्रों का प्रकाशन किया, जिनमें शामिल हैं—'मूकनायक', 'बहिष्कृत भारत', 'समता', 'जनता' और 'प्रबुद्ध भारत'। चूँकि ये सभी पत्र मराठी में प्रकाशित हुए, इसलिए इनमें प्रकाशित सामग्री से देश के अधिसंख्य लोग परिचित नहीं हैं। इनमें से कुछ सामग्री का जब हिंदी और अँग्रेजी भाषाओं में अनुवाद हुआ तो वह जानकारी पुस्तकालयों और अकादमिक जगत् तक पहुँच गई, परंतु आम पाठकों तक नहीं पहुँच सकी। इसलिए बाबासाहब अंबेडकर के कार्य का जब भी आकलन होता है तो उसमें उनके द्वारा प्रकाशित समाचार पत्रों में उनके द्वारा लिखे हुए संपादकीयों और लेखों के संदर्भ पर्याप्त मात्रा में शामिल नहीं होते। प्रस्तुत शोध आलेख में अस्पृश्यता निवारण के संबंध में बाबासाहब के विचारों को उनके द्वारा प्रकाशित 'मूकनायक' और 'बहिष्कृत भारत' पत्रों में लिखे गए अग्रलेखों के माध्यम से समझने का प्रयास किया गया है। बाबासाहब के लिए अस्पृश्यता निवारण महज छूआछूत का प्रश्न नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय का प्रश्न था। इसी के लिए उन्होंने जीवनभर संघर्ष किया। भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय हेतु उन्होंने जो प्रावधान किए, उनका परिणाम आज आजादी के 75 वर्ष बाद देश में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अस्पृश्यता का भाव अब काफी हद तक कमजोर हुआ है। फिर भी कुछ अराष्ट्रीय शक्तियाँ और राजनीतिक दल अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति हेतु समाज में वैमनस्य बढ़ाने का प्रयत्न करते रहते हैं। अस्पृश्यता निवारण के लिए आवश्यक है कि समाज जीवन से भेदभावपूर्ण व्यवहार तथा अस्पृश्यता जैसी कुप्रथा जड़-मूल से समाप्त होनी चाहिए। समाज जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए समाज की सभी धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं को इसी दिशा में कार्यरत होना चाहिए।

संकेत शब्द : बाबासाहब डॉ. भीमराव अंबेडकर, अस्पृश्यता निवारण, छुआछूत, सामाजिक समरसता, मूकनायक, बहिष्कृत भारत, समता, जनता, प्रबुद्ध भारत

प्रस्तावना

देश के सबसे शिक्षित व्यक्ति होने के बावजूद अस्पृश्यता, तिरस्कार, भेदभाव, अन्याय और अपमान का जो दंश बाबासाहब डॉ. भीमराव अंबेडकर को अपने जीवन में झेलना पड़ा वह हर सभ्य समाज को शर्मसार करता है। उन्होंने अपने साथ हिंदू समाज के एक बड़े वर्ग को पीढ़ियों से अस्पृश्यता और तिरस्कार की यंत्रणा झेलते हुए बहुत निकट से देखा और उनकी पीड़ा को महसूस किया। इसलिए अस्पृश्यता निवारण और समतायुक्त समाज की स्थापना के लिए उन्होंने अपना पूरा जीवन लगा दिया। प्रतिदिन अपमानित होने के कारण स्वाभिमानशून्य हो चुके समाज को उन्होंने शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया और उसका निज गौरव भी स्मरण कराया। उन्होंने बार-बार हिंदू समाज को झकझोरा और सावधान किया कि यदि कथित उच्च जातियों के लोगों ने अपने ही समाज बंधुओं के प्रति अपना भेदभावपूर्ण रवैया नहीं बदला तो आने वाले समय में देश को भारी क्षति का सामना करना पड़ेगा। अस्पृश्यता निवारण हेतु उन्होंने संविधान के माध्यम से एक सुदृढ़ तंत्र विकसित करने का प्रयास किया, ताकि समाज का प्रत्येक अंग आधुनिक शिक्षा प्राप्त कर देश के विकास में सक्रिय भूमिका निभाए। इस संबंध में समाज जागरण हेतु उन्होंने पत्रकारिता का सहारा लिया। संसाधनों के अभाव के बावजूद उन्होंने पाँच पत्रों का प्रकाशन किया। भले ही उन समाचार पत्रों का जीवनकाल छोटा रहा हो, परंतु उनका असर बहुत गहरा हुआ। उन पत्रों की सामग्री ने संपूर्ण देश और खास तौर से बृहद् हिंदू समाज के तत्कालीन नेतृत्व को आईना दिखाया।

बाबासाहब की पत्रकारिता

बाबासाहब के प्रथम समाचार पत्र 'मूकनायक' का पहला अंक 31 जनवरी, 1920 को निकला। राजर्षि शाहू महाराज से प्राप्त 2.5 हजार रुपये के सहयोग से 'मूकनायक' का प्रकाशन शुरू हुआ था। शुरू के 14

[1]पाठ्यक्रम निदेशक, उर्दू पत्रकारिता विभाग, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली. ईमेल : drpk.iimc@gmail.com

अंकों का संपादकीय लेखन डॉ. अंबेडकर ने स्वयं किया। जुलाई 1920 में उन्होंने पांडुरंग नंदराम भटकर को संपादन की जिम्मेदारी सौंपी, परंतु भटकर पाँच अंक ही निकाल पाए कि उनका बंबई स्थानांतरण हो गया। तत्पश्चात् 'मूकनायक' के संपादन और प्रबंधन की जिम्मेदारी ज्ञानदेव ध्रुवनाथ घोलप को दी गई। घोलप के अलावा 'मूकनायक के संपादक मंडल में सीताराम शिवतरकर, बालाराम अंबेडकर, बालाराम खंडकर, संभाजी गायकवाड, संभाजी संतुजी, बाघमारे आदि भी थे। आर्थिक संकट और अन्यान्य कारणों से 'मूकनायक' अप्रैल 1923 में बंद हो गया। इसके बाद 1927 में महाड़ के चवदार तालाब सत्याग्रह के दौरान बाबासाहब ने 'बहिष्कृत भारत' का प्रकाशन 3 अप्रैल को शुरू किया। यह अखबार 15 नवंबर, 1929 तक चला। उन्होंने 'समता' नाम से एक और पत्र का प्रकाशन 29 जून, 1928 से आरंभ किया। 'समता' को ही 24 नवंबर 1930 से 'जनता' नाम से प्रकाशित किया जाने लगा। यह 25 वर्ष तक प्रकाशित होता रहा। 'जनता' का नाम 1956 में 'प्रबुद्ध भारत' कर दिया गया। इन सभी पत्रों का प्रकाशन मराठी में हुआ था और अन्य किसी भारतीय भाषा में अनुवाद न हो पाने के कारण बहुसंख्य पाठक इनकी सामग्री से अपरिचित रहे हैं। 'मूकनायक' और 'बहिष्कृत भारत' में प्रकाशित अग्रलेखों का हिंदी अनुवाद डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन ने किया है, जिसके कारण हिंदी पाठक उनमें प्रकाशित बाबासाहब के मूल चिंतन से परिचित हो सके हैं। उन अग्रलेखों में बाबासाहब के खासतौर से अस्पृश्यता निवारण संबंधी विचारों को ही इस शोध आलेख में शामिल किया गया है। डॉ. बेचैन ने 'मूकनायक' के 14 अंकों का अध्ययन किया, जिनमें एक अंक संपादकीय रहित था।

हालाँकि कथित अस्पृश्य समाज के जागरण हेतु बाबासाहब से पहले भी अनेक महापुरुषों ने अनेक पत्रों का प्रकाशन किया था। इस संबंध में ज्योतिबा फूले, गोपाल बाबा बलंकर के प्रयास उल्लेखनीय हैं। 'ज्ञानोदय' 'ज्ञान प्रकाश', 'सोमवंशीय मित्र' (शिवराज जानवा काँवले), विटाल विध्वंसन (छुआछूत नाशनी) पत्रिका (गोपाल बाबा बलंकर), कि. फा. बनसोडे के निराश्रित हिंद नागरिक, मंजूर पत्रिका, चोखामेला, बहिष्कृत भारत (अमरावती ग. आ. गवई पाक्षिक मराठी) सहित 1910-30 के बीच करीब 50 प्रमुख पत्र प्रकाशित हो चुके थे। ज्योतिबा फुले के प्रयासों से 1 जनवरी, 1877 को 'दीनबंधु' का प्रकाशन शुरू हुआ था। इन सबके बाद बाबासाहब के प्रयास का गहरा असर हुआ।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध आलेख मुख्य रूप से द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त सामग्री पर आधारित है। चूँकि अध्ययन बाबासाहब द्वारा प्रकाशित दो प्रमुख समाचार पत्रों, 'मूकनायक' और 'बहिष्कृत भारत', पर केंद्रित है, इसलिए अधिकतर सामग्री इन्हीं दो समाचार पत्रों में प्रकाशित संपादकीयों से प्राप्त की गई है। ये संपादकीय मूल रूप से मराठी में हैं। इनका डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन ने जो हिंदी अनुवाद किया है वही प्रस्तुत शोध आलेख का प्रमुख आधार है। यदि किसी तथ्य में अनुवाद के कारण कोई त्रुटि है तो वह प्रस्तुत शोध आलेख में भी परिलक्षित हो सकती है।

'मूकनायक' का उद्देश्य

'मूकनायक' के प्रकाशन का उद्देश्य बाबासाहब ने इसके प्रथम अंक के संपादकीय में ही स्पष्ट किया है : "हमारे बहिष्कृत लोगों पर हो रहे व भविष्य में होने वाले अन्याय का उपाय सोचकर उनकी भावी उन्नति व उसके मार्ग के सच्चे स्वरूप की चर्चा के लिए वर्तमान पत्रों जैसी अन्य भूमि नहीं, परंतु बंबई इलाके से निकलने वाले समाचार पत्रों को निहारने से ऐसा दिखाई देता है कि उनमें अधिसंख्य समाचार पत्र विशिष्ट जातियों के हित साधन करने वाले हैं। इतर जातियों के हितों की उनको परवाह नहीं है। इतना ही नहीं, कभी-कभी उनका आलाप इतर जातियों के लिए अहितकर होता है। ऐसे समाचार पत्रों को हम इतना ही इशारा करते हैं कि कोई भी एक जाति अवनत हुई तो उसकी अवनति का कुप्रभाव इतर जातियों पर पड़े बगैर नहीं रहेगा। समाज एक नौका है। जिस प्रकार अग्निबोट पर बैठकर यात्रा करने वाला यात्री सचेतन रूप से इतर यात्रियों को हानि पहुँचाने के लिए या उनको संकट में डालने के लिए, अथवा अपने विनाशक स्वभाव के कारण यदि दूसरों की कोठरी में छेद करता है तो जहाज पर यात्रा कर रहे सभी यात्रियों के साथ वह भी पानी में डूबने से बच नहीं सकता। इसी प्रकार एक जाति का नुकसान करने पर प्रत्यक्ष नहीं तो अप्रत्यक्ष रूप से उसकी जाति की भी हानि होती है। इसमें किंचित शंका नहीं। इसलिए स्वहित साधक 'पत्र' दूसरों का नुकसान करके अपना हित सिद्ध करने के मूर्खतापन के लक्षण न सीखें। यह बुद्धिवाद जिन्हें स्वीकार है ऐसे वर्तमान पत्र निकालने का सौभाग्य 'दीनमित्र', 'जागरूक', 'डेक्कन', 'रेयत', 'विजयी मराठा', 'ज्ञानप्रकाश', 'सुबोध पत्रिका' आदि पत्रों को प्राप्त है। इन पत्रों में बहिष्कृत समाज के प्रश्नों की चर्चा लगातार होती है, परंतु ब्राह्मणेतर विशाल संज्ञा के दायरे में आने वाली अनेक जातियों का जहाँ ख्याल होता है वहाँ बहिष्कृतों के प्रश्नों का सांगोपांग ऊहापोह होने के लिए पर्याप्त स्थान मिलना संभव नहीं है। यह बात भी उतनी ही स्पष्ट है। उनकी अतिविकट स्थिति से जुड़े प्रश्नों की विवेचना करने के लिए एक स्वतंत्र पत्र होना चाहिए। यह कोई भी स्वीकार करेगा। उक्त रिक्ति को भरने के लिए ही इस पत्र (मूकनायक) का जन्म हुआ है" (अंबेडकर, 1920)।

'मूकनायक' के प्रथम अंक के संपादकीय में बाबासाहब हिंदू समाज में व्याप्त ऊँच-नीच पर तीखी टिप्पणी करते हैं : "हिंदूधर्मियों में विद्यमान विषमता जितनी अनुपम है उतनी ही निंदास्पद भी है। कारण कि इस विषमता के अनुरूप होने वाले व्यवहार का स्वरूप हिंदू धर्म के शील के लिए शोभनीय नहीं है। हिंदू धर्म में समाविष्ट होने वाली जातियाँ ऊँच-नीच की भावना से प्रेरित हैं यह उजागर है। हिंदू समाज एक मीनार है और एक-एक जाति इस मीनार का एक-एक तल (मंजिल) है। ध्यान देने की बात यह है कि इस मीनार में सीढ़ियाँ नहीं हैं, एक तल से दूसरे तल में जाने का कोई मार्ग नहीं है। जो जिस तल में जन्म लेता है वह उस तल (जाति) में मरता है। नीचे के तल का मनुष्य कितना ही लायक हो उसका ऊपर के तल में प्रवेश संभव नहीं, परंतु ऊपर के तल का मनुष्य चाहे कितना भी नालायक हो उसे नीचे के तल में धकेल देने की हिम्मत किसी में नहीं" (बेचैन, 2016)।

जातिभेद के दुष्परिणाम

'बहिष्कृत भारत' के 21 दिसंबर, 1928 के अंक में 'हिंदुओं के धर्मशास्त्र' शीर्षक से लिखे संपादकीय में बाबासाहब अस्पृश्यता और जाति भेद के दुष्परिणामों से हिंदू समाज को सावधान करते हैं : "...जाति भेद की वजह से समाज खंडित स्थिति में हो गया है। जाति के अंदर ही

जन्म-मरण, जाति में ही खान-पान, जाति में शादी-विवाह और जो भी सामाजिक कार्य जाति से बाहर होते हैं, उन्हें निषिद्ध माना गया है। इनके धर्मशास्त्रों के अनुसार व्यक्ति जितना समाज के लोगों से अलग रहेगा, उसकी जाति उतनी ही शुद्ध रहेगी। ऐसी इनकी मान्यता है। यदि इन्हें कहीं जाना हो तो घर की गाड़ी का ही प्रयोग करेंगे। रेल प्रवास नहीं करेंगे, देश छोड़, विदेश नहीं जाएँगे। यानी जो समाज में चोर की तरह अलग-अलग रहेगा, वही जातिनिष्ठ समझा जाएगा। जो सामाजिक जीवन में भेदभाव न रखकर उसकी गतिविधियों में भाग लेता है, वह जातिभ्रष्ट समझा जाता है। सार्वजनिक जीवन में सामाजिक एकीकरण के लिए यह जातिभेद बहुत हानिकारक है। एक जाति को दूसरी जाति परकीय लगती है और लोग उसके साथ व्यवहार करते वक्त अपनी जाति का फायदा और परकीय जाति का नुकसान करते हैं। हिंदू जीवन इस पद्धति से भयंकर जातिमय बना है। जाति का नुकसान हो या फायदा हो, यह धारणा बहुत ही अन्याय कारक है। फिर भी उसका पालन होता है। एक जाति दूसरी जाति पर विश्वास नहीं करती। इसकी अपेक्षा कोई विदेशी शासक होता है तो उससे लोग संतुष्ट रहते हैं और वही शासक स्वदेशी हो तो उसे स्वीकार नहीं करते, क्योंकि वह किस जाति का है, यह बात खास हो जाती है। यदि वह परायी जाति का है तो अविश्वसनीय लगता है। दूसरी जाति का नेता कितना भी दक्ष हो, तो भी उसका अनुकरण नहीं करेंगे और अपनी जाति का पागल भी हो तो भी उसके पीछे-पीछे दौड़ेंगे। स्वराज्य के लिए दिलों में तड़प नहीं होने का कारण जातिभेद है। स्वराज्य आने से दूसरी जातियों के हाथों में भी सत्ता जाएगी तो अविश्वसनीय है। इसकी अपेक्षा सत्ता का विदेशियों के हाथ में जाना यह अच्छा मानते हैं। जातिभेद की वजह से ही जातिद्वेष को जगह मिलती है। इतना ही नहीं जातिद्वेष वंश-परंपरागत रूप से चलता रहता है" (अंबेडकर, 21 दिसंबर, 1928)।

रामानुजाचार्य और चैतन्य संप्रदाय के सार्थक प्रयास

'बहिष्कृत भारत' के 3 जून, 1927 के अंक में 'अस्पृश्यता निवारण बच्चों का खेल' शीर्षक से लिखे संपादकीय में बाबासाहब समाज में समता भाव को मजबूत करने में विशिष्ट अद्वैत पंथ के आदि प्रवर्तक रामानुजाचार्य के योगदान को अत्यंत सम्मान के साथ स्मरण करते हैं : "हिंदू धर्म के अंदर समता का अगर जोरदार कार्य करने का, उसे अमल में लाने का प्रयास किसी ने किया तो इसी आचार्य (रामानुजाचार्य जी) ने किया। स्वयं रामानुजाचार्य का गुरु ब्राह्मण नहीं था। उन्होंने कांचीपूर्ण नामक गैरब्राह्मण को गुरु बनाया। इतना ही नहीं, अपितु सनातन रीति-रिवाज पर चलने वाली उनकी अपनी पत्नी, जिसने कांचीपूर्ण के खाना खाने के बाद उस स्थान को शुद्ध करने का उपक्रम करके गुरु का अपमान किया, को घर से निकाल दिया और स्वयं सन्न्यासी बन गए। और सन्न्यास ग्रहण कर उपदेश देने लगे। बाद में कुंभकोन (स्थान) में उनकी विजय होने के बाद वे तिरूवल्ली गए। जहाँ उनका मुकाम था वहाँ एक चांडाल स्त्री से उनका संवाद हुआ। उस समय उनको ऐसा लगा कि उस स्त्री की मानसिक स्थिति बहुत उन्नत थी। तब उन्होंने सबके सामने कहा, "ऐ चांडाल महिला, मुझे क्षमा कर, तू मुझसे ज्यादा पवित्र है।" ऐसा कहकर तत्काल उन्होंने उसे अपने पंथ की दीक्षा दी और उसकी मूर्ति बनवाकर वहाँ के मंदिर में स्थापित की। उसकी मूर्ति आज भी वहाँ के मंदिर में दिखाई देती है। और भाव युक्त लोग भक्ति भाव से उसकी पूजा करते हैं। धनुर्दास अछूत था, परंतु रामानुजाचार्य ने उसको अपना शिष्य बनाया और उस पर आचार्य का इतना प्रेम था कि वे नदी पर स्नान को जाते वक्त अपने 'दशरथी' नामक शिष्य के कंधे पर हाथ रखकर जाते थे। परंतु स्नान करके वापस आते वक्त वे धनुर्दास के कंधे पर हाथ रखकर आते थे। ऐसा करने में उनका हेतु स्पष्ट है कि वे अस्पृश्यता को अस्वीकार करते थे। यादवगिरी पर नारायण का मंदिर जब रामानुजाचार्य ने बनवाया तो उसमें सभी अछूत लोगों का प्रवेश होना चाहिए, इसकी पूर्व योजना बनाकर रखी थी। मंदिर के निकट के तालाब में सभी अंत्यजों को स्नान करने की स्वीकृति थी और उन्हें मंदिर में देवदर्शन को जाने की स्वतंत्रता थी। ...रामानुजाचार्य से पाँचवें आचार्य रामानंद ने अस्पृश्यता निवारण के बहुत से कार्य किए। जिन 12 शिष्यों के हाथों से उन्होंने अपना व्यापक कार्यक्रम चलाया वे सब हीन मानी हुई जातियों से ही थे। रामानुज संप्रदाय ने जिस प्रकार से स्पृश्य-अस्पृश्य भेद नष्ट करने का प्रयत्न किया, उसी तरह 'चैतन्य संप्रदाय' ने भी इससे ज्यादा प्रमाण में किया, ऐसा कह सकते हैं। जिस प्रकार रामानुजाचार्य ने जगह-जगह मंदिर अंत्यजों के लिए खुले किए उसी प्रकार चैतन्य गुरु ने जगन्नाथ का मंदिर सभी लोगों के लिए खुला किया। अंत्यज आज भी अनेक वर्षों से जगन्नाथ के मंदिर में आजादी से जाते हैं। किसी भी व्यक्ति को वहाँ से दूर नहीं किया जाता।" अस्पृश्यता निवारण की दृष्टि से बाबासाहब ने महात्मा बुद्ध के प्रयासों को भी रेखांकित किया है।

गैरों का आलिंगन, अपनों पर सितम

उत्तर प्रदेश के मेरठ शहर में 20 जनवरी, 1920 को जेल से छूटकर आए अली बंधुओं का मुस्लिम वर्ग की ओर से स्वागत किया गया। उस कार्यक्रम में बड़ी संख्या में हिंदू भी थे। स्वागत के बाद सभी ने एक साथ सहभोजन भी किया। इस संबंध में तत्कालीन 'क्रॉनिकल' समाचार पत्र में प्रकाशित एक खबर में बताया गया कि मेरठ निवासी बुद्धि प्रकाश के घर में हिंदुओं और मुसलमानों ने थाली से थाली भिड़ाकर भोजन किया। इस घटना पर टिप्पणी करते हुए बाबासाहब ने 'मूकनायक' के दूसरे अंक में 14 फरवरी, 1920 को एक अत्यंत मार्मिक अग्रलेख लिखा : "ब्राह्मण के साथ भोजन किसी भी जाति के हिंदू बड़ी आतुरता के साथ करेंगे यह विशेष बात है। मुसलमान ब्राह्मणों की पंक्ति में बैठे इससे बुरा लगने वाला धार्मिक पागलपन हममें नहीं है। परंतु यह देखकर पेट दुखने तक की इनसानियत मात्र हम में है और इसलिए घर के अंदर के लोगों को छोड़कर बाहर के लोगों का आलिंगन करने से हमें आश्चर्य होता है" (अंबेडकर, 14 फरवरी, 1920)।

'मूकनायक' के 15वें अंक में 28 अगस्त, 1920 को बाबासाहब 'दास्यावलोकन' शीर्षक से लिखे संपादकीय में तत्कालीन हिंदू समाज की विकृति पर प्रहार करते हुए लिखते हैं : "मुसलमान जब कोई भी सामान बेचने को जाता तो वह महार के सिर पर रखकर ले जाता है। तब खरीददार को कोई आपत्ति नहीं होती और खुद महार बेचे तो उसे कोई नहीं खरीदता। महार के खेत में या घर के दरवाजे पर से किसी प्रकार की साग-भाजी या फल इत्यादि किसी भी पवित्र हिंदू यानी जमींदार कुलकर्णी, पुलिस, सिपाही, पटवारी, डाकिया वगैरह लोगों को महार या उसकी स्त्री व बच्चों के तोड़कर देने पर छाया स्पर्श नहीं होती? ये वस्तुएँ लेने में कोई क्यों दोष नहीं होता? उसके सिर पर 'आम', 'कटहल', 'केला', रखकर तो जाएँगे, परंतु वह यदि बाजार में बेचने बैठ जाता है उसका यह कृत्य अपराध जैसा

मानकर कोई नहीं खरीदता। कोई मुसलमान व दूसरा वही वस्तु सस्ती खरीदकर खुद बेचता है तो उसमें कोई दोष नहीं होता। इतना ही नहीं, बहिष्कृतों के घर के दूध पर की मलाई घी के रूप में मुसलमान व्यापारियों के माध्यम से उनके पास जाती है तब भी पवित्र भगवान को स्नान कराकर ही चम्मची से उसके ऊपर डालते हैं, परंतु प्रत्यक्ष ग्रहण करने से उनकी तोंद फट जाएगी, ऐसा उन्हें डर लगा रहता है। इस प्रकार देखा जाए तो बहिष्कृत वर्ग के घर का उत्तम माल घूम-फिरकर उसी (पुरोहित) के पेट में चला गया तब उसे कोई आपत्ति नहीं। परंतु प्रत्यक्ष रूप से उनके व्यापार में या व्यवहार में उनको प्रोत्साहन या मदद देकर, उनकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति सुधारकर हिंदू धर्म और हिंदू समाज को इस हिंदी राष्ट्र को जो छुआछूत का कीड़ा लग गया है उसको निकालने की किसी में हिम्मत नहीं होती। जब तक यह कीड़ा नहीं निकलेगा तब तक राष्ट्र की सामाजिक व राजकीय प्रगति व्यर्थ होगी और हम दुनिया के प्रमुख राष्ट्रों से कटे रहकर एक कोने में पड़े रहेंगे। इसके लिए जिम्मेदार सुशिक्षित वर्ग ही होगा" (अंबेडकर, 28 अगस्त, 1920)।

'मूकनायक' के छठे अंक में दिनांक 10 अप्रैल, 1920 को बाबासाहब 'राष्ट्र का पक्ष' शीर्षक से लिखे संपादकीय में हिंदुओं के जबरन मतांतरण पर भी टिप्पणी करते हैं : "अनेक परिचक्र इस देश के ऊपर से गुजरे हैं। मुसलमानों ने बहुत समय तक इस देश पर अपनी सत्ता कायम रखी। 'होता है मुसलमान कि गर्दन काटू' इस एक द्वादशी अक्षरी के फरमान ने हिंदू धर्म के निशान चोटियों (शिखा) का फंदा ही काट दिया। पुर्तगाली लोगों ने यहाँ पर अपना ठिकाना बैठाया था और अनेक लोगों को ईसाई बनाया। यहाँ डच भी आए, फ्रेंच लोगों ने भी कुछ वसाहत की, परंतु मराठों ने कुछ उछलकूद की। बाकी जगह पर उदासीनता थी। प्रजा में राष्ट्रीय चेतना बिल्कुल नहीं थी और लोगों में वह भावना थी कि 'शत्रु आने दो हमारा क्या जाता है?' ऐसी भावना से ग्रस्त हो गई प्रजा इंग्लिश लोगों के शासन के संबंध में इतनी उदासीनता नहीं दिखा रही, यह आश्चर्य की बात नहीं है क्या?" (अंबेडकर, 10 अप्रैल, 1920)।

वर्ष 1927 में कुछ लोगों ने मुंबई के माटुंगा में एक नए मंदिर के निर्माण का अभियान शुरू किया, जिसमें दावा किया गया कि उसमें सभी के प्रवेश की अनुमति होगी। इस घटना पर टिप्पणी करते हुए बाबासाहब ने 'बहिष्कृत भारत' के 3 जून, 1927 के अंक में 'अस्पृश्यता निवारण बच्चों का खेल' शीर्षक से संपादकीय लिखा। वे लिखते हैं : "...अस्पृश्यता निवारण के नए उपाय के नाम पर अगर मंदिर अस्तित्व में आने वाला है तो उससे सच्चा अस्पृश्यता निवारण न होकर बच्चों का खेल होगा। ऐसा हम स्पष्ट कहते हैं। जिसके मन में यह कल्पना पैदा हुई उसको अछूत लोग हिंदू मंदिर में जाने का आग्रह क्यों रखते हैं? यह बात पूरी तरह ध्यान में नहीं आई होगी। अथवा नए धर्म के नए मंदिर बनाने से अस्पृश्यता का प्रश्न हल हो जाएगा, उन्हें ऐसा लगा होगा अस्पृश्य लोग जो मंदिर में जाने का प्रयत्न कर रहे हैं वे देवदर्शन के बगैर तड़प रहे हैं। ऐसी कोई बात नहीं है। सच्चे तत्त्व का शोध करने के लिए चिकित्सक की सुई लेकर भिक्षुक शाही द्वारा रची गई पौराणिक कथाओं के पर्वतों के टुकड़े-टुकड़े करने वाले बुद्धिप्रधान लोग अछूत हैं वे पत्थर के भगवान का आलिंगन देने के लिए सारे अस्पृश्य वर्ग को अपना सर्वस्व निछावर करने के लिए कहेंगे। ऐसा मानना अज्ञानीपन का लक्षण है। अछूत लोगों को मंदिर जाना वह केवल उन्हें स्पृश्य के समान अपने मानवीय अधिकार साबित करने जाना है। अगर किसी को इस बार प्रयत्न करना हो तो उन्हें इस दिशा में प्रयत्न करना चाहिए। अलग मंदिर बनाने का भार नहीं लेना चाहिए। इसमें अछूतों की तृप्ति तो होगी ही नहीं और न अस्पृश्यता ही जाएगी। अलग व्यवस्था करने से अगर अस्पृश्य स्पृश्य हो जाते तो महारवाड़ा, चमारवाड़ा, माँगवाड़ा, ढौरवाड़ा अनादिकाल से अलग ही हैं, इनका क्या परिणाम हुआ? इसका जीवित उदाहरण आँखों के सामने रखने पर अस्पृश्यता निवारण का कार्य क्या शुद्ध बचपना या बच्चों का खेल नहीं है? बचकाने लोगों ने ही अस्पृश्यता निवारण जैसा बच्चों का खेल चलाया है। उसमें अलग मंदिर, अलग कुएँ, ये अस्पृश्यता निवारण के उपाय हैं, ऐसा कहा जा रहा है। बेचारे अछूत का नसीब है कि उसके लिए अलग रास्ते, अलग ट्राम (रेल) गाड़ियाँ, आगबोट, कारें, कोर्ट और कचहरियाँ इनका सुझाव देने में नहीं आता" (अंबेडकर, 3 जून, 1927)।

बाबासाहब जो बोलते अथवा लिखते थे उसकी आलोचना करने वाले लोगों की संख्या भी बहुत बड़ी थी। 'हमारे आलोचक' शीर्षक से 'बहिष्कृत भारत' के 29 जुलाई, 1927 के अंक का पूरा संपादकीय उन्होंने अपने आलोचकों को जवाब देने के लिए ही लिखा। वे लिखते हैं, "बहिष्कृत भारत की नीति के बारे में अलग-अलग लोग, अलग-अलग टीका कर रहे हैं। सभी को अलग-अलग उत्तर देकर समाधान करना हमारे लिए संभव नहीं। जो प्रामाणिक टीकाकार हैं, उनको भी यदि गलतफहमी हुई है तो हम खुलासा करेंगे। हम (दलित) लोगों में कुछ कुल्हाड़ी के डंडे हैं। विशेषकर वही हमारे बारे में गलतफहमी फैलाते रहे हैं। 'बहिष्कृत वर्ग' के कई लोगों ने अपनी बुद्धि छूआछूत निवारण करने का ऊपरी ढोंग करनेवालों के पास गिरवी रख दी है। ये केवल नाम के लिए नेतागीरी करनेवाले लोग हैं। हमारी हिम्मत, नीति और वैयक्तिक उभार के कारण अपनी निहित महत्त्वाकांक्षाओं की वजह से उनका काम छुआछूत खत्म हो या न हो, डॉ. अंबेडकर के प्रभाव को नीचे गिराना है। 'बहिष्कृत भारत' में प्रकाशित मेरा विचार उचित है या नहीं, ये हमेशा अपनी नापसंदगी जताकर 'बहिष्कृत वर्ग' में गलतफहमी फैलाते रहे हैं। दलित आंदोलन चलेगा या नहीं, इसकी भी उन्हें चिंता नहीं है। यह हमारे मार्ग में रोड़े अटका रहे हैं। तो कायदे से इनका बंदोबस्त करना ही पड़ेगा। 'पूना' की एक सभा में हमने अपने टीकाकारों को जवाब भी दिया है। इसलिए अपने ही स्वजनों के बारे में अब हम इससे ज्यादा नहीं लिखेंगे।

"उच्चवर्गी कहलानेवाले टीकाकारों को भी हमारे ऊपर रोष है, क्योंकि हमने कहा था कि छूआछूत का जल्दी से जल्दी निवारण नहीं हुआ, तो हम धर्मांतर का मार्ग अपनाएँगे। अगर यह प्रश्न हमारे खुद के लिए या खुद की पीढ़ी के लिए होता तो हम बहुत पहले धर्मांतरण कर लेते। परंतु जितना संभव हो हिंदू धर्म में ही रहना और अपने बहिष्कृत बंधुओं को भी इसी धर्म में रखना और अस्पृश्यता निवारण के संबंध में व्यक्तिगत दृष्टि के बजाय अखिल भारतीय बहिष्कृत वर्ग की दृष्टि से विचार करना है। किसी भी एक व्यक्ति या एक वर्ग की सहनशीलता की कोई सीमा होती है। उच्चवर्णीय कहलानेवाले लोग न्याय, धर्म, पाप-पुण्य इसका विचार न करके 'बहिष्कृत वर्ग' पर छुआछूत का सिक्का जमाए रखने की जिद करेंगे और अपनी बहुसंख्या और आर्थिक संपन्नता के घमंड में 'बहिष्कृत वर्ग' के हित की बात पर विचार नहीं करेंगे। तब 'बहिष्कृत वर्ग' को धर्मांतर के प्रश्न के बाबत सोचना पड़ेगा। यदि हमें परधर्म में जाकर ही अधिकार हासिल होंगे तो हम उसे अवश्य स्वीकार करेंगे। और इसमें हम

कोई गलती नहीं करेंगे। यह न करके क्या हम तुम्हारे धर्म में रहकर तुम्हारी लातें खाते रहेंगे? तुम्हारा और हमारा एक ही धर्म होने के साथ-साथ हमारे तुम्हारे धार्मिक अधिकार भी एक होने चाहिए। परंतु तुम्हारी ओर से करोड़ों निर्दोष लोगों के साथ गुनहगारों जैसा सलूक किया जाता है। हिंदुओं द्वारा जैसी सुविधाएँ जानवरों को मिलती हैं, दलितों को वैसी भी सुविधाएँ नहीं मिलतीं। हम इसे धर्म नहीं कह सकते" (अंबेडकर, 29 जुलाई, 1927)।

शिक्षित लोगों का आह्वान

'मूकनायक' के 19वे अंक में 23 अक्टूबर, 1920 को बाबासाहब समाज के उन लोगों का आह्वान करते हैं जो शिक्षा प्राप्त कर आगे बढ़ गए हैं कि वे राष्ट्रहित में पिछड़े और बहिष्कृत समाज की उन्नति में भी योगदान दें। 'हिंदी राष्ट्र की प्राण प्रतिष्ठा' शीर्षक से लिखे उस संपादकीय में वे लिखते हैं, "जो लोग आगे बढ़े हैं वह पिछड़े और बहिष्कृत की उन्नति के प्रति उदासीन रहेंगे तो परतंत्रता की शृंखला और सख्त होगी। इसलिए दासता की वह सामाजिक और धार्मिक शृंखला पहले तोड़ दो। जब सब लोग एक होकर राष्ट्रीय हित के लिए कार्य करेंगे तभी भारतभूमि का उद्धार जल्दी होगा। नहीं तो यह छह करोड़ समाज के साथ रस्साकसी का खेल ऐसे ही चलता रहेगा। यह ध्यान में रखो।" उसी संपादकीय में बाबासाहब बहिष्कृत समाज के भारतीय तरुणों का आह्वान करते हैं : "तरुण बहिष्कृत भारतीयों, तुम कब जाग्रत होंगे और सामाजिक धार्मिक बंधनों की यातनाएँ और कब तक सहन करोगे? तुम भी मनुष्य हो न? तुम्हारे में शौर्य है। तुम्हारे पूर्वजों ने 'आरकाट' और 'गोरेगाँव' के जय स्तंभों के नीचे अपने स्वामी की सेवा के लिए अपने सिर कटा दिए। ब्रिटिश साम्राज्य के संरक्षण के लिए इजिप्तु पॅलेस्टाईन, सापोटोमिया वगैरह रणभूमि पर तुमने अपना खून बहाया। तुम्हारे इस स्वार्थ त्याग के लिए दयालु ब्रिटिश सरकार ने बख्शीश में क्या दिया? और वह तुम्हारे हाथ में कितना आया, इसकी ओर देखो। तुम्हारे श्रम का हिस्सा किसने हड़प लिया है? यह सरकार के कानों में डालो और अपना हक लो, अन्यथा तुम ऐसे ही हमेशा दबाए जाओगे। यह नासिक और पंदरपुर की सभा में जो कुछ हुआ उसे देखोगे तो तुम्हारे ध्यान में आएगा। किसी से डरो मत अपने हक के लिए लड़ो। जैसे रोग, आपत्ति में हमें अड़चनें सहन करनी पड़ती हैं वैसे ही अपने समाज की उन्नति के मार्ग में दुख तो है ही, परंतु डरकर हिम्मत खो देना पुरुषार्थ नहीं है। इसलिए जवानों अपने कुल और कुटुंब का अभिमान पकड़कर जिस समाज में हम छोटे से बड़े हुए, उसके हित के लिए और जिस देश में जन्म लिया और बढ़े, मातृभूमि के उद्धारार्थ और उसके ऋण से मुक्त होने के लिए अपनी काया खर्च करो और अपनी कीर्ति अमर करो। 'नर' करनी करेगा तो नारायण बन जाएगा, यह ध्यान में रखकर तुम वरिष्ठ बंधुओं को शर्म से नीचे झुकाओ" (अंबेडकर, 23 अक्टूबर, 1920)।

बहिष्कृत समाज के तरुणों का आह्वान

'मूकनायक' के 17वें अंक में दिनांक 25 सितंबर, 1920 को 'हमारा संदेश' शीर्षक से लिखे संपादकीय में बाबासाहब बहिष्कृत समाज के तरुणों का आह्वान इन शब्दों में करते हैं, "आधुनिक लोकशाही के युग में भी अगर यह समाज समय पर जाग्रत न होकर अपना उचित मार्ग नहीं ढूँढ़ेगा तो कितने शतकों तक दूसरों के पाँव तले रौंदा जाएगा, यह विधाता ही जाने। ऐसी भयंकर परिस्थिति से बचाव करने के लिए हमारा संदेश सभी बहिष्कृत तरुणों को चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा है। ऐ! बहिष्कृत नौजवान, तू इस अज्ञान रूपी निद्रा को छोड़कर प्रथम मैं कौन हूँ? मेरा असली रूप क्या है? मेरे आसपास की नैसर्गिक परिस्थिति से मेरा क्या संबंध है? इस सृष्टि के कर्ता ने मुझे किसलिए उत्पन्न किया है? उसका क्या मानस (मंशा) था? क्या हेतु था? फिलहाल अभी मेरी क्या स्थिति है और आगे भी मेरा क्या होने वाला है? इसको अविलंब विचार करके तुरंत ही अपने ऊपर का अन्याय दूर करके अपना जो दिन-रात अपमान हो रहा है, उसका मुकाबला करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसलिए हमारा संदेश है कि जागो, और उठकर तैयार हो जाओ और अपनी परिस्थिति का पूर्ण निरीक्षण करके अपना उचित रास्ता चुनो। अगर तुम मन पर लाओगे तो नौजवानों अपनी अवनति की बाढ़ में से स्वयं पार हो जाओगे और जो डूब रहे हैं उनको तुम सहारा दो। मगरमच्छों के मुँह से निकलने के अपने मार्ग को सँभालो अन्यथा तो तुम्हारा भी बुरा हाल होगा।

"जो हो गया वह गया, जो होगा वह जाएगा तो आज तुम जिंदा हो तो एक क्षण भी न गँवाकर आगे आओ और अपने जाति बंधुओं को हाथ दो और अपना दुनिया में नाम करके दिखाओ। जिस तरह अंधेरे में से उजाला, अशुभ में से शुभ और निराशा में से दैवीय आशा फूटती है वैसे ही अपने इस अज्ञानी समाज में से सुज्ञान, अशक्तता में से सशक्त बनकर प्रकाशमान 'दीपक' बनकर अपने बंधुओं के सच्चे आनंद का उपभोग करने के लिए अपमान और दुख के भार के नीचे से एक अंश भी दूर करने का प्रयत्न करो। वह तुम्हारी शक्ति और हिम्मत को आजमाकर देखना चाहता है। करनी करेगा तो नर से नारायण बन जाएगा। यह उनके प्रिय भक्त के वचन सच करके दिखाओ।

"मैं अशक्त हूँ, मैं अज्ञानी हूँ, कम पढ़ा-लिखा हूँ, मेरे हाथ से क्या होने वाला है, मैं किसलिए इस झंझट में पड़ूँ, ऐसा सोचकर निराश मत होना। आज तुम्हें जो अवगत है वह तुम अपने अड़ोसी-पड़ोसी को बताओ, जो सत्य तुम्हें दीखता है उसे अपनी भावी पीढ़ी को दिखाओ, पूर्वजों की जिन पागलपंथी, धार्मिक और सामाजिक रूढ़ियों की वजह से तुम लोग पतन के स्तर पर जा पहुँचे, इससे तुम लोग उठकर ऊपर आओ। अगर वह तुमसे नहीं जगा तो कम-से-कम अपनी भावी पीढ़ी को इस अज्ञान और संकुचित विचारों से और व्यवहार में चल रहे अनिष्ट जाति बंधन से छुड़ाओ। अगर इतना समझने के बाद भी आँख कान बंद करके रहोगे तो भावी पीढ़ी का तुमने ही खून किया, ऐसा समझकर वे तुम्हें ही दोष देते रहेंगे। इसलिए आज तुम पर जो जिम्मेदारी आई है, उसका उचित फैसला करके जो अवसर तुम्हें मिला है, उसका उचित फायदा खुद लो और पीछे आने वाली पीढ़ी के लिए संग्रह करके रखो।

"हमारा अनुकरण करने के लिए अपने पूर्वजों की कीर्ति रूपी पूँजी अपने पास नहीं, इसलिए मनस्वी और कार्यार्थी पुरुष हताश होकर शांत नहीं बैठते हैं। वह आने वाली परिस्थिति के साथ लगातार संघर्ष का अपना मार्ग निकाल कर खुद का और अपने अनुयाइयों का उद्धार करते हैं। इसलिए अपने पीछे आने वालों के लिए अनुकरणीय चरित्र बनाकर उनको स्फूर्तिदायक बनकर दिखाओ। दूसरे का चरित्र देखकर यह मत सोचो कि उसमें ममत्व और अपनापन नहीं होता। इसलिए अपने वंशज को अपना चरित्र आदरणीय और अनुकरणीय हो, ऐसा बनाओ। उसी के लिए परमेश्वर ने हमको इस दुनिया में उत्पन्न करके छोटा-बड़ा किया। यह ध्यान में रखो और उसका उपकार चुकाने तक अपने ऊपर से अनिष्ट जाति बंधन का

भार उतारकर अपने लिए उसको जो आत्मीयता संभव होती है उसका आशीर्वाद लो। दूसरा कोई हमारे उद्धार के लिए दौड़कर आएगा, ऐसी आशा मत रखो। यदाकदा कोई महात्मा प्रकट हो भी गया तो वह क्या करेगा? वह हमें अशक्त देखकर थोड़ी देर के लिए हमें कंधे पर उठाकर रखेगा, हाथ पकड़कर उचित रास्ते पर चलाएगा। अगर हम उसी की मदद पर अवलंबित रहेंगे तो हम अपना ही नुकसान करेंगे, क्योंकि वह हमें कब तक मदद करेगा? कब तक उठाकर रखेगा। अगर हमने उसके दिये हुए अवसर का फायदा नहीं उठाया तो हम उसके लिए खुद ही जिम्मेदार होंगे। आने वाली पीढ़ियों को हानि पहुँचाने का उत्तरदायित्व भी हमारे सिर पर ही आएगा। हमारे ऊपर पीढ़-दर-पीढ़ी और जन्मजात अन्याय और अपमान के परिचक्र से छूटने का प्रयत्न एकदिली से, एकजुटता से करने में आगे-पीछे नहीं देखना है। इसी में हमारा भला है। प्रत्येक बहिष्कृत बंधु को इस विचार को अपने जन्म की सार्थकता अपने दीनहीन जाति बंधु को उन्नत मार्ग पर लाकर सिद्ध करनी चाहिए। और अपना चरित्र ऐसा रखो जो अपने समाज का मार्गदर्शन करके ऊँच-नीच की भावना राष्ट्र को कितनी घातक है यह वरिष्ठ कहने वाले लोगों को हमारे ऊपर आज तक किए गए अन्याय के लिए उनको स्वयं पश्चाताप हो, ऐसा कार्य करना चाहिए। अपनी ही मातृभूमि के लोगों की अवहेलना और अपमान उन्होंने किया है, इसके लिए उनको बुरा महसूस हो। अपनी मातृभूमि के लिए उदात्त जीवन लगाने के लिए उनको मजबूर करना चाहिए। यह प्रत्येक बहिष्कृत बंधु, भगिनी को ध्यान में रखकर चलना चाहिए'' (अंबेडकर, 25 सितंबर, 1920)।

पूर्वजों के गौरव का स्मरण

1927 में बाबासाहब ने 'बहिष्कृत भारत' नाम से दूसरा अखबार प्रकाशित किया। उसके 20 मई, 1927 के अंक में कथित अछूत जातियों के गौरवशाली अतीत से परिचित कराते हुए वे लिखते हैं, ''अपने अस्पृश्य बंधुओं से हमारा कहना है कि जो डरता है ब्रह्मराक्षस उसी के पीछे लगता है। सर्वशक्तिमान भगवान को बलि देने के लिए शेर जैसे हिंसक पशुओं का कोई उपयोग नहीं करता। उसके विपरीत बेचारे मुर्गों-बकरों की बलि दी जाती है। पर तुम तो शेर हो। आज हम अछूत लोग मुर्गी-बकरियों की तरह बलि देने के लिए मेष राशि जैसे हैं, ऐसा हमें बिल्कुल नहीं लगता। हमारे पूर्वजों की सिंह राशि थी। इसका इतिहास साक्षी है। वैसा अगर नहीं होता तो नागेवाड़ी के रायनाक महार में इतना तेज कहाँ से आया होता? जो उसके तेज की वजह से राजाराम (शिवाजी का सौतेला छोटा भाई) के कथनानुसार अपने मुखिया के लिए कठिन दिव्य कार्य बिना किसी सैन्य सहायता के मुगलों के अधीन वैरागढ़ को उनसे जीतकर वापस मराठों के राज्य में मिला दिया। घर के अंदर खाने की पंगत की तरह युद्ध में शूरवीरों की पंगत में भी जाति-भेद पाला जाना चाहिए, ऐसा आग्रह करनेवाले ब्राह्मण्यग्रस्त सरदारों से सैनिकों के गोट (जलपोत उतरने का स्थान) अलग रहना चाहिए। ऐसी माँग शिकायत के रूप में की थी। परंतु जिसने हीरोजी पार्टनकर जैसे सरदार की ओर से 'जिसकी तलवार खमदार है वह मजबूत है', ऐसा सरदार के मुँह से सुनकर अपना सैनिक अड्डा सबके बीच में रखने का सम्मान अखंडित रखा और आखिर में 'खरडे' की लड़ाई में जिसने पठानों के हाथ से 'परशुराम भाऊ' के प्राण बचाने के लिए अनुपम शौर्य दिखाया, 'महार है' कहकर तिरस्कार करने वाले ने उस सरदार को नीचा दिखाया वह 'शिदनाक महार' सिंह राशि का नहीं था, ऐसा कौन कह सकता है? बावन घाटी के मुँह के पास मुट्ठीभर आदिवासी जाति (मावड़ों) की सहायता से प्रचंड इस्लामी सेना का धुआँ उड़ाने वाले बाजी प्रभुदेश पांडे की तरह रायनाक महार ने रायगढ़ पर मोर्चाबंदी करके पंद्रह दिन तक अँग्रेज बहादुरों के साथ जुझारू मुकाबला करके किले की रक्षा करते-करते अपने प्राण निछावर किए। वह 'रायनाक' बाजी क्या मेष राशि का था? उन वीरों की राशि सिंह राशि के सिवाय कोई दूसरी हो ही नहीं सकती थी। जिनके पूर्वजों ने छूआछूत के कठोर कवच को तोड़कर अपने तेज और पराक्रम से दूभर कार्य भी आसान करके दिखाए। उन वीरों के वंशजों को साधारण प्रतिकार योग्य या दूभर कुछ रहा होगा? ऐसा हमें नहीं लगता। उनमें तेज है। उनमें अगर कुछ नहीं है तो यह कि उन्हें स्वयं की जानकारी नहीं है। संप्रति अछूतों में से जिन्हें हम कौन हैं, हमारा सच्चा आत्मस्वरूप कौन-सा है, इसकी पहचान नहीं है वह उन्हें शीघ्र ही होगी। अपने कुल पर लगा हुआ कायरता का धब्बा धोकर निकालने के लिए अभी हाल में जो धर्म संग्राम में खड़े रहने के लिए तैयार रहे, उनसे दूसरे जाति बंधुओं के लिए भी स्वकुलोद्धार और मानवधर्मोद्धार का पाठ पढ़ना चाहिए'' (अंबेडकर, 20 मई 1927)। बाबासाहब का यह वाक्य कि 'हमारे पूर्वजों की सिंह राशि थी' अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह वास्तविकता है कि भारत में छुआछूत की परंपरा मुगल काल की देन है। जिन्हें हम आज कथित अस्पृश्य मानते हैं वे वास्तव वे योद्धा हैं, जिनके पूर्वजों ने अस्पृश्यता का अपमान झेलना स्वीकार किया, परंतु अपनी शिखा नहीं कटने दी। इस बिंदु पर अलग से विस्तृत शोध की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

तथ्यों से स्पष्ट है कि बाबासाहब डॉ. भीमराव अंबेडकर ने पत्रकारिता के माध्यम से हिंदू समाज में मौजूद अस्पृश्यता की कुप्रथा को दूर करने और सदियों से अन्याय और अपमान का जीवन जी रहे समाज को उसका प्राचीन गौरव स्मरण कराकर अपना उद्धार स्वयं करने हेतु प्रेरित किया। बाबासाहब की पत्रकारिता पर टिप्पणी करते हुए वरिष्ठ पत्रकार राजकिशोर लिखते हैं, ''डॉ. अंबेडकर ने जिस दौर में 'मूकनायक' और 'बहिष्कृत भारत' का संपादन किया था, वह दलितों के लिए कठिनतर दौर था। फिर भी ध्यान देने की बात है कि डॉ. अंबेडकर तनिक भी विचलित नहीं हुए और दलित जीवन से जुड़े हुए प्रश्नों को बहुत ही निर्भीकता और व्यापकता के साथ रखा। तथ्यों और तर्कों का सतर्क इस्तेमाल करना कोई उनसे सीखे। सबसे बड़ी बात यह है कि उनके भीतर किसी प्रकार का पूर्वग्रह नहीं था। ब्राह्मणवादी व्यवस्था को लगातार चुनौती देते हुए भी वे अपना स्वर संयत बनाए रखते थे। तत्कालीन समाज की कोई भी घटना, कोई भी अध्ययन, कोई भी चर्चा उनकी आँखों से ओझल नहीं हो पाती थी। डॉ. अंबेडकर सिर्फ प्रतिक्रियावादी वर्गों से संघर्ष नहीं करते थे, बल्कि अपनी जमात के लोगों का ईमानदार मार्गदर्शन भी करते थे तथा उनकी कमियों पर परदा नहीं डालते थे। वह एकतरफा पत्रकारिता नहीं, बल्कि पूर्ण पत्रकारिता थी। इसका कारण था अपने उद्देश्यों के प्रति गहन निष्ठा और अपने समाज से सच्चा लगाव श्रेष्ठ पत्रकारिता का जन्म इसी प्रक्रिया में होता है'' (राजकिशोर, 2008)। बाबा साहब ने बार-बार स्पष्ट किया है कि अस्पृश्यता निवारण महज छूआछूत का प्रश्न नहीं है, यह सामाजिक न्याय का प्रश्न है। वे कहते हैं, ''हिंदुत्व पर जितनी स्पृश्यों की सत्ता है, उतनी ही अछूतों की भी है। हिंदुत्व की जितनी प्रामाणिक प्रतिष्ठा वशिष्ठ जैसे

ब्राह्मण, कृष्ण जैसे क्षत्रिय, हर्ष जैसे वैश्य और तुकाराम जैसे शूद्र ने की है, उतनी ही वाल्मीकि, चोखामेला और रोहिताश ने भी की है। हिंदुत्व का रक्षण करने के लिए हजारों अछूतों ने अपने प्राण न्यौछावर किए हैं। व्याध गीता के अनुसार 'खरडे' की लड़ाई में सारे अछूतों ने हिंदुत्व रक्षण के लिए अपनी बेशुमार गर्दनें कटाई। इसलिए अन्य हिंदुओं की भाँति अछूतों को भी उतना ही हक है जितना सछूतों को। जो रास्ता सबके लिए है उस पर पहले से यदि दलित नहीं चले तो अब क्यों नहीं चलेंगे? हिंदू धर्म को रास्ता दिखाने वाले हम अछूत ही देवदूत हैं। अगर ऐसा हम मानें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं, क्योंकि मानव धर्म का पालन करना ही हमेशा से हमारा कर्तव्य रहा है" (अंबेडकर, 25 नवम्बर, 1927)।

भारत एक प्राचीन राष्ट्र है और इसकी चिंतन परंपरा भी अति प्राचीन है। इस देश की अनुभूत मान्यता है कि चराचर सृष्टि का निर्माण एक ही तत्त्व से हुआ है और प्राणिमात्र में उसी तत्त्व का वास है। सभी मनुष्य समान हैं, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य में वही ईश्वरीय तत्त्व समान रूप से व्याप्त है। इस सत्य को ऋषियों, मुनियों, गुरुओं, संतगणों तथा समाज सुधारकों ने अपने अनुभव एवं आचरण के आधार पर पुष्ट किया है। जब-जब इस श्रेष्ठ चिंतन के आधार पर हमारी सामाजिक व्यवस्थाएँ तथा दैनंदिन आचरण बना रहा तब-तब भारत एकात्म, समृद्ध और अजेय राष्ट्र रहा। जब इस श्रेष्ठ जीवन दर्शन का हमारे व्यवहार में क्षरण हुआ, तब समाज का पतन हुआ, जाति के आधार पर ऊँच-नीच की भावना बढ़ी तथा अस्पृश्यता जैसी अमानवीय कुप्रथा का निर्माण हुआ। अस्पृश्यता निवारण के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने दैनंदिन जीवन में व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा सामाजिक स्तर पर अपने इस सनातन और शाश्वत जीवन दर्शन के अनुरूप समरसतापूर्ण आचरण करे। ऐसे आचरण से ही समाज से जाति भेद, अस्पृश्यता तथा परस्पर अविश्वास का वातावरण समाप्त होगा एवं तभी हम सब शोषणमुक्त, एकात्म और समरस जीवन का अनुभव कर सकेंगे। राष्ट्र की शक्ति समाज में और समाज की शक्ति एकात्मता, समरसता का भाव व आचरण और बंधुत्व में ही निहित है। इसका निर्माण करने का सामर्थ्य अपने सनातन दर्शन में है। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' (सभी प्राणियों को अपने समान मानना) 'अद्वेष्टा सर्वभूतानां' (सभी प्राणियों के साथ द्वेषरहित रहना) तथा 'एक नूर ते सब जग उपज्या, कौण भले, कौ मंदे' (एक तेज से पूरे जग का निर्माण हुआ तो कौन बड़ा और कौन छोटा) के अनुसार सबके साथ आत्मीयता, सम्मान एवं समता का व्यवहार होना चाहिए। समाज जीवन से भेदभावपूर्ण व्यवहार तथा अस्पृश्यता जैसी कुप्रथा जड़ मूल से समाप्त होनी चाहिए। समाज जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए समाज की सभी धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं को इसी दिशा में कार्यरत होना चाहिए, यह महती आवश्यकता है। बाबासाहब ने अपनी पत्रकारिता के माध्यम से बहिष्कृत समाज में स्वगौरव का भाव जगाया और साथ ही बृहद् हिंदू समाज को आईना दिखाया। उन्होंने समतायुक्त और जातिविहीन समाज का जो सपना देखा, वह अब बहुत हद तक साकार हुआ है। स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद आज शहरों में ही नहीं, ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्थितियाँ बहुत हद तक सुधरी हैं। कुछ स्थानों पर अपवाद अवश्य दिखाई देते हैं, जिन्हें दुरुस्त करना संपूर्ण हिंदू समाज की जिम्मेदारी है।

संदर्भ

अंबेडकर, बी.आर. (1920). मनोगत, संपादकीय, मूकनायक, अंक 1, 31 जनवरी, 1920.

अंबेडकर, बी.आर. (1920). स्वराज की तुलना सुराज से नहीं, संपादकीय, मूकनायक, अंक 2, 14 फरवरी, 1920.

अंबेडकर, बी.आर. (1920). दास्यावलोकन, संपादकीय, मूकनायक, अंक 15, 28 अगस्त, 1920.

अंबेडकर, बी.आर. (1920). राष्ट्र का पक्ष, संपादकीय, मूकनायक, अंक 6, 10 अप्रैल, 1920.

अंबेडकर, बी.आर. (1920). हिंदी राष्ट्र की प्राण प्रतिष्ठा, संपादकीय, मूकनायक, अंक 19, 23 अक्टूबर, 1920.

अंबेडकर, बी.आर. (1920). हमारा संदेश, संपादकीय, मूकनायक, अंक 17, 25 सितंबर, 1920.

अंबेडकर, बी.आर. (1927). महाड में धर्म संग्राम व अस्पृश्य वर्ग की जिम्मेदारी, संपादकीय, बहिष्कृत भारत, 20 मई, 1927.

अंबेडकर, बी.आर. (1927). अस्पृश्यता निवारण बच्चों का खेल, संपादकीय, बहिष्कृत भारत, 3 जून, 1927.

अंबेडकर, बी.आर. (1927). हमारे आलोचक, संपादकीय, बहिष्कृत भारत, 29 जुलाई, 1927.

अंबेडकर, बी.आर. (1927). अस्पृश्यता व सत्याग्रह की सिद्धि, संपादकीय, बहिष्कृत भारत, 25 नवम्बर, 1927.

अंबेडकर, बी.आर. (1928). हिंदुओं के धर्मशास्त्र, संपादकीय, बहिष्कृत भारत, 21 दिसंबर, 1928.

बेचैन, एस. एस. (2008). बहिष्कृत भारत. दिल्ली : गौतम बुक सेंटर.

बेचैन, एस. एस. (2020). मूकनायक. दिल्ली : गौतम बुक सेंटर.

राजकिशोर. (2008). बहिष्कृत भारत पुस्तक की भूमिका. दिल्ली : गौतम बुक सेंटर.

पुस्तक समीक्षा

जन सरोकार की पत्रकारिता

कृपाशंकर चौबे

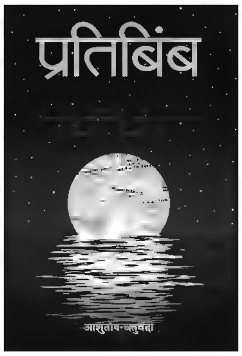

पुस्तक : प्रतिबिंब
संपादक : आशुतोष चतुर्वेदी
प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
प्रथम संस्करण : 2020,
पृष्ठ संख्या : 320, मूल्य : छह सौ रुपये

पत्रकार शिरोमणि बनारसीदास चतुर्वेदी के पौत्र आशुतोष चतुर्वेदी उन्हीं के आशीर्वाद से पत्रकारिता में आए। बड़े मीडिया घरानों में प्रिंट के साथ इलेक्ट्रॉनिक पत्रकारिता का 35 वर्षों का अनुभव रखने वाले आशुतोष चतुर्वेदी झारखंड, बिहार और पश्चिम बंगाल के अग्रणी समाचार पत्र 'प्रभात खबर' के प्रधान संपादक हैं। आशुतोष चतुर्वेदी ने भारत ही नहीं, विदेशों में भी काम किया। उन्होंने कॅरियर की शुरुआत इलाहाबाद से प्रकाशित होनेवाली प्रसिद्ध समाचार पत्रिका 'माया' के साथ प्रशिक्षु पत्रकार के रूप में की थी। उसके बाद इंडिया टुडे, संडे ऑब्जर्वर, जागरण, बीबीसी लंदन व दिल्ली होते हुए 'अमर उजाला' के कार्यकारी संपादक बने। 'प्रभात खबर' में हर सोमवार को उनका लेख संपादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित होता है। उन लेखों व टिप्पणियों का संग्रह 'प्रतिबिंब' प्रभात प्रकाशन से छपकर आया है। आज जब हिंदी अखबार राजनीतिक टिप्पणियों से भरे रहते हैं, वैसे में 'प्रतिबिंब' पुस्तक नई उम्मीद जगाती है। इस पुस्तक में राजनीतिक टिप्पणियाँ बहुत कम हैं। इसमें जनसरोकार और लोगों से जुड़े मुद्दे उठाए गए हैं। आशुतोष ने जिस आवेग से भारत और पड़ोसी देशों की राजनीति तथा अंतरराष्ट्रीय घटनाओं, खेल, और आर्थिक प्रश्नों पर टिप्पणी की है, उसी आवेग से प्रदूषण, जल संकट, जनसंख्या नियंत्रण की चुनौती, बेरोजगारी की समस्या, बुजुर्गों को बोझ मानने की समस्या, बेगाने होते बच्चे, ऑनलाइन गेम की गिरफ्त में बच्चे, युवा प्रतिभाओं के सम्मान, पुस्तक संस्कृति, शिक्षा व्यवस्था, रेलवे, महिला सशक्तीकरण के सवालों को उठाया है।

इस पुस्तक में शामिल मीडिया संबंधी टिप्पणियाँ बेहद तात्पर्यपूर्ण हैं। बदलते दौर में मीडिया शीर्षक टिप्पणी में आशुतोष कहते हैं कि तकनीक ने सारा परिदृश्य बदल दिया है। तकनीक ने चुपके से कब हमारे जीवन को परिवर्तित कर दिया, हमें पता ही नहीं चला। अब हम सब मौका मिलते ही मोबाइल के नए मॉडल और पैकेज की बातें करने लगते हैं। व्हाट्सएप और फेसबुक जीवन की जरूरतों में कब शामिल हो गए, हमें पता ही नहीं चला। इन माध्यमों ने खबरों के पेश किए जाने के तौर-तरीकों को भी बदल दिया है। इस टिप्पणी में आशुतोष बीबीसी के लंदन में आयोजित मीडिया लीडरशिप इवेंट में अपने अनुभव को साझा करते हैं। बीबीसी के पत्रकारों और विशेषज्ञों को सुनने में अच्छा लगा कि कैसे पत्रकारिता को जीवित रखते हुए तकनीक को अपनाए जाने का बीबीसी प्रयास कर रहा है। आशुतोष लिखते हैं, "मैं कई वर्षों तक बीबीसी की हिंदी सेवा से जुड़ा रहा हूँ और जानता हूँ कि इतने बड़े पारंपरिक संस्थान में बदलाव लाना आसान नहीं हैं, लेकिन कई दिनों की बातचीत से लगा कि बीबीसी बदलते दौर के साथ कदमताल करने की कोशिश कर रहा है। ब्रिटेन जैसे देश में, जहाँ मोबाइल और नेटवर्क सर्वसुलभ है, इसका असर अखबारों पर पड़ा है। 'गार्डियन' जैसे प्रतिष्ठित अखबार संघर्ष कर रहे हैं। वहाँ अखबारों का मॉडल दूसरी तरह का है। भारत में अपनी लागत से बहुत कम कीमत पर लोग अखबार पढ़ना चाहते हैं, पर ब्रिटेन में लोग प्रासंगिक खबरें पढ़ने के लिए पूरी कीमत अदा करने को तैयार रहते हैं। वहाँ एक ओर 'इवनिंग एक्सप्रेस' जैसे अखबार मुफ्त बाँटे जाते हैं, दूसरी ओर 'गार्डियन', 'टाइम्स' और 'इंडिपेंडेंट' जैसे अखबार करीब दो पाउंड यानी लगभग 170 रुपये में बिकते हैं।"

'श्रीदेवी की मौत और मीडिया' शीर्षक टिप्पणी में आशुतोष लिखते हैं कि श्रीदेवी की मौत और उसके बाद टी.वी. चैनलों ने जैसा सनसनीखेज कवरेज किया, उस पर गंभीर सवाल उठ रहे हैं। जिस तरह से उनके निधन के बाद दिन-रात चैनलों ने खबरें चलाईं और जिस तरह उनकी मौत को लेकर अटकलों को हवा दी, उस पर सवाल उठना लाजिमी है। सवाल मीडिया से भी उठ रहे हैं और आम जन भी उठा रहे हैं। सोशल मीडिया में तो हैशटैग 'खबर की मौत' नाम से चल रहा था। 'मीडिया को तो बख्श दीजिए' शीर्षक टिप्पणी में आशुतोष लिखते हैं कि मीडिया पर इकतरफा टीका-टिप्पणी करने का इधर चलन बढ़ता जा रहा है। कोई भी और कभी भी पूरे मीडिया जगत् के विषय में बयान दे देता है और उसकी विश्वसनीयता पर सवाल खड़े कर देता है। मीडिया ही ऐसा माध्यम है, जो आप तक सूचनाएँ पहुँचाता है, आपके मुद्दे और समस्याएँ उठाता है तथा किसी भी विषय पर आपको अपनी राय कायम करने में मदद करता है। हम सब के लिए यह जानना भी जरूरी है कि मीडियाकर्मी कितनी कठिन और प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने काम को अंजाम देते हैं। कभी-कभार यह चुनौतीपूर्ण माहौल उनकी जान तक ले लेता है। वह यह चुनौती इसलिए स्वीकार करते हैं, ताकि आप तक निष्पक्ष और सटीक खबरें पहुँच सकें। पत्रकारों को डराना और बदनाम करना एक पसंदीदा रणनीति बन गई है। आशुतोष कहते हैं कि मीडियाकर्मियों को कई तरह के दबावों का सामना करना पड़ता है, इसमें राजनीतिक और सामाजिक दबाव शामिल हैं। झारखंड और बिहार के सुदूर इलाकों में रिपोर्टिंग करना तो और भी दुष्कर कार्य है। नक्सलवादियों से लेकर दबंगों तक का निशाना बनने का हमेशा खतरा बना रहता है। मीडिया के हमारे साथी इस चुनौती को स्वीकार कर आप तक खबरें पहुँचाने का जोखिम उठाते हैं। इतने दबावों के बीच आप

अंदाज लगा सकते हैं कि खबरों में संतुलन बनाए रखना कितना कठिन कार्य होता है। यह सच है कि मौजूदा दौर में खबरों की साख का संकट है, लेकिन आज भी अखबार खबरों के सबसे प्रामाणिक स्रोत हैं।

'प्रतिबिंब' के साथ ही आशुतोष चतुर्वेदी की एक और पुस्तक 'यायावर शब्दशिल्पी पं. बनारसी दास चतुर्वेदी' प्रभात प्रकाशन से ही प्रकाशित हुई है। आशुतोष चतुर्वेदी द्वारा संपादित 183 पृष्ठों की यह पुस्तक बनारसी दास चतुर्वेदी के योगदान का सम्यक् परिचय कराती है। बनारसी दास चतुर्वेदी (24 दिसंबर 1892 - 02 मई 1985) हिंदी के अनन्य साहित्यकार और पत्रकार थे। पुस्तक के पहले लेख में दीपक कुमार जैन बताते हैं कि संस्मरण, रेखाचित्र, निबंध और जीवनी विधाओं में बनारसी दास चतुर्वेदी का कितना अप्रतिम योगदान है। इस लेख में तथा पुस्तक में संकलित अन्य लेखों में भी बनारसी दास चतुर्वेदी की पुस्तकों 'संस्मरण', 'रेखाचित्र', 'हमारे आराध्य', 'सेतुबंध', 'केशवचंद्र सेन', 'सत्यनारायण कविरत्न', 'भारत भक्त एंड्रूज', 'एक क्रांतिकारी के संस्मरण', 'आत्मकथा रामप्रसाद बिस्मिल', 'महापुरुषों की खोज में', 'साहित्य सौरभ', 'साहित्य और जीवन', 'राष्ट्रभाषा', 'फिजी द्वीप में मेरे 21 वर्ष', 'प्रवासी भारतवासी', 'फिजी में भारतीय', 'फिजी की समस्या' का यथास्थान उल्लेख हुआ है। बनारसी दास चतुर्वेदी की ये पुस्तकें बेहद समादृत कृतियाँ रही हैं।

'यायावर शब्दशिल्पी पं. बनारसी दास चतुर्वेदी' पुस्तक में बनारसी दास चतुर्वेदी की रचनाओं से एक चयन भी दिया गया है। उनके तीन लेख 'त्रिमूर्ति रामानंद-चिंतामणि-गणेश', 'मेरा दृष्टिकोण' और 'संस्मरण : प्रेमचंद जी के साथ दो दिन' बनारसी दास चतुर्वेदी की रचनाधर्मिता की बानगी प्रस्तुत करते हैं। चतुर्वेदी जी ने पत्र साहित्य विधा को नई ऊँचाई दी। उनके द्वारा लिखे गए पत्रों की संख्या एक लाख से अधिक है। 'रोम्या रोलाँ', 'महात्मा गांधी' तथा 'दीनबंधु एंड्रूज' से लेकर अति साधारण स्तर के लोगों तक उनका पत्र-जाल फैला हुआ था। उनके पत्रों की बानगी देखने के लिए 'यायावर शब्दशिल्पी पं. बनारसी दास चतुर्वेदी' पुस्तक के आखिर में वंशीधर विद्यालंकार और रामधारी सिंह दिनकर के नाम बनारसी दास चतुर्वेदी के पत्र दिए गए हैं। कृष्ण प्रताप सिंह ने 'शहीदों की स्मृतियों के रक्षक' शीर्षक अपने लेख में बताया है कि बनारसी दास चतुर्वेदी जैसा शहीदों की स्मृति को सामने लाने वाला समूचे हिंदी साहित्य में कोई और नहीं हुआ। उन्होंने शहीदों की स्मृति-रक्षा के लिए 'शहीदों का श्राद्ध' नाम से एक साहित्यिक आंदोलन छेड़ा था। बनारसी दास चतुर्वेदी ने स्वतंत्रता संग्राम के शहीदों की 22 जीवनियाँ विभिन्न ग्रंथों तथा विशेषांकों के रूप में निकालीं। उनमें अधिकतर की सामग्री का संकलन उन्होंने स्वयं किया। डॉ. शंकर दयाल शर्मा ने बनारसी दास चतुर्वेदी को राष्ट्र को समर्पित व्यक्तित्व बताया है। डॉ. अशोक बंसल, पं. गुण सागर शर्मा 'सत्यार्थी', मधुकर शाह, अक्षय कुमार जैन, यशपाल जैन, सत्यवती मलिक, रामसिंह तोमर, शंभूनाथ पांडेय, रामेश्वर मिश्र, देवकीनंदन श्रीवास्तव, पं. ओमप्रकाश तिवारी, मनोज चतुर्वेदी, आशुतोष चतुर्वेदी, डॉ. अलका चतुर्वेदी और डॉ. मिथलेश चंद्र चतुर्वेदी के लेख बनारसी दास चतुर्वेदी के बहुआयामी व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हैं।

जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी के लेख 'हिंदी पत्रकारिता में बनारसीदास चतुर्वेदी का योगदान', हरिविष्णु अवस्थी के लेख 'मधुकर के यशस्वी संपादक' और मंजुरानी सिंह के लेख 'पं. बनारसी दास चतुर्वेदी और विशाल भारत' से पता चलता है कि हिंदी पत्रकारिता में चतुर्वेदी जी का कितना विराट् अवदान है। 1928 में रामानंद चट्टोपाध्याय ने हिंदी मासिक 'विशाल भारत' निकाला तो बनारसी दास चतुर्वेदी को उसका संस्थापक

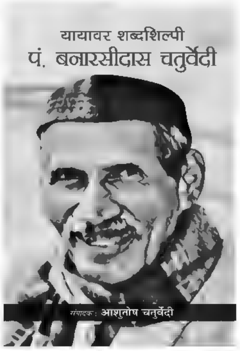

पुस्तक : यायावर शब्दशिल्पी पं. बनारसी दास चतुर्वेदी
संपादक : आशुतोष चतुर्वेदी
प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण : 2022
मूल्य : तीन सौ पचास रुपये

संपादक बनाया। चतुर्वेदी जी के संपादन में 'विशाल भारत' जल्द की हिंदी का सर्वश्रेष्ठ मासिक बन गया। शुरू के तीन वर्षों में ही चतुर्वेदी जी ने साहित्यांक, प्रवासी अंक तथा कला अंक जैसे विशेषांक निकालकर अपनी धाक जमा ली। 'विशाल भारत' ने तीन बड़े आंदोलन चलाए। एक था—घासलेटी साहित्य विरोधी आंदोलन। इस आंदोलन की चपेट में पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', आचार्य चतुरसेन शास्त्री और ऋषभचरण जैन जैसे लोग तक आ गए थे। एक और आंदोलन था—कस्मै देवाय, यानी हम किसके लिए लिखें। एक अन्य आंदोलन था—अस्पष्ट भाषा के विरुद्ध। 'विशाल भारत' की एक और देन थी, इसकी अंतरराष्ट्रीय दृष्टि। अमेरिकी विचारक एमर्सन और थोरो से पाठकों का परिचय 'विशाल भारत' ने ही कराया था। 'विशाल भारत' के माध्यम से मैक्सिम गोर्की, आंतोन चेखव जैसे रूसी लेखकों की रचनाएँ हिंदी पाठकों को पढ़ने के लिए मिलीं। प्रसिद्ध क्रांतिकारी प्रिंस क्रोपाटिकिन व मैल्टेस्टा जैसे अराजकवादियों के विचार 'विशाल भारत' के माध्यम से ही हिंदी पाठकों तक पहुँचे थे। ऑस्ट्रेलियाई कथाकार स्टीफन ज्विग, जापानी लेखक कागावा, अमेरिकी लेखिका पर्ल बक का परिचय 'विशाल भारत' ने हिंदी पाठकों से कराया था। 'विशाल भारत' ने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, अज्ञेय, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सियाराम शरण गुप्त, गोपाल सिंह नेपाली, गुरुभक्त सिंह, कमला चौधरी, सत्यवती मलिक, वृंदावनलाल वर्मा, चंद्रगुप्त विद्यालंकार, हरिवंशराय बच्चन, सोहनलाल द्विवेदी, शिवमंगल सिंह 'सुमन' आदि श्रेष्ठ रचनाकारों को हिंदी के पाठकों तक पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। बनारसी दास चतुर्वेदी नए रचनाकारों व पत्रकारों को भी किस तरह प्रोत्साहित करते थे, इसे स्वयं आशुतोष चतुर्वेदी के अनुभव से समझा जा सकता है। यह अनुभव आशुतोष चतुर्वेदी ने 'यायावर शब्दशिल्पी पं. बनारसी दास चतुर्वेदी' पुस्तक के संपादकीय के आरंभ में ही लिखा है, "जुलाई 1978 की बात है। मैं ग्यारहवीं कक्षा का विद्यार्थी था। उन दिनों मथुरा और आसपास के क्षेत्रों में भी भारी बाढ़ आई हुई थी। उन दिनों दोस्तों के साथ रोजाना उसे देखने जाता था। इसका पता जब दादाजी (पत्रकार शिरोमणि पं. बनारसी दास चतुर्वेदी) को लगा, तो जैसी कि उनकी आदत थी, उन्होंने निर्देश दिया कि बाढ़ का विस्तृत विवरण लिखकर भेजो। मैंने विस्तार से बाढ़ के प्रकोप और हम जैसे तमाशबीनों के बारे में उन्हें लिखकर भेजा। वे इस विवरण को पढ़कर अत्यंत प्रसन्न हुए और इसके जवाब में उनका

लाल व नीली स्याही से लिखा पोस्टकार्ड आया, जो आज भी मेरे पास सुरक्षित है—तुम अच्छा लिख लेते हो और तुममें पत्रकार बनने के सभी गुण मौजूद हैं। बस उनके इस आशीर्वचन ने पत्रकार बनने की नींव रख दी।"

बनारसी दास चतुर्वेदी ने 1937 तक यानी दस वर्षों तक 'विशाल भारत' का संपादन किया। कतिपय मामलों पर बनारसी दास चतुर्वेदी का रामानंद बाबू से मतभेद भी हुआ, किंतु कभी भी रामानंद बाबू ने बनारसी दास चतुर्वेदी की संपादकीय स्वायत्तता में हस्तक्षेप नहीं किया। रामानंद बाबू जब सूरत में हिंदू महासभा के अध्यक्ष बने तो 'विशाल भारत' में उनकी आलोचना छपी। रामानंद बाबू ने उसका उत्तर लिखकर दिया और उसे भी चतुर्वेदी जी ने छापा। ओरछा नरेश वीर सिंह जू देव के प्रस्ताव पर बनारसी दास चतुर्वेदी ने टीकमगढ़ से 1940 से 1946 तक 'मधुकर' का संपादन किया, जहाँ उन्होंने जनपदीय आंदोलन का सूत्रपात किया। 'मधुकर' जनपदीय समस्याओं पर अपने पाठकों का ध्यान आकर्षित करता था। 'मधुकर' ने अनेक जनपदीय आंदोलनों को जन्म दिया। 'मधुकर' के जो विशेषांक साहित्य की धरोहर बन गए, वे हैं—बुंदेलखंड प्रांत निर्माण विशेषांक, बुंदेलखंड परिषद विशेषांक, जनपद आंदोलन विशेषांक, बुंदेलखंड साहित्य विशेषांक और रेखा चित्रांक।

राजेंद्र रंजन चतुर्वेदी ने 'प्रवासी भारतीय मिशन के सूत्रधार' शीर्षक लेख में बताया है कि बनारसी दास चतुर्वेदी का बड़ा अवदान प्रवासी भारतीयों की सेवा है। चतुर्वेदी जी ने 1914 से 1936 तक यानी पूरे बाईस वर्ष प्रवासी भारतीयों की सेवा की। प्रवासी साहित्य में मील का पत्थर मानी जानेवाली तोताराम सनाढ्य की पुस्तक 'फिजीद्वीप में मेरे 21 वर्ष' प्रकाशित करने का श्रेय बनारसी दास चतुर्वेदी को है। यह पुस्तक उन्होंने ही लिपिबद्ध किया था। तोताराम सनाढ्य का अनुभव लिखने के बाद प्रवासी भारतीयों की समस्या ने चतुर्वेदी जी के संपूर्ण जीवन को जकड़ लिया था। उन्हें बोध हुआ कि मूकों को वाणी देना एक पवित्र कर्तव्य है और 'फिजीद्वीप मेरे 21 वर्ष' नामक पुस्तक ने मूकों को वाणी देने का काम किया था। उसी पुस्तक के कारण चतुर्वेदी जी दीनबंधु सी.एफ. एंड्रूज, महात्मा गांधी, श्रीनिवास शास्त्री, संपादकाचार्य सी.वाई. चिंतामणि आदि के संपर्क में आए। बनारसी दास चतुर्वेदी की 728 पृष्ठों की पुस्तक 'प्रवासी भारतवासी' 1918 में सरस्वती सदन, इंदौर से प्रकाशित हुई। वह अपने विषय की पहली पुस्तक थी। उसमें विदेशों में बसे हुए लाखों भारतवंशियों का इतिहास है। उस पुस्तक की भूमिका सी.एफ. एंड्रूज ने लिखी थी। बनारसी दास चतुर्वेदी की पुस्तक 'फिजी की समस्या' साबरमती आश्रम से प्रकाशित हुई, जिसमें 1920-21 के उपद्रवों और भारतीयों पर होनेवाले अत्याचारों का मार्मिक वर्णन है। चतुर्वेदी जी ने 'माडर्न रिव्यू' में प्रवासी भारतीयों की समस्या पर लेखमाला लिखी। चतुर्वेदी जी ने गोविंद सहाय शर्मा कृत फिजी की डायरी लिखी। चतुर्वेदी जी ने भवानीदयाल सन्न्यासी के सहयोग से विदेशों से लौटनेवाले भारतीयों के विषय में अँग्रेजी में भी रिपोर्ट लिखी। उन्होंने सी.एफ. एंड्रूज की फिजी रिपोर्ट का अनुवाद 'फिजी में भारतीय' शीर्षक से किया। बनारसी दास चतुर्वेदी ने 'मर्यादा', 'चाँद', 'विशाल भारत' तथा 'नवचेतन' (गुजराती) के 'प्रवासी अंक' निकाले। महात्मा गांधी के कहने पर चतुर्वेदी जी ने प्रवासी भारतीयों की स्थिति की जानकारी लेने के लिए दक्षिण अफ्रीका की यात्रा की। काँग्रेस में प्रवासी विभाग की स्थापना में चतुर्वेदी जी की बड़ी भूमिका रही। चतुर्वेदी जी ने दिल्ली में प्रवासी भवन की स्थापना के लिए आंदोलन किया। चतुर्वेदी जी 1952 से 1964 तक यानी 12 वर्षों तक राज्यसभा के सदस्य रहे। उन्हें 1973 में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया। 'यायावर शब्दशिल्पी पं. बनारसी दास चतुर्वेदी' पुस्तक उनके चिंतन, जीवन व सृजन को समझने की दृष्टि से बहुत उपयोगी है।

(समीक्षक महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा में प्रोफेसर हैं)

डॉ. अनुपमा भटनागर आईआईएमसी की नई महानिदेशक

भारतीय जन संचार संस्थान के महानिदेशक प्रो. संजय द्विवेदी का कार्यकाल समाप्त होने के पश्चात् प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर को संस्थान के नए महानिदेशक का अतिरिक्त प्रभार दिया गया है। डॉ. भटनागर ने दिनांक 13 जुलाई, 2023 को अपनी नई जिम्मेदारी सँभाल ली। डॉ. भटनागर भारतीय सूचना सेवा की 1991 बैच की अधिकारी हैं। नए महानिदेशक की नियुक्ति तक वे अपनी सेवाएँ देती रहेंगी। इससे पहले डॉ. भटनागर भारतीय प्रेस परिषद् के सचिव और आकाशवाणी के अतिरिक्त महानिदेशक (समाचार) की जिम्मेदारी सँभाल चुकी हैं। वे पत्र सूचना कार्यालय की अतिरिक्त महानिदेशक और सेंट्रल ब्यूरो ऑफ कम्युनिकेशन की महानिदेशक भी रह चुकी हैं। पूर्व में वे मानव संसाधन विकास मंत्रालय के उच्च शिक्षा विभाग में निदेशक भी रह चुकी हैं।

डॉ. अनुपमा भटनागर का आईआईएमसी में स्वागत करते अपर महानिदेशक डॉ. निमिष रुस्तगी और डीन अकादमिक से प्रो. गोविंद सिंह

डॉ. भटनागर को एमडीएस विश्वविद्यालय अजमेर से 'प्रेस, पब्लिक ओपिनियन एंड एडमिनिस्ट्रेटिव रेस्पोंसिवनेस : एन इन्क्वारी इनटु लेटर्स टु द एडिटर्स ऑफ द नेशनल प्रेस इन द कॉण्टेक्स्ट बाय इंडिया एंड द यूके' विषय पर शोध उपाधि प्राप्त है। उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से एम. फिल की उपाधि भी प्राप्त की है। उन्होंने इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन से एक वर्ष का डिप्लोमा भी किया है। वे गोरखपुर विश्वविद्यालय से राजनीति शास्त्र और अंतरराष्ट्रीय संबंध में स्नातकोत्तर हैं।

आईआईएमसी स्थापना दिवस व्याख्यान

आईआईएमसी में स्थापना दिवस पर व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए श्री अशोक टंडन

दिनांक 17 अगस्त, 2023 को भारतीय जन संचार संस्थान (आईआईएमसी) के 59वें स्थापना दिवस के अवसर पर स्थापना दिवस व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए वरिष्ठ पत्रकार एवं प्रसार भारती बोर्ड के सदस्य श्री अशोक टंडन ने कहा कि सबसे पहले न्यूज देने की होड़ मीडिया और समाज के लिए सबसे बड़ा खतरा है। उन्होंने कहा कि बिना जाँचे-परखे खबर को प्रसारित करने से सामाजिक सौहार्द और शांति पर बुरा असर पड़ता है। किसी भी खबर को देने से पहले पत्रकारों को इस बारे में जरूर सोचना चाहिए। इस अवसर पर संस्थान की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर, अपर महानिदेशक डॉ. निमिष रुस्तगी, डीन अकादमिक प्रो. गोविंद सिंह एवं अधिष्ठाता छात्र कल्याण और आउटरीच विभाग के प्रमुख प्रो. प्रमोद कुमार सहित अन्य संकाय सदस्य भी विशेष तौर से उपस्थित थे।

'सामाजिक सौहार्द एवं शांति को बढ़ावा देने में मीडिया की भूमिका' विषय पर विचार व्यक्त करते हुए श्री अशोक टंडन ने कहा कि कोई भी देश तब तक तरक्की नहीं कर सकता, जब तक वहाँ शांति का माहौल न हो। ऐसे में हमारे देश में जब तनाव की स्थिति बनती है, तो मीडिया की कैसी भूमिका होनी चाहिए, यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय है। शांति और भाईचारे को कायम रखने में मीडिया की भूमिका सबसे अहम होती है। उन्होंने कहा कि हम सबका एक ही लक्ष्य होना चाहिए कि खबर से समाज में किसी तरह का विपरीत प्रभाव न पड़े और शांति का माहौल बना रहे। अगर शांति कायम रहेगी, तो देश तरक्की राह पर तेजी से बढ़ पाएगा। श्री टंडन के अनुसार भारत में मीडिया की भूमिका हमेशा सकारात्मक रही है। मानव अधिकारों को लेकर मीडियाकर्मी ज्यादा संवेदनशील हैं। मानवाधिकारों से जुड़े कई प्रमुख विषयों को मीडिया लगातार उजागर कर रहा है, जिसके कारण समाज में जागरूकता पैदा होती है। उन्होंने कहा कि मीडिया को बड़ी ताकत के साथ बड़ी जिम्मेदारी भी मिली है, जिसका ध्यान प्रत्येक मीडियाकर्मी को रखना चाहिए।

इस अवसर पर आईआईएमसी की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर ने कहा कि भारतीय जन संचार संस्थान ने आज अपने गौरवशाली इतिहास के 59 वर्ष पूरे किए हैं। आईआईएमसी ने मीडिया शिक्षण, प्रशिक्षण और शोध के क्षेत्र में एक अलग जगह बनाई है। आईआईएमसी के सभी पूर्व महानिदेशकों, श्रेष्ठ प्राध्यापकों, अधिकारियों और कर्मचारियों के अथक प्रयास से ही हम लगातार कई वर्षों से मीडिया शिक्षण के क्षेत्र में पहले स्थान पर हैं।

'राजभाषा विमर्श' को मिला राजभाषा कीर्ति पुरस्कार

राजभाषा हिंदी को समर्पित भारतीय जन संचार संस्थान की त्रैमासिक पत्रिका 'राजभाषा विमर्श' को हिंदी दिवस के अवसर पर महाराष्ट्र के पुणे में आयोजित तृतीय अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा वर्ष 2022-23 का 'राजभाषा कीर्ति पुरस्कार (प्रथम) प्रदान किया गया।

राज्यसभा के उपसभापति श्री हरिवंश, केंद्रीय गृह राज्य मंत्री श्री अजय कुमार मिश्रा, केंद्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण राज्यमंत्री डॉ. भारती पँवार, केंद्रीय सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग राज्यमंत्री श्री भानु प्रताप वर्मा एवं संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष श्री भर्तृहरि महताब की उपस्थिति में संस्थान की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर ने यह पुरस्कार ग्रहण किया। 'राजभाषा कीर्ति पुरस्कार' राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा दिया जाने वाला सर्वोच्च पुरस्कार है। राजभाषा विमर्श का प्रकाशन भारतीय जन संचार संस्थान के राजभाषा विभाग द्वारा किया जाता है।

पुणे में आयोजित भव्य कार्यक्रम में राजभाषा कीर्ति पुरस्कार प्राप्त करते हुए भारतीय जन संचार संस्थान की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर

आईआईएमसी सत्रारंभ समारोह-2023

सत्र 2023-24 के लिए भारतीय जन संचार संचार संस्थान का सत्रारंभ समारोह दिनांक 13 सितंबर, 2023 को भारतीय जन संचार संस्थान के नई दिल्ली परिसर में आयोजित किया गया। मुख्य अतिथि 'आजतक' की प्रबंध संपादक सुश्री अंजना ओम कश्यप, आईआईएमसी की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर, अपर महानिदेशक डॉ. निमिष रुस्तगी और डीन अकादमिक प्रोफेसर गोविंद सिंह ने दीप प्रज्वलन कर समारोह का उद्घाटन किया।

सत्रारंभ समारोह में अंजना ओम कश्यप का स्वागत करते हुए आईआईएमसी की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर

इस अवसर पर सुश्री अंजना ओम कश्यप ने अपने प्रेरक उद्बोधन में विद्यार्थियों को कड़ी मेहनत करने की सलाह दी और कहा कि तथ्यों की सावधानीपूर्वक जाँच प्रत्येक पत्रकार की जिम्मेदारी हैं। उन्होंने कहा कि मीडिया का काम भ्रम फैलाना नहीं, बल्कि समाज को जागरूक करना है। उन्होंने प्रभावी पटकथा लेखन के संबंध में भी कुछ महत्त्वपूर्ण बिंदु विद्यार्थियों के साथ साझा किए। उन्होंने कहा कि अध्ययन का कोई विकल्प नहीं है। पढ़ने की आदत हर पत्रकार में होनी ही चाहिए। उन्होंने छात्रों को एकतरफा विचारों से बचकर अपने क्षितिज को व्यापक बनाने के लिए प्रोत्साहित किया। आरंभ में आईआईएमसी के अपर महानिदेशक डॉ. निमिष रुस्तगी ने सभी अतिथियों और विद्यार्थियों का संस्थान की ओर से स्वागत किया।

सत्रारंभ समारोह को संबोधित करते हुए अंजना ओम कश्यप

इस अवसर पर आईआईएमसी की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर ने शुभकामनाएँ दीं और छात्रों के कौशल को बढ़ाने के लिए संस्थान की प्रतिबद्धता को दोहराया।

समारोह के दूसरे दिन हिंदुस्तान टाइम्स के प्रधान संपादक श्री सुकुमार रंगनाथन ने पत्रकारिता के लिए सभी से समान रूप से सवाल करने, डेटा विश्लेषण और बाजार के रुझान के महत्त्व पर जोर दिया। उसी सत्र में जागरण न्यू मीडिया के प्रधान संपादक श्री राजेश उपाध्याय ने मीडिया साक्षरता के संबंध में विद्यार्थियों को जागरूक किया। पीडब्ल्यूसी की संचार अधिकारी सुश्री नंदिनी चटर्जी ने छात्रों को अपने पारिस्थितिकी तंत्र को गहराई से समझने की सलाह दी। एडफैक्टर पीआर के निदेशक श्री समीर कपूर ने आधुनिक जन संपर्क में डेटा और एनालिटिक्स के महत्त्व पर जोर दिया।

क्षेत्रीय सामुदायिक रेडियो सम्मेलन में सामुदायिक रेडियो स्टेशन सम्मानित

क्षेत्रीय सामुदायिक रेडियो सम्मेलन में केन्द्रीय मंत्री श्री अनुराग ठाकुर का स्वागत करती हुई आईआईएमसी की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर

केंद्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्री श्री अनुराग ठाकुर ने 23 जुलाई, 2023 को नई दिल्ली में 8वें और 9वें राष्ट्रीय सामुदायिक रेडियो पुरस्कार प्रदान किए। ये पुरस्कार दो दिवसीय क्षेत्रीय सामुदायिक रेडियो सम्मेलन (उत्तर) के उद्घाटन सत्र के दौरान प्रदान किए गए, जिसका उद्घाटन केंद्रीय मंत्री ने भारतीय जन संचार संस्थान में किया। सम्मेलन में सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के सचिव श्री अपूर्व चंद्र, अपर सचिव सुश्री नीरजा शेखर, संयुक्त सचिव श्री सी. सेंथिल राजन एवं आईआईएमसी की महानिदेशक डॉ. अनुपमा भटनागर भी उपस्थित थे।

इस अवसर पर विभिन्न सामुदायिक रेडियो स्टेशनों के प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए श्री ठाकुर ने कहा कि सामुदायिक रेडियो स्टेशन प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के 'जन भागीदारी से जन आंदोलन' के विजन को साकार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। ये स्टेशन आकाशवाणी के प्रयासों में सहायता प्रदान करते हैं और इन्होंने आपदाओं के दौरान अपने श्रोताओं को जानकारी प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

श्री ठाकुर ने कहा कि सामुदायिक रेडियो स्टेशन मानव संसाधन की कमी, वित्तीय दबाव और बाहरी सहायता की कमी सहित कई चुनौतियों के बावजूद अपनी सेवा उपलब्ध कराते हैं और राष्ट्र सेवा की इस भावना के लिए उनकी सराहना की जानी चाहिए। श्री ठाकुर ने कहा कि जहाँ ये पुरस्कार इन स्टेशनों को प्रोत्साहित करते हैं, वहीं ये भारत के सुदूर क्षेत्रों में शिक्षा, जागरूकता पैदा करने और समस्या समाधान में सामुदायिक रेडियो के महत्त्व को भी समझते हैं। उन्होंने आशा जताई कि ये पुरस्कार दूसरों को भी इस क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करेंगे।

श्री ठाकुर ने इस क्षेत्र में व्यवसाय करने में सुगमता प्रदान करने की दिशा में सरकार के प्रयासों का उल्लेख किया और कहा कि सरकार ने ऐसे सामुदायिक रेडियो स्टेशनों की स्थापना में लगने वाले समय को कम करने के लिए गंभीर प्रयास किए हैं। जहाँ पहले लाइसेंस प्राप्त करने में अधिक समय लगता था और यह एक धीमी प्रक्रिया थी, जिसमें लगभग चार वर्ष लगते थे तथा इसमें तेरह प्रक्रियाएँ शामिल होती थीं, आज इसे घटाकर आठ प्रक्रियाओं तक सीमित कर दिया गया है और छह महीने के भीतर लाइसेंस प्राप्त किया जा सकता है। उन्होंने कहा कि मंत्रालय इस समय में और कमी लाने के लिए सभी प्रयास कर रहा है। आवेदन प्रक्रिया अब ब्रॉडकास्ट सेवा पोर्टल पर ऑनलाइन है और सरल संचार पोर्टल से जुड़ी है।

भारत में रेडियो की पहुँच के विस्तार पर टिप्पणी करते हुए श्री ठाकुर ने कहा कि आज देश का 80 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र और 90 प्रतिशत से अधिक आबादी रेडियो द्वारा कवर की जा चुकी है, सरकार इस पहुँच को और अधिक विस्तारित करने के लिए काम कर रही है और ई-नीलामी के तीसरे बैच के तहत 284 शहरों में 808 चैनलों की नीलामी उस दिशा में एक बड़ा कदम है। उन्होंने कहा कि सामुदायिक रेडियो स्टेशनों की बढ़ती संख्या उनकी बढ़ती लोकप्रियता को दर्शाती है। भारत सरकार, प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के विजन को साकार करने के लिए काम कर रही है कि प्रत्येक जिले में एक सामुदायिक रेडियो स्टेशन होना चाहिए और इसे हर ब्लॉक में हर व्यक्ति तक पहुँचाया जाना चाहिए।

सामुदायिक रेडियो स्टेशनों के अनुभवों को एक साथ लाने के लिए एक मंच की आवश्यकता का उल्लेख करते हुए श्री ठाकुर ने कहा कि सामुदायिक सेवाओं के क्षेत्र में विभिन्न प्रयोग और नवोन्मेषण रेडियो स्टेशनों द्वारा पूरे भारत में अलग-अलग किए जा रहे हैं। उन्होंने आशा व्यक्त की कि ऐसे नेटवर्क का निर्माण किया जा सकता है जहाँ ये स्टेशन अपने विचारों और अनुभवों को साझा कर सकते हैं, ताकि इनमें से सर्वश्रेष्ठ को

पूरे देश में दोहराया जा सके। उन्होंने एक ऐसे समुदाय की परिकल्पना की जो इन स्टेशनों के विचारों से एक पॉवर हाउस का सृजन करेगा। श्री ठाकुर ने पुरस्कारों की जूरी को उनके योगदान के लिए धन्यवाद दिया और उन स्टेशनों का विशेष उल्लेख करते हुए विजेताओं को बधाई दी, जिन्हें 8वें और 9वें संस्करण के लिए पुरस्कार से सम्मानित किया गया है और कहा कि यह इस क्षेत्र में उनकी निरंतर उत्कृष्टता का सम्मान है।

इससे पूर्व सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के सचिव एवं भारतीय जन संचार संस्थान के अध्यक्ष श्री अपूर्व चंद्रा ने कहा कि संचार क्षेत्र में टेलीविजन, फिर इंटरनेट और अब ओटीटी के रूप में कई तरह की उन्नति देखी गई है, लेकिन इससे रेडियो की लोकप्रियता और पहुँच में कोई कमी नहीं आई है। सामुदायिक रेडियो ऐसे स्थान पर विद्यमान है जो अन्य प्लेटफार्मों से अछूता है और कनेक्टिविटी की आवश्यकता को पूरा करता है, जिसकी पूर्ति आधुनिक मीडिया द्वारा नहीं की जाती। उन्होंने यह भी कहा कि कोविड-19 महामारी के दौरान इन पुरस्कारों के आयोजन को रोक दिया गया था और इसलिए इस वर्ष मंत्रालय 8वें और 9वें राष्ट्रीय सामुदायिक रेडियो पुरस्कार प्रदान कर रहा है। उन्होंने बताया कि पिछले दो वर्षों में 120 से अधिक सामुदायिक रेडियो स्टेशन जोड़े गए हैं, जिससे 100 से अधिक अतिरिक्त आशय पत्रों के साथ मंत्रालय के पास इनकी कुल संख्या 450 से अधिक हो गई है। उन्होंने कहा कि 8वें और 9वें राष्ट्रीय सामुदायिक रेडियो पुरस्कार के विजेता उन सामुदायिक रेडियो स्टेशनों की पहचान हैं, जिन्होंने अपने क्षेत्र में जनहित में सराहनीय कार्य किया है। महत्त्वपूर्ण है कि ये पुरस्कार 23 जुलाई, 2023 को राष्ट्रीय प्रसारण दिवस के अवसर पर आयोजित सामुदायिक रेडियो क्षेत्रीय सम्मेलन के दौरान प्रदान किए जा रहे हैं।

9वें राष्ट्रीय सामुदायिक रेडियो पुरस्कारों के लिए 4 श्रेणियों में कुल 12 पुरस्कार प्रदान किए गए। पुरस्कार विजेता सामुदायिक रेडियो स्टेशन हरियाणा, बिहार, ओडिशा, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, तमिलनाडु, राजस्थान और त्रिपुरा राज्यों में स्थित हैं। भारत सरकार ने सामुदायिक रेडियो में बेहतर प्रोग्रामिंग को बढ़ावा देने और सामुदायिक रेडियो स्टेशनों को स्थानीय समुदाय के हित में कार्यक्रम तैयार करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए राष्ट्रीय सामुदायिक रेडियो पुरस्कारों का गठन किया। राष्ट्रीय सामुदायिक रेडियो पुरस्कार उन सामुदायिक रेडियो स्टेशनों को प्रदान किए जाते हैं, जिन्होंने सामुदायिक केंद्रित कार्यक्रमों के माध्यम से सामुदायिक रेडियो प्रसारण के क्षेत्र में अनुकरणीय कार्य किया है। पुरस्कारों की विभिन्न श्रेणियों ने सामुदायिक रेडियो के लिए विभिन्न विषयों पर कार्यक्रम विकसित करने के लिए प्रेरणा का काम किया है। इन पुरस्कारों ने स्थिरता, नवोन्मेषण और नागरिक-भागीदारी की संस्कृति को बढ़ावा दिया है। सामुदायिक रेडियो, रेडियो प्रसारण में एक महत्त्वपूर्ण तीसरी श्रेणी है, जो सार्वजनिक सेवा रेडियो प्रसारण और वाणिज्यिक रेडियो से विशिष्ट है। सामुदायिक रेडियो स्टेशन (सीआरएस) कम शक्ति वाले रेडियो स्टेशन हैं, जिन्हें समुदाय आधारित संगठनों द्वारा स्थापित और प्रचालित किया जाता है।

सामुदायिक रेडियो स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा, कृषि आदि से संबंधित मुद्दों पर स्थानीय स्वरों को प्रसारित करने के लिए समुदायों को एक मंच उपलब्ध करता है। सामुदायिक रेडियो में अपने समग्र दृष्टिकोण के माध्यम से विकास कार्यक्रमों में जन भागीदारी को सुदृढ़ करने की भी क्षमता है। भारत जैसे देश में, जहाँ प्रत्येक राज्य की अपनी भाषा और विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान है, सीआरएस स्थानीय लोक संगीत और सांस्कृतिक विरासत का भंडार भी हैं। कई सीआरएस भावी पीढ़ी के लिए स्थानीय गीतों को रिकॉर्ड और संरक्षित करते हैं और स्थानीय कलाकारों को समुदाय के सामने अपनी प्रतिभा दिखाने के लिए एक मंच प्रदान करते हैं। सीआरएस की अनूठी स्थिति सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन का एक साधन है, जो इसे सामुदायिक सशक्तीकरण के लिए एक आदर्श माध्यम बनाती है। चूँकि सामुदायिक रेडियो प्रसारण स्थानीय भाषाओं और बोलियों में होता है, इसलिए लोग इससे तुरंत जुड़ जाते हैं।

सरकार भारत में सामुदायिक रेडियो आंदोलन को व्यापक स्तर पर सहायता प्रदान कर रही है, ताकि मास मीडिया का यह माध्यम अंतिं छोर तक पहुँच सके, जहाँ मुख्य धारा के मीडिया की उपस्थिति कम है। पिछले कुछ वर्षों में सामुदायिक रेडियो स्टेशनों की संख्या में असीम वृद्धि हुई है। वर्तमान में, देश में कुल 449 सामुदायिक रेडियो स्टेशन हैं, जिनमें से 70 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। सामुदायिक रेडियो स्टेशनों की स्थापना के लिए लगभग 100 संगठनों को अनुमति दी गई है। यह सामुदायिक सशक्तीकरण और उन्हें मुख्यधारा की विकास प्रक्रिया में लाने के लिए रूपांतरित करने हेतु सरकार की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। राष्ट्रीय सामुदायिक रेडियो पुरस्कार में प्रथम, द्वितीय और तृतीय पुरस्कार क्रमशः 1 लाख, 75,000/= और 50,000/= रुपये हैं। पुरस्कार विजेताओं का विवरण इस प्रकार है :

विषयगत पुरस्कार

- प्रथम पुरस्कार : रेडियो माइंड ट्री अंबाला, हरियाणा; कार्यक्रम का नाम: **होप जीने की राह**
- दूसरा पुरस्कार : रेडियो हीराखंड संबलपुर, ओडिशा; कार्यक्रम का नाम: **आधार ओ पोषण विज्ञान**
- तृतीय पुरस्कार : ग्रीन रेडियो सबौर, बिहार; कार्यक्रम का नाम: **पोषण शृंखला**

सर्वाधिक नवोन्मेषी सामुदायिक सहभागिता पुरस्कार

- प्रथम पुरस्कार रेडियो एसडी, मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश; कार्यक्रम का नाम: **हिजरा इन बिटवीन**
- द्वितीय पुरस्कार कबीर रेडियो, संत कबीर नगर, उत्तर प्रदेश; कार्यक्रम का नाम: **सेल्फी ले ले रे**
- तीसरा पुरस्कार रेडियो माइंड ट्री, अंबाला, हरियाणा कार्यक्रम का नाम: **बुक बग्स**

स्थानीय संस्कृति पुरस्कारों को बढ़ावा देना

- प्रथम पुरस्कार : वॉयस ऑफ एसओए कटक, ओडिशा; कार्यक्रम का नाम: **अस्मिता**
- दूसरा पुरस्कार : फ्रेंड्स एफएम त्रिपुरा, अगरतला; कार्यक्रम का नाम: रिवाइव्ड ए डाइंग आर्ट: **मास्क एंड पॉट**
- तृतीय पुरस्कार : पंतनगर जनवाणी पंतनगर, उत्तराखंड; कार्यक्रम का नाम: **दादी माँ का बटुआ**

टिकाऊ मॉडल पुरस्कार

- प्रथम पुरस्कार : रेडियो हीराखंड संभलपुर, ओडिशा
- दूसरा पुरस्कार: वायलागा वनोली मदुरै, तमिलनाडु
- तृतीय पुरस्कार वगाड रेडियो «90.8», बाँसवाड़ा, राजस्थान

संचार माध्यम

‘संचार माध्यम’ (ISSN : 2321-2608) भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली, की संचार, मीडिया, पत्रकारिता और उससे संबंधित मुद्दों पर केंद्रित हिंदी में प्रकाशित होने वाली अग्रणी ‘पीयर रिव्यूड’ और यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका है। इसका प्रकाशन 1980 में आरंभ हुआ और आज यह हिंदी भाषा में संचार, मीडिया और पत्रकारिता से संबंधित विषयों पर विभिन्न प्रकार के विचारों, टिप्पणियों, पुस्तक समीक्षा और मौलिक शोध-पत्रों के प्रकाशन का प्रतिष्ठित मंच है। इसमें मीडिया से संबंधित सभी प्रकार के विषयों पर मौलिक अकादमिक शोध और विश्लेषण प्रकाशित किए जाते हैं। अकादमिक शोध के उच्चतर मूल्यों का पालन करते हुए ‘संचार माध्यम’ में प्रकाशन से पूर्व सभी शोध पत्रों/आलेखों की बहुस्तरीय निष्पक्ष समीक्षा (ब्लाइंड पीयर रिव्यू) कराई जाती है। भारतीय जन संचार संस्थान के प्रकाशन विभाग द्वारा इसका प्रकाशन किया जाता है। पत्रिका का प्रकाशन छमाही हो रहा है।

‘संचार माध्यम’ में निम्नलिखित श्रेणी के शोध-पत्र प्रकाशित किए जाते हैं :

1. **मौलिक शोध पर आधारित शोध-पत्र :** इस प्रकार के शोध-पत्र की शब्द सीमा 4000 से 5000 शब्द होनी चाहिए, जो डबल स्पेस में टाइप किया गया हो। साथ ही अधिकतम 250 शब्दों में शोध सारांश भी शामिल होना चाहिए। शोध-पत्र सिर्फ यूनिकोड फॉण्ट में ही टाइप होना चाहिए और उसमें संबंधित शोध की पूर्ण तस्वीर दृष्टिगोचर होनी चाहिए। शोध-पत्र से जुड़े छायाचित्र/ग्राफ/टेबल, यदि कोई हों, तो वे भी अपनी मूल प्रति के साथ (एक्सेल फाइल इत्यादि) संलग्न किए जाने चाहिए। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि छायाचित्रों का रिजॉल्यूशन उच्च स्तर का हो, ताकि प्रिंटिंग के समय गुणवत्ता प्रभवित न हो। पीडीएफ फाइल में शोध पत्र स्वीकार्य नहीं होंगे।
2. **लघु शोध आधारित शोध-पत्र :** लघु शोध आधारित आलेख 2000 शब्दों से अधिक नहीं होना चाहिए, यानी लगभग 4-5 पृष्ठ, डबल स्पेस में टाइप किया गया हो। यह भी यूनिकोड फॉण्ट में ही टंकित होना चाहिए। ऐसे शोध-पत्र भी पूर्ण हो चुके शोध/अध्ययनों पर ही आधारित होने चाहिए। इसमें ऐसे तथ्यपूर्ण शोध-पत्र भी शामिल हो सकते हैं, जिनका संबंध किसी नवीन तकनीक के विकास से है। ऐसे शोध-पत्रों का शोध सारांश 80 से 100 शब्दों से अधिक नहीं होना चाहिए।
3. **शोध समीक्षा :** इस श्रेणी के अंतर्गत आने वाले समीक्षात्मक आलेखों में प्रस्तावना, साहित्य समीक्षा, शोध परिणाम आदि के अलावा संबंधित शोध में मौजूद कमियों और उन कमियों के सुधार हेतु सुझावों का भी समावेश होना चाहिए, ताकि भविष्य में अन्य शोधकर्ता उन कमियों को दूर करने की दिशा में प्रयास कर सकें।
4. **पुस्तक समीक्षा :** ‘संचार माध्यम’ में पत्रकारिता और जनसंचार पर प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षा (शब्द सीमा : 1500) भी प्रकाशित की जाती है। अन्य विषयों जैसे सामाजिक ज्ञान, सामाजिक कार्य, एंथ्रोपोलोजी, कला आदि पर प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षा भी भेजी जा सकती है, बशर्ते उनका शीर्षक मीडिया अध्ययन से जुड़ा हो या उनकी सामग्री में कम-से-कम 40 प्रतिशत अध्याय मीडिया, जनसंचार या पत्रकारिता से जुड़े हों। पुस्तक समीक्षाएँ उनके पूर्ण विवरण जैसे प्रकाशक, वर्ष, संस्करण, पृष्ठ संख्या, मूल्य व पुस्तक के छायाचित्र के साथ भेजी जानी चाहिए।

प्रकाशन नैतिकता और साहित्यिक चोरी

- संचार माध्यम के लिए जो शोध आलेख भेजे जाएँ उन्हें अन्य पत्रिकाओं को नहीं भेजना चाहिए और न ही शोध आलेखों को पूरी तरह से या आंशिक रूप से उसी सामग्री के साथ किसी अन्य पत्रिका में प्रकाशित किया जाना चाहिए। लेखकों को सुनिश्चित करना चाहिए कि ‘संचार माध्यम’ में प्रकाशन के लिए भेजे जाने वाले आलेख किसी भी रूप में या मिलती-जुलती सामग्री के रूप में पहले प्रकाशित न हुए हों।
- किसी भी तरह की साहित्यिक चोरी किसी भी परिस्थिति में स्वीकार्य नहीं है। आलेख के साथ मूल कार्य का घोषणापत्र प्रस्तुत किया जाना अनिवार्य है, जिसके बिना आलेखों पर कोई विचार नहीं किया जाएगा। लेखकों को आलेखों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करनी चाहिए। कोई भी अनैतिक व्यवहार (साहित्यिक चोरी, गलत डेटा आदि) किसी भी स्तर पर (पियर रिव्यू या संपादन स्तर पर भी) आलेख की अस्वीकृति का कारण बन सकता है। किसी भी समय साहित्यिक चोरी और तथ्यों, निष्कर्षों के स्वनिर्मित आदि पाए जाने पर प्रकाशित आलेख वापस लिए जा सकते हैं।

बहुस्तरीय समीक्षा (पियर रिव्यू) प्रक्रिया

‘संचार माध्यम’ में प्रकाशनार्थ प्राप्त सभी आलेख दोहरी या बहुस्तरीय निष्पक्ष समीक्षा (डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यू) प्रक्रिया के अधीन हैं। शोध आलेखों को विशेषज्ञों के पास बिना उनके लेखक/लेखकों का नाम बताए समीक्षा के लिए भेजा जाता है। उनकी टिप्पणी, सुझावों और अनुशंसा के आधार पर ही शोध-पत्रों के प्रकाशन का निर्णय लिया जाता है। संपादन-परिषद् के संतुष्ट होने पर ही शोध-पत्र प्रकाशित किया जाता है। इस प्रक्रिया में आमतौर पर 4-6 सप्ताह लगते हैं। समीक्षा प्रक्रिया पाँच चरणों पर आधारित हैः-

क.) जस के तस स्वीकार करने लायक
ख.) मामूली सुधार की आवश्यकता
ग.) मध्यम सुधार की आवश्यकता
घ.) अधिक सुधार की आवश्यकता
ङ.) अस्वीकृत

‘संचार माध्यम’ तीव्र समीक्षा प्रक्रिया का पालन नहीं करता है

लेखों का संपादन

यदि प्रकाशन के लिए लेख स्वीकार किया जाता है, तो उसे कम-से-कम दो संपादन चरणों से गुजरना पड़ता है। लेखकों को ध्यान रखना चाहिए कि सभी स्वीकृत लेख संपादन के किसी भी स्तर पर संपादकों द्वारा आवश्यक संशोधनों व परिवर्तनों के अधीन हैं।

जुलाई-दिसंबर 2023, खंड-35, अंक-2
आईएसएसएन : 2321-2608

टाइटल कोड : DELHIN28999
सदस्यता शुल्क : ₹ 200 प्रति अंक
(वार्षिक सदस्यता शुल्क ₹ 400)

भारतीय जन संचार संस्थान | भारत का नंबर एक मीडिया संस्थान

स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रम

- अँग्रेजी पत्रकारिता • हिंदी पत्रकारिता • रेडियो और टीवी पत्रकारिता
- विज्ञापन एवं जनसंपर्क • उड़िया पत्रकारिता • मलयालम पत्रकारिता
- उर्दू पत्रकारिता • मराठी पत्रकारिता • डिजिटल मीडिया

नवीनतम और सुसज्जित सुविधाएँ

- साउंड और टीवी स्टूडियो तथा ऑडियो विजुअल सेटअप
- डिजिटल इलेक्ट्रॉनिक कैमरों के साथ टीवी और वीडियो प्रोडक्शन
- मल्टी कैमरा स्टूडियो सेटअप • एडिटिंग कंसोल • डिजिटल साउंड रिकार्डिंग
- नॉन-लीनियर वीडियो एडिटिंग • डीएसएलआर कैमरा • 4K वीडियो कैमरा
- प्रोजेक्टर और वातानुकूलित कक्षाएँ • कंप्यूटर लैब • मल्टीमीडिया सिस्टम
- वॉयस रिकार्डर, ग्राफिक और लेआउट डिजाइनिंग
- अपना रेडियो 96.9 एफएम

छात्रों को व्यावहारिक प्रशिक्षण

- सीखने के मजबूत और व्यावहारिक तरीके
- नवीनतम तकनीक और सॉफ्टवेयर के साथ ज्ञान को बढ़ाना
- विशेष बीट रिपोर्टिंग सत्र
- मीडिया उद्योग के विशेषज्ञों के व्याख्यान

भारतीय जन संचार संस्थान
(सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार का स्वायत्त संस्थान)

जेएनयू न्यू कैंपस, अरुणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली-110067
फोन: 011.26742920/296। वेबसाइट: www.iimc.gov.in । ईमेल: iimc1965@gmail.com

मुद्रक और प्रकाशक प्रो. (डॉ.) वीरेंद्र कुमार भारती, प्रमुख-प्रकाशन विभाग, द्वारा भारतीय जन संचार संस्थान के लिए जे.के. ऑफसेट ग्राफिक्स प्रा. लि., B-278, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित तथा भारतीय जन संचार संस्थान, नया जेएनयू कैंपस, अरुणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली-110067 से प्रकाशित । संपादक : प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार